गुजरातनी भाषानी उत्क्रांति

(बारमा सैकाथी अढारमा सैका सुधी)

श्री. ठक्कर वसनजी माधवजी व्याख्यानमाला

गुजराती भाषानी उत्क्रान्ति

(बारमा सैकाथी अढारमा सैका सुधी)

व्याख्याता

अध्यापक बेचरदास जीवराज दोशी

प्रकाशक

मुंबई युनिवर्सिटी

१९४३

Printed by M. N. Kulkarni, at the Karnatak Printing Press,
Karnatak House, Chira Bazar, Bombay and published
for the University by S. R. Dongerkery, Registrar,
University of Bombay, Fort, Bombay 1.

विषयानुक्रम

व्याख्यान पहेलुं-आमुख-पृ० १—२१८

व्याख्यान बीजुं-बारमो अने तेरमो सैको पृ० २१९-३८२

व्याख्यान त्रीजुं—चौदमो अने पंदरमो सैको पृष्ठ ३९१-४२६

सुधारीने वांचवुं

पृ० ७ टिप्पण–(छेल्ली त्रीजी पंक्ति)
  संचार, नाद्

पृ० ७५ (छेल्ली पहेली पंक्ति)
  जेवुं तो

पृ० ७७ (छेल्ली सातमी पंक्ति)
  लौकिक संस्कृतनो

पृ० १४३ पं० ११ (वर्ग ८, गा० ६६)

पृ० ४०५, चटउत्तर (१४२ मी कंडिका)

गुजराती भाषानी उत्क्रान्ति

(वारमा सैकाथी अढारमा सैकासुधी)

१ आमुख

श्रीमहावीराय नमः

प्रणम्य परमात्मानं सकलान् शाब्दिकांस्तथा ।
वक्ष्ये हैमानुसारेण गुर्जरीवाच उत्क्रमम् ॥

उपक्रम

१ प्रस्तुत निबन्धमां विक्रमना वारमा सैकाथी लईने अढारमा सैका-सुधीना गुजराती पद्य अने गद्य साहित्यनी भाषानुं व्याकरणनी दृष्टिए अवलोकन करवानुं छे. एटले के आचार्य हेमचन्द्रे पोताना आठमा अध्यायना चोथा पादमां अपभ्रंशना मथाळा नीचे जे जे नियमो आप्या छे ते नियमो त्यार पछीना साहित्यमां कया कया प्रकारे परिवर्तन पाम्या छे—नामरूप अने विशेषणरूप शब्दोनुं, नामोने अने धातुओने लगती विभक्तिओनुं, हेत्वर्थकृदंत, संबंधक भूतकृदंत, वर्तमानकृदंत, भूतकृदंत, भविष्यत्कृदंत अने कर्तृसूचककृदंतने लगता प्रत्ययोनुं, अव्ययोनुं तथा मूळ धातुओनुं क्यां केवुं परिवर्तन थयुं छे अने शब्दोमां पण प्राकृत शब्दोनुं, संस्कृत शब्दोनुं, देश्य शब्दोनुं अने अन्य भाषाना शब्दोनुं चलण क्यां केवी रीते थतुं आव्युं छे ए बताववा साथे ए बधुं स्पष्टपणे ध्यानमां आवे ए सारु ते ते समयना गुजराती साहित्यमांथी सविस्तर उदाहरणो पण टांकी बताववानां छे.

हेमचंद्र गुजरातीना पाणिनि अने वाल्मीकि

२ आचार्य हेमचन्द्रने व्याकरणनी दृष्टिए गुजरातीना पाणिनि समझुं छुं अने साहित्यिक काव्यनी दृष्टिए गुजरातीना—गुजराती साहित्यना—आदिम वाल्मीकि पण तेओ छे एथी तेमनो समय आ निबंधमां पूर्वावधिरूप छे अने उत्तर मर्यादानी दृष्टिए उपाध्याय यशोविजयजी के कविराज प्रेमानंद सुधी मारे पहोंचवानुं छे.

ते बे समयना वचगाळामां थयेला जैन, वैदिक तथा पारसी अने मुसलमान साहित्यकारोनी गुजराती पद्य वा गद्य कृतिओने तपासवानी छे.

तेमनी ते ते कृतिओ तो पारविनानी छे एटले ते ते सैकावार मळती एक बे के त्रण कृतिओने ज तपासीने ते द्वारा उक्त परिवर्तनोनी रेखा दोरवा धारी छे. प्रसंग पडतां गमे ते कविनी त्रणथी वधारे कृतिओनो पण उपयोग करीश.

पाठोनी चोक्कसाई माटे यथाप्राप्त हस्तलिखित प्रतिओमां आवेला पाठोनो उपयोग करनार छुं अने ज्यां मुद्रित पाठ वहेम पडे तेवा नहीं होय त्यां तेमनो पण उतारो टांकीश.

निबंधनो विषयानुक्रम आ प्रमाणे गोठव्यो छे:

निबंधनो क्रम

१ आमुख
२ बारमो अने तेरमो सैको
३ चौदमो अने पंदरमो सैको
४ सोळमो अने सत्तरमो सैको
५ अढारमो सैको अने उपसंहार

ते ते सैकाना कविनी कृतिविशे बोलतां पहेलां ते ते कविसंबंधे पण यथाप्राप्त वृत्तांतानुसारे संक्षेपमां जणाववानी धारणा राखी छे.

मूळ निबंध ऊपर आवतां पहेलां गुजराती भाषाना इतिहास अने क्रमविकास साथे जेमनो गाढ संबंध छे एवा आमुखरूप नीचेना मुद्दाओ तरफ श्रोताओनुं ध्यान खेंचीश :

१ शब्दस्वरूप

२ भाषास्वरूप

३ भाषाभेदनां निमित्तो अने भाषाना भेदप्रभेदो.

शब्दस्वरूप

३ वर्तमानमां विज्ञाननी अनेक शाखाओमां यांत्रिक शोधोनुं प्रत्यक्ष प्रमाण प्रवर्ते छे. जे समये इंद्रियप्रत्यक्षनी आवी यांत्रिक सामग्री न हती ते समये आपणा ऋषिमहर्षिओए चराचरनां जे दृश्यो–पदार्थो–बनावटो स्थूलदृष्टिए–नरी आंखे–समझाय तेवां न हतां तेमने समझवा–समझाववा आत्मानुभव–आत्मप्रत्यक्ष–द्वारा अनेक प्रयोगो करेला छे अने तेम करी तेमणे पोतपोताना अमुक चोक्कस सिद्धांतो घडी राखेला छे.

भारतवर्षनां समग्र दर्शनोनुं उत्थान अने तेमना अनेक प्रवाहो तरफ दृष्टि मांडतां ज उक्त हकीकत ध्यानमां आवे एवी छे.

---

१ जैन विचारको, वैदिक विचारको अने बौद्ध विचारको आत्मा, ईश्वर, कर्म वगेरे तर्कातीत प्रमेयोविशे भिन्न भिन्न अभिप्राय धरावे छे. तेमज अंधकार, छाया, तेज वगेरे दृश्यपदार्थोविशे पण तेमनी विचारसरणी भिन्नभिन्न प्रकारनी छे. इंद्रियोमां कई प्राप्यकारी छे अने कई अप्राप्यकारी छे ए बाबत ते बधानी जुदी जुदी मान्यता प्रवर्ते छे, आ बधी विवादास्पद वस्तुओ माटे ते त्रणे विचारकोए लाखो श्लोकोमां लांबी लांबी चर्चाओ करेली छे. ते विचारको वच्चे आवी भिन्नता होवा छतां ते बधानुं लक्ष्य एक निर्वाण छे ए ध्यानमां राखवा जेवुं छे.

आपणने सौने विदित ज छे के शब्द, श्रोत्रइंद्रिय द्वारा जाणी शकाय छे. शब्दनां माधुर्य, कठोरता, तीव्रता, मंदता वगेरेने अनुभविए छिए एटलुं ज नहीं पण वर्तमान बजारोमां शब्दे एक घणुं मोटुं स्थान रोकी राख्युं छे—आ रीते शब्द, अतिप्रचलित छतांय ए शुं छे? शानो बनेलो छे? एनुं मूळ क्यां छे? एवी एवी जिज्ञासाओ भाग्ये ज कोईने ऊठती हशे.

---

२ जे शब्द आपणे बोलिए छिए तेनी उत्पत्तिनो क्रम आपिशलिनामना वैयाकरणे नीचे प्रमाणे जणाव्यो छे:—

"नाभिप्रदेशात् प्रयत्नप्रेरितः प्राणो नाम वायुः ऊर्ध्वम् आक्रामन् उरःप्रभृतीनां स्थानानाम् अन्यतमस्मिन् स्थाने प्रयत्नेन विधार्यते । स विधार्यमाणः स्थानम् अभिहन्ति। तस्मात् स्थानाभिघातात् ध्वनिः उत्पद्यते आकाशे, सा वर्णश्रुतिः—स वर्णस्य आत्मलाभः। तत्र वर्णध्वनौ उत्पद्यमाने यदा स्थान–करण–प्रयत्नाः परस्परं स्पृशन्ति सा स्पृष्टता। यदा ईषत् स्पृशन्ति सा ईषत्स्पृष्टता। यदा सामीप्येन पृशन्ति सा संवृतता। दूरेण यदा स्पृशन्ति सा विवृतता। एषः अन्तःप्रयत्नः। स इदानीं प्राणो नाम वायुः ऊर्ध्वम् आक्रामन् मूर्ध्नि प्रतिहतः निवृत्तः कोष्ठम् अभिहन्ति, तत्र कोष्ठे अभिहन्यमाने कण्ठविलस्य विवृतत्वाद् विवारः। संवृतत्वात् संवारः। तत्र यदा कण्ठविलं विवृतं भवति तदा श्वासो जायते, संवृते तु नादः। तौ अनुप्रदानम् आचक्षते। तत्र यदा स्थान–करणाभिघातजे ध्वनौ नादः अनुप्रदीयते तदा नादध्वनि-संसर्गाद् घोषो जायते। यदा तु श्वासः अनुप्रदीयते तदा श्वासध्वनिसंसर्गाद् अघोषो जायते। अल्पे वायौ अल्पप्राणता। महति महाप्राणता—महाप्राणत्वाद् ऊष्मत्वम्। यदा सर्वाङ्गानुसारी प्रयत्नस्तीव्रो भवति तदा गात्रस्य निग्रहः कण्ठविलस्य च अणुत्वम् स्वरस्य च वायोः तीव्रगतित्वाद् रौक्ष्यं भवति तम्—उदात्तम्—आचक्षते। यदा तु मन्दः प्रयत्नो भवति तदा गात्रस्य स्रंसनम् कण्ठविलस्य च महत्त्वम् स्वरस्य च वायोर्मन्दगतित्वात् स्निग्धता भवति तम्—अनुदात्तम्—आचक्षते। उदात्ता–ऽनुदात्त–स्वरसंनिपातात् स्वरित इत्येष कृत्स्नो बाह्यप्रयत्नः"।—सिद्धहेम—१—१—१६। अर्थात्

"कोई पण बोलनार ज्यारे बोलवानो प्रयत्न करे छे त्यारे ते प्रयत्नद्वारा सौथी प्रथम प्राण नामनो वायु नाभिए—डुंटीए—थी गतिमान थाय छे. नाभिएथी गतिमान थयेलो प्राणवायु ऊपर धसारो करे छे अने ते ऊपर धसी आवतो वायु, बोलवानां गमे ते स्थानोमांनां कोई एकमां जगा मेळवे छे. [बोलवानां स्थानो आठ छे:

१ उर–छाती, २ कंठ–गळुं, ३ माथुं, ४ जीभनुं मूळ, ५ दांत, ६ नासिका–नाक, ७ ओष्ठ–होठ अने ८ ताळवुं. प्रयत्न बे छे : आस्यप्रयत्न अने बाह्यप्रयत्न. मुखनी अन्दर थतो प्रयत्न ते आस्यप्रयत्न. होठथी मांडीने कंठमणि–हडिया–सुधीना भागनुं नाम मुख. मुख सिवाय शरीरना अन्यभागमां–कोठामां–थतो प्रयत्न ते बाह्य प्रयत्न. जिह्वानुं मूळ, मध्यभाग अने अग्रभाग ते त्रण करण छे] कोई एक उच्चारणस्थानमां जगा मेळवतां ज ते प्राणवायु, पोताना आश्रयरूप स्थान साथे अथडाय छे—ए रीते स्थान साथे वायुना अथडावाथी बहार–आकाशमां–ध्वनि थाय छे. ए ध्वनिनुं नाम शब्द–ए ध्वनि पोते ज शब्दनो आत्मा. हवे ज्यारे ते ध्वनि उत्पन्न थाय छे त्यारे जो स्थान, करण अने प्रयत्नो ए बधां य एक बीजां परस्पर स्पर्श करतां होय तो ते स्पर्शनुं नाम स्पृष्टताप्रयत्न. ते बधां परस्पर जराजरा ज अडकतां होय तो ते जराजरा अडकवानुं नाम ईषत्स्पृष्टता. ते बधां एक बीजांनी समीप रहीने अडकतां होय तो ते क्रियानुं नाम संवृतता अने ते बधां एक बीजांथी दूर रहीने स्पर्श करतां होय तो ते स्पर्शनुं नाम विवृतता. ए चार प्रयत्नो मुखमां थाय छे माटे तेमनुं नाम आंतर प्रयत्न (आस्यप्रयत्न) छे. वळी पाछो ऊपर धसतो ते प्राणवायु माथामां अथडाई पाछो वळतो आपणा कोठा साथे अथडाय छे. कोठा साथे अथडातां कंठबिल–गळानुं छिद्र–विवृत थाय छे–ए विवृत थवानी क्रियानुं नाम विवार. वळी, ए वायु कोठा साथे अथडातां कंठबिल संवृत थाय छे–संवृत थवानी क्रियानुं नाम संवार. वळी, ते वखते ज्यारे कंठबिल विवृत थाय छे त्यारे एक श्वासरूप क्रिया थाय छे अने कंठबिल संवृत थाय छे त्यारे एक नादरूप क्रिया थाय छे. श्वास अने नाद ए बन्नेनुं एक नाम 'अनुप्रदान' छे. ["अनुप्रदान एटले अनुस्वान अर्थात् घंट के झालर वागी रह्या पछी अथवा वागतां होय त्यारे जे तेमना मुख्य अवाज साथे के पछी झणझणाट थाय छे तेनुं नाम अनुप्रदान" एवो बीजाओनो अभिप्राय छे.] हवे ते वखते स्थान अने करणोनी अथडामणी थतां ते द्वारा पेदा थता ध्वनिमां ज्यारे नादनुं अनुप्रदान थाय छे त्यारे नाद अने ध्वनिना संसर्गथी घोष नामनी क्रिया थाय छे अने ते वखते ज्यारे श्वासनुं अनुप्रदान थाय छे त्यारे श्वास अने ध्वनिना संसर्गथी अघोष नामनी क्रिया थाय छे. ते वखते वायु अल्प होय तो अल्पप्राणतानो प्रयत्न होय अने वायु वधारे होय तो महाप्राणतानी क्रिया समझवी. ए महाप्राणताने लीधे ऊष्मता थाय छे. ज्यारे ते वखते सर्वांगा-नुसारी प्रयत्न तीव्र होय त्यारे गात्र कठण थाय छे. कंठबिल नानुं थाय छे अने

वायुनी तीव्रगतिने लीधे स्वरमां रूक्षता आवे छे–आवी उच्चारणनी क्रियाने 'उदात्त' प्रयत्न कहेवामां आवे छे. वळी, ज्यारे ए सर्वांगानुसारी प्रयत्न मंद होय छे त्यारे गात्र ढीलुं पडे छे, कंठबिल मोटुं थाय छे अने वायुनी मंदगतिने लीधे स्वरमां स्निग्धता आवे छे–आ जातनी उच्चारण क्रियाने 'अनुदात्त' प्रयत्न कहेवामां आवे छे. हवे ज्यारे उदात्त स्वर अने अनुदात्त स्वर ए बन्ने स्वरो भेगा थाय त्यारनी उच्चारणप्रवृत्तिनुं नाम 'स्वरित' प्रयत्न छे. आ रीते १ विवार, २ संवार, ३ श्वास, ४ नाद, ५ घोष, ६ अघोष, ७ अल्पप्राण, ८ महाप्राण, ९ उदात्त, १० अनुदात्त अने ११ स्वरित ए अगियार बाह्य प्रयत्नो छे. प्रत्येक स्वर अने व्यंजननां स्थान, करण, आस्यप्रयत्न अने बाह्यप्रयत्ननी समझूती नीचे प्रमाणे छे :

अवर्ण (अ–आ) } क वर्ग, ह अने विसर्ग–कंठ

इवर्ण (इ–ई) } च वर्ग, य अने श–तालु

उवर्ण (उ–ऊ) } प वर्ग अने उपध्मानीय–ओष्ठ

ऋवर्ण (ऋ–ॠ) } ट वर्ग, र अने ष–मूर्ध

ऌवर्ण (ऌ–ॡ) } त वर्ग, ल अने स–दंत

ए ऐ ... ... तालु
ओ औ ... ... ओष्ठ
व ... ... दंत–ओष्ठ

जिह्वामूलीय ... ... जिह्वा
अनुस्वार ... ... नासिका
ङ, ञ, ण, न, म ... ... पोत पोतानां पूर्वोक्त स्थान अने नासिका

'क' थी 'म' सुधीना व्यंजनो... ... स्पृष्ट प्रयत्न (आस्यप्रयत्न)
य, र, ल, व ... ... ईषत्स्पृष्ट प्रयत्न

श, ष, स, ह	ईषद्विवृत प्रयत्न
'अ' थी 'औ' सुधीना स्वरो	विवृत प्रयत्न
ए—ओ	विवृततर प्रयत्न
ऐ—औ	अतिविवृततर प्रयत्न
अ—आ	अतिविवृततम

'अ' थी मांडीने 'लृ' सुधीना स्वरोमांना प्रत्येक स्वरनां अढार अढार उच्चारणो थाय छे. नमूना माटे आ नीचे मात्र एक 'अ' ना अढार उच्चारणो आप्यां छे:

निरनुनासिक उच्चारण—

१ ह्रस्व उदात्त अ	४ दीर्घ उदात्त आ	७ प्लुत उदात्त अ ३
२ ,, अनुदात्त अ	५ ,, अनुदात्त आ	८ ,, अनुदात्त अ ३
३ ,, स्वरित अ	६ ,, स्वरित आ	९ ,, स्वरित अ ३

सानुनासिक उच्चारण—

१० ह्रस्व उदात्त अँ	१३ दीर्घ उदात्त आँ	१६ प्लुत उदात्त अँ ३
११ ,, अनुदात्त अँ	१४ ,, अनुदात्त आँ	१७ ,, अनुदात्त अँ ३
१२ ,, स्वरित अँ	१५ ,, स्वरित आँ	१८ ,, स्वरित अँ ३

आ ज प्रमाणे 'लृ' सुधीना तमाम स्वरोनां अढार अढार उच्चारण समजवानां छे. ए, ओ, ऐ, औ—ए चारनुं संस्कृतप्रयोगोमां ह्रस्व उच्चारण थतुं नथी माटे तेनां प्रत्येकनां ह्रस्व सिवायनां पूर्वोक्त बार बार उच्चारणो समजवां.

य ल व—ए प्रत्येकनां बबे उच्चारणो छे:—एक सानुनासिक अने बीजुं निरनुनासिक.

य—ल—व—निरनुनासिक

यँ—लँ—वँ—सानुनासिक

	बाह्यप्रयत्न:
क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, श, ष, स, विसर्ग, जिह्वामूलीय अने उपध्मानीय	विवार, श्वास अने अघोष
ग घ ङ, ज झ ञ, ड ढ ण, द ध न, ब भ म, य र ल व, ह अने अनुस्वार	संवार, नाद अने घोष
क ग ङ, च ज ञ, ट ड ण, त द न, प ब म, य र ल व	अल्पप्राण

ख घ, छ झ, ठ ढ, थ ध, फ भ, श ष स ह	} महाप्राण

केटलाक स्वर अने व्यंजननी उच्चारण प्रक्रियामां प्राचीनोए मतभेद बतावेलो छे. जेमके—

१ अवर्णनुं स्थान–आखुं मुख–मुखमां रहेलां बधां स्थानो.
२ ह अने विसर्गनुं स्थान–उरस्–छाती.
३ कवर्गनुं स्थान–जिह्वामूल
४ रेफनुं स्थान–दांतनुं मूल–दंतमूल
५ ए—ऐ ,,—कंठ अने तालु
६ ओ–औ ,,—कंठ अने ओष्ठ
७ व नुं स्थान सृक्–गलोफुं
८ जिह्वामूलीयनुं स्थान–कंठ
९ अनुस्वारनुं स्थान–कंठ–नासिका
१० श ष स ह–ए चार ऊष्माक्षरनो आंतरप्रयत्न विवृत
११ अकारनो ,, संवृत
१२ 'ऌ' नुं दीर्घ उच्चारण नथी माटे तेना बार भेद समझवा.

प्राणवायु अने स्थानोनो अभिघात–अथडामण–थतां जे उच्चारणव्यापार थाय छे तेनुं नाम आस्यप्रयत्न अने प्राणवायु तथा कोठानो अभिघात थतां जे व्यापार थाय छे तेनुं नाम बाह्यप्रयत्न. ए, ते बे प्रयत्नोनुं सामान्य स्वरूप छे. आस्यप्रयत्नो ध्वनि नीकळवाने समये ज थाय छे अने बाह्यप्रयत्नो ध्वनि नीकळ्या पछी थाय छे. ए, ते बे प्रयत्नोनी विशेषता छे." उच्चारणशास्त्रना अभ्यासी माटे उच्चारणो संबंधी आटलुं विवरण उपयोगी थशे.

शब्दनां उच्चारणो शुद्ध, शुद्धतर, शुद्धतम करवा माटे शिक्षासंग्रहमां जे बाह्यविधि बताव्यो छे ते आ प्रमाणे छे:

"आम्र–पलाश–बिल्वानां अपामार्ग–शिरीषयोः ॥ ३३ ॥
वाग्यतः प्रातरुत्थाय भक्षयेद् दन्तधावनम् ।
खदिरश्च कदम्बश्च करवीर–करञ्जकौ ॥ ३४ ॥
एते कण्टकिनः पुण्याः क्षीरिणश्च यशस्विनः ।
तेनाऽऽस्य-करणं सूक्ष्मम् माधुर्यं चोपजायते ॥ ३५ ॥

स्पर्श, गंध, रस अने रूप जेटला स्पष्ट छे तेटलो शब्द नथी. शब्दनुं स्वरूप आवुं अगम्य जेवुं होवाने लीधे ज तत्त्वज्ञानना प्राचीन पुस्तकोमां तेने माटे घणां पानां रोकायेलां छे एटलुं ज नहीं पण तेना संबंधमां प्राचीन चिंतकोए जुदा जुदा विचारो बांधी राख्या छे.

शब्द स्वरूप विशे अनेक मतो कपिल

सांख्यतत्त्वज्ञानना[३] आद्य पुरुष कपिलमुनिए शब्दने प्रकृतिनो विकार कह्यो छे. प्रकृति जडस्वरूप छे, व्यापक छे. आकाश पण प्राकृतिक छे अने तेनी उत्पत्ति शब्दतन्मात्राओ द्वारा थयेली छे. ('तन्मात्रा'नो ख्याल 'परमाणु' शब्दथी आवी शके छे.)

त्रिफलां लवणात्तेन भक्षयेच्छिष्यकः सदा।
क्षीण(अग्नि)मेधाजनन्येषा स्वरवर्णकरी तथा" ॥ ३६ ॥—याज्ञवल्क्यशिक्षा पृ० ५ तथा नारदीयशिक्षा पृ० ४४३ (बनारस-संस्कृत सिरिझ १८९३) अर्थात्

"सवारना पहोरमां ऊठीने आंबानुं, खाखरानुं, बीलानुं, अघेडानुं, शिरीषनुं तथा खेरनुं, कदंबनुं, कणेरनुं अने करंजक [कणजी] नुं दातण करवुं जोईए, एनाथी वाणीनी शुद्धि थाय छे. ए उपरांत बधां कांटावाळां अने दूधवाळां वृक्षोनां पण दातण स्वरशुद्धि माटे लाभकारक छे. लवण साथे त्रिफळां खावाथी स्वरमां शोभा आवे छे, बुद्धि वधे छे अने अग्नि पण प्रदीप्त थाय छे."

३ सांख्यतत्त्वकौमुदीमां शब्दने आकाशनो गुण कहीने जणावेलो छे :

" प्रकृतेर्महान् ततः अहंकारः तस्माद् गणश्च षोडशकः।
तस्मादपि षोडशकात् पञ्चभ्यः पञ्च भूतानि" ॥ २२ ॥

व्याख्या–"पञ्चभ्यः तन्मात्रेभ्यः पञ्च भूतानि—आकाशादीनि तत्र शब्दतन्मात्राद् आकाशं शब्दगुणम्"– (सांख्यतत्त्वकौमुदी)

"प्रकृतिथी महान् (महत्-तत्त्व) नीपजे छे, तेमांथी अहंकार अने अहंकारमांथी सोळ पदार्थोनो गण पेदा थाय छे. पांचमांथी पांच भूतो नीपजे छे." २२. "पांच तन्मात्राओमांथी पांच भूतो—आकाश वगेरे—नीपजे छे. शब्दतन्मात्रामांथी आकाश ऊपजे छे अने आकाशनो गुण शब्द छे."

न्याय[4]दर्शनना अग्रणी गौतममुनिए अने वैशेषिक[5] दर्शनना पुरोधा कणादमुनिए शब्दने आकाशनो गुण कहीने वर्णव्यो छे. कदंबगोलकन्याये वा वीचितरंगन्याये शब्दनुं प्रसरण पण तेओ माने छे.

गौतम-कणाद

जैनदृष्टि[6] मुख्यपणे बे तत्त्वोने स्वीकारे छे: चेतन अने जड. जडना बे भाग छे—एक अमूर्त कोटिनुं अने बीजुं मूर्तकोटिनुं. पुद्गल मूर्तकोटिनुं जड कहेवाय अने आकाश अमूर्त कोटिनुं. शब्द मूर्तिमंत छे माटे ज ते, जड पुद्गलनो विशेष प्रकारनो परिणाम छे. शब्द अने आकाश वच्चे गुणगुणीनो वा कार्यकारणनो संबन्ध जैनदृष्टि स्वीकारती नथी. भाषानी—शब्दनी—वर्गणाओ आखा य लोकाकाशमां पथरायेली छे. ('वर्गणा'नी समझ माटे 'परमाणु' शब्द पूरतो छे.)

जैन

मूलद्रव्यग्राही द्रव्यार्थिक[7] नयनी दृष्टिए जोतां 'शब्द' नित्य कहेवाय

---

४ "गन्ध–रस–रूप—स्पर्श–शब्दानां स्पर्शपर्यन्ताः पृथिव्याः। अप्–तेजो–वायूनां पूर्वं पूर्वम् अपोह्य आकाशस्य उत्तरः"—गौतममुनिप्रणीत न्यायसूत्र अध्या० ३ आह्नि० १ सूत्र ६०.

५ "तत्र आकाशस्य गुणाः शब्द–संख्या-परिमाण–पृथक्त्व–संयोग–विभागाः"—
वैशेषिक दर्शन-प्रशस्तपादभाष्य.

"परिशेषाद् गुणो भूत्वा आकाशस्य अधिगमे लिङ्गम्"—
वैशेषिकद० आकाशानुमानप्रकार पृ० २५.

६ "सद्द–अंधयार–उज्जोओ पभा छाया–ऽऽतवु त्ति वा।
वण्ण–रस–गंध–फासा पुग्गलाणं तु लक्खणं" ॥ १२ ॥—उत्तराध्ययनसूत्र अध्य० २८

७ वक्तानो जे अभिप्राय मूळ द्रव्यविशे प्रवर्ते अने द्रव्यगत गुणादि धर्मो प्रति उपेक्षावृत्ति दाखवे ते अभिप्रायनुं नाम द्रव्यार्थिकनय–भेदनो निषेध न करती अभेदग्राही दृष्टि–सन्मतिप्रकरण गा० ३ ।

अने परिणामगामी पर्यायार्थिक नयनी दृष्टिए जोतां 'शब्द' अनित्य फळे छे.[८]

शब्दनुं उपादानकारण शब्दनी वर्गणाओ छे अने प्रेरककारण या संयोजककारण जीव छे. शब्दना अणुओनी आकृति वज्रनी छे. उच्चार्यमाण या स्पन्दमान शब्द गतिशील छे. महाप्रयत्नथी नीकळतो शब्द बाधक सामग्री न होय तो लोकना छेक छेडा सुधी पहोंचे छे अने पछी ते तूटी जाय छे त्यारे मंदप्रयत्नथी पेदा थतो शब्द अमुक ज योजनो सुधी फेलाई पछी वीखराई जाय छे.

भाषानी वर्गणाओ शब्दरूपे परिणमे छे. तेमां रूप, रस, गंध अने अविरोधी बे स्पर्श पण होय छे. वर्गणाओ पोते गतिशील नथी परंतु शब्दरूपे परिणाम पामेली वर्गणाओ गतिशील छे.

---

८ पदार्थनो जे अभिप्राय द्रव्यगत गुणादि धर्मोविशे प्रवर्ते अने मूळद्रव्य प्रति तटस्थता दाखवे ते अभिप्रायनुं नाम पर्यायार्थिक नय—सामान्यने न निषेधती भेदग्राही दृष्टि—सन्मतिप्रकरण गा० ३।

९. " चउहिं समएहिं लोगो भासाइ निरंतरं तु होइ फुडो ।
लोगस्स य चरमंते चरमंतो होइ भासाए " ॥ १० ॥

इह कश्चिद् मन्दप्रयत्नो वक्ता भवति स अभिन्नान्येव शब्दद्रव्याणि विसृजति तानि च विसृष्टानि असंख्येयात्मकत्वात् परिस्थूलत्वाच्च भिद्यन्ते, भिद्यमानानि च संख्येयानि योजनानि गत्वा शब्दपरिणामत्यागमेव कुर्वन्ति। कश्चित्तु महाप्रयत्नः स खलु आदाननिसर्गाभ्यां भित्त्वैव विसृजति तानि च सूक्ष्मत्वाद् बहुत्वाच्च अनन्तगुणवृद्ध्या वर्धमानानि षट्सु दिक्षु लोकान्तमाप्नुवन्ति" इत्यादि—आवश्यक सूत्र-निर्युक्ति-पृ० १७.

आ संबंधे वधारे समजवा माटे प्रज्ञापनासूत्रनुं अगियारमुं भाषापद अने तेनुं विवेचन जोई लेवुं.

बौद्धपरंपरानी दृष्टिए समग्र विश्व पंचस्कंधात्मक छे, तेमां रूपस्कंधमां

बौद्ध शब्दनो समावेश छे ए जोतां ए दृष्टि पण शब्दनुं भौतिकस्वरूप स्वीकारे छे.

महान वैयाकरण पतंजलि[११] अने वाक्यपदीयना प्रणेता भर्तृहरिए

पतंजलि भर्तृहरि स्फोटरूप निरवयव शब्दने नित्य कह्यो छे अने मुखादि द्वारा ध्वन्यमान शब्दने अनित्य कह्यो छे. ते बन्ने वैयाकरणो शब्दना परमाणुओ होवानुं स्वीकारे छे. श्रवणगोचर थता ध्वनिओनुं तेमणे 'वैखरी'[१३] वाणी नाम आपेलुं छे एटलुं ज नहीं पण—

"अनादिनिधनं शब्द-ब्रह्मतत्त्वं यद्-अक्षरम् ।
विवर्ततेऽर्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः" ॥
[वाक्यपदीय श्लो० १]

---

१० बौद्धमतमां चार आर्यसत्योने तत्त्वरूप जणावेलां छे: दुःख, समुदय, मार्ग अने निरोध. दुःखना पांच प्रकार छे: विज्ञान, वेदना, संज्ञा, संस्कार अने रूप. दुःखना प्रकारभूत एक 'रूप'मां शब्दनो समावेश छे:—षड्दर्शनसमुच्चय—बौद्धदर्शन.

११ "किं पुनर्नित्यः शब्दः आहोस्वित् कार्यः? संग्रहे एतत् प्राधान्येन परीक्षितम् × × × तत्र त्वेष निर्णयः—यद्येव नित्यः अथापि कार्यः उभयथाऽपि लक्षणं प्रवर्त्यम्"—महाभाष्य—अभ्यंकरशास्त्री पृ० १३.

१२ "अणवः सर्वशक्तित्वाद् भेद-संसर्गवृत्तयः ।
छाया-ऽऽतप-तमः-शब्दभावेन परिणामिनः ॥ ११२ ॥
स्वशक्तौ व्यज्यमानायां प्रयत्नेन समीरिताः ।
अभ्राणीव प्रचीयन्ते शब्दाख्याः परमाणवः ॥ ११३ ॥
—वाक्यपदीय प्रथम कांड.

१३ "स्थानेषु विधृते वायौ कृतवर्णपरिग्रहा ।
वैखरी वाक् प्रयोक्तॄणां प्राणवृत्तिनिबन्धना" ॥
—स्याद्वादरत्नाकर प्रथम भाग पृ० ८९, अवतरण.

अर्थात्–"अनादि अनंत अने अक्षरात्मक शब्दब्रह्म, अर्थरूपे विवर्त पामे छे अने तेनाथी जगतनी प्रक्रिया चाली रही छे"–एम कही तेओ शब्दतत्त्वनी अपूर्व–अवर्ण्य–प्रतिष्ठा वर्णवे छे.

आ रीते आपणा महर्षिओने शब्दतत्त्वनुं दर्शन जुदी जुदी दृष्टिए थयेलुं छे. ए बधां आर्षदर्शनो अने यांत्रिक शब्दविज्ञाननी वर्तमान दृष्टि– ए बे वच्चे क्यांय सुमेळ बेसे छे के केम? एनो खुलासो तो पाकट अनुभववाळो शब्दविज्ञानशास्त्री ज आपी शके.

शब्द अने शब्दार्थ

जे रीते शब्दना स्वरूपविशे प्राचीन लोकोए जुदा जुदा अनुभवो घडी राख्या छे ते ज रीते 'शब्द' अने 'शब्दार्थ' वा 'पदार्थ' वच्चेना संबंधपरत्वे पण तेमनी भिन्न भिन्न मान्यताओ प्रवर्ते छे.

प्राचीन चिंतकोना उक्त विचारो द्वारा आपणे शब्दना स्वरूपविशे कोई एक निर्णीत सिद्धांत नथी मेळवी शकता ए भले, परंतु जे समये आवा यांत्रिक शोधननी आटली बधी सामग्री न हती अने अत्यारे शिष्ट गणाती प्रजा असंस्कारी जीवन गुजारती हती तेवे समये पण आपणा पूर्वज चिंतकोना चिंतनीय प्रदेशमां 'शब्द' पण विशेष स्थान रोकी रह्यो हतो अने ए गूढ तत्त्वने समझवा तेमणे प्रबल प्रयत्न य सेव्यो हतो–एटली ज हकीकत आपणे माटे आजे गौरवरूप नथी?

भाषास्वरूप

४ तरतनुं जन्मेलुं बाळक मात्र रडवानो ध्वनि करी शके छे, जेम जेम ए मोटुं थतुं जाय छे तेम तेम हसवानो ध्वनि य करतुं थई जाय छे. पछी तो ए पोतानी वृत्तिओने व्यक्त करवा शारीरिक चेष्टाओनो य आश्रय करतां शीखे छे अने एम करतां करतां अर्थसूचक भांग्या तूट्या व्यक्त शब्दो बोलतुं बोलतुं ते, तद्दन स्पष्ट उच्चारण सुधी आवी जाय छे.

ए ज न्याय मानवसमाजनी भाषाना घडतर माटे पण घटमान छे.

'शब्द'नुं मूळ "शप् आक्रोशे" धातुमां

मानवसमाज पोताना बाल्यकाळमां हतो त्यारे अस्पष्ट शब्दोनो किकियारीओनो[14], मूक मानवनी पेठे शारीरिक निशानीओनो अने विशेष स्पष्ट व्यवहार माटे चित्रोनो य उपयोग करतो करतो प्रौढ वय पामी स्पष्ट उच्चारणना युगमां आव्यो त्यारथी भाषानी शरूआत थई कहेवाय.

स्पष्ट उच्चारणनुं ज नाम भाषा. 'भाषँ्'[15] धातुनो मूळ अर्थ 'व्यक्त वाणी' छे.

भाषाभेदनां निमित्तो अने भाषाना भेदप्रभेदो

५ 'बार गाउए बोली बदलाय' ए न्याये जोईए तो भाषाओनो आरोवारो नहीं जणाय. भाषाभेदनो आ प्रवाह सनातन छे. स्पष्टरीते जुदां जुदां नामपूर्वक भाषाभेदनो उगम अने तेनो प्रचार थतां भले युगो वीत्या होय परंतु स्पष्ट भाषानां बीज ज्यारथी रोपायां, भाषाभेदनां बीज पण त्यारथी नखायां भासे छे.

भाषाभेदनां निमित्तो

६ भाषाभेदनां निमित्तो[16] सर्वकाळे सदा संभवे एवां छे: भौगोलिक परिस्थिति, ऋतुओनी अनियमितता, शीततानुं आधिक्य, उष्णतानी प्रबळता, राज्योनी क्रांति, अन्य अन्य भाषाओनो संपर्क, स्वच्छ-शुद्धभाषाना आग्रहनी खामी, शरीरनुं अने उच्चारणनां साधनोनी रचनानुं वैविध्य, बोलवानां स्थानो,

---

१४ वैयाकरणोए 'शब्द' पदनुं पृथक्करण करीने एम जणाव्युं छे के तेमां 'शप्' प्रकृति छे अने 'द' प्रत्यय छे. 'शप्' धातुनो अर्थ 'आक्रोश' छे. 'शब्द' पदना मूळमां रहेलो 'शप्' आ किकियारीओनो संवादक जणाय छे.—
(सिद्धहेमचंद्र अध्याय ४-२-२३७)

१५ "भाषि व्यक्तायां वाचि"—सिद्धहेमधातुसंग्रह तथा पाणिनीय धातुसंग्रह.

१६ "सर्वेषां कारणवशात् कार्यो भाषाविपर्ययः।
माहात्म्यस्ये परिभ्रंशं मदस्यातिशयं तथा॥

आस्यप्रयत्नो, करणो अने बाह्यप्रयत्नोनी विविध प्रकारनी अशुद्धिओ, अज्ञान, एक ज शब्दनां अनेकविध उच्चारणो, विजयी प्रजा अने पराजित प्रजा वच्चे गाढ संपर्क, पराजित प्रजानो ठेठ अंतःपुर सुधी प्रवेश अने लोहीनो संबंध, देशदेशांतरमां भ्रमण अने व्यापारादि कार्य माटे स्थिरवास, मिथ्याअभिमान, अशुद्ध उच्चारण, अशुद्ध वाचन अने व्याकरण तथा व्युत्पत्ति प्रति बेदरकारी वगेरे अनेकानेक कारणो भाषाभेदने नीपजावी शके छे.

शुद्ध उच्चारण-वाळा समाजमां पण भाषाभेदनां निमित्तो

७ एक वार एम कल्पी लईए के कोई एक समाज शुद्ध उच्चारणोनी विशेष तरफेण करनारो छे. बहारनो खास संपर्क नथी. अने व्याकरण वा व्युत्पत्तिशास्त्र साथे सहानुभूति पण छे. तेम छतां प्रकृतिए निर्मेलां मानवनां उच्चारण-स्थानो सदा एकसरखां होवां के रहेवां संभवित नथी. वळी, उच्चारणस्थानो ऊपर जेमनी असर सदा रहे छे एवी प्राकृतिक गरमी, शरदी, खानपाननी विशेष प्रकारनी अनुकूळता वगेरेनी परिस्थिति सदा एकसरखी रहेवी पण बटमान नथी. एवां एवां सर्व सुलभ अनेक निमित्तोने लीधे उच्चार्यमाण वर्णनो रणको सदा काळ एकसरखो रहेतो नथी.

प्रच्छादनं च विभ्रान्तिं यथालिखितवाचनम् ।
कदाचिद् अनुवादश्च कारणानि प्रचक्षते"
—रूपकपरिभाषा (षड्भाषाचंद्रिकामां अवतरण)

१७ "शब्दे प्रयत्ननिष्पत्तेरपराधस्य भागित्वम्"
—मीमांसादर्शन अ० १, पा० ३ अधि० ८ सूत्र २५.

"महता प्रयत्नेन शब्दमुच्चरन्ति । वायुर्नाभेरुत्थितः उरसि विस्तीर्णः कण्ठे विवर्तितः मूर्धानमपहाय परावृत्तः वक्त्रे विचरन् विविधान् शब्दान् अभिव्यनक्ति । 'तत्र अपराध्येत अपि उच्चारयिता । यथा शुष्के पतिष्यामि इति कर्दमे पतति,

सकृद् उपस्प्रक्ष्यामि इति द्विः उपस्पृशति। ततोऽपराधात् प्रवृत्ता 'गावी'–आदयो भवेयुः। न नियोगतोऽविच्छिन्नपारंपर्या एव इति"–शाबरभाष्य.

यदि हि एकान्तेन यादृशः परमुखात् शब्दः श्रूयते तादृगेव सर्वेण सर्वदा उच्चार्येत ततो वृद्धव्यवहारपरम्परायां सत्यां गवादिभिरिव न गाव्यादिभिः कश्चिदपि कालः शून्य आसीत् इत्यध्यवसायाद् अनादित्वमङ्गीक्रियते।

अपराधजस्य शब्दस्य संभवात् तु तदाशङ्कायां सत्यां नैकान्ततः सर्वेषामनादित्वम्। 'प्रयत्ननिष्पत्तेः' इति। पूर्वोक्तन्यायावधारितप्रयत्नाभिव्यक्तिरेव हेतुत्वेन उपदिश्यते। अपर आह—'अप्रयत्ननिष्पत्तेरपराधस्य भागिता' इति। यो हि अस्खलितप्रयत्नः शब्दम् अभिव्यनक्ति तस्य परम्परागतशब्दोच्चारणमात्रात् सर्वे समानविधाना भवेयुः। यदा तु अप्रयत्ननिष्पत्तिरपि शब्दे संभाव्यते तदा तत्र अपराधजरूपान्तरापत्तिप्रसङ्गाद् न नियोगतः सर्वशब्दानां समानविधानत्वम्। अथवा शब्दविषयस्य प्रयत्नस्यैव या निष्पत्तिस्तस्यामपराधः **सुनिपुणानामपि अविकलकरणानां दृश्यते किमुत अनिपुण-विगुणकरणानाम्।**

यश्च प्रयत्ननिष्पत्तावपराधः कृतास्पदः।
शब्दे स तदभिव्यङ्ग्ये प्रसजन् केन वार्यते ?॥
अतश्चानपराधेन व्यज्यमानेषु साधुता।
सापराधेष्वसाधुत्वं व्यवस्थैवं च तत्कृता॥

* * *

अपराधस्य भागित्वादुभयं सावकाशकम्।
साधोरनियता प्राप्तिरसाधोश्च प्रयोज्यता॥

* * *

एक एवायं शब्दः पुरुषाऽशक्ति–प्रमादकारणादिभेदात् तां तां वर्णन्यून–अतिरेक–क्रमान्यत्व–आदिअवस्थामुपनतस्तेन तेन अपभ्रंशरूपेण गृह्यमाणः तमेव अर्थं प्रतिपादयति इति न पर्यायकल्पनया वाचकशब्दान्तरत्वैकान्तसिद्धिः"—(उक्तसूत्रनुं तन्त्रवार्तिक पृ० २७५–२७६ आनन्दाश्रम)

"अशक्तिजानुकरणार्थः—अशक्त्या कयाचिद् ब्राह्मण्या 'ऋतकः' इति प्रयोक्तव्ये 'लृतकः' इति प्रयुक्तम्"—(महाभाष्य अ० आ० पृ० ४५)

उच्चारण करना-राओनी विविध परिस्थिति अने उच्चारणो ऊपर एनी विधविध असर

८ गमे ते वर्णनुं उच्चारण करती वखते कोईनुं वलण वधारे पडतुं विवृत होय छे वा संवृत होय छे, घोष होय छे वा अघोष होय छे, कोईनुं वलण वधारे पडतुं नासिक्य रहे छे, एवो पण संभव छे के दन्त्य अक्षरो ज न बोली शकाय एटले तवर्गने बदले टवर्ग ज बोलाई जाय वा दन्त्य 'ल' ने बदले 'र' ज नीकळी जाय, मूर्धन्य 'ण' ने बदले 'न' ज आवी जाय, बोलतां बोलतां एकने बदले बीजो पण सवर्ण वर्ण ज खरी पडे, केटलीक वार वर्णोनो विपर्यास पण थई जाय, वधारे पडतुं दीर्घ उच्चारण के वधारे पडतुं ह्रस्व उच्चारण थई जाय, उदात्त अनुदात्त अने स्वरितना भेदनुं अज्ञान होई वधारे पडतुं तीव्र के मंद उच्चारण थई जाय, 'श' 'ष' 'स' के 'च' नो भेद जतो रहे, 'ऋ' नां विविध उच्चारणो प्रवर्ते, 'ऐ' के 'अइ' ना भेदनो तेम ज 'औ' के 'अउ' ना भेदनो ख्याल भूंसाई जाय, बे स्वरो अव्यवहित रीते साथे आवतां तेमनुं उच्चारण

---

१८ पाणिनि वगेरे वैयाकरणोए पोताना व्याकरणमां खास एक स्वरसंधिनुं प्रकरण राख्युं छे ते ज, आ बाबतनुं प्रबळ उदाहरण छे:

दण्ड + अग्रम् – दण्डाग्रम् । तव + एषा – तवैषा । देव + इन्द्रः – देवेन्द्रः ।
प्र + ऊढः = प्रौढः । प्र + ऋणम् – प्रार्णम् । इह + एव – इहेव ।

बिम्ब + ओष्ठी – { बिम्बोष्ठी, बिम्बौष्ठी | प्र + एलयति – प्रेलयति ।

दधि + अत्र – { दध्यत्र, दधियत्र | नदी + एषा – { नदि–एषा नद्येषा |

ने + अनम् – नयनम् । नै + अकः – नायकः ।
लो + अनम् – लवनम् । लौ + अकः – लावकः ।
ते + अत्र – तेऽत्र । गो + अक्षः – गवाक्षः ।
दधि — दधिँ, दधि । मधु—मधुँ, मधु वगेरे.

बदलाई जाय, त्यारथी बोलवा जतां वच्चेना के अंतिम वर्णो खवाई जाय वा बदलाई जाय, विसर्ग अने 'ह्', उपध्मानीय अने 'ह्' तथा जिह्वा-मूलीय अने 'ह्' ए बधा वच्चेनो विभाग जतो रहे, वे व्यंजेनो अव्यवहित

---

१९ पाणिनि वगेरे वैयाकरणोए पोताना व्याकरणमां खास एक व्यंजनसंधिनुं प्रकरण आप्युं छे ते ज, आ बाबतनुं समर्थक उदाहरण छे:

ककुब् + मण्डलम्— { ककुम्मण्डलम्, ककुब्मण्डलम्.
वाग् + मयम्—वाङ्मयम् ।
वाग् + हरिः—वाग्घरिः।
वाक् + शूरः—वाक्छूरः ।
कः + खनति— कᳵखनति ।
कः + पचति—कᳶपचति ।
कः + शेते—कश्शेते
कः + चरति—कश्चरति ।
भवान् + चरः—भवाँश्चरः ।
पुम् + कामा—पुँस्कामा ।
नॄन् + पाहि—नॄँःपाहि ।
सम् + कर्ता— { संस्कर्ता, सस्कर्ता
त्वम् + करोषि— { त्वं करोषि, त्वङ् करोषि
सम् + राट्—सम्राट् ।
सुगण् + शेते—सुगण्ट्शेते ।
भवान् + साधुः—भवान्त्साधुः ।
कः + अर्थः—कोऽर्थः
देवाः + यान्ति—देवायान्ति ।

अन्यय् + याति—अन्य्याति ।
वृक्षौ + इह— { वृक्षाविह, वृक्षाइह
कः + उ—कयु ।
देवाः + आसते—देवायासते ।
सुगण् + इह—सुगण्णिह ।
कन्या + छत्रम्—कन्याच्छत्रम् ।
अर्कः—अर्क्कः, अर्कः ।
त्वक्—त्वक्क्, त्वक् ।
पुनर् + रात्रिः—पुनारात्रिः ।
गूह् + तम्—गूढम् ।
उत् + स्थानम्—उत्थानम् ।
सः + एष—सैष (पादपूरणे) ।
वाक्—वाक्, वाग् ।
चक्षुः + श्च्योतति—चक्षुश्च्योतति ।
क्षीरम्—ख्षीरम्, क्षीरम् ।
अप्सराः—अफ्सराः, अप्सराः ।
तत् + शेते—तच्शेते ।
तत् + टकारः—तट्टकारः ।
तत् + लूनम्—तल्लूनम् ।
भवान् + लुनाति—भवाँल्लुनाति । वगेरे.

रीते साथे आवतां तेमनुं उच्चारण बदली जाय, संयुक्त[२] व्यंजननुं उच्चारण करवा जतां आगळ के वच्चे गमे ते स्वर उमेराई जाय तथा 'देव' बोलवा जतां 'दएैव' एवुं बोलाई जाय–आवां अनेकानेक कारणोने लीधे नीपजतां भिन्न भिन्न उच्चारणो ज समय जतां भाषाभेदना प्रवाहने जन्मावे छे.

अवेस्तानुं उच्चारण

९ 'अमुक प्रकारनां ज उच्चारणो शुद्ध छे अने एथी ऊलटां अशुद्ध छे' एवु प्रामाणिकपणे मानता अने ए ज प्रमाणे वर्तता एवा भाषासंस्कृतिना केटलाक प्रेमीओ पोते स्वीकारेलां शुद्ध उच्चारणोनो ज प्रचार करवा अने पोते कल्पेलां अशुद्ध उच्चारणोनो समूळ ध्वंस करवा प्रबळ प्रयत्न सेवे छतां य ते अशुद्ध उच्चारणो उक्त कारणोने लीधे समाजमांथी सर्वथा अश्राव्य थयां नथी, थतां नथी तेम थवानां पण नथी ज.

पोतानी कल्पना प्रमाणे शुद्ध उच्चारणोना प्रचारनो प्रयत्न छतां पोते कल्पेला अशुद्ध उच्चारणो कदी भूंसावानां नथी

---

२० 'स्त्री' नुं 'इस्त्री,' 'स्टेशन' नुं 'इस्टेशन,' 'स्थिति' नुं 'इस्थिति' 'भार्या'नुं 'भारजा' वगेरे उच्चारणो सुप्रतीत छे।

२१

संस्कृत उचारण.	आवेस्तिक उचारण.
एषाम्	अओषाम्
प्रति	पइति
पृथु	पेरेथु
भेषज	बएषज
श्रेष्ठ	स्रएस्त

वगेरे अनेक उदाहरणो प्रतीत छे.

१० शुद्ध उच्चारणोना प्रवर्तन माटे शिक्षाओ रचाई, स्वरोना भेदप्रभेदो

२२ व्याकरण शास्त्रमां ए, ऐ, ओ, औ सिवायना तमाम स्वरोना अढार अढार भेद बतावेला छे अने ए, ऐ, ओ, औना बार बार भेद कहेला छे :

ह्रस्व—अ

दीर्घ—आ

प्लुत—अ ३ (त्रणनो अंक त्रिमात्रिक उच्चारणनो द्योतक छे)

१ ह्रस्व अ उदात्त

२ ह्रस्व अ अनुदात्त

३ ह्रस्व अ स्वरित

४ दीर्घ आ उदात्त

५ दीर्घ आ अनुदात्त

६ दीर्घ आ स्वरित

७ प्लुत अ ३ उदात्त

८ प्लुत अ ३ अनुदात्त

९ प्लुत अ ३ स्वरित

ह्रस्व अ उदात्त सानुनासिक अने निरनुनासिक

ह्रस्व अ अनुदात्त ,, ,,

ह्रस्व अ स्वरित ,, ,,

ए ज प्रमाणे दीर्घ अने प्लुत 'अ' ना पण सानुनासिक अने निरनुनासिक एवा बे बे प्रकार समजवा.

आ रीते एक 'अ' नां ज अढार उच्चारणो थाय छे. ए ज प्रमाणे 'इ' वगेरे बधा स्वरोनां अढार अढार उच्चारणो समजवानां छे.

'ए' वगेरे चार स्वरोनुं 'ह्रस्व' उच्चारण, पाणिनि वगेरे संस्कृत वैयाकरणोए स्वीकार्युं नथी तेथी तेमना प्रत्येकना बार बार प्रकार ज थाय छे.

आ प्रमाणे स्वरोनां अनेकविध उच्चारणो थाय छे. ए दरेक उच्चारण अर्थवाहक छे ए ध्यानमां राखवानुं छे.

वर्तमानमां तो मात्र भेदो ज गणाववाना रहे छे परंतु ते प्रत्येक भेदनुं शुद्ध उच्चारण करवुं के शोधी काढवुं अने तेनी अर्थवाहकता समजवानुं लगभग अगम्य जेवुं जणाय छे.

शोधाया, उच्चारणसंबंधी नाना मोटा अनेक[२३] दोषोनी गवेषणा थई,

शुद्ध उच्चारणो माटेनो प्रयत्न

शुद्ध शब्दने ज कामधेनुनुं[२४] रूप अपायुं, अशुद्ध शब्द घातकरूपे[२५] वर्णवायो, शुद्ध उच्चारण ज मोक्षनुं असाधारण साधन कहेवायुं अने सर्वथा शुद्ध उच्चारण करे एवो एक श्रोत्रिय वर्ग ज ऊभो करवामां आव्यो—ए रीते शुद्ध उच्चारणनी प्रतिष्ठा माटे अनेकानेक प्रयत्नो

छेवटे अशुद्धने पण शुद्ध मानीने चलाववुं पड्युं

थया छतां य अशुद्ध उच्चारणनी फरियाद मटी नहीं अने छेवटे 'शिष्टोनी उच्चारण पद्धति विविध छे' एम ठरावी ए प्राकृत उच्चारणोने—स्वाभाविक उच्चारणोने पण आर्षताने लीधे शुद्ध मानीने नभावी लेवानुं ज आव्युं.

---

२३ "के पुनः संवृतादयः?—संवृतः, कलः, ध्मातः, एणीकृतः, अम्बूकृतः, अर्धकः, ग्रस्तः, निरस्तः, प्रगीतः, उपगीतः, क्ष्विण्णः, रोमशः"

"ग्रस्तं निरस्तमविलम्बितं निर्हतमम्बूकृतं ध्मातमथो विकम्पितम्।
संदष्टमेणीकृतमर्धकं द्रुतं विकीर्णमेताः स्वरदोषभावनाः—" (महाभाष्य पृ० ३० वा० अ०)

२४ "एकः शब्दः सम्यग्ज्ञातः सुष्ठु प्रयुक्तः स्वर्गे लोके कामधुग् भवति" इति।
—(सर्वदर्शनसं० पाणिनिदर्शन पृ० २९६ वा० अ०)

"नाकमिष्टसुखं यान्ति सुयुक्तैर्वद्भवाग्रथैः।
अथ पत्काषिणो यान्ति ये चिक्कमितभाषिणः॥" —(सर्वदर्शनसं० पाणिनिदर्शन पृ० २९६ वा० अ०)

२५ दुष्टः शब्दः स्वरतो वर्णतो वा
मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति
यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात्॥—(महाभाष्य—पृ० ४ वा० अ०)

संस्कृतमां पण बीजां उच्चारणोनी असर

११ वर्तमानमां जे भाषा 'संस्कृत' ना नामथी प्रसिद्ध छे तेमां य अनार्यजनसंपर्कने[२६] लीधे जुदी जुदी भाषाना शब्दो पेसी गया छे अने विविध उच्चारणो थयांने कारणे नीपजतो शब्दभेद[२७] पण तेमां वधी गयो छे.

१२ महान् शब्दशास्त्री यास्के अने आद्य वैयाकरण महर्षि पाणिनिए संग्रहेलो शब्दसंग्रह जोईशुं तो जणाशे के तेमां केटला य धातुओ अन्य भाषाना पेसी गया छे अने केटला य धातुओ तो विविध उच्चारणोने प्रतापे एकमांथी अनेक जेवा थई गयेला छे.

यास्के[२८]—

यास्कनुं उदाहरण

"लोटते—लोठते। पिस्यति—बिस्यति। प्रवते—प्लवते। कवते—गवते। रजति—लजति। ऋण्वति—ऋणोति। इयर्ति—ईर्ते। ध्रति—ध्राति—ध्रयति। जयति—जवति। द्रमति—द्रवति"—[निरुक्त पृ० १९८] ऊपर जणावेला बधा प्रयोगो 'गति' अर्थवाळा छे.

"दाशति—दासति"—आ प्रयोग 'दान' अर्थवाळो छे.

—[निरुक्त पृ० २४१]

---

२६ पिक अने तामरस जेवां अनार्यपदो वेदमां पण पेसी गयां छे तथा मूळतः अनार्य एवां शाखि (शाहि–शाह) तुरुष्क (तुर्क–तरक) भिल्ल अने म्लेच्छ (मलेक–मलेछ–मुलक) वगेरे पदो पण विशिष्ट संस्कार पामीने संस्कृतसाहित्यमां प्रचार पामेलां छे.

२७ क्षुर–खुर। हर्ष–हरिष। चन्द्र–चन्दिर। वगेरे संस्कृत पदो, विविध उच्चारणनो स्पष्ट संवाद छे.

२८ निरुक्त—वेंकटेश्वर प्रेसनी आवृत्ति.

"નવમ્–નવ્યમ્–નૂત્નમ્–નૂતનમ્"–નવું—[નિરુક્ત પૃ૦ ૨૪૪]

"હરિતઃ–સરિતઃ"–નદી —[નિરુક્ત પૃ૦ ૧૬૧]

"તોયમ્–તૂયમ્"–પાણી —[નિરુક્ત પૃ૦ ૧૬૦]

"ઉપરઃ–ઉપલઃ"–મેઘ —[નિરુક્ત પૃ૦ ૧૫૪]

"ગભીરા–ગમ્ભીરા । સરઃ–સ્વરઃ । વાણી–વાણઃ" । –એટલે વાણી

—[નિરુક્ત પૃ૦ ૧૫૬–૧૫૭]

"ગ્મા–જ્મા । ક્ષ્મા–ક્ષા–ક્ષમા" । એટલે પૃથ્વી ।

—[નિરુક્ત પૃ૦ ૧૫૫]

પાણિનિ[૨૧]—

પાણિનિનું ઉદાહરણ

"જિ-જ્રિ અભિભવે[1] । દ્રુ-દ્રુ ગતૌ[2] । ક્ષિ-ક્ષૈ-સૈ ક્ષયે[3] । શ્રુ-સ્રુ ગતૌ । ગૄ-ઘૄ સેચને[4] । હ્વૃ-હ્વૄ કૌટિલ્યે[5] । કૈ-ગૈ શબ્દે[6] । શ્રૈ-શ્રૈ પાકે[7] । પૈ-વૈ શોષણે[8] । રાખ્-લાખ્ શોષણ-અલમર્થયોઃ[9] । દ્રાખ્-ધ્રાખ્ શોષણ-અલમર્થયોઃ । વખ્-મખ્ ગતૌ । રઙ્ખ્-લઙ્ખ્ ગતૌ । ઇખ્-ઈખ્ ગતૌ । યુઙ્ગ્-જુઙ્ગ્ ગતૌ । અર્ચ્-અઞ્ચ્ પૂજાયામ્[10] । ગ્રુચ્-ગ્લુચ્ સ્તેયે[11] । લક્ષ્-લચ્છ્-લાછ્ લક્ષણે[12] । હીછ્-હ્રી લજ્જાયામ્[13] । સ્ફુર્છા-સ્મૂર્છા વિસ્મૃતૌ[14] । ધૃજ્-ધૃઞ્જ્ ધ્વજ્-ધ્વઞ્જ્ ધ્રજ્-ધ્રઞ્જ્ ગતૌ । વજ્-વ્રજ્ ગતૌ । ગુજ્-ગુઞ્જ્ અવ્યક્તે[15] શબ્દે । જજ્-જઞ્જ્ યુદ્ધે[16] । તપ્-ધૂપ્ સંતાપે[17] । કિટ્-ખિટ્ ઉત્ત્રાસે[18] । યભ્-જભ્ મૈથુને[19] । ચમ્-છમ્-જમ્-ઝમ્ અદને[20] । શુચ્ય્-ચુચ્ય્ અભિષવે[21] । મીલ્-શ્મીલ્-સ્મીલ્-ક્ષ્મીલ્ નિમેષણે[22] ।

---

૨૧ સિદ્ધાંતકૌમુદી—ધાતુસંગ્રહ.

[૧ પરાજય કરવો । ૨ ગતિ કરવી–જવું । ૩ ક્ષીણ થવું । ૪ સીંચવું । ૫ કુટિલતા । ૬ શબ્દ કરવો । ૭ રાંધવું । ૮ શોષાવું । ૯ અલમર્થ-બસ-સર્યું-પત્યું । ૧૦ પૂજવું । ૧૧ ચોરી કરવી । ૧૨ ચિહ્ન-નિશાન કરવું । ૧૩ લાજવું । ૧૪ ભૂલવું । ૧૫ ગૂંજવું । ૧૬ ઝૂઝવું । ૧૭ તપવું । ૧૮ ત્રાસવું । ૧૯ જવવું । ૨૦ ખાવું । ૨૧ પ્રવાહી પદાર્થમાં બીજો પ્રવાહી ભેળવવો । ૨૨ સંકોચાવું ।]

शाख–श्लाख् व्याप्तौ[1] । खल्–स्खल् चलने[2] । जोत्–द्योत् भासने[3] । तक्ष्–त्वक्ष् तनूकरणे[4] । वाक्षु–वाञ्छु काङ्क्षायाम्[5] । दे–त्रै पालने[6] । लोक्–लोच् दर्शने[7] । वृध्–ऋध्–एध् वृद्धौ[8] । शीभ्–चीभ् कत्थने[9] । व्ये–ऊय् तन्तु-संताने[10] । ग्रस्–ग्लस् अदने । भक्ष्–म्लक्ष् भक्षणे । टल्–ट्वल् वैक्लव्ये[11] । पृच्-पृज्-पिञ्ज् संपर्चने[12] । चुण्–छुट् छेदने[13] । लज्-लस्ज् व्रीडे[14] । खड्-खण्ड् भेदे[15] । एठ्-हेठ् विबाधायाम्[16] । तस्-दस् उपक्षये[17] । दश्-दंस् दर्शने[18] । यज्-यक्ष् पूजायाम् । तिम्-तीम्-ष्टिम्-ष्टीम् आर्द्रीभावे[19] । अपनी-ओण् अप-नयने[20] । प्युष्-प्युस्-पुस् विभागे[21] । भृश्-भ्रंश् अधःपतने[22] ।

—[पाणिनि धातुसंग्रह]

धातुओनां रूपोमां—

करति-करोति । अपनयति-ओणति । काशते-काश्यते । ध्रवति-ध्रुवति । नौति-नुवति । कौति-कुवति । धूनोति-धूनाति । मानते-मानयते । लुण्टति-लुण्टयति । श्रणति-श्राणयति । बोधति-बोधयति । ब्रुडति-बोलयति । पूर्यते-पूरयति । चेतति-चेतयति । महति-महयति । स्तनति-स्तनयति । घोषति-घोषयति । भूषति-भूषयति ।

उक्त बधां नामो, धातुओ अने धातुरूपोमां नीपजेली उच्चारणोनी विविधता अछती रहे एवी नथी.

१३ एमां कयुं उच्चारण पहेलुं अने कयुं पछीनुं अथवा कयुं उच्चारण शुद्ध अने कयुं अशुद्ध एवो विभाग शी रीते बतावी शकाय? छतां ए

[१ व्यापवुं । २ खडी जवुं । ३ प्रकाश । ४ पातलुं करवुं । ५ वांछवुं । ६ पाळवुं । ७ जोवुं । ८ वधवुं । ९ श्लाघा करवी । १० वणवुं । ११ विह्वल थवुं । १२ मिश्र थवुं । १३ छेदवुं । १४ लाजवुं । १५ भेदवुं । १६ बाधा करवी । १७ क्षीण थवुं । १८ जोवुं । १९ भीनुं थवुं । २० दूर करवुं । २१ विभाग करवो । २२ अधःपात थवो ।]

संग्रह जोतां एम तो कल्पी शकाय एवुं छे के संग्रहकारे जे शब्दने प्रथम लीधो छे तेनुं उच्चारण आद्य उच्चारण होय अने पछी लीधेलो शब्द ते, ए आद्य उच्चारणनुं बीजुं उच्चारण होय.

१४ उक्त कल्पना असंगत न भासती होय तो ए बधो शब्दसंग्रह आ नीचे जणावेलां विविध उच्चारणोनो समर्थक छे एम कही शकाय:

उच्चारणभेदनुं परिणाम

ऊपर जणावेला शब्दसंग्रहमां क्यांक 'ट' नो 'ठ,' 'प' नो 'व,' 'र' नो 'ल,' 'क' नो 'ग,' 'व' नो 'ओ,' 'इय्' नो 'ई' थयो छे. क्यांक 'अ' नो 'आ' के 'अय्,' 'म' नो 'व,' 'श' नो 'स' बोलायो छे. क्यांक 'त्न' नो 'तन,' 'क्ष्म' नो 'क्षम' एवुं अन्तःस्वर-वृद्धिवाळुं उच्चारण थयुं छे, क्यांक 'ह' नो 'स,' 'ओ' नो 'उ' तथा अनुस्वारनो वधारो थयेलो छे. क्यांक 'ग' नो 'ज,' 'व' नो वधारो, 'र' नो वधारो, 'इ' नो 'ऐ' अने 'क्ष' नो 'स' थयेलो छे. क्यांक 'ग' नो 'घ,' 'ध' नो 'ह,' 'स' नो 'श,' 'प' नो 'व,' 'द' नो 'ध,' 'व' नो 'म' अने ह्रस्वनो दीर्घ थयेलो छे. वळी क्यांक 'य' नो 'ज,' 'वक्र' ना 'वंक' नी पेठे 'अर्च्' नो 'अञ्च्,' 'दर्श्' नो 'दंस्' अने 'लछ्' नो 'लाञ्छ्' थयेलो छे. क्यांक न्यूनाक्षरता आवी गई छे. क्यांक 'स्फ' नो 'स्म,' 'त' नो 'थ,' 'क' नो 'ख,' 'च' नो 'छ,' 'ज' अने 'झ,' 'श' नो 'च' तथा 'श' 'स' 'क्ष' अने 'ळ' नो वधारो थयेलो छे. क्यांक 'द्य' नो 'ज,' 'क्ष' नो 'छ,' 'द' नो 'त,' 'ए' नो 'ऐ,' 'क' नो 'च' थयेलो छे. क्यांक आद्य 'व' लोप पामी शेष 'ऋ' नो 'इ' थई 'ए' थयेलो छे. क्यांक 'क' नो 'च,' 'वे' नो 'ऊ,' 'च' नो 'ज' तथा 'छ,' 'ए' नो 'हे,' 'त' नो 'द' थयेलो छे. क्यांक 'ष' वधी गयो छे, क्यांक 'प'

नो 'स' अने 'ऋ' नो 'र' बोलायो छे. तथा 'अपनी' नो 'अप' उपसर्ग 'ओ' रूपे थई 'ओण्' धातुमां अंगरूप बनी गयो छे अने 'नी' नो अन्त्य 'ई' खरी गयो छे.

ए रीते कहेवाती संस्कृत भाषाना उपर्युक्त शब्दोमां अने उदाहरणरूपे टांकेलां केटलांक क्रियापदोमां उच्चारणभेदनो प्रवाह अविच्छिन्नपणे घणा लांबा समयथी चाल्यो आवे छे त्यारे प्राकृत भाषाओमां तो ए प्रवाह निरन्तर वही ज रह्यो छे.

संस्कृतमां अन्य भाषाना धातुनो प्रवेश, ए विशे यास्क अने भाष्यकार

१५ उक्त धातुसंग्रहमां बीजी बीजी भाषाना धातुओ पण पेठेला छे ए हकीकत तो खुद यास्के अने महाभाष्यकारे पोते पण जणावेली छे: "शवतिर्गतिकर्मा कम्बोजेषु एव भाष्यते" × × × "विकारमस्य आर्येषु भाषन्ते 'शवः' इति"—[यास्क निरुक्त पृ. १०४] "स एषः शवतिर्गतिकर्मा गत्यर्थो धातुः कम्बोजेष्वेव भाष्यते—म्लेच्छेषु प्रकृत्या प्रयुज्यते शवति-गच्छति—इत्यर्थः"—[निरुक्तनी दुर्गाचार्यकृत वृत्ति पृ० १०५—तथा महाभाष्य[३०] आह्निक १ पृ० २१]

आ उपरांत ए ज पाना ऊपर "सर्वे देशान्तरे" वाक्यना भाष्यमां जणाव्युं छे के—"हम्मतिः सुराष्ट्रेषु, रंहतिः प्राच्यमध्येषु, गमिमेव तु आर्याः प्रयुञ्जते।" अर्थात् 'शव्' एटले 'जवुं' एवो प्रयोग अनार्य एवा कंबोज देशमां ज प्रचलित छे, आर्यलोको तो 'शव' नो अर्थ 'मडदुं' करे छे. 'हम्म्' एटले 'जवुं' एवो प्रयोग सुराष्ट्र देशमां प्रचलित छे अने प्राच्यमध्य देशमां 'रंह्' एटले 'जवुं' नो प्रयोग चाले छे, त्यारे आर्यलोको 'गम्' (एटले 'जवुं') नो प्रयोग करे छे.

---

३० श्रीवासुदेवअभ्यंकरशास्त्रीजीवाळी मराठीभाषांतरयुक्त आवृत्ति.

भाष्यकारनो उक्त उल्लेख एवुं ठरावे छे के 'गम्' धातु आर्यशाखानो छे, 'शव्' कंबोज प्रदेशनो छे अने 'हम्म्' धातु सुराष्ट्र तरफनो तथा 'रंह्' धातु प्राच्यमध्य बाजुनो छे. (प्राच्यमध्य एटले पूर्वना मध्य देशो— आर्यावर्तमां जे देशो पूर्वमां आवेला छे तेओमां जे मध्यवर्ती देशो छे ते 'मगध' वगेरे देशो.)

वेदोमां पण अनार्य शब्दोनो प्रवेश

१६ खुद वेदमां पण 'पिक' वगेरे केटलाक शब्दो एवा मळे छे के जेमनी परंपरा म्लेच्छोमां जळवायेली होय. महर्षि जैमिनिए रचेला मीमांसादर्शनमां[21] "चोदितं तु प्रतीयेत अविरोधात् प्रमाणेन"—[अध्याय १ पाद ३ सू० १० अधिकरण ५] एवुं एक सूत्र छे. तेना भाष्यमां श्रीशबरमुनि जणावे छे के—

"अथ यान् शब्दान् आर्या न कस्मिंश्चिदर्थे आचरन्ति म्लेच्छास्तु कस्मिंश्चित् प्रयुञ्जते यथा पिक-नेम-सत-तामरस-आदिशब्दाः तेषु संदेहः। किं निगम-निरुक्त-व्याकरणवशेन धातुतोऽर्थः कल्पयितव्यः उत यत्र म्लेच्छा आचरन्ति स शब्दार्थः? इति" तात्पर्य ए छे के वेदोमां 'पिक' 'नेम' 'सत' 'तामरस' वगेरे एवा केटलाक शब्दो मळे छे के जेमनो प्रयोग आर्य लोको करता नथी पण म्लेच्छो करे छे तो पछी एवा अनार्य शब्दोनो अर्थ शी रीते समजवो? शुं निगम निरुक्त के व्याकरण द्वारा एवा शब्दोनो अर्थ मेळववो के म्लेच्छो जे अर्थमां ते शब्दोने वापरे छे ते अर्थ ग्रहण करवो? आना उत्तरमां भाष्यकार जणावे छे के "ज्यां वैदिक परंपरा साथे कशो विरोध न आवतो होय त्यां म्लेच्छोए मानेलो अर्थ लेवामां य कशो बाध नथी."

उपर्युक्त उल्लेखो द्वारा एवुं प्रमाणित थाय छे के आर्यभाषामां अनार्य भाषाना शब्दो पेसी गयेला हता अने ते पण लांबा समयथी.

---

२१ आनंदाश्रम (पूना) वाळी आवृत्ति.

"न म्लेच्छितवै नापभाषितवै म्लेच्छो ह वा एष यद् अपशब्दः म्लेच्छा मा भूम इति अध्येयं व्याकरणम्"—[महाभाष्य पृ० ४] अपभ्रष्ट बोलनारने आ रीते म्लेच्छ थई जवानी सख्त धमकी छतां य आर्यभाषामां अनार्य शब्दोनो पेसारो अटकी शक्यो नहीं.

१७ तात्पर्य ए छे के उच्चारणोनी शुद्धि जाळवनारा समाजमां पण ए रीते भाषाभेदनां निमित्तो हमेशने माटे ऊभां ज होय छे तेथी ऊपर कह्युं छे तेम स्पष्टभाषानी उत्पत्ति अने तेनां भेदक कारणोनी उत्पत्ति ए बन्ने सहभू होवी असंभवित भासती नथी.

१८ एम छे छतां य संस्कृतिनी दृष्टिथी भाषा-भाषा वच्चेनो विवेक थई शके छे. भाषाभेदनां निमित्तो गमे तेटलां प्रबळ होय तो पण शब्दो पोताना मूळ स्वरूपने छोडता नथी, उच्चारणोमां विपर्यासनो प्रवाह प्रबळरीते वहेतो होय तो पण तेवां विपरीत उच्चारणोमां य प्राचीनतम वटवृक्षना मूळनी पेठे ते ते शब्दो मूळरूपे दटायेला ज होय छे. धूळ-धोया जेवा शब्दशास्त्रीओ एवां मूळ रूपोने शोधी काढी अने तेमनुं परस्पर तुलनात्मक परीक्षण करी भाषा-भाषा वच्चेना विभागने समझी शके छे अने आपणा वेदवाराना इन्द्रादिक शब्दशास्त्रीओए ए रीते ज आर्यभाषा अने अनार्यभाषा वच्चेना भेदने पारखी तारवी बताव्यो छे.

विविध उच्चारणोनुं सांकर्य छतां संस्कृतिनी दृष्टिए भाषा–भाषा वच्चेना भेदनी परख

१९ अहीं गुजराती भाषाना तुलनात्मक संबंधने लक्ष्यमां राखीने वर्तमान सर्व आर्यभाषाओना मूळभूत व्यापक प्राकृत भाषाना प्रादुर्भावनी थोडी चर्चा करी लेवानी छे.

तुलनात्मक रीते सर्व आर्यभाषा-ओना मूळभूत व्यापक प्राकृतनी चर्चा

ते मूळभूत प्राकृतनुं आदिम स्वरूप आपणी सामे नथी परंतु विशेष परिवर्तनवाळुं तेनुं साहित्यिक स्वरूप वर्तमानमां उपलब्ध छे. प्राचीन प्राकृतमां लिपिबद्ध थयेली अशोकनी धर्मलिपिओ वगेरे शिलालेखो, आचारांग वगेरे जैन अंगउपांग ग्रंथो अने मज्झिमनिकाय आदि बौद्ध पिटक साहित्य वगेरेमांनुं जे प्राकृत आपणने वांचवा मळे छे ते द्वारा आदिम मूळभूत प्राकृतना स्वरूपनी आछी कल्पना करी शकाय खरी.

व्यापक प्राकृतनुं साहित्य

२० आदिम प्राकृतना समयविशे कहेवुं होय तो एम जरूर कही शकाय के जे काळे वेदोनी भाषा जीवती हती ते काळने आदिम प्राकृतना आविर्भावनो काळ गणी शकाय—वेदोनी ऋचाओमां जे भाषा वर्तमानमां सचवायेली छे ते आज हजारो वर्षथी बोलाती बंध थई गई छे. परन्तु ज्यारे ते मात्र शिष्टोनी नहीं किन्तु सर्वजनमां व्यापेली साधारण भाषारूपे जीवती हती त्यारे तेनुं 'आदिम प्राकृत' नाम आपी शकाय.

आदिम प्राकृतनुं स्वरूप अने समय

२१ उक्त कारणोने लीधे परिवर्तनना प्रवाहमां पडेली जीवती वैदिक भाषाने आर्योनी जीवंत भाषा कहो के आदिम प्राकृत कहो: ज्यारे भाषा बोलवाना व्यवहारमां होय छे त्यारे प्राणवंती होय छे, एवी चेतनवंती भाषा कदी एक रूपमां ज जकडाई रहेती नथी, तेमां एक ज शब्दनां अनेक उच्चारणो प्रवर्ते छे. आ जातनुं उच्चारणवैविध्य ज भाषानुं जीवंतपणुं छे.

जीवती वैदिक भाषा अने आदिम प्राकृत ए बन्ने एक ज छे.

२२ आपणे एक एवो समय कल्पीए के ज्यारे वैदिक भाषा बोलवाना अने लखवाना बन्ने उपयोगमां आवती हती. अहीं ए न भूलवुं जोईए के

जे भाषा लखवाना उपयोगमां रूढ थई गई होय—लिपिबद्ध साहित्यमां ऊतरी गई होय—तेमां परिवर्तननो अवकाश नहिवत् रहे छे. परंतु जे भाषा निरंतर बोलवाना प्रवाहमां वहेती होय, जेने स्त्रीओ, वृद्धो, अभण लोको जेवा के गोवाळियासुद्धां वापरता होय ते भाषा परिवर्तनना प्रवाहमां पड्या विना न ज रही शके.

जीवती वैदिक भाषामां उच्चारणोनुं अनियंत्रण

२३ अमुक स्वर उदात्त बोलवो, अमुक स्वर अनुदात्त बोलवो ए प्रकारनां वैदिक शब्दो संबंधे प्रवर्ततां उच्चारणनियमनो जोतां ए जरूर जणाई आवे एवुं छे के ज्यारे ते भाषा बोलवाना पूरपाट प्रवाहमां तणावानी अवस्थाए पहोंची हशे त्यारे तेमां ते नियमनो सचवावां शक्य ज नहीं रह्यां होय. संस्कारी लोकोमां य वैदिक स्वरोनां उक्त उच्चारणो आजे अशक्य जेवां थई पड्यां छे तो पछी यास्कनी पहेलांना साधारण जनसमूहमां आजनी जेवी अशक्यता कल्पवी कठण भासती नथी. ऊलटुं पाणिनिए प्रवर्तावेली स्वरप्रक्रियानां नियमनो एम सूचवे छे के तेमना समये साधारण जनसमूहमां उच्चारणोनी अराजकता प्रवर्तती हती अने ते अराजकता वैदिक कर्मकांडमां न पेसे ते माटे तेमने आखी स्वरप्रक्रिया रचवी पडी हती.

जीवती भाषामां उच्चारणोनी व्यवस्था न ज रही शके

२४ आजे पण आपणी चालु भाषामां एक शब्द संबंधे य स्वरगत उच्चारणो जुदां जुदां मालूम पडे छे: काम—कांम—कॉम। लींबडो—लेंबडो। ईम—एम। जीम—जेम। तीम—तेम। नथी—नथ। नानुं—नेनुं। जेनुं—जीनुं। ए रीते बोलवाना व्यवहारमां आवता वैदिक शब्दोमां य स्वरगत विविध उच्चारणो प्रवर्ततां हतां.

संवृत[३२], कल, ध्मात, एणीकृत, अंवूकृत, अर्धक, ग्रस्त, निरस्त, प्रगीत, उपगीत, क्ष्विण्ण, रोमश, अविलंबित, निर्हत, संदष्ट अने विकीर्ण, वगेरे उच्चारण संबंधी अनेक दोषोनुं महाभाष्यकारे जे विवरण करेलुं छे ते पण तेमनी अगाउ प्रवर्तेली उच्चारणोनी अराजकतानुं समर्थक छे.

महाभाष्यकारे दर्शावेलां उच्चारणोनां दूषणो

---

३२ जुओ टिप्पण २३.

संवृत—उच्चारण करती वखते खरा उच्चारस्थाननी लगोलग जीभ आवी जतां संवृत दोष थाय छे. संवृत = आच्छादित अर्थात् उच्चारणस्थाननी लगोलग जीभ आवी जतां शुद्धउच्चारण ढंकाई जाय छे.

कल—उच्चारण करती वखते जीभ खोटा उच्चारणस्थान तरफ वळे त्यारे 'कल' दोष थाय छे.

ध्मात—उच्चारण करती वखते जोईए ते करतां प्रमाणमां वधारे श्वासवायुनो संचार थवाथी 'ध्मात' दोष थाय छे: आ ध्मात दोषने लीधे ह्रस्व वर्ण पण दीर्घ जेवो भासे छे.

एणीकृत—संशययुक्त उच्चारण.

अंवूकृत—उच्चारण करती वखते उच्चार्यमाण शब्द मोढामांने मोढामां ज रहे पण वहार व्यक्त न थाय ते अंवूकृत.

अर्धक—उच्चारण करती वखते जोईए ते करतां प्रमाणमां न्यूनरीते श्वासवायुनो संचार थवाथी अर्धक दोष थाय छे. अर्धक दोषने लीधे दीर्घ वर्ण पण ह्रस्व जेवो भासे छे.

ग्रस्त—ज्यारे उच्चारण खवाई गया जेवुं थाय त्यारे ग्रस्त दोष थाय.

निरस्त—उच्चारणमां ज्यारे निष्ठुरता आवे त्यारे निरस्त दोष थाय.

प्रगीत—उच्चारण ज्यारे गीत जेवुं थाय त्यारे प्रगीत दोष थाय.

उपगीत—ज्यारे उच्चारण प्रगीत जेवुं भासे त्यारे उपगीत दोष थाय.

क्ष्विण्ण—ज्यारे उच्चारण कंपायमान जणाय त्यारे क्ष्विण्ण दोष थाय.

रोमश—उच्चारण करती वखते ज्यारे जोईए ते करतां प्रमाणमां वधारे घेरापणुं आवे त्यारे रोमश दोष थाय.

२५ उच्चारणोनी अराजकता ज भाषाना देहरूप मूळ शब्दोने अनेक आकारोमां परिणमावे छे. स्वरगत तेमज व्यंजनगत उच्चारणोनी विविधताने लीधे एक शब्द अनेक जेवो भासमान थाय छे:

लोट्-लोठ् । प्रव्-प्लव् । हरित्-सरित् । क्षुद्रक-खुड्डग । क्षुल्लक-खुल्लग ।

जीवती भाषामां एक ज शब्दनां विविध उच्चारणोनां उदाहरणो

पश्चात्-पश्चा-पच्छा । युष्मासु-तुम्हासु । युष्मे-तुम्हे । अस्मासु-अम्हासु । अस्मे-अम्हे । मह्यम्-मम्हं-मज्झं-मह । त्वा-त्वया-तइ । त्वे-तुवे । त्वयि-तयि-तइ । श्रवणा-श्रोणा-सोणा । हस्त-**झस्त** । प्रति-पइति । अभ्र-**अव्र** । देव-**दएव** । त्वा-**थ्वा** । सा-हा । विश्वस्य-**विस्पहे** ।

स्थूल अक्षरवाळां पदो आवेस्तिक भाषानां छे

द्वारम्-**द्वारेम्** । एतस्मिन्-**अएताम्हि** । सखायः-**हखय** । अह्नि-**अस्नि** । पश्चात्-**पस्कात्** । स्तौमि-**स्तओमि** । प्र-**फ्र** । ब्रूते-**स्रूते** । असि-**अहि** । हुताश-**आतिश** । सकृत्-**हकेरेत्** । वसुमते-**वोहुमइते** । तथा-तधा । तावत्-दाव । आर्य-आरिय-अय्य-अज्ज । भवति-भोदि-भोति । पूर्व-पुरव । देवात्-देवातो-देवादो । एव-य्येव । नर-नल । हंस-हंश । शुष्क-सुस्क । कष्ट-कस्ट । पट्ट-पस्ट । अर्थ-अस्त । सार्थ-शस्त । जन-यण । अन्य-अन्न-अञ्ञ । गच्छ-गश्च । यक्ष-यःक । प्रेक्ष-पेस्क । राज्ञा-राचिञा-रञ्ञा । पर्वत-पव्वत । सदन-सतन । शील-सीळ-सील । कुटुम्ब-कुतुंव । स्नान-सिनान । कष्ट-कसट । यादृश-जारिस-जादिस-जातिस-यातिस । दृष्ट-दिट्ठ-तिट्ठ । दूर-तूर । मेघ-मेख ।

अविलंवित— बहु वेगथी उच्चारण करतां अविलंवित दोष थाय.

निर्हत—उच्चारणमां रूक्षता आवे त्यारे 'निर्हत' दोष थाय.

संदष्ट—लांवा स्वर—राग द्वारा उच्चारण करवा जतां संदष्ट दोष थाय.

विकीर्ण—विवक्षित वर्णने वदले तेने भळतो ज वीजो वर्ण वोलाय ते विकीर्ण दोष. 'व' ने वदले 'व' नुं के 'प' ने वदले 'फ' नुं उच्चारण विकीर्ण कहेवाय.

व्याघ्र-वग्घ । राजा-राचा । पृष्ट-पट्ठ-पिट्ठ-पुट्ठ । गौरी-गउरी-गोरी । तृण-तण-तिण । दयितेन-दयिएण-दइयिण-दइएं । देवस्य-देवस्स-देवस्सु-देवसु-देवहो । तृणानाम्-तणाणं-तणहं । तरोः-तरुहे । दत्त-दिण्ण-दिन्न ।

आगळ जणावेला यास्क अने पाणिनिना शब्दसंग्रहमां अने आ शब्दोमां जे पहेलो शब्द छे तेने मूळरूपे कल्प्यो छे अने पछीना शब्दोने, ते मूळ शब्दना ज उच्चारणभेदथी नीपजेला कल्प्या छे.

२६ अहीं जे स्थूल दृष्टिए जुए तेने तो एम ज भासे एवुं छे के ते प्रथम शब्द अने ते पछीना बीजा बीजा शब्दो ते बधा एक बीजाथी तद्दन जुदा जुदा छे ज्यारे खरी रीते तेम नथी, किंतु जे जीवती भाषा उच्चारणभेदना सपाटामां आवे छे तेनुं घडतर ज आम थाय छे.

स्थूल पदार्थना परिवर्तननी पेठे भाषादेहनुं परिवर्तन शीघ्र गम्य थतुं नथी

सोनुं विशिष्ट निमित्तने लीधे पोतानी पूर्व आकृति कलशरूपतानो परित्याग करे छे अने अन्य आकृति—मुकुटरूपता—ने धारण करे छे. ए बनाव जेटलो सरळ अने गम्य छे तेम कोई पण मूळभाषाना शब्ददेहमां परिवर्तन—परिणामांतर—थवानो बनाव एटलो सरल नथी अने गम्य पण नथी. अमुक काळे बधा लोको एक साथे कोई पण चालती भाषाने तजी दे अने तेने स्थाने बीजी तद्दन नवी भाषाने अपनावी ले एवो तर्क पण भाषाना परिणामांतर माटे घटतो नथी. केटलीक एवी प्रवृत्तिओ होय छे के जे लोकधारणाने अधीन रहीने चाले छे त्यारे भाषाना परिणामांतरनी प्रवृत्ति तेथी ऊलटी छे.

भाषामां तो जमीनमां वावेला बीजनी पेठे कालपरिपाकानुसार परिवर्तननी क्रिया निरंतर चाल्या ज करे छे. परिवर्तननी क्रिया ज एवी छे के जे जाण्ये अजाण्ये प्रवर्तमान रही परिणामांतरने नीपजावे छे.

२७ जे समयनी भाषाविशे आपणे चर्चा करिए छिए ते, आर्योनी प्रथमावस्थानो समय छे. तेवे समये आर्य प्रजानो निवास अमुक एक परिमित स्थान ऊपर हतो. एथी तेमनी वच्चे बोलाती जीवती भाषा कांई चपटी वगाडतां ज परिणामांतरने न पामे.

आर्योनां विधविध उच्चारणो चालु होय अने तेने अंगे भाषामां परिणामांतरे य प्रसरतुं होय. आ क्रियानी चालु स्थितिमां ज्यारे आर्यो विस्तरवा लाग्या—सिंधु पंचनद—सरस्वती—दृषद्वती अने गंगायमुनाने कांठे थताक तेओ आखा आर्यावर्तमां फेलाया अने ठेठ दक्षिण सुधी पहोंची गया त्यारे तेमनी जे भाषा एक समये खास परिणामांतरथी मुक्त हती ते हवे तेवी ज न रही शकी. ज्यारे अन्य अन्य भाषाभाषी प्रजासाथे अनेक रीते गाढ संपर्क थाय त्यारे मूळ भाषा परिणामांतरने न पामे ए बने पण केम?

आर्योनो विस्तार अने तेमनी भाषानुं परिवर्तन

विजयवंत प्रजा ज्यां ज्यां पोतानो विजयझंडो फरकावे छे त्यां त्यां तेने लोकप्रिय शासकनी रीते अनेक लोकोना गाढ संबंधमां आववुं ज पडे छे. पराजय पामेली प्रजा साथेना व्यवहारमां विजयी प्रजानो भाषाप्रवाह छूटथी वहेतो होय छे एवे प्रसंगे विजयी प्रजानी अने पराजित प्रजानी भाषा परिणामांतरने नपामे एम बने ज नहीं.

विजयी अने पराजित प्रजाना संपर्कथी भाषानुं परिवर्तन

विजयी प्रजा पोतानी मूळभाषाने लेश पण विकृत कर्या विना व्यवहार चलाववा जाय तो तेनो भाषाव्यवहार ज अटकी पडे. अने शासकनी स्थितिमां मूकायेली कोई पण प्रजा मात्र भाषाना मूळ देहनी रक्षा माटे पराजित लोकोसाथे भाषाव्यवहार ज न राखे ए तो तद्दन

संभवित छे. आवी परिस्थितिमां बन्ने प्रजा अमुक प्रकारनी बांधछोड करे, अने एकबे शासक प्रजा, पोतानी मूळभाषाना शब्दोनां प्रचलित प्रजानी भाषाना अनेक शब्दो अपनावे छे अने तेमनुं उच्चारण पोतानी ढबे करे. पण पराजित प्रजा मूळमां घटे अने पराजित प्रजाओए, पण तेमनी मूळभाषामां विजयी प्रजानी भाषाना शब्दो मेळवी अने तेमनुं पोतानी ढबे पण शासको करतां थोडुं घणुं ज उच्चारण करवुं रह्युं.

आम बन्नें अनेकविध अने विभिन्न उच्चारणोनी असर भाषा उपर पडी चालु रहे छे के ज्यारे वळी ते अमुक भाषा केम जाणे भेळाई न गई होय अने तेने स्थाने प्रजानां तद्दन नवी भाषा न आवी गई होय एवी परिस्थिति आवी जाय छे.

भारत पहेलां आर्योनी भाषा पण ए ज स्थितिमां मूकाई गई हती.

२८ जेम अत्यारे अंग्रेजो आपणामां वसता रहे छे, आपणामां भळता नथी, भळवुं पडे त्यांय अळगा रहेवा रहे छे, आपणी साथे तेमनो कौटुंबिक संबंध नथी तेम ते वखते आर्योए नहीं करेलुं.

आर्योना अंतःपुर सुधी आदिम जनतानो प्रवेश अने तेनी भाषा उपर असर

पछी तो जेम जेम विस्तरता गया तेम तेम अनेक आदिम जातिओना सहवासमां आवता गया, विविध जातिनी आदिम जनता छेक आर्योना अंतःपुर सुधी पहोंची गई, आदिम जातिनी अनेक रमणीओए आर्योनुं गृहिणीपद मेळव्युं. आम शासक अने शासित बच्चे लोहीनो संबंध बंधायो अने अनेकानेक आदिम जातिओ आर्योमां ओतप्रोत थई गई. आवी परिस्थितिमां शासक अने शासित बच्चे कयो व्यवहार नहीं प्रवर्त्यो होय? लेवडदेवडनो, प्रेमनो, विचारना आदानप्रदाननो, झघडानो, एक बीजाना मनोभाव समजवानो,

घरने लगतां अनेक कार्योना आदेशप्रत्यादेशनो आवा आवा अनेक प्रसंगो उपस्थित थतां ते बन्ने प्रजाने बन्नेने साधारण एवी एक भाषा विना चाली शके खरुं ?

२९ तन्त्रवार्तिककार कुमारिल भट्ट कहे छे के—

आर्य भाषामां प्रवेशेल म्लेच्छ शब्दोनो अर्थ जाणवा म्लेच्छोनी सहायता

"[33]जेवुं पद वेदवेदांगमां वपरायुं छे बराबर तेवुं ज पद म्लेच्छभाषामां उपलब्ध होय अने त्यां तेनो अर्थ आर्यशाखाद्वारा न थई शकतो होय एवे स्थळे उभय शाखामां सचवायेला एवा अविप्लुत-अविकृत-पदनो अर्थ समजवा म्लेच्छभाषानो पण आश्रय लेवो पडे तो ते अयुक्त नथी. पण ज्यां आर्योए म्लेच्छभाषानां पदोने पोतानी रीते फेरवी नाखी नवो घाट आप्यो होय

---

३३ "चोदितमशिष्टैरपि शिष्टानवगीतं प्रतीयेत यत् प्रमाणेन अविरुद्धं तद् अवगम्यमानं न न्याय्यं त्यक्तुम्। × × × तस्मात् पिक इति कोकिलो ग्राह्यः, नेमः अर्धम्, तामरसम्–पद्मम्, सत इति दारुमयं पात्रम् × × × परिमण्डलं शतच्छिद्रम्"।

"ये शब्दा न प्रसिद्धाः स्युः आर्यावर्तनिवासिनाम्।
तेषां म्लेच्छप्रसिद्धोऽर्थो ग्राह्यो नेति विचिन्त्यते ॥
निरुक्त–व्याक्रियाद्वारा प्रसिद्धिः किं बलीयसी।
समुदायप्रसिद्धिर्वा म्लेच्छस्यैवाथ वा भवेत् ॥
आर्याश्च म्लेच्छभाषाभ्यः कल्पयन्तः स्वकं पदम्।
पदान्तराक्षरोपेतं कल्पयन्ति कदाचन ॥
न्यूनाक्षरं कदाचिच्च प्रक्षिपन्त्यधिकाक्षरम्।

तद्यथा— द्राविडादिभाषायामेव तावत् व्यञ्जनान्तभाषापदेषु स्वरान्त–विभक्ति–स्त्रीप्रत्ययादिकल्पनाभिः स्वभाषानुरूपान् अर्थान् प्रतिपद्यमाना दृश्यन्ते। तद्यथा–'ओदनम्' 'चोर्' इत्युक्ते 'चोर' पदवाच्यं कल्पयन्ति। 'पन्थानम्' 'अतर्' इत्युक्ते 'अतर' इति कल्पयित्वा आहुः–सत्यं दुस्तरत्वाद् 'अतर' एव पन्था इति। तथा,

'पाप्' शब्दं पकारान्तं सर्पवचनम्–अकारान्तं कल्पयित्वा सत्यं 'पापः' एव असौ–इति वदन्ति। एवं 'माल' शब्दं स्त्रीवचनं 'माला' इति कल्पयित्वा सत्यमित्याहुः। 'वैर्' शब्दं च रेफान्तम्–उदरवचनम्–'वैरि'शब्देन प्रत्याम्नायं वदन्ति–सत्यम् सर्वस्य क्षुधितस्य अकार्ये प्रवर्तनाद् उदरं वैरिकार्ये प्रवर्तते इति।

तद् यदा द्रविडादिभाषायामीदृशी स्वच्छन्दकल्पना तदा पारसी–बर्बर–यवन–रौमकादिभाषासु किं विकल्प्य किं प्रतिपत्स्यन्ते इति न विद्मः।

तस्माद् म्लेच्छप्रसिद्धं यत् पदमार्यैर्विकल्प्यते।
न कश्चित् तत्र विश्वासो युक्तः पद–पदार्थयोः॥
निरुक्त–व्याक्रियाद्वारा यस्त्वर्थः परिगम्यते।
पिक–नेमादिशब्दानां स एवार्थो भविष्यति॥ इति प्राप्तम्।
एवं प्राप्ते वदामोऽत्र पदं निपुणदृष्टिभिः।
विज्ञायेताऽविनष्टं यत् तत् तदर्थं भविष्यति॥
देशभाषा–ऽपभ्रंशपदानि हि विप्लुतिभूयिष्ठानि न शक्यन्ते विवेक्तुम्।
यत् तु वेद–तदङ्गेषु पदं दृष्टमविप्लुतम्।
म्लेच्छभाषासु तद्रूपमर्थं क्वचन चोदितम्॥
तत् तथैव प्रतीयेत प्रमाणेनाऽविरोधतः।
पिक–नेमादि तद्ध्येवं निपुणैरवधारितम्॥
चोदितं ह्युपदिष्टं वा प्रयुक्तं वा क्रियागतम्।
म्लेच्छैरवधृतं पश्चाद् आर्यैर्द्विभाषिकैः क्वचित्॥
तादृशं तु प्रतीयेत प्रामाण्येनेति निश्चितम्।
न तद् धर्मप्रमाणेन वेदाख्येन विरुध्यते॥

अपि च—

पदार्थ-पदसंबन्धज्ञानापेक्षप्रवर्तनात्।
प्रसिद्धिर्यत्र तत्रस्था वाक्यार्थायानुगम्यते॥
पिकादिशब्दवाच्यं वा म्लेच्छैर्यदवधारितम्।
अविरोधात् प्रमाणेन तद्धिया वेदनोदितम्॥
चोदितं वा प्रमाणेन वेदेनेत्यस्य संगतिः।
आर्यैः सहाऽविरुद्धत्वात् तस्य तैरप्यपेक्षणात्॥

त्यां मात्र साधारण अक्षरसाम्यनो आश्रय लई तेमने म्लेच्छपदो साथे सरखावी अर्थनिश्चय करवामां जोखम छे. प्रस्तुतमां 'पिक' 'नेम' वगेरे शब्दो जेवा म्लेच्छभाषामां प्रचलित छे तेवाने तेवा–अविप्लुत-अविकृत–आर्यशाखामां पण प्रचलित छे. आर्योए ए पदोने विशेष रीते बदल्यां नथी एटले ए अने एवां बीजां अरूपांतरित अने जेमनो अर्थ आर्यशाखामां उपलब्ध नथी तेवां पदोनो अर्थ समजवा म्लेच्छभाषानी कोई शाखानो आश्रय लेवो पडे तो जरूर लेवो, तेम करतां एटलुं जरूर जोवुं जोईए के कोई पण वैदिक विधिने लेश पण बाध न आवतो होय. जे पदो म्लेच्छोए पोतानी परंपराओमां अवधारी राखेलां होय अने एवां ज पदो आर्यशाखामां पण उपलब्ध थतां होय, तेमना अर्थनो निर्णय करवा आर्योनी अने म्लेच्छोनी भाषा जाणनारा एवा द्वैभाषिक आर्यो एवां विवादास्पद पदोनी परख करे छे, परख करतां बन्ने पदोनी अविप्लुतता जणाय तो म्लेच्छपरंपरा प्रमाणे तेमनो अर्थ करी शकाय छे."

आर्यशाखानी अने म्लेच्छ-शाखानी भाषा जाणनारा द्वैभाषिक आर्यो

"वेदोमां पशुना कोई एक अवयव माटे 'क्लोम' वगेरे शब्दो वपरायेला छे. वैदिक अध्वर्युने खबर नथी के 'क्लोम' वगेरे शब्दो पशुना कया अवयवने सूचित करे छे. 'क्लोम' वगेरेनो खरो अर्थ न जणाय तो वैदिक विधिने दूषण लागे छे. आवे प्रसंगे वैदिक विधिनी शुद्धिने माटे, जे लोको रातदिवस

यथैव 'क्लोम' आदयः पश्ववयवा वेदे चोदिताः सन्तः अध्वर्य्वादिभिः स्वयम् अज्ञायमानार्थत्वाद् ये नित्यं प्राणिवधाभियुक्तास्तेभ्य एव अवधार्य विनियुज्यन्ते। यथा च निषादेष्ट्यां 'कूटं दक्षिणा' इति विहिते य एव एतेन व्यवहरन्ति तेभ्य एव अर्थतत्त्वं ज्ञात्वा दीयते तथा पिक–नेम–तामरस–आदिचोदितं सद् वेदाद् आर्यावर्तनिवासिभ्यश्च अप्रतीयमानं म्लेच्छेभ्योऽपि प्रतीयेत इति"—तन्त्रवार्तिक पृ. २२७.

पशुहननमां अभियुक्त छे एवा ववको पासे जईने अध्वर्युए ए 'क्लोम' वगेरे शब्दोना अर्थो अवधारी लेवा जोईए. अहीं जेम ववको पासेथी पण अर्थ समजवामां वांधो नथी तेम जे जे पदोनो अर्थ आर्यशाखा द्वारा गम्य नथी अने एवां ज पदो म्लेच्छशाखाओमां प्रचलित छे त्यां तेमनो अर्थ म्लेच्छभाषाओ द्वारा करवामां हरकत नथी."

म्लेच्छपदोने बोलवानी आर्योए स्वीकारेली उच्चारणपद्धति

३० वळी, म्लेच्छभाषानां पदोने आर्यलोको केवी रीते फेरवीने बोले छे ते बावत ते ज ग्रन्थकार जणावे छे के—"आर्यलोको प्रसंगने लीधे म्लेच्छभाषाओमांथी पदो मेळवीने तेमने पोतानी रीते करे छे: म्लेच्छभाषानां केटलांक पदोमां बीजा पदना अक्षरो मेळवी दईने बोले छे, केटलांक पदोने ओछा अक्षरवाळां करीने वापरे छे अने केटलांक पदोमां अक्षरो वधारी दईने चलावे छे. द्रविड वगेरे देशोनी भाषामां जे पदो व्यंजनांत छे, आर्यो तेमने स्वरांत बनावीने वापरे छे. केटलांक द्रविड पदोने आर्यो पोतानी भाषामां वपराती विभक्तिओ लगाडीने वापरे छे, केटलांक तेवां म्लेच्छपदोने आर्यो पोतानी भाषामां वपराता स्त्रीलिंगसूचक प्रत्ययो लगाडीने बोले छे अने आ रीते म्लेच्छभाषाओनां अनेक पदोने आर्यो पोतानी रीते अनेक प्रकारे संस्कारयुक्त करे छे अने तेम करीने ते पदो द्वारा स्वभाषाने अनुसरतो अर्थ मेळवता आर्यो आजे पण देखाय छे."

केटलाक द्रविडी शब्दोनां आर्योए करेलां उच्चारणो

"जेमके द्रविड भाषामां 'ओदन' अर्थनो सूचक रकारांत [३४]'चोर्'

---

[३४] 'चावल' शब्द साथे द्रविडी 'चोर्' शब्दने सरखावी शकाय एम छे. अने संस्कृत 'कूर' अने प्रस्तुत 'चोर्' ए बे पदो वच्चे पण समानता छे.

शब्द छे. आर्यो ते शब्दने अकारांत 'चोर' बनावीने वापरे छे. द्रविड भाषानो लकारांत 'माल्' छे तेने आर्यो 'माला'[35] करीने बोले छे. द्रविड भाषाना 'सर्प' अर्थना पकारांत 'पाप्' शब्दनो आर्यो 'पाप' एवो बोल बनावे छे अने 'सर्प' पापरूप छे माटे तेने 'पाप' कहेवो योग्य छे एम कहीने 'पाप'नुं निर्वचन पण करे छे. द्रविड भाषानो 'अतर्' शब्द 'मार्ग' अर्थनो छे तेने आर्यो 'अतर' बोले छे अने जे 'दुस्तर' छे ते 'अतर' कहेवाय एम कहीने आर्यो द्रविड भाषाना ए 'अतर्' शब्दने आर्यप्रसिद्ध 'तृ-तरवुं' धातुमांथी नीपजावे छे. द्रविडलोकोमां 'वैर्'[36] शब्द 'पेट'ना अर्थमां प्रसिद्ध छे. आर्य लोकोमां 'वैरी' शब्द 'शत्रु'ना अर्थमां जाणीतो छे. आर्यो कहे छे के 'पेट' माणसपासे गमे तेवुं अकार्य पण करावे छे माटे ते शत्रु जेवुं छे—आ रीते 'वैरी' अने द्रविड 'वैर्' वच्चे साम्य साधी आर्यो 'वैर्'ने पण 'पेट' अर्थमां वापरे छे."

द्रविडी पदोनां एवां उदाहरणो

"आ प्रकारे आर्यलोको विजातीय भाषाना अनेक शब्दोने पोतानी रीते फेरवीने काममां ले छे."

---

३५ स्त्रीवाचक 'महिला' के 'महेला' पद साथे प्रस्तुत 'माला' पदनी तुलना संभवे छे.

३६ वर्तमानमां पण द्रविडीभाषामां 'पेट' अर्थे 'वैर्' शब्द सुप्रतीत छे, ए हकीकत एक द्रविडी मित्र पासेथी जाणी छे. संस्कृत कोशमां पण 'वेर' शब्द 'शरीर' ना पर्याय तरीके नोंधेलो छे. 'वेर-संहनन-देह-संचराः" (हेमकोश कांड ३, श्लो० २२७.) अने

'कुवेर' एटले जेनुं वेर-शरीर, कु-कद्रूपुं छे ते-एवो अर्थ करीने 'कुबेर'नी व्युत्पत्ति आपता कोशकारे तेमां पण 'वेर' पद ने शरीरवाचक कह्युं छे.

"कुत्सितं वेरम्-शरीरम्-अस्य कुष्ठित्वात् कुवेरः"—(हेमकोश कांड ३, श्लो० १०३)

तंत्रवार्तिककार कहे छे के " आर्यावर्तनी पडोशमां आवेली द्रविडादि भाषाओना शब्दोने आर्यो पोताने फावे ते रीते फेरवीने स्वच्छंदपणे वापरे छे तो पछी पारसीक; बर्बर, यवन अने रोमक वगेरे देशोनी भाषाना शब्दोने वापरती वखते आर्यलोको ते ते शब्दोमां कोण जाणे केवो य फेरफार करता हशे अने ते ते शब्दोनुं नवुं नवुं रूप कल्पीने तेमांथी केवो केवो अर्थ काढता हशे ते संबंधे शुं कही शकाय ? "

जैमिनि, शबर अने कुमारिल भट्टनुं उपर्युक्त निवेदन एम सिद्ध करवाने पूरतुं छे के जे क्रियाओमां म्लेच्छोनी छाया पण असह्य छे एवी वैदिक विधिओने लगतां विधानोमां य म्लेच्छभाषाना शब्दो पेसी गया हता तो पछी आर्यो अने अनार्यो वच्चे प्रवर्तती जनसाधारणनी भाषामां तो अनार्य शब्दोनो प्रभाव केटलो बधो वधारे हशे ? ए प्रभावने लईने आर्योनी अने आदिम जातिओनी भाषा एकमेक जेवी थई गई हती.

३१ ते ते आदिम जातिओ आर्योना शब्दोने केवी रीते फेरवीने बोलती हशे ते विशे विशेष प्राचीनतम उदाहरणो मळवां दुर्लभ छे छतां य चीनी प्रवासी ह्युएनसंग (विक्रमनो सातमो सैको) नां उच्चारणो द्वारा अने अंग्रेजोनां अत्यारनां उच्चारणो द्वारा ए फेरफारोनी कल्पना आवी शके खरी.

	ह्युएनसंगनां उच्चारणो	आपणा शब्दो
	[देश अने नगरनां नामो]	
चीनी प्रवासी ह्युएनसंगे करेलां विलक्षण उच्चारणोनां उदाहरणो	किउँचेलो	गुर्जर
	सुलच	सुराष्ट्र
	ओनंतोपुलो	आनन्दपुर
	फलिपि	वलभी

---

३७ आ बधां नामो माटे जुओ 'ऑन युआनच्वांग' (वॉटर्स) नो विशेष नामोनो इंडेक्स तथा 'बुद्धिस्ट रेकर्डझ् ऑफ धि वेस्टर्न वर्ल्ड'नो विशेष नामोनो इंडेक्स.

ह्युएनसंगनां उच्चारणो	आपणा शब्दो
मोलपो	मालवा
मोहोलच	महाराष्ट्र
कीच	कच्छ
पोलुकीचेपो	भृगुकच्छ
अंतल	अन्ध्र
शेतोतुलु	शतद्रु
चेलंतोलो	जालंधर
उशेयेन्न	उज्जयिनी
सिंतु	सिन्धु
किओसलो	कोशल
तम्मोलिति	ताम्रलिप्ति
चेंपो	चम्पा
मोकीटो	मगध
नेपोलो	नेपाल
फीशेली	वैशाली
पोलोनिस्से	वाराणसी
किओशांम्मि	कौशाम्बी
पोलोयेकिअ	प्रयाग
ओयुतो	अयोध्या
मोतुलो	मथुरा
किअशिमिलो	काश्मीर
तचशिलो	तक्षशिला
कींतोलो	गान्धार
उतोयेन्न [राजानुं नाम]	उदायन

किऔचेये [रेशमी वस्त्रनुं नाम]	कौशेय

इत्यादि.

३२ आधुनिक अंग्रेजोनां 'भरुच'नुं 'ब्रोच', 'खंभात' नुं 'केम्बे,' 'मथुरा'नुं 'मुत्रा', 'वडोदरा'नुं 'बरोडा' वगेरे उच्चारणो जाणीतां छे.

अंग्रेजोए करेलां एवां विलक्षण उच्चारणोनां उदाहरणा

३३ ए ज रीते आर्यो, ते ते आदिम जातिओना शब्दोने फेरवीने केवी रीते वापरता हशे ते बाबत विशेष तो कही शकाय एवुं नथी छतां संस्कृत अने प्राकृत साहित्यमां सचवायेला एवा केटलाक शब्दो उपरथी आर्योए करेला फेरफारनी कल्पना थई शके खरी :

भाष्यकारे अने हेमचंद्र वगेरेए दर्शावेलां एवां विलक्षण उच्चारणोनां तथा अनार्यपदोनी व्युत्पत्तिनां उदाहरणो

अनार्य शब्द	आर्योए फेरवेलो शब्द
तरबूज	[३८]त्रपुस (भाष्यकार)
तुर्क	[३९]तुरुष्क-तुरुक्क (अमर तथा हेमचंद्र)
फारस	[४०]पारसीक-पारसीय (,,)

---

३८ "दधि–त्रपुसं प्रत्यक्षो ज्वरः" महाभाष्य अ० १ पा० १ आह्निक ८ सूत्र ५९.

३९ "तुरुष्कः पिण्डकः सिल्हो"–(अमर० कां० २ श्लो० १२८ मनुष्यवर्ग)
"तुरुष्कः"—(हेमकोश कां० ३ श्लो० ३१२)

४० "वनायुजाः पारसीकाः काम्बोजाः बाल्हिका हयाः" (अमर० कां० २ श्लो० ४५ क्षत्रियवर्ग तथा हेमकोश कां० ४ श्लो० ३०१)

अनार्य शब्द	आर्योए फेरवेलो शब्द
शाह	[४१]साखि (हेमचंद्र)
शाहन्शाह	[४२]साखानुसाखि-साहंसाही-(कालककथा) साहाणुसाही-साहानसाहि (जिनदेव)
रिश्वत् अथवा रुश्वत्	[४३]वातरूप
जीन	[४४]जयन-जयण

खास विशेष प्रकारना घोडा माटेना शब्दो

खोङ्गाह[४५]
सेराह
हरिय
खुङ्गाह

---

४१ "तुरुष्काः साखयः स्युः"–(हेमकोश कां० ४ श्लो० २५)

४२ "पत्तो सगकूलं नाम कूलं, तत्थ जे सामंता ते साहिणो भण्णंति । जो सामंताहिवई सयल-नरिंदवंदचूडामणी सो साहाणुसाही भण्णइ"—(कालककथा) "तेनाचचक्षे मम योऽस्ति राजा साहानसाहिः स भण्यतेऽत्र"—(तपा० कालक०)

"ये स्युस्तत्र च सामन्तास्ते साखय इति स्मृताः ।
तेषां तु नृपतिः साखानुसाखिरिति श्रुतः ॥"—(जिनदेव–कालक०)

४३ "वातरूपः उत्कोचो लञ्चा"—(हैम–अनेकार्थ० कां० ४ श्लो० ३२३)

४४ "जयनं विजये–अश्वादिसंनाहे"–"जयति जयनशाला वाजिनां राजकीया"–(हैम–अनेकार्थ० कां० ३ श्लो० ३६८)

४५ "खोङ्गाहः श्वेतपिङ्गले"

× × ×

"हलाहः चित्रितो हयः"

"'खोङ्गाहः' आदयः शब्दा देशीप्रायाः । व्युत्पत्तिस्तु एषां वर्णानुपूर्वीनिश्चयार्थम्"—(हेमकोश कां० ४ श्लो० ३०३ थी ३०९)

आ स्थळे हेमचंद्रे 'खोङ्गाह' वगेरे बधा शब्दोनी व्युत्पत्ति संस्कृत प्रमाणे आपेली छे.

क्रियाह्

नीळक

त्रियूह्

वोल्लह

उराह

मुल्हक

वोल्खान

कुल्लाह

उकनाह्

शोण

हरिक

हाळ्क

पङ्गुळ

हल्लाह

बीजा शब्दो

खिद्‌मत	खतमसु[४६] (जिनप्रभसूरि)
रह्‌मान	रहमाणु
सलाम	सलामु
हराम	हरामु
जानवर	जानूउर

---

४६ "खतमसुः भक्तिः । रहमानो महेश्वरः । अथ रह त्यागे धातुः—रहति रागद्वेषौ त्यजति—इत्येवं शीलः "शक्तिवयस्ताच्छील्ये" इति शानङ्, आन्, मोऽन्तत्वे कृते रहमान इति रूपम्" इत्यादि (जैनसाहित्यसंशोधक खंड २ अंक १ पृ० २१-२९ फारसी भाषामां ऋषभदेवस्तवन)

व्यापक प्राकृतनो उद्भव

३४ कहेवानुं तात्पर्य ए छे के मूळ जीवती भाषामां आर्योनां विविध उच्चारणोनो उद्भव थयो अने तेमनो अनेक आदिम जातिओ साथे गाढ संपर्क थयो एथी एक एवी नवा जेवी बीजी सर्व जनसाधारण भाषा नीपजी गई के जे आर्योनी न कहेवाय तेम आदिम जातिओनी पण न कहेवाय पण 'व्यापक प्राकृत' ना नामे संबोधी शकाय.

'प्राकृत' शब्दनो अर्थ

३५ 'प्राकृत' शब्द मनुष्यना विशेषणरूपे वपराय छे तेम भाषाना नाम माटे पण वपराय छे. नागरिक लोको जे जे प्रवृत्तिओने संस्काररूपे माने छे ते बधी प्रवृत्तिओ विनानो मनुष्य 'प्राकृत मनुष्य' कहेवाय छे. प्राकृत मनुष्यमां स्वभावनी स्थिरता होय छे, ते प्रकृतिने अनुसरे छे, बनावटी उपायो द्वारा पोतानी स्थितिने फेरवतो नथी, प्रकृति माता तेने जे रीते राखे छे—पोषे छे ते रीते ते वर्ते छे अने वधे छे. जे लोको प्राकृत नथी एटले प्राकृत मानवथी विरुद्ध प्रकारना छे—नागरिक छे तेओ प्रकृति प्रमाणे चालता नथी, एवा लोको पोता ऊपर अनेक प्रकारना बनावटी उपायो द्वारा विविध संस्कारोने लादे छे—पोते दूषणरूप मानेलुं प्राकृतपणुं दूर करवा सतत प्रयत्न सेवे छे अने ए रीते मूळे प्राकृत छतां पछी संस्कृत—संस्कारसंपन्न—बने छे.

चालु भाषामां कहीए तो 'गामडियुं' 'गामठी' 'देशी' 'तळपदुं' अने 'प्राकृत' ए बधा पर्यायवाचक शब्दो छे. आ विशेषणवाचक 'प्राकृत' 'शब्द' 'प्रकृति' साथे संबंधित छे तेम भाषावाचक 'प्राकृत' शब्द पण 'प्रकृति' साथे ज संबंधित छे. प्रकृति एटले स्वभाव-अकृत्रिमता

मूळ स्वरूपनी स्थिति. जे भाषा स्वभावद्वारा आवेली छे वा स्वभावद्वारा नीपजेली छे तेने 'प्राकृत' नाम आपी शकाय—वधारे स्पष्टरीते कहीए तो जे भाषानी निष्पत्ति माटे कोई खास प्रकारना कृत्रिम उपायो नथी लेवाया, जेमां एनी मेळे ज विविध उच्चारणो—रूपांतरो जन्म्यां, जेना संस्कार माटे कोई खास शास्त्र नथी रचायुं अने जे, मूळ चालती स्वाभाविक जीवती भाषा हती ते ज उक्त निमित्तोने बळे आपोआप रूपांतर पामी सर्वसाधारणमां प्रसरी—आबाळगोपाळ सुधी पहोंची ते भाषा स्वाभाविक कोटिनी कही शकाय अने एवी ज भाषा 'व्यापक प्राकृत' ना नामने लायक कहेवाय.

लौकिक संस्कृतनी घटना अने तेनुं प्रयोजन

३६ मूळ वैदिक भाषाना जीवता देहनी आवी परिस्थिति थतां ए समये जे लोको आर्यताना ज चुस्त हिमायती हता, आर्यभाषामां थतां अनेक परिवर्तनो जेमने अक्षम्य लागेलां तेमने एम भासवुं स्वाभाविक छे के सर्वजनसाधारण भाषानो ज प्रभाव प्रबळपणे वधतो रहे अने आर्योनी भाषाविषयक विशिष्टताने बतावनारुं एक पण साधन न जळवाय तो आर्योनी संस्कृति जाय अने साथे साथे आर्योनी मूळ भाषानो देह पण पडे एटले परिणामे मूळगी आर्यता ज भूंसाई जाय, ए रीते संस्कृतिना रक्षणनी प्रबळ प्रेरणाने लीधे इन्द्रादि ऋषिओए ते समये जे कांई मूळरूपे बच्युं हतुं अने विकृतशब्ददेहमांथी य जे कांई मूळरूपे शोधी शकाय एवुं हतुं ते बधानो आधार लई आर्योनी भाषानुं एक विशिष्ट बंधारण घडवानुं निर्धार्युं.

उक्त बंधारण करवुं पण कांई सरल न हतुं, ए तो मूळ प्रयोगो भेगा थाय, विकृत प्रयोगो भेगा थाय—आ प्रयोगो य कोई हजार बे हजार न

हता, लाखो करोडोनी संख्यामां हता—ए बन्ने प्रकारना प्रयोगोनो संग्रह कर्या पछी तेमनुं तुलनात्मक परीक्षण थाय, मूळरूपनी समझ पडे, विकृतरूपनी ओळख थाय अने आवुं चोक्कस तारण कर्या पछी ज मूळ प्रयोगोनो निर्णय थाय, आ रीते विशाल संशोधननुं कार्य चाल्या पछी ज आर्योनी भाषाना बंधारणनुं घडतर करी शकाय; परंतु आवुं दीर्घकालापेक्ष अने महाप्रयाससाध्य आयोजन थतां पहेलां तो ते मूळभाषा अनेक परिणामान्तरो पामी चूकी हती.

वेदोमां सुद्धां अनार्य शब्दो पेसी गया हता अने बोलचालना प्रवाहमां पडेली ते मूळभाषानो नमूनो मात्र वेदोनी ऋचाओमां जळवायो हतो अने ते पण सर्वथा अविकृत तो न होतो ज अने बीजी तरफ सर्वजनसाधारण भाषानो प्रवाह प्रभावशाली बनतो जतो हतो. आवी स्थितिमां परंपरा, तुलनात्मक परीक्षण वगेरे कसोटीनो आश्रय लईने ते परिवर्तित भाषाना खोखामां ज प्राण पूरी इन्द्रादि वैयाकरणोए मूळभाषानुं बंधारण घड्युं अने मूळभाषाने सजीवन करवानी पोतानी धारणा पूरी करी.

तेमणे करेलुं ए बंधारण ते ज लौकिक संस्कृतना देहनी घटना. वर्तमानमां इन्द्रे करेलुं ऐन्द्र व्याकरण तो उपलब्ध नथी परंतु तेमना प्रतिनिधिरूप पाणिनिऋषिए रचेलुं व्याकरण उपलब्ध छे.

लौकिक संस्कृत समग्रलोकव्यापक न हतुं

३७ लौकिक संस्कृतनो अर्थ एवो नथी के ते क्यारे य समग्रलोकव्यापक संस्कृत हतुं परंतु वैदिक संस्कृत करतां तेनी घटना कोई अपेक्षाए जुदा प्रकारनी हती. वैदिक संस्कृतथी तेनो पृथग्भाव बताववा सारु इन्द्र, पाणिनि वगेरे ऋषिओए घडेली भाषाने लौकिक संस्कृत नाम अपायुं छे, ए ध्यानमां रहे.

३८ एक एवो मत छे के लौकिक संस्कृत ज विकार पामीने प्राकृतरूपे परिणत थयुं, ए मत मारा नम्र अभिप्रायप्रमाणे प्रामाणिक नथी.

'लौकिक संस्कृतनो विकार ते प्राकृत' ए मतनो प्रतिवाद

लौकिक संस्कृतमांथी प्राकृतनो प्रादुर्भाव मानवा जतां केटलांक बाधक कारणो उपस्थित थाय छे:

उक्त प्रतिवाद विशे पांच हेतुओ

[१] लौकिक संस्कृतनी व्यवस्थित नियंत्रण-वाळी घटना थया पहेलां, घटना थई ते वखते तथा त्यार पछी पण सर्वजनसाधारण भाषा कई हती ?

[२] लौकिक संस्कृतनी नियत घटनाना समये आर्योनी मूळभाषा तो अनेक परिणामान्तरोने पामी चूकी हती, एटले ए घटनाना समये जे भाषा सर्वजनसाधारण हती तेने शुं नाम आपी शकाय ?

[३] लौकिक संस्कृतनी सुबद्ध घटना ज एवा प्रकारनी छे के ते, जे रूपे नियमनमां मूकायेली छे ते रूपे क्यारे पण सर्वजनसाधारण भाषा बनी ज न शके. छतां य जो तेने सर्वजनसाधारण भाषा तरीके स्वीकार-वामां आवे तो सर्वजनसाधारणमां बधा शब्दोनुं एक सरखुं ज उच्चारण प्रवर्ततुं हतुं एटले ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, स्त्रीओ, वृद्धो, बाळको, नटो, बीजा तद्दन अभण लोकोमां-सोनी, घांची, मोची, सुतार, कोळी, आहीर, ओड वगेरे लोकोमां-सर्वत्र सदाकाळ एक सरखुं ज उच्चारण प्रवर्ततुं हतुं एम मानवुं जोईए; परंतु अनुभव, एवी मान्यतानो विरोध करे छे अने आगळ जणावेला भिन्न भिन्न उच्चारणोवाळा शब्दो पण एवी मान्यताना बाधक छे.

[४] लौकिक संस्कृतनी घटनाना प्रमुख पुरुष महाभाष्यकार[४७] कहे छे के शब्दो करतां अपशब्दो घणा छे अने ए बधा अपशब्दोने 'अपभ्रंश' ना नामे तेओ ओळखावे छे, तो जे शब्ददेह 'अपभ्रंश' नामे तेओए ओळखावेलो छे ते शब्ददेह वैदिक भाषानो न हतो तेम लौकिक संस्कृतनो पण न हतो, त्यारे ए शब्ददेहने कई भाषानो समझवो ? मारा नम्र कथन मुजब ए शब्ददेह जे भाषानो हतो ते भाषाने ज अहीं व्यापक प्राकृतनुं नाम आप्युं छे. अने तेनो प्रादुर्भाव जीवंत वैदिक संस्कृत द्वारा जणाव्यो छे.

[५] लौकिक संस्कृतनी घटनाने समये आर्योनी मूळभाषा मूळरूपे तो रही ज न हती, रही होत तो भाष्यकार पोते 'एक शब्दना अनेक[४८] अपभ्रंशो छे' एम शामाटे कहेत ? तेमणे जे अनेक अपभ्रंशो बताव्या छे ते आव्या क्यांथी ? ए बधा य अपभ्रंशो आदिम जातिओनी भाषामांथी आव्या छे, एम तो केम कही शकाय ? एटले ते बधा अपभ्रंशो जे भाषामांथी ऊतर्या छे ते आर्योनी मूळभाषा हती अने ते ज भाषा व्यापक प्राकृतना प्रादुर्भावमां असाधारण कारण छे एम कहेवामां जराय असंगति नथी.

लौकिक संस्कृत ऊपर पण आदिम जातिओनी भाषानो प्रभाव

३९ ते ते आदिम जातिओनी भाषानो प्रभाव लौकिक संस्कृत ऊपर पण पड्यो छे छतां जेम लौकिक संस्कृतनुं मूळ स्रोत वैदिक भाषामां छे तेम आदिम जातिओनी भाषाथी प्रभावित थयेली व्यापक प्राकृतनुं मूळ स्रोत पण ते ज आदिम वैदिक भाषामां छे.

---

४७ "एकैकस्य शब्दस्य बहवः अपभ्रंशाः, तद्यथा—'गौः' इत्यस्य शब्दस्य गावी, गोणी, गोता, गोपोतलिका–आदयः अपभ्रंशाः"—(महाभाष्य पृ० ११ बा० स०)

४८ जुओ ऊपरनुं टिप्पण.

४० वेदोमां वपरायेलां पदो अने पाणिनिए दर्शावेलुं ते पदोनुं बंधारण तथा व्यापक प्राकृतना साहित्यमां वपरायेलां पदो अने कच्चायण, चंड तथा हेमचंद्र वगेरेए दर्शावेलुं व्यापक प्राकृतनुं बंधारण, ए उभय बंधारणनी तुलनात्मक समीक्षा करतां ए तद्दन स्पष्ट जणाई आवे छे के जीवती एवी वैदिक भाषानो वारसो व्यापक प्राकृतभाषाए साचवी राख्यो छे. एटले एम कहेवुं जराय वधारे पडतुं नथी के वैदिक भाषाना जीवंत स्रोत साथे व्यापक प्राकृतनो गाढ संबंध छे.

जीवती वैदिक भाषानो वारसो व्यापक प्राकृतमां छे

४१ आ संबंध बतावनारां केटलांक उदाहरणो आ प्रमाणे छे:

बाहुल्य

[१] वैदिक प्रक्रियामां "बहुलं छन्दसि" २–४–३९ । "बहुलं छन्दसि" २–४–७३ । आ प्रकारनां अनेक सूत्रो आवे छे. तेनो अर्थ ए छे के वैदिक रूपोमां सर्वत्र बहुलाधिकार प्रवर्ते छे त्यारे व्यापक प्राकृतमां तेना समग्र बंधारणमां बहुलाधिकार प्रवर्ते छे. ए, "क्वचि लोपं" [संधिकप्प कांड ४ सू० ९] "जिनवचनयुत्तम्हि" [नामकप्प कांड १ सू० १] तथा "बहुलम्" [८-१-२] "आर्षम्" [८-१-३] एवां सूत्रो रचीने कच्चायण[४९] अने हेमचन्द्रादि वैयाकरणोए स्पष्टपणे बतावेलुं छे. लौकिक संस्कृतमां उक्त बहुलाधिकार तद्दन विरल छे.

धातुओमां गणभेद नथी

[२] लौकिक संस्कृतमां अमुक धातुओ प्रथम गणना, अमुक बीजा गणना अने अमुक त्रीजा गणना, ए रीते धातुओना दश विभाग करवामां आव्या छे, अने ए विभाग प्रमाणे प्रथमगणना धातुओने विकरण प्रत्यय 'अ' लागे छे. बीजा, त्रीजा गणना धातुओने विकरण

---

४९ जुओ कच्चायणनुं पालिव्याकरण (विद्याभूषण–पृ० २७ तथा ३७)

प्रत्यय नथी लागतो अने चोथा गणना धातुओने 'य' विकरण लागे छे. ए रीते ते ते धातुओने माटे ते ते गण प्रमाणे जुदा जुदा विकरणोनुं विधान करवामां आव्युं छे, त्यारे वैदिक प्रक्रियाना अने व्यापक प्राकृतना बंधारणमां ते जातनो खास गणभेद नथी अने गणवार जुदा जुदा विकरणोनुं विधान पण चोक्कस नथी.

लौकिक सं०	वैदिक सं०		व्यापक प्राकृत
हन्—हन्ति	हनति	[वै० प्र० २—४—७३]	हनति—हणइ
शी—शेते	शयते	[,,]	सयते—सयए
भिद्—भिनत्ति	भेदति	[वै० प्र० ३—१—८५]	भेदति—भेदइ
मृ—म्रियते	मरते	[,,]	मरति—मरइ
दा—ददाति	दाति	[वै० प्र० २—४—७६]	दाति—दाइ
धा—दधाति	धाति	[,,]	धाति—धाइ
भुज्—भुङ्क्ते	भोजते	[ऋ० वे० ४७४ म० सं०]	भोजते
वर्ध्—वर्धयन्तु	वर्धन्तु	[वै० प्र० ३—४—११७]	वड्ढन्तु

आत्मनेपद-परस्मैपदनी अनियतता

[३] लौकिक संस्कृतमां केटलाक धातुओ आत्मनेपदी होय छे अने केटलाक धातुओ परस्मैपदी होय छे. आत्मनेपदी धातुओ माटे आत्मनेपदी प्रत्ययो नियत छे. अने परस्मैपदी धातुओ माटे परस्मैपदी प्रत्ययो नियत छे, त्यारे वैदिक पद्धतिमां तेम व्यापक प्राकृतमां एवुं बंधारण नियत नथी.

इच्छति	इच्छते	[वै० प्र० ३—१—८५]	इच्छते—इच्छए
युध्यते	युध्यति	[,,]	जुज्झति—जुज्झए

[४] लौकिक संस्कृतमां त्रीजा पुरुषना एकवचनमां 'ते' प्रत्यय

ते–ए

छे त्यारे वैदिक पदोमां अने व्यापक प्राकृतना पदोमां 'ते'ने बदले 'ए'पण आवे छे.

शेते	शये [वै० प्र० ७–१–४१]	सेए
ईष्टे	ईशे [ऋ० वे० पृ० ४६८ म० सं०]	ईसे–ईसए

[५] लौकिक संस्कृतमां वर्तमान होय त्यां वर्तमानकाळ अने भूत

कालव्यत्यय

होय त्यां भूतकाळ एम काळनो प्रयोग नियत छे, त्यारे वैदिकभाषामां अने व्यापक प्राकृतभाषामां ए रीते काळनो नियत प्रयोग नथी. ए बन्नेमां क्यांय वर्तमानने स्थाने भूतकाळ पण अने भूतकाळने स्थाने वर्तमानकाळ पण वपराय छे.

वर्त० म्रियते ने बदले परोक्ष० ममार (वैदिक) [वै० प्र० ३–४–६]
परोक्ष० प्रेक्षांचक्रे ,, ,, वर्त०पेच्छइ (व्यापक प्राकृत) [है० व्या० ८–४–४४७]

परो० आबभाषे ,, ,, वर्त० आभासइ
वर्त० शृणोति ,, ,, भूत० सोहीअ

[६] लौकिक संस्कृतमां विभक्तिओनो प्रयोग नियत छे. द्वितीया

विभक्ति–व्यत्यय

योग्य होय त्यां द्वितीया अने तृतीया योग्य होय त्यां तृतीया. ए रीते विभक्तिओनी नियतता छे, त्यारे वैदिक अने व्यापक प्राकृतमां विभक्तिओना प्रयोगनी अनियतता छे. वेदोमां अने व्यापक प्राकृतमां चोथी विभक्तिने बदले छठ्ठी विभक्ति वपराय छे: [वै० प्र० २–३–६२] तृतीया विभक्तिने बदले छठ्ठी विभक्ति वपराय छे: [वै० प्र० २–३–६३]. व्यापक प्राकृतमां कच्चायणना कहेवा प्रमाणे क्वचित् क्वचित् सप्तमीने बदले तृतीया वपराय छे:

"सत्तम्यत्थे च" [पालिव्या० कारककप्प कां० ६ सू० २०] छठीने वदले द्वितीया आवे छे: "क्वचि दुतीया छट्ठीनं अत्थे" [सू० ३६] तृतीया अने सप्तमीने वदले द्वितीया तथा छठ्ठी विभक्ति वपराय छे: "ततीयासत्तमीनं च" [सू० ३७] तथा "छठ्ठी च" [सू० ३८] ए ज प्रमाणे द्वितीया अने पंचमीने वदले छठ्ठी विभक्तिनो प्रयोग थाय छे: "दुतियापंचमीनं च" [सू० ३९] वीजी, त्रीजी अने निमित्तसूचक विभक्तिने वदले सप्तमी वपराय छे: "कम्म-करण-निमित्तत्थेसु सत्तमी" [सू० ४०] चतुर्थीने वदले सप्तमी तथा पंचमीने वदले पण सप्तमी विभक्तिनो व्यवहार छे: "संपदाने च" [सू० ४१] "पंचम्यत्थे च" [सू० ४२] ए ज प्रमाणे आचार्य हेमचंद्रना जणाव्या प्रमाणे पण द्वितीयादि सप्तमी सुधीनी विभक्तिओने वदले षष्ठी वपराय छे: [है० व्या० ८–३–१३४] द्वितीया अने तृतीयाने वदले सप्तमी वपराय छे: [है० व्या० ८–३–१३५] क्यांय पंचमीने स्थाने तृतीया अने सप्तमी वपराय छे: [है० व्या० ८–३–१३६] सप्तमीने वदले द्वितीया अने तृतीया वपराय छे अने क्यांय प्रथमाने वदले द्वितीया वपराय छे: [है० व्या० ८–३–१३७] ए ज रीते उभय भाषामां एकवचनने स्थाने वहुवचन अने वहुवचनने स्थाने एकवचन वपराय छे.

अंत्यव्यंजनलोप

[७] व्यापक प्राकृतमां शव्दनो अन्त्य व्यंजन लोप पामे छे तेम वैदिक रूपोमां पण शव्दनो अन्त्य व्यंजन लोपायेलो मळे छे.

वैदिक

पश्चात् ने वदले पश्चा–पश्चार्ध [वै० प्र० ५–३–३३]
उच्चात् ,, ,, उच्चा [तै० सं० २–३–१४]

वैदिक

नीचात् ने बदले	नीचा	[तै० सं० १–२–१४]
दिद्युत् ,, ,,	दिद्यु	[" अन्त्यलोपः छान्दसः "– भाष्य. ऋ० वे० पृ० ४६६ म० सं०]
युष्मान् ,, ,,	युष्मा	[वा० सं० १–१३–१। शत० ब्रा० १–२–९]
स्यः ,, ,,	स्य	[वै० प्र० ६–१–१३३]

व्यापक प्राकृत

तावत् ,, ,,	ताव
यावत् ,, ,,	जाव
कर्मन् ,, ,,	कम्म

[८] व्यापक प्राकृतमां 'स्प' ने बदले 'प' बोलाय छे, तेम वैदिक रूपमां पण 'स्प' ने बदले 'प' वपरायेलो छे.

स्प–प

वैदिक

'स्पृशन्य' ने बदले 'पृशन्य'

[ऋ० वे० पृ० ४६६ म० सं०]

व्यापक प्राकृत

'स्पृहा' ,, ,, 'पिहा'

[९] व्यापक प्राकृतमां अने वैदिक प्रयोगोमां संयुक्त 'र' कार लोप पामे छे.

'र' नो लोप

	वैदिक		व्या० प्रा०
'अप्रगल्भ' नुं	अपगल्भ	[तै० सं० ४–५–६–१]	अपगब्भ

[१०] व्यापक प्राकृत अने वैदिकमां संयुक्त 'य' नो लोप
'थ' नो लोप थाय छे.

वैदिक

त्रि + ऋच := त्र्यृच :—तृच : [वै० प्र० ६–१–३४]
—वास्त्व्यम् अने वास्त्वम् [वै० प्र० ६–४–१७५]

व्या० प्रा०

श्याम—साम

[११] वैदिकमां अने व्यापक प्राकृतमां 'ह' नो 'ध'
'ह' नो 'ध' बोलाय छे.

वैदिक

सह—सध [वै० प्र० ६–३–९६]
सहस्थ—सधस्थ ,,
गाह—गाध [निरुक्त पृ० १०१]
वहू—वधू ,,
शृणुहि—शृणुधि [वै० प्र० ६–४–१०२]

व्या० प्रा०

इह—इध
तायह—तायध

[१२] वैदिकमां अने व्यापक प्राकृतमां 'थ' नो 'ध'
'थ' नो 'ध' बोलाय छे.

वैदिक

माघव—माथव [शत० ब्रा० १—३—३—१०, ११, १७].

व्या० प्रा०

नाथ—नाध

[१३] वैदिक अने व्यापक प्राकृतमां 'द्य' नो 'ज' बोलाय छे.

'द्य' नो 'ज'

वैदिक

द्योतिस्—ज्योतिस् [अथ० सं० ४—३७—१०]
[निरुक्त पृ० १०१, १२]

द्योतते—ज्योतते } [निरुक्त पृ० १७०, १६]
द्योतय—ज्योतय }

अवद्योतयति—अवज्योतयति [शत० ब्रा० १. २. ३.१६].

अवद्योत्य—अवज्योत्य [का० श्रौ० ४—१४—५]

व्या० प्रा०

द्युति—जुति

उद्द्योत—उज्जोत

[१४] प्राकृतमां दाह—दाघ, विह्वल—विब्भल, जिह्वा—जिब्भा; एवा प्रयोगो थाय छे तेम वैदिकमां आह्वणि—आघृणि [निरुक्त पृ० ३८२, ३९] विदेह—विदेघ [शत० ब्रा० १—३—३. १०, ११, १२], मेह—मेघ [निरुक्त पृ०१०१, १] गृहीत—गृभीत, गृहाण—गृभाय, जहार—जभार; एवा प्रयोगो थाय छे: [वै० प्र० ३—१—८४]

'ह' नो 'घ' अने 'भ'

[१५] व्यापक प्राकृत अने वैदिक प्रक्रिया बन्नेमां 'ड' नो 'ल' तथा 'ळ' थवानुं बाहुल्कि छे.

'ड' नो 'ल' 'ळ'

लौ० सं०	वै० सं०	व्या० प्रा०
ईडे	ईळे	ईड–ईल–ईळ (पै०)
अहेडमानः	अहेळमानः	अहेलमानो–अहेळमानो
दृढ	दळ्ह [वै० प्र० ६–३–११३]	दळ्ह (पालि)
सोढा	साळ्हा [,,]	सोळ्हा

अनादिस्थ 'य' अने 'व' नो लोप

[१६] वैदिक प्रक्रियामां केटलांक एवां पदो मळे छे के जेमां असंयुक्त एवो अनादिस्थ 'य' अने 'व' लोपायेलो छे अने व्यापक प्राकृतमां पण ए जातना 'य' अने 'व' लोप पामे छे.

लौ० सं०	वै० सं०	व्या० प्रा०
प्रयुग	पउग [वा० सं० १५–९]	पउग

वैदिक 'सीमहि' [ऋग्वेद पृ० १३५, २] रूप 'षिवु' धातु ऊपरथी आव्युं छे अने तेमां 'पिवु' नो 'व' लोपायेलो छे.

'र' नो वधारो

[१७] वै० पृथुजवः पृथुज्रयः [निरुक्त पृ० ३८३–४०] व्या० प्रा० पिथुजवो पिथुजयो. अहीं 'पृथुज्रयः' मां 'व' लोपाया पछी व्यापक प्राकृतमां (लावण्य–लायण्ण) थाय छे तेम 'य' श्रुति थयेली छे अने अपभ्रंशमां 'व्यास' नुं 'व्रास,' 'चैत्य' नुं 'चैत्र' थाय छे तेम 'जव' नुं 'ज्रय' एवुं 'र' वाळुं रूप पण थयेलुं छे ए ध्यानमां राखवा जेवुं छे. आवां अपभ्रंशनी जेवां 'र' ना वधारावाळां बीजां पण वैदिक पदो मळे छे. अधिगु–अध्रिगु [निरुक्त पृ० ३८७–४३]

अनादिस्थ 'च' अने 'क' नो लोप

[१८] व्यापक प्राकृतमां अनादिस्थ असंयुक्त एवो 'च' अने 'क' लोप पामे छे. वैदिक पदोमां पण एवो 'च' अने 'क' लोपायेलो छे.

लौ० सं०	वै० सं०
याचामि	यामि [निरुक्त पृ० १००, २४१]
अन्तिके	अन्ति [ऋग्वेद पृ० ४९६ म० सं०]
	व्या० प्रा०
कचग्रहः	कयग्गहो
लोकः	लोओ

[१९] बन्ने भाषामां अनेक पदोमांनो आंतर अक्षर लोपायेलो छे.

आंतरवर्णनो लोप

लौ० सं०	वै० सं०	
शतक्रतवः	शतक्रत्वः	[वै० प्र० ७-३-९७]
पशवे	पश्वे	[,,]
निविविशिरे	निविविश्रे	[ऋ० सं० ८-१०१-१८]
आगताः	आताः	[निरुक्त पृ० १४२ दिशानाम]
	व्या० प्रा०	
राजकुल	राउल	
आगत	आत-आय	
प्राकार	पार	

व्यापक प्राकृतमां सस्वर व्यंजन लोपायेलो छे त्यारे वैदिक पदोमां मात्र स्वर लोपायो छे अने 'आगताः' पदमां तो सस्वर व्यंजन 'ग' लोपायो छे.

[२०] बे संयुक्त व्यंजन वच्चे स्वरनो उमेरो थवानी पद्धति बन्ने भाषामां छे.

स्वरभक्ति

लौ० सं०   वै० सं०

तन्वम्—   तनुवम्   [तै० आ० ७–२२—१]
स्वर्गः—   सुवर्गः   [तै० आ० ४—२—३]
त्र्यम्बकम्—त्रियम्बकम्   [वै० प्र० ६—४—८६]
विभ्वम्—   विभुवम्
सुध्यो—   सुधियो
रात्र्या—   रात्रिया   [यजु० वे०]
सहस्र्यः—   सहस्रियः   [,,]
तुम्र्यासु—   तुम्रियासु   [वै० प्र० ४–४–११५]

व्या० प्रा०

क्ष्मा—   छमा
रत्नम्—   रतनं–रयणं
स्नेहः—   सनेहो
प्लक्षः—   पलक्खो
अर्हति—   अरिहइ

[२१] व्यापक प्राकृतमां आद्य 'ऋ' ने बदले 'रि' बोलाय छे. त्यारे वैदिकमां तेने बदले 'र' बोलाय छे तथा बन्ने भाषामां केटलाक शब्दोमां आवेला 'ऋ' नो 'उ' बोलाय छे.

'ऋ' नो 'र' अने 'उ'

[कशो बाध न आवतो होय त्यां अहीं आपेलां बधां उदाहरणोमां प्रथम प्रथम रूप लौकिक संस्कृतनुं समझवानुं छे.]

लौ० सं०   वै० सं०

ऋजिष्ठम्—   रजिष्ठम्   [वै० प्र० ६–४–१६२]

व्या० प्रा०

ऋजु—रिजु–रिउ

वैदिक

वृन्द—वुन्द	[निरुक्त पृ० ५३२ अं० १२८]
तॄ—ततुरिः	[वै० प्र० ७–१–१०३]
गॄ—जगुरिः	[,,]
वृणीत—वुरीत	[शु० य० सं० पृ० ६२ मंत्र–८]
कृत—कुट	[निरुक्त पृ० ४२२, ७०]

व्या० प्रा०

वृन्द—वुन्द

ऋषभ—उसभ—उसह

ऋतु—उतु—उउ

[२२] बन्ने भाषामां 'द' नो 'ड' पण बोलाय छे.

'द'–'ड'

वै० सं०

दुर्दभ—दूडभ	[वा० सं० ३. ३६]
पुरोदाशः—पुरोडाशः	[शु० प्रा० ३–४४]
	[वै० प्र० ३–२–७१]

व्या० प्रा०

दण्ड—डंड

दम्भ—डंभ

[२३] बन्ने भाषामां 'अव' नो 'ओ' अने 'अय' नो 'ए' बोलाय छे.

'अव' नो 'ओ'
'अय' नो 'ए'

वै० सं०

श्रवणा—श्रोणा	[तै० ब्रा० १. ५–१. ४; ५. २.९]

अन्तरयति—अन्तरेति [शत० ब्रा० १. २–२. १८; ४. २०; ३. १. १६]

व्या० प्रा०

अवहसित—ओहसिअ

नयति— नेति

[२४] बन्ने भाषामां संयुक्ताक्षरनी पूर्वनो दीर्घ स्वर ह्रस्व बोलाय छे.

संयुक्तनी पूर्वे ह्रस्व

वै० सं०

रोदसीप्रा—रोदसिप्रा [ऋ. सं. १०. ८८. १०]

अमात्र—अमत्र [ऋ. सं० ३. ३६. ४]

व्या० प्रा०

मात्रा—मत्ता

[२५] उभय भाषामां 'क्ष' 'छ' रूपे परिणमेलो छे.

'क्ष' नो 'छ' वै० सं०

अक्ष—अच्छ [अथ० सं० ३. ४. ३.]

व्या० प्रा०

अक्षि—अच्छि

[२६] बन्ने भाषामां अनुस्वारनी पूर्वनो दीर्घस्वर ह्रस्व बोलाय छे.

अनुस्वारनी पूर्वनो ह्रस्व

वै० सं०

युवाम् युवम् [ऋ. सं० १–१५–६]

व्या० प्रा०

ग्राम् मालं

ऋजु—रिजु— देवानं

[२७] व्यापक प्राकृतमां साधारण रीते 'अ' पछीना विसर्गनो 'ओ' बोलाय छे त्यारे वैदिक पदोमां 'अ' पछीना विसर्गनो 'ओ' थवानो संभव नथी त्यां पण 'ओ' कायम रहेलो छे.

'विसर्ग'नो 'ओ'

व्या० प्रा०

देवः	देवो
पुनः	पुणो

वै० सं०

सः चित् सो चित् [ऋ० वे० पृ० १११२ म० सं०] ऋ० सं० १–१९१–१०–११]

संवत्सरः अजायत—संवत्सरो अजायत [ऋ० सं० १०–१९०–२]

उपप्रयन्तः अध्वरम्—उपप्रयन्तो अध्वरम् [वै० प्र० ६–१–११५]

उरः अन्तरिक्षम्—उरो अन्तरिक्षम् [वै० प्र० ६–१–११७]

शिवासः अवक्रमुः—शिवासो अवक्रमुः [वै० प्र० ६–१–११६]

आपः अस्मान्—आपो अस्मान् [वै० प्र० ६–१–११८]

जुषाणः अग्निः—जुषाणो अग्निः [,,]

वृष्णः अंशु—वृष्णो अंशु [,,]

प्राणः अङ्गे—प्राणो अङ्गे [वै० प्र० ६-१-११९]

[२८] बन्ने भाषामां संयुक्त व्यंजननो लोप थतां पूर्वस्वरनुं दीर्घ उच्चारण प्रचलित छे.

संयुक्तनो लोप थतां पूर्वस्वरनी दीर्घता

व्या० प्रा०

निःश्वासः—नीसासो

दुर्भगः— दूहवो

दुस्सहः— दूसहो

वै० सं०

दुर्दभ—दूदभ [वा० सं० ३–३६। ऋ०

दुर्लभ—दूळभ सं० ४–९–८]

दुर्नाश—दूनाश [शु० प्रा० ३–४३]

निपातोमां दीर्घ उच्चारण

[२९] बन्ने भाषामां केटलाक निपातोमां रहेलो ह्रस्व स्वर दीर्घ बोलाय छे.

व्या० प्रा०

प्रसुत—पासुत्त

प्रकट—पायड

प्रसिद्धि—पासिद्धि

वै० सं०

एव—एवा [वै० प्र० ६–३–१३६]

अच्छ—अच्छा [,,]

तु—तू [वै० प्र० ६–३–१३३]

नु—नू [,,]

घ—घा

मक्षु—मक्षू

कु—कू

अत्र—अत्रा

यत्र—यत्रा

निपात सिवाय बीजा शब्दोमां पण दीर्घ उच्चारणनो नियम बन्ने भाषामां अनियत रीते प्रवर्ते छे.

वै० सं०

पुरुषः पूरुषः [वै० प्र० ६-३-१३७]

व्या० प्रा०

परकीयं पारक्कं

चतुरन्तम् चातुरन्तं

[३०] शब्दमां रहेला अक्षरोनो व्यत्यय, बन्ने भाषामां प्रवर्ते छे.

अक्षरव्यत्यय

वै० सं०

निस्-कर्त्य—निष्टर्क्य [वै० प्र० ३-१-१२३]

कृत्-कर्तुः—तर्कुः [निरुक्त पृ० १०१-१३]

नमसा—मनसा [ऋ० वे० पृ० ४८९ म० सं०]

तङ्कृतः—कङ्कतः ["तकतेर्गत्यर्थस्य वर्णव्यत्ययेन कङ्कत इति 'सरन्' भवति"—ऋ० वे० पृ० ११०९ म० सं०]

व्या० प्रा०

लघुक—हलुअ

ललाट—णडाल-णलाड

आलान—आणाल

[३१] हेत्वर्थ कृदन्तनो सूचक प्रत्यय—वैदिक प्रक्रियामां—'तवे' छे त्यारे ए ज प्रत्यय व्यापक प्राकृतमां पण सचवायेलो छे.

हेत्वर्थसूचक प्रत्यय

लौ० सं०	वै० सं०		व्या० प्रा०
कर्तुम्	कर्तवे	[वै० प्र० ३–४–९]	कत्तवे–कातवे-कारित्तए
नेतुम्			नेतवे
निधातुम्			निधातवे
गणयितुम्			गणेतुये
द्रष्टुम्	दृशे		दक्खिताये

'एतुम्' ('इ' धातुनुं हेत्वर्थक) अर्थ माटे व्यापक प्राकृतमां 'एतसे' पद [पालिप्र० संकीर्ण क० कृ० पृ० २५८] सचवायेलुं छे; ते, वैदिक प्रक्रियामां वपराता तुमर्थक 'से,' 'सेन्' अने 'असे' प्रत्ययोवाळां रूपो साथे सरखाववा जेवुं छे. [वै० प्र० ३–४–९]

ए ज प्रकारे अपभ्रंश प्राकृतमां तुमर्थे 'एवं' [है० व्या० ८–४–४४१] प्रत्यय आवे छे, ते, वैदिक प्रक्रियाना तुमर्थक 'तवे' 'तवै' के 'दृशे' रूपमां लागेला तुमर्थक अन्त्य 'ए' प्रत्यय साथे सरखावी शकाय एवो छे.

आज्ञार्थसूचक मध्यम पुरुष एकवचन

[३२] मध्यम पुरुषना आज्ञार्थ सूचक एकवचनना प्रत्यय 'हि' वा 'स्व' ने बदले अपभ्रंश प्राकृतमां 'इ' 'उ' अने 'ए' एवा त्रण प्रत्ययो आवे छे. तेमांनो 'इ' प्रत्यय वैदिक प्रक्रियामां वपरायेला आज्ञार्थ मध्यम पुरुष एकवचन सूचक 'बोधि' (बोध्+इ) [निरुक्त पृ० १०१ पं० ३] रूप ना 'इ' प्रत्यय साथे विशेष मळतापणुं राखे छे.

संबंधक भूतकृदंत

[३३] सम्बन्धक भूतकृदन्तने सूचववा माटे व्यापक प्राकृतमां नीचेनां रूपो वपराय छे.

लौ० सं०	व्या० प्रा०
श्रुत्वा	सुणित्तान
गृहीत्वा	गहाय

त्यारे वैदिक प्रक्रियामां ते अर्थे वपरायेलां रूपो आ प्रमाणे छे:

लौ० सं०	वै० सं०	
इष्ट्वा	इष्ट्वीनं	[वै० प्र० ७-१-४८]
पीत्वा	पीत्वी	[वै० प्र० ७-१-४९]
गत्वा	गत्वाय	[वै० प्र० ७-१-४७]
विप्लुत्य	विप्लूय	[वै० प्र० ६-४-५८]
वियुत्य	वियूय	["]

उक्त बन्ने प्रकारनां रूपोमां विशेष समानता नजरे आवे एम छे. वळी, अपभ्रंश प्राकृतमां [हे० व्या० ८-४-४३९] ए अर्थमां वपरातो 'इ' प्रत्यय वैदिक 'पीत्वी' साथे मळतो आवे एवो भासे छे.

संबंधक भूतकृदन्त सूचक वैदिकरूप [वै० प्र० ७-१-३८] 'परिधापयित्वा' साथे व्यापक प्राकृतनां 'उवसंकमित्ता' 'निज्झाइत्ता' 'आगमेत्ता' वगेरे रूपो स्पष्ट साम्य धरावे छे.

'भि' अने 'हि'

[३४] व्यापक प्राकृतना 'ओसहीहि' रूपमां वैदिक 'ओषधीभिः' [वै० प्र० ६-३-१३२] रूपनुं बराबर प्रतिबिंब छे.

त्रीजो पुरुष बहुवचन 'रे' प्रत्यय

[३५] व्यापक प्राकृतमां गच्छरे, विच्छुहिरे वगेरे रूपोमां त्रीजा पुरुष बहुवचन माटे 'रे' के 'इरे' प्रत्यय वपराय छे ते वैदिक प्रक्रियामां आवता दुह्रे (दुह्+रे) रूपना 'रे' साथे साम्य धरावे छे. [वै० प्र० ७-१-८]

वैदिक रूपो अने व्यापक प्राकृतनां रूपो

[३६] नीचे जणावेलां वैदिक रूपो व्यापक प्राकृतनां रूपो साथे बराबर सरखावी शकाय एवां छे.

लौ० सं०	वै० सं०		व्या० प्रा०
पत्या	पतिना	[वै० प्र० १–४–९]	पतिना–पइणा
गवाम्	गोनाम्	[वै० प्र० ७–१–५७]	गोनं–गुन्नं
युष्मासु	युष्मे	[वै० प्र० ७–१–३९]	तुम्हे
अस्मभ्यम्	अस्मे	[„]	अम्हे
यूयम्	युष्मे	[„]	तुम्हे
वयम्	अस्मे	[„]	अम्हे
त्रयाणाम्	त्रीणाम्	[वै० प्र० ७–१–५३]	तिन्नं, तिण्हं
नावा	नावया	[वै० प्र० ७–१–३९]	नावाय, नावाए
देवैः	देवेभिः	[वै० प्र० ७–१–१०]	देवेहि
इतरत्	इतरं	[वै० प्र० ७–१–२६]	इतरं

गुजरातीनो भाववाचक 'आइ' प्रत्यय

[३७] भाषामां 'चतुराई,' 'भलाई,' 'पंडिताई,' 'मूर्खाई,' वगेरे शब्दोमां 'चतुर + आइ' एवुं पृथक्करण करी शकाय. ए उपरथी एवुं जणाय छे के प्रकृति 'चतुर' छे अने तेने भाववाचक 'आइ' प्रत्यय लागेलो छे. आ 'आइ' प्रत्ययनी मूळ प्रकृति 'ताति' रूपे वैदिक रूपोमां सचवायेली छे. वैदिक प्रक्रियामां जणाव्युं छे के "भावे च" [वै० प्र० ४–४–१४४] "भावे चार्थे छन्दसि विषये शिवादिभ्यः 'तातिल्' प्रत्ययो भवति 'शिवस्य भावः शिवतातिः" वेदोमां ए प्रत्यय 'शिव' 'शम्' अने 'अरिष्ट' शब्दोने लागे छे अने बीजा शब्दोने पण लागे छे—ज्येष्ठताति, सर्वताति. त्यारे लोकभाषामां ए प्रत्यय गुणवाचक शब्दमात्रने लागु पडतो भासे छे. 'ताति' नुं रूपांतर 'ताइ—आइ' लोकभाषामां ज

सचवायेलुं जणाय छे. व्यापक प्राकृतमां तो भाववाचक तरीके 'त्तन–त्तण,' 'इमा' अने 'प्पण' प्रत्ययो वपराय छे.

गुजरातीनो 'नो' प्रत्यय

[३८] भाषामां 'केटलानो पगार छे' 'केटला वरसनो छोकरो छे' 'सो रुपियानो पगार छे' 'पांच वरसनो छोकरो छे' ए बधामां 'केटलानो' 'वरसनो' 'रुपियानो' पदोमां जे अन्त्य 'नो' छे ते स्पष्टपणे 'परिमाण' अर्थने बतावे छे. वेदोमां 'पञ्चदशिनोऽर्धमासाः' 'त्रिंशिनो मासाः' वगेरे प्रयोगो मळे छे. 'पञ्चदशिनः' एटले 'पंदर दिवसना'–'पंदर दिवसना परिमाणवाळा' अने 'त्रिंशिनः' एटले 'त्रीश दिवसना परिमाणवाळा' एम परिमाण अर्थने सूचववा सारु दशान्त शब्दोने अने 'त्रिंशत्' वगेरे शब्दोने 'इन्' प्रत्यय लगाडवो एम वैदिक प्रक्रिया कहे छे. [५–१–५८]. जेम वैदिक 'इन्' प्रत्यय परिमाणने सूचवे छे तेम 'केटलानो' 'वरसनो' वगेरे भाषानां पदोने लागेलो 'न' प्रत्यय परिमाण अर्थने बतावे छे. 'केटलानो'–केटली संख्याना परिमाणवाळो, 'सो रुपियानो'–सो रुपियानी संख्याना परिमाणवाळो, एवा अर्थमां 'केटला' अने 'रुपिया' वगेरे शब्दोने लागेलो 'न' प्रत्यय मने भासे छे के वैदिक 'इन्' नो औरस छे. ए रीते जोतां 'केटलानो' वगेरे पदो षष्ठी विभक्तिवाळां छे के प्रथमा विभक्तिवाळां छे ? ए विचारणीय छे. वर्तमानमां तो 'केटलानो' वगेरे प्रयोगो बधी भाषामां षष्ठी विभक्तिवाळा मनाय छे. तो पण ए प्रयोगो खरेखर तेवा ज छे के 'परिमाण' दर्शक 'न' प्रत्ययवाळा छे ए जरूर शोधनीय खरुं.

अनुस्वारलोप

[३९] व्यापक प्राकृतमां अनुस्वारवाळा केटलाक शब्दोनो अनुस्वार लोप पामे छे. जेमके 'मांस' उपरथी 'मास.' वैदिक प्रक्रियामां पण 'मांस' अर्थमां 'मास' शब्द वपरायेलो छे. [वैदिक ग्रामर कंडिका ८३–१]

[४०] व्यापक प्राकृतमां द्विवचन अने बहुवचननां रूपो एकसरखां बने छे. जिना, देवा, बुद्धा. वैदिक परंपरामां पण ए बधां रूपो एकसरखां मळे छे. उभा, देवा, येनन्ता [ऋग्वेद पृ० १३६–६] इन्द्रावरुणा [ऋ० सं० ७–८२–१–५] मित्रावरुणा, या, सुरथां, दिविस्पृशा, अश्विना [वै० प्र० ७–१–३९] सृण्यौं वगेरे. व्यापक प्राकृतमां द्विवचननो प्रयोग समूळगो नथी. तेने बदले बहुवचननां रूपो वपराय छे. त्यारे वैदिक रूपोमां द्विवचन सूचवायेलुं छे, परंतु तेनां केटलांक रूपो उपर जणाव्या प्रमाणे बहुवचन जेवां पण छे.

द्विवचन अने बहु-वचन

[४१] "सुप्–तिङ्–उपग्रह–लिङ्ग–नराणां
काल–हल्–अच्–स्वर–कर्तृ–यङां च ।
व्यत्ययमिच्छति शास्त्रकृदेषां
सोऽपि च सिध्यति बाहुलकेन ॥"–वै० प्र० ३-१-८५ ।

लिंग वगेरेनो विपर्यय

अर्थात् लिंगनो विपर्यास जेवो वैदिक रूपोमां छे तेवो ज व्यापक प्राकृतमां छे. वैदिक प्रक्रियामां जणावेलुं छे के नामनी विभक्तिओनो, क्रियापदनी विभक्तिओनो, आत्मनेपद-परस्मैपदनो, लिंगनो, पुरुषोनो, काळनो, व्यंजनोनो, स्वरोनो, कारकोनो, कारकवाची प्रत्ययोनो–ए बधांनो वैदिक रूपोमां विपर्यास थाय छे. व्यापक प्राकृतमां पण आवो विपर्यास साधारण छे.

[४२] लौकिक संस्कृतमां कर्तृसूचक 'तृन्' प्रत्यय वपराय छे, तेने बदले व्यापक प्राकृतमां 'अणअ' प्रत्ययनो व्यवहार थाय छे. वैदिक रूपोमां पण ए 'तृन्' ने बदले 'अन' प्रत्यय वपरायेलो छे.

'अन' प्रत्यय

---

५० तंत्रवार्तिक पृ० १५७ ["आकारः छन्दसि' द्विवचनादेशः"]–आनंदाश्रम ।

व्या० प्रा०

नर + अगम—नरगमउ—नरगमो [हे० व्या० ८-४-४४२]
वेद + अगम—वेदगमउ—वेदगमो
मन् + अगम—मनगमउ—मनगमो—मननगो

वै० सं०

पत्यगान: — पद् + अन = गान [वै० प्र० ३-२-६५]
पुरंगमन: [वै० प्र० ३-२-६६]
पुरोगमन:
ह्वयगान:

[४३] लौकिक संस्कृतमां ह्यस्तन अने अद्यतन भूतकाळनां क्रियापदोनी आदिमां 'अ' मूकवानी पद्धति छे : अभूत्, अगमत् वगेरे. आ पद्धति केटलांक वैदिक रूपोमां नथी, तेम व्यापक प्राकृतमां पण नथी।

भूतकाळमां आदिमां 'अ' नो अभाव

लौ० सं०	वै० सं०		व्या० प्रा०
अगमत्	गमीत्	[ऋ० वै० पृ० ४६५ म० सं०]	गमीअ
अरजन्	रजन्	[,, ,, ४६४ ,,]	रजीअ
अभूत्	भूत्	[,, ,, ४६५ ,,]	भवीअ

[४४] केटलांक बे पदो वच्चे प्राप्त थतो संधि वैदिक प्रक्रियामां अने व्यापक प्राकृतमां य थतो नथी.

संधिनो अभाव

	वै० सं०	व्या० प्रा०
[वै० प्र० ६-१-१२६]	ईषा + अक्षो	विसम + आयवो
[,,]	ज्या + इयम्	वास + इसी
[,,]	पूषा + अविष्टु	साउ + उअयं

[४५] व्यापक प्राकृतना 'कुण्'–(करवुं) अने 'जिण्'–(जितवुं) धातुनुं मूळ वैदिक 'कृणू'–(करवुं) [ऋ० वे० पृ० २२६–२२७ म० सं०] 'जिन्'–(जितवुं) धातुमां छे. वैदिक 'जेन्य' [ऋ० वे० पृ० ४६५ म० सं०] पदमां उक्त 'जिन्' धातुनी हयाती छे.

केटलाक धातुओ

[४६] व्यापक प्राकृतमां इकारान्त, उकारान्त नरजातिक नामोने प्रथमाना बहुवचनमां एक 'णो' प्रत्यय पण लागे छे. ते 'णो' प्रत्यय प्रथमा बहुवचनना वैदिक रूप 'अत्रिणः' मां उपलब्ध छे. लौकिक संस्कृतमां 'अत्तारः' अने वैदिकमां 'अत्रिणः' थाय छे. वेदभाष्यकार लखे छे के "तृजन्तस्य 'अत्तृ' शब्दस्य जसः छान्दसः 'इनुड्' आगमः"–[ऋ० वे० पृ० ११३–५ सूत्र. मेक्स०]

'णो' प्रत्यय

[४७] व्यापक प्राकृतमां केटलांक पदो विभक्ति विनानां पण चाले छे तेम वैदिक प्रक्रियामां पण प्रवर्ते छे.

विभक्ति विनाना प्रयोगो

	वै० सं०	व्या० प्रा०
[वै० प्र० ७–१–३९]	आर्द्रे चर्मन् (सप्तमी)	बहुशत शाकियानां
[„]	लोहिते चर्मन् („)	संगीति योजयेथा
[„]	परमे व्योमन् („)	ईदृश ते निमित्ता
[ऋ० वे० पृ० ४६४ म० सं०]	वीळु (द्वितीया)	धरणि कंपयमान
[„]	दळ्हा („)	गय (गजानाम्)
[„ ४७२]	अभिद्रु („)	एइ (एते)

[४८] व्यापक प्राकृतमां 'प्रतिदिन' अर्थमां 'दिविदिवि' शब्द वपरायेलो छे ते वैदिक 'दिवेदिवे' नुं स्पष्ट अनुकरण छे.

दिवेदिव

"व्रासु महारिसि एउ भणइ जइ सुइसत्थु पमाणु ।
मायहं चलण नवन्ताहं दिविदिवि गङ्गाण्हाणु" ॥है०व्या० ८–४–३९९.

वै० सं०

"दधासि श्रवसे दिवेदिवे"

"दिवेदिवे प्रतिदिनम्"—वेदभाष्यकार [ऋग्वेद–पृ० २२७
—महाराष्ट्र वैदिक संशोधन मंडळ]

[४९] तळपदी गुजरातीमां 'आ' के 'ए' ना अर्थमां 'ई' शब्द आजे पण वपराय छे. तेम वैदिक भाषामां 'आ' के 'ए' ना अर्थमां 'ई' शब्द वपरायेलो छे.

गुजराती 'ई'

गु० प्र०	वै० सं०
ई, ईने, ईणे, ईनुं,	"मथीत् यत् ईम्"—ईम्–एने. "ईम् एनम् अग्निम्" –वेदभाष्यकार [ऋग्वेद पृ० ४६५ म० सं०] "महे यत् पित्रे ईं रसम्"–ईम्–आने. "महे महते, पित्रे पालयित्रे, ईम्–इमम्" वेदभाष्यकार [ऋग्वेद पृ० ४६६ म० सं०]

अकारांत अने अकारांत सिवायनां समान विधान

[५०] व्यापक प्राकृतमां जे जे विधानो अकारान्त नामोने माटे कर्यां होय छे ते विधानो अकारान्त सिवायनां नामोने पण लागु पडे छे. आवी व्यवस्था वैदिक प्रक्रियामां सचवायेली छे.

व्यापक प्राकृतमां अकारान्त नामोने माटे त्रीजीना बहुवचनमां 'हि' प्रत्ययनुं विधान छे. ते 'हि' प्रत्यय अकारान्त नामो सिवायनां नामोने पण लागे छे. ए ज रीते अकारान्त नामोने माटे विहित थयेलो त्रीजीना बहुवचननो 'ऐस्' प्रत्यय वैदिक प्रक्रियामां ईकारान्त नामोने पण लागे छे. जेमके–"नद्यैः" [७–१–१० पाणि० काशिका]

'कुह' अने 'न'नो प्रयोग

[५१] व्यापक प्राकृतमां 'कुह' अव्यय 'क्यां' अर्थमां अने 'नं' अव्यय उपमा अर्थमां वपराय छे. वेदनी भाषामां पण 'कुह' [ऋ० वे० पृ० ७३३ म० सं०, निरुक्त पृ० २२०] 'क्यां' अर्थमां अने 'न' उपमा अर्थमां आवे छे [ऋ० वे० पृ० ४६०–४६२–५२८–म० सं०]

उक्त प्रकारे जणावेलां अनेक उदाहरणो द्वारा एम सिद्ध करी शकाय एवुं छे के व्यापक प्राकृतना प्रवाहनो सीधो संबंध वेदोनी जीवती मूळ भाषा साथे ज छे. नहीं के जेनुं स्वरूप पाणिनि प्रभृति वैयाकरणोए निश्चित कर्युं छे एवी लौकिक संस्कृत साथे.

व्यापक प्राकृतमां जीवती वैदिक भाषानुं प्रतिबिंब

४२ उपर्युक्त मत सिद्धरूप छे छतां जे कोई व्यापक प्राकृतनो सीधो संबंध लौकिक संस्कृत साथे साधवा प्रयत्न करे तेने एम पूछवुं जोईए के उक्त वैदिक उदाहरणोमां जणावेला ते ते प्रयोगो लौकिक संस्कृतमां मुद्दल नथी अने व्यापक प्राकृतमां तेनुं प्रतिबिम्ब

तो मळे छे तो ए प्रतिबिम्ब व्यापक प्राकृतमां क्यांथी आव्युं—बीजी कई भाषामांथी आव्युं ?

विचारशील अभ्यासी स्थिरपणे मनन करशे तो स्पष्टपणे जाणी शकशे के व्यापक प्राकृतमां जेमनुं प्रतिबिम्ब छे ते बधा प्रयोगो वेदोनी ए समयनी जीवती मूळभाषामां ज हता, अने ते द्वारा ज ते प्रयोगोनो प्रवाह व्यापक प्राकृतमां भारोभार उतर्यो. जे भाषामां ए प्रयोगोनुं अस्तित्व ज नथी एवी लौकिक संस्कृतना प्रतिबिंबरूपे व्यापक प्राकृतने केम कही शकाय ?

वळी, आर्योना ए प्रारंभिक समयमां आर्योमां जीवती वैदिक भाषानो ज प्रचार हतो. ए सिवाय बीजी कोई भाषा लौकिकभाषारूपे आदरपात्र नहीं बनेली एथी अर्थात् एम सिद्ध थयुं के वेदोनी जीवती भाषाना ज परिणामान्तररूप व्यापक प्राकृत नीपजेलुं छे.

४३ वेदोनुं अध्ययन करतां चोक्खुं जणाय छे के वैदिक भाषानो

तळपदी गुजराती अने जीवती वैदिक भाषा

प्रवाह डगले ने पगले जेम व्यापक प्राकृतमां देखाय छे तेम तळपदी गुजरातीमां पण क्वचित् भळेलो ए प्रवाह अछतो नथी रहेतो. ए हकीकत बे एक प्रयोगो द्वारा ऊपर बतावी दीधी छे.

मने तो चोक्स खात्री छे के वेदोनुं फक्त भाषादृष्टिए विशेष गंभीर अध्ययन करवामां आवे तो आर्यावर्तनी तळपदी भाषाओमां अने अनार्यभाषाओमां पण वैदिक भाषानो सचवायेलो प्रवाह जड्या विना नहीं ज रहे.

प्रस्तुतमां तो मारो उद्देश वेदोनी जीवती भाषा अने व्यापक प्राकृत भाषा ए बे वच्चेनी सांसर्गिक सांकळ बताववा पूरतो हतो, तेथी तळपदी गुजरातीमां सीधा ऊतरेला वैदिक भाषाना प्रवाह संबंधे विशेष उदाहरणो शोधीने मूकी शक्यो नथी, परंतु ए कार्य करवा जवुं तो अवश्य छे.

'प्रकृतिः संस्कृतम्' वाक्यना अर्थनी संगतता अने असंगतता

४४ केटलाक प्राचीन वैयाकरणोए "प्रकृतिः संस्कृतम्-तत्र भवम् तत आगतम् वा प्राकृतम्" एम कहीने प्राकृत भाषानी जननी तरीके संस्कृतने मूकी छे.

'प्राकृत' शब्दनो तेओए वतावेलो उक्त अर्थ एक रीते संगत थई शके अने बीजी अपेक्षाए संगत न थई शके एवो छे.

प्राकृतना मूळरूपे वतावेला 'संस्कृत' शब्दनो अर्थ 'वेदोनी जीवती संस्कृत' एवो करवामां आवे तो 'प्रकृतिः संस्कृतम्' व्युत्पत्ति संगत थाय खरी. परंतु 'प्रकृतिः संस्कृतम्' ना 'संस्कृत' पदनो 'पाणिनि वगेरे वैयाकरणोए जेनुं बंधारण घड्युं छे एवी परिमार्जित संस्कृत' एवो अर्थ तेमणे विवक्षित कर्यो होय तो भाषातत्त्वना विकासनी दृष्टिए तद्दन असंगत छे.

प्राकृतने समझाववा संस्कृत वाहनरूप छे

४५ आ विशे विशेष मनन करतां मने एम लागे छे के ज्यारे ते ते प्राकृत व्याकरणोनी रचना थई त्यारे भणेलागणेला वर्गमां अत्यारे जेम अंग्रेजीनुं छे तेम संस्कृत भाषानुं प्रावल्य हतुं अने लोकोमां प्राकृत ज चालु हतुं. लोकोमां बोलातुं जीवन्त प्राकृत अने साहित्यिक प्राकृत ए बे वच्चे वर्तमानमां भणेलागणेलाओनी भाषा अने गामडियानी भाषा वच्चे जेवुं अन्तर वर्ते छे तेवुं अंतर प्रवर्तमान हतुं. एवे समये प्राकृतभाषाना शब्दोनी व्युत्पत्तिने समझवा सारु तुलनात्मक दृष्टिए प्राकृत व्याकरणनी घटनामां वाहन तरीके परिमार्जित संस्कृत भाषानो उपयोग कर्यो होय अने ते बताववा ते ते वैयाकरणोए 'प्रकृतिः संस्कृतम्' लख्युं होय तो ए बनवाजोग छे अने संगत पण छे.

ज्यारे पाणिनिए अष्टाध्यायी रची, तेमां लौकिक संस्कृतने लगतां ज नियमो घड्या, क्यां क्यां "छन्दसि बहुलम्," "छन्दसि उभयथा" एवां वैदिक नियमो पण मूक्यां. पाणिनि कोई पण नियम घडती वखते प्रथम लौकिक संस्कृतने लगतुं नियम घडे छे अने पछी खास फेरफार बताववा वैदिक नियमने मूके छे. आनो अर्थ एवो नथी के वैदिक भाषानी प्रकृतिरूप लौकिक संस्कृत भाषा छे अथवा लौकिक संस्कृत भाषामांथी वैदिक भाषा जन्मी छे, ए बे भाषाओनी परस्पर तुलनात्मक परीक्षामाटे अमुक भाषाने वाहनरूपे राखवी आवश्यक छे, ए दृष्टिए ज पाणिनिए वेदोनी भाषानुं व्याकरण बनाववा माटे लौकिक संस्कृतने अग्रस्थान आप्युं छे.

जेम 'वैदिक' ने समजाववा संस्कृत वाहनरूप छे

४६ पाणिनिए वेदोनी भाषानुं व्याकरण प्रथम रच्युं होत अने त्यार पछी ज लौकिक संस्कृतमां थता विशेष फेरफारो दर्शाव्या होत तो ए, भाषातत्त्वना क्रमविकासनी दृष्टिए वधारे उचित थात. परंतु एमना समये वेदोनी भाषा जीवती न हती अने एमना वखतनो भणेलोगणेलो समाज खास करीने याज्ञिक समाज लौकिक संस्कृतनो विशेष पक्षपाती हतो, तेमणे ए भणेला वर्गनी रुचि तरफ ध्यान राखीने पोताना व्याकरणमां लौकिक संस्कृतने प्रथम स्थान आप्युं छे अने बीजुं स्थान वैदिक भाषाने माटे राख्युं छे. तात्पर्य ए के पाणिनिए वैदिकभाषानां पद्धति समजाववा माटे लौकिक संस्कृतने वाहन तरीके वापर्युं छे, तेम प्राकृतभाषाना व्याकरणोने बनावनारा ते ते आचार्योए तुलनात्मक दृष्टिए प्राकृतभाषानी रचनाने समजाववा सारु ज लौकिक संस्कृतने वाहन तरीके

पाणिनिना समयनो शिक्षितवर्ग संस्कृतप्रिय

योज्युं छे. परंतु 'प्राकृतनी माता लौकिक संस्कृत छे' एवुं समजीने 'प्रकृतिः संस्कृतम्' एवुं कहेलुं नथी.

४७ अत्यारे कोई अंग्रेजने तुलनात्मक पद्धतिथी संस्कृत शिखववा माटे कोई शिक्षक एवी पद्धति योजे के :—

अंग्रेजी.	संस्कृत.	गु० अ०
थ्री	त्रि	(त्रण)
बोय	पोत	(छोकरो)
केमल	क्रमेलक	(ऊंट)
ओक्स	उक्षन्	(बळद)
इझ्	अस्	(छे)
बी	भू	(होवुं)
नाइन्	नवन्	(नव)
टेन्	दशन्	(दस)
ट्री	तरु	(झाड)

तो आ पद्धतिनो अर्थ एवो नथी के संस्कृतनी प्रकृति अंग्रेजी भाषा छे, परंतु शीखनारने जे भाषा आवडे छे ते भाषाने वाहनरूपे राखीने जेम उक्त रीते अंग्रेजी मारफत संस्कृत शिखववुं सरळ पडे छे तेम भणेला लोकोमां ज्यारे संस्कृत भाषानो प्रभाव प्रबळ हतो, ते समये तेमने जे भाषा तरफ विशेष आकर्षण होय अने तेमने जे भाषा वधारे अभ्यस्त होय ते भाषाने वाहन तरीके राखीने बीजी कोई भाषा शिखववी वधारे सरळ थाय छे. एटले हुं समजुं छुं त्यांसुधी ए दृष्टिए ज प्राकृतव्याकरणना रचनाराओए 'प्रकृतिः संस्कृतम्' कहेलुं छे.

४८ आजे इतिहासनी दृष्टिने प्रधानपणे राखीने भाषातत्त्वना विकास संबंधे पण आपणे विचारता थया छिए तेम आपणा पूर्वजोमां कोई पण तत्त्व संबंधे इतिहासदृष्टिनो विशेष ख्याल न हतो अने भाषातत्त्वना विकास विशे तो तेमणे ए ख्याल भाग्ये ज राखेलो. एटले तेमणे पोतपोतानां व्याकरणोमां आदेशोनी पद्धति स्वीकारी छे. परंतु कोई पण शब्द वा तेनां रूपोने तेओए शब्दविज्ञाननी दृष्टिए साधी बताव्यां नथी छतां तेमां

भाषातत्त्व अने इतिहासदृष्टि

जाण्ये अजाण्ये शब्दविज्ञाननी दृष्टि तो जळवायेली छे. अने एम छे माटे ज तेमणे "आदेशः स्थानी इव" एवुं विधान करेलुं छे. 'दधि–अत्र' शब्दना संहितावाळा प्रयोगमां तेओ 'इ' ने 'य' ना रूपमां थवानुं कहे छे. पण 'व' रूपमां थवानुं कहेता नथी. एमां ज तेमनी शब्दविज्ञाननी दृष्टि मालूम पडे छे. परंतु ए दृष्टि पाछळना इतिहास विशे तेमनी उपेक्षा हती एटले तेओ, ए अने एवां बीजां अनेक परिवर्तनोने शब्दविज्ञाननी दृष्टिए घटावी शक्या नथी.

आदेश अने स्थानी

आ रीते शब्दविज्ञाननी दृष्टिना अभावने लीधे तेओए आदेशो करवामां य 'आदेशः स्थानी इव' नुं पोतानुं विधान शब्ददृष्टिए तोडी[51] नाख्युं छे अने सरळ उपाय समजीने 'प्रकृतिः संस्कृतम्' नो उल्लेख करेलो छे.

---

५१ दधि+अत्र=दध्यत्र. आ प्रयोगमां 'दधि' नो अन्त्य 'इ' स्थानी छे अने तेने स्थाने थयेलो 'य' आदेश छे. 'इ' अने 'य' वच्चे उच्चारणस्थाननी अपेक्षाए समानता छे: 'इ' तालव्य छे अने 'य' पण तालव्य छे, एम ए बे वर्णो वच्चे समानता छे तेथी तेमनी वच्चे 'आदेश' अने 'स्थानी' नो संबंध घटमान छे. ए ज रीते ज्यां ज्यां जे बे स्वरो, व्यंजनो, स्वर-व्यंजनो के शब्दो वच्चे उच्चारणस्थाननी, अक्षरानुपूर्वीनी के एवी ज बीजी कोई प्रकारनी समानता होय त्यां ज 'आदेश' अने 'स्थानी' नो संबंध घटी शके छे. आ जातनो समग्र

वैयाकरणोनो–सिद्धांत छे. अने आ ज सिद्धांत शब्दविज्ञानशास्त्रनी दृष्टिए पण सुसंगत छे. उक्त सिद्धांत समग्र वैयाकरणोने संमत छे, छतां य अनेक प्रयोगोनी निष्पत्ति करतां तेओए ए सिद्धांतने तोडी नाख्यो छे.

नीचेनां केटलांक उदाहरणोथी ए वात समझी शकाय एम छे:

स्थानी	आदेश	
अन्तिक	नेद	पा० ५।३।६३
बाढ	साध	,,
वृद्ध	वर्ष	पा० ६।४।१५७
युव	कन	पा० ५।३।६४
अल्प	कन	,,
प्रशस्य	श्र	पा० ५।३।६०
प्रशस्य	ज्य	पा० ५।३।६१
वृद्ध	ज्य	पा० ५।३।६२
अपर	पश्च	पा० ५।३।३२
दृश	पश्य	पा० ७।३।७८
ब्रू	आह	पा० ३।४।८४
दा	यच्छ	पा० ७।३।७८
सृ	धाव	पा० ७।३।७८
कथ	वोल्ल	हेम० ८।४।१
कथ	वज्जर	,, ,,
बुभुक्ष	णीरव	,, ८।४।५
क्षि	णिज्झर	,, ८।४।२०
तुल	ओहाम	,, ८।४।२५
स्ना	अब्भुत्त	,, ८।४।१४

ऊपर जे जे शब्दो स्थानीरूपे अने आदेशरूपे जणावेला छे तेमां कोई पण प्रकारनी समानता नथी. 'अन्तिक' अने 'नेद' वा 'स्ना' अने 'अब्भुत्त' एमनी वच्चे कोई प्रकारनी समानता नथी ए देखीतुं ज छे.

४९ जो के बहुमत तरीके 'प्रकृतिः संस्कृतम्' वाळी वात छे. तो पण पालिव्याकरणना प्रणेता कच्चायणे पालिभाषाने समझाववा वाहन तरीके 'पालि' भाषाने ज राखी छे. अने प्रकृतिरूपे पण 'पालि' भाषाने ज वापरी छे. एटले 'पालि' भाषा माटे 'प्रकृतिः संस्कृतम्' नुं कथन सर्वथा असंगत छे. परंतु कच्चायणे ए पद्धति स्वीकारी एथी एनो अर्थ एवो तो नथी ज के पालिभाषा कांइ अद्धरथी आवी गई छे. वा ए अनादि काळथी एवी ने एवी ज चाली आवे छे. भाषाविज्ञाननी दृष्टिए जोनार प्रत्येक अभ्यासी एम समझी शके एवुं छे के ए भाषा पण मूळ वैदिक जीवती भाषाना प्रवाहमांथी ऊतरेली छे. 'प्रकृतिः संस्कृतम्' लखनाराओमां जेम भाषाविज्ञाननी दृष्टि नथी तेम 'पालि'ने अप्रकृतिक समझनार कच्चायणमां पण ए दृष्टि न हती ए स्वीकार्या सिवाय आज तो चाले तेम नथी.

'पालि' भाषा माटे 'पालि' वाहन

५० वळी, "प्रकृतिः संस्कृतम्" नो अर्थ असंगत जेवो लागवाथी केम जाणे रुद्रटना टीकाकार श्रीनमिसाधुए 'प्राकृत' शब्दनुं निर्वचन तद्दन जुदी रीते वताव्युं छे. ते जणावे छे के—"सकलजगज्जन्तूनां व्याकरणादिभिरनाहितसंस्कारः सहजो वचनव्यापारः प्रकृतिः तत्र भवम् सैव वा प्राकृतम् ××× वा प्राक् पूर्वं कृतं प्राकृतम् वालमहिलादिसुबोधम् सकलभाषानिबन्धनभूतं वचनमुच्यते मेघनिर्मुक्तजलमिव एकस्वरूपं तदेव च देशविशेषात् संस्कारकरणाच्च समासादितविशेषं सत् संस्कृताद्युत्तरविभेदान् आप्नोति। अत एव शास्त्रकृता प्राकृतम् आदौ निर्दिष्टम् तदनु संस्कृतादीनि। पाणिन्यादिव्याकरणोदितशब्दलक्षणेन संस्करणात् संस्कृतमुच्यते" रुद्रटना काव्यालंकारमां (२, १२) नीचेनो श्लोक मळे छे—

प्रकृतिः संस्कृतम् विशे रुद्रटनो टीकाकार

"प्राकृत–संस्कृत–मागध–पिशाचभाषाश्च शौरसेनी च।
षष्ठोऽत्र भूरिभेदो देशविशेषाद् अपभ्रंशः ॥"

आ श्लोकमां प्राकृत, संस्कृत, मागधी, पैशाची, शौरसेनी अने छठ्ठी अनेकभेदवाळी अपभ्रंश एम छ भाषानां नाम गणाव्यां छे. तेमां सर्वथी प्रथम 'प्राकृत' नो उल्लेख छे. ग्रंथकार लौकिकसंस्कृतनो उद्भट विद्वान होईने तेनो ज पक्षपाती होय ते बनवाजोग छे, छतांय तेणे बधी भाषाओमां 'प्राकृत' ने ज अग्रस्थान शा माटे आप्युं छे? एनो खुलासो आपवा श्रीनमिसाधुए 'प्राकृत' शब्दनां पूर्वोक्त बे निर्वचनो कर्यां छे, तेमां पहेलामां बताव्युं छे के–स्वाभाविक वचनव्यापारनुं नाम 'प्रकृति' छे. जे उच्चारणो सहेजे सहेजे नीकळे छे, जेमनी ऊपर व्याकरण वगेरे भाषासंबंधी शास्त्रोए संस्कारनो ओप नथी चडाव्यो एवां उच्चारणो 'प्रकृति' कहेवाय. जे भाषानो देह एवां उच्चारणोथी घडायो छे ते भाषानुं नाम प्राकृत अथवा एवां उच्चारणो द्वारा जे भाषा नीपजी छे ते 'प्राकृत' भाषा कहेवाय. बीजा निर्वचनमां 'प्राक्+कृत' एवा बे शब्दोद्वारा 'प्राकृत' शब्द नीपजाव्यो छे अने एनो अर्थ 'जे सर्वथी प्रथम करेलुं होवाथी बधी भाषाओनुं कारणरूप छे तेनुं नाम प्राकृत' एम बताव्यो छे. पहेला निर्वचनमां जे अर्थ कह्यो छे ते ज अर्थ आ बीजामां बताव्यो छे. मारा नम्र मत मुजब पहेलुं ज निर्वचन विशेष योग्य छे. जो के पहेला अने बीजाना भावमां खास भेद नथी छतां 'प्राक्+कृत' मांथी प्राकृत शब्द नीपजाववो ए करतां 'प्रकृति' मांथी नीपजाववो विशेष संगत छे तेथी पहेला निर्वचन तरफ मारो पक्षपात छे.

प्राकृत शब्दनो जे अर्थ आगळ बतावी गयो छुं ते अने उक्त नमिसाधुए प्राकृतनो जे अर्थ समझाव्यो छे तेमां लेश पण भेद नथी, माटे

मारा नम्र कथन प्रमाणे 'प्रकृतिः संस्कृतम्' ने बदले 'प्रकृतिः स्वभावः' अर्थ ज भाषाना प्रस्तावमां उचिततम छे.

५१ यायावरीय कविराज राजशेखर कहे छे—

राजशेखरनी प्राकृत-भक्ति

"यद् योनिः किल संस्कृतस्य सुदृशां जिह्वासु यद् मोदते
यत्र श्रोत्रपथावतारिणि कटुर्भाषाक्षराणां रसः ।
गद्यं चूर्णपदं पदं रतिपतेस्तत् प्राकृतं यद्वचः
तान् लाटान् ललिताङ्गि ! पश्य नुदती दृष्टेर्निमेषव्रतम्" ॥
—(बालरामायण ४८–४९)

आ श्लोकनुं तात्पर्य ए छे के—"जे भाषा संस्कृतनी जननी छे, स्त्रीओनी जीभ उपर रमे छे अने जेने सांभळ्या पछी बीजी भाषाना अक्षरो कर्णकटु लागे छे तेवी प्राकृत भाषाने लाटना लोको बोले छे."

राजशेखरनी समझ प्रमाणे संस्कृत भाषा, प्राकृतमांथी आवी छे. कविनी ए समझमां मने तो प्राकृत भाषा तरफ कविनी विशेष भक्ति ज माळूम पडे छे. परंतु भाषाविज्ञाननी दृष्टिए जोतां प्राकृतभाषामांथी संस्कृत भाषा आवी छे एवुं कही शकाय एम नथी. अहीं ए याद राखवुं जोईए के 'संस्कृत' शब्दथी कविनी विवक्षा लौकिक संस्कृतनी छे. लौकिक संस्कृतनी घटना अने साहित्यमां विद्यमान व्यापक प्राकृतनी घटना वच्चे कार्यकारणमां होय तेवुं साम्य देखातुं नथी; एथी एम केम कही शकाय के प्राकृत उपरथी संस्कृत भाषा आवी छे ?

५२ विक्रमना आठमा सैकानो महापंडित वाक्पतिराज पोताना प्राकृत काव्य 'गउडवहो'मां जणावे छे के :—

वाक्पतिराजनी प्राकृत-भक्ति

"सयलाओ इमं वाया वसंति एत्तो य णेंति वायाओ ।
एंति समुद्दं चिय णेंति सायराओ च्चिय जलाइं ॥

णवं अत्थदंसणं संनिवेससिसिराओ बंधरिद्धीओ
अविरलं इणमो आभुवणबन्धं इह णवर पययम्मि ॥
—(गउडवहो पृ० २८–२९ गा० ९२–९३)

"जेम मेघनां पाणी समुद्रमां पडे छे अने फरी पाछां समुद्रमांथी बहार नीकळे छे तेम बधी भाषाओ प्राकृतमां समावेश पामे छे अने प्राकृतमांथी बहार नीकळे छे. ९२.

नवा नवा अर्थोनी घटना, नवा नवा बंधोनी रचना वगेरे ए बधुं ज्यारथी सृष्टि सर्जाई त्यारथी एक मात्र प्राकृत भाषामां सुलभ छे. ९३.

'पायय' अने 'पयय' ए बन्ने शब्दो 'प्राकृतभाषा'ना सूचक छे. उक्त गाथामां कविए 'पयय' शब्द प्रयोजेलो छे. गाथानो अर्थ जोतां कवि, प्राकृतभाषा तरफ पोतानी प्रबल भक्तिने सूचवतो होय एवुं भासे छे. परंतु कविना ए कथनमां शब्दविज्ञाननी दृष्टि होय एम जणातुं नथी. अथवा विवरणकारना कथन प्रमाणे कविए अहीं 'प्राकृत' शब्दनो उपयोग 'शब्दब्रह्म' माटे कर्यो छे अने ते द्वारा एम सूचव्युं छे के सर्व भाषाओ ए 'शब्दब्रह्म'नी विकृतिरूप छे. कविना ए सूचनमां पण भाषाने लगती वैज्ञानिक दृष्टि करतां 'शब्दब्रह्म'नी विशेष भक्ति ज तरी आवे छे.

आदिम प्राकृत अने लौकिक संस्कृत वच्चेनो भेद

५३ निष्कर्ष ए आव्यो के वेदोनी ऋचाओमां सचवायेली जे भाषानो नमूनो आपणी सामे छे ते भाषा ज्यारे लोकोनी बोलचालनी हती अने बोलचालनी होवाने लीधे जे आपोआप परिवर्तनो पाम्ये जती हती, जेने संस्कारवा खास कोइ प्रयत्न नथी थयो एवी आबालगोपाल सुधी प्रसरेली भाषा ते आदिम प्राकृत वा व्यापक प्राकृत. अने ए ऋचाओनी भाषाना अने उक्त आदिम प्राकृतभाषाना प्रयोगोने ध्यानमां

वई संस्कृतभक्तोनी दृष्टिए जे प्रयोगो शुद्ध जणाया तेमने तेमांथी लौकिक संस्कृतनी घटना करनाराओए वीणी. शुद्ध तारवी, भाषानी जे संकलना करी तेनुं नाम लौकिक संस्कृत भाषा.

ए माटे रत्नोनी वखारनुं उदाहरण

५४ धारो के हजारो वर्षोथी वेध पडेल्यी एवी रत्नोनी एक मोटी वखार होय. तेमां घाटघुट विनानां अने चित्रविचित्र वर्णवाळां अनेक प्रकारनां रत्नो भरेलां होय, तेमांथी साधारण लोको ए घाट विनानां रत्नो लई पोतानुं काम चलावे अने बीजा केटलाक लोको तो ए चित्रविचित्र रत्नोने पण ओपीओपीने पोताना काममां ल्ये एटले एनो अर्थ एम तो न ज थाय के पेलां घाटघुट विनानां रत्नोमांथी ए ओपेलां रत्नो नवां ज नीपज्यां छे. ए न्याये अहीं लौकिक संस्कृतनी घटना करनाराओए पोताने गमी गयेल प्रयोगोने वीणवानी दृष्टिए (लौकिक संस्कृतनी घटना करवामां) आदिम प्राकृतनो उपयोग कर्यो होय, एटला मात्रथी कांई एम न कही शकाय के प्राकृत भाषा संस्कृतनी जननी छे. खरी रीते तो आदिम प्राकृत अने लौकिक संस्कृत ए बे प्रवाहो जुदा जुदा वह्या छे तो पण ते बन्नेनुं मूळ कोई एक प्रवाहमां छे एमां शंका नथी अने एम छे माटे ते बन्ने प्रवाहोना शब्ददेहनी घटना अने विद्यमान वैदिक शब्ददेहनी घटना परस्पर आश्चर्यकारक रीते मळती आवे छे.

५५ व्यापक प्राकृत अने वैदिक भाषा ए बन्ने वच्चे गाढ संबंध छे एटले तेनो अर्थ एवो नथी ज के व्यापक प्राकृत अने लौकिक संस्कृत वच्चे कशो संबंध नथी.

ए बन्ने एक प्रवाहमांथी नीकळेली होवाथी मा-दीकरी नथी पण बे बहेनो छे. लौकिक संस्कृतनुं क्षेत्र परिमित होवाथी ते नानी बहेन छे अने प्राकृतनुं क्षेत्र विशाळ होवाथी ते मोटी बहेन छे. बे बहेनोमां जेवो

स्नेहसंबंध होय छे तेवो संबंध ए बे भाषा वच्चे छे. वर्तमानमां तो नथी बोलाती प्राकृत[52] तेम नथी बोलाती संस्कृत. परंतु बन्ने भाषानुं विपुल साहित्य उपलब्ध छे, ए ऊपरथी ए बे बहेनो जेवी भाषाओ वच्चेनो संबंध समझी शकाय एम छे. मोटी बहेन जेम नानी बहेनने पोतानां अलंकारो आपी शोभावे छे तेम प्राकृत भाषाए पोतानां मृदु आभूषणोथी नानी बहेन संस्कृतने मंडनयुक्त करी छे.

व्यापक प्राकृत अने लौकिक संस्कृत ए बन्ने बहेनो छे.

५६ नीचे जणावेलां थोडां उदाहरणो द्वारा आ बाबत स्पष्ट थशे:

नानी बहेन संस्कृत ऊपर मोटी बहेन प्राकृतनी प्रबल असरनां उदाहरणो

[१] संस्कृत साहित्यमां 'साळा' अर्थमां 'स्याल' अने 'श्याल' बन्ने शब्दोनो उपयोग छे. आ विशे विशेष गवेषणा करतां जणाय छे के 'स्याल' शब्द मूळरूप छे अने 'श्याल' शब्द तेनुं बीजुं उच्चारण छे. ऋग्वेदमां "अश्रवं हि भूरिदावत्तरा वां विजामातुरुत वा घा स्यालात्" [ऋग्वेद पृ० ६६१—सू० २] ए मंत्रमां 'स्याल' शब्दनो प्रयोग छे. निरुक्तमां[53] पण उक्त मंत्रमां छे तेवा 'स्याल' शब्दनुं निर्वचन आप्युं छे.

'स्याल' अने 'श्याल'

---

५२ प्रस्तुतमां वपरायेलो 'प्राकृत' शब्द तेना 'अमुक प्रकारनी भाषा' एवा रूढार्थनो द्योतक छे. 'प्राकृत' नो व्युत्पत्त्यर्थ तो 'स्वाभाविक भाषा—प्रचलित लोकभाषा' एवो थाय छे परंतु ते अर्थ अहीं विवक्षित नथी. "प्राकृत वाणी वदुं" ए वाक्यमां प्राकृत शब्दनो रूढार्थ नथी परंतु व्युत्पत्त्यर्थ छे माटे ज ए वाक्यमां वपरायेलो 'प्राकृत' शब्द गुजराती भाषाने पण सूचवे छे.

५३ 'स्याल' नुं निर्वचन आ प्रमाणे छे.

"स्यात् लाजान् आवपति—इति वा" 'स्यम्' इति 'सूर्पम्' उच्यते तस्माद् असौ गृहीत्वा कन्यकाया भगिन्या विवाहकाले लाजान् भृष्टधान्यान् आवपति—

ए ज रीते संस्कृत साहित्यमां आ नीचे जणावेला जे द्विविध शब्दो प्रवर्ते छे, तेमना द्विधा उच्चारणनुं कारण मोटी बहेन प्राकृतनी व्यापक असर छे, एम समझवानुं छे.

'श' नो 'स'
'स' नो 'श'
तथा 'ष' नो 'स'

काशी—कासी	(शब्दर०	कां०	४	श्लोक०	२५)
अश्रु—अस्रु	,,	,,	२	,,	१२०
शाक—साक	,,	,,	३	,,	४३
शर्करा—सर्करा	,,	,,	४	,,	१२
श्वान—स्वान	,,	,,	४	,,	३१६
शुभ—सुभ	,,	,,	१	,,	१७
शाम्बरी—साम्बरी	,,	,,	३	,,	३४८
शूर—सूर	,,	,,	३	,,	१९
शर्वरी—सर्वरी	,,	,,	२	,,	३४
शची—सची	,,	,,	२	,,	६२
उर्वशी—उर्वसी	,,	,,	२	,,	६९
स्याल—श्याल	,,	,,	३	,,	१४६
अस्र—अश्र	,,	,,	२	,,	१२०
दासी—दाशी	,,	,,	३	,,	३५२
(अर्थ—धीवरी)					
सूरि—शूरि	,,	,,	३	,,	६
वृषी—वृसी	,,	,,	३	,,	२९८
चाष—चास	,,	,,	४	,,	३५४
(अर्थ— विशेष प्रकारनुं पक्षी)					
मषी—मसी	,,	,,	३	,,	९८

आ उपरांत जे शब्दोनां बब्बे उच्चारणो छे अने जेमांनुं एक मूळभूत छे अने बीजुं संस्कृत ऊपर व्यापक प्राकृतनी असरने लीधे नीपजेलुं छे, एवा अनेक शब्दो आ नीचे विशेष स्पष्टताने माटे आपुं छुं. ए शब्दो शब्दरत्नाकरकोशमां, अमरकोशमां अने हेमचन्द्रना अभिधानचिन्तामणि वा अनेकार्थसंग्रहमां विद्यमान छे. माटे ते शब्दोना खास खास स्थानो नथी बताववानो, तेम विशेष काळक्षेपना कारणे तेमनो साहित्यमां थयेलो प्रयोग पण नथी नोंधवानो.

[६]—हर्ष—हरिष

स्वरभक्ति

दह्र—दहर
कम्र—कमर
गर्भ—गरभ
वर्षा—वरिषा
वर्ष—वरिष
पर्षत्—परिषत्
मनोऽर्थ—मनोरथ

} प्राकृतनी असरने लीधे 'भार्या'ना 'भारिया' नी पेठे संयुक्त व्यञ्जनमां स्वरनो वधारो

अनुस्वारयुक्तता　[७] 'वक्र' ना प्रा० 'वंक'नी पेठे आवेला शब्दो :

भद्र—भन्द्र
लक्षण—लाञ्छन
अत्तिका—अन्तिका

'आ'नो 'अ'

[८] 'आ'—'अ'
कुमार—कुमर
फाल—फल
कलाश—कलश

'इ'—ए

'इ' नो 'ए' [९] मुहिर—मुहेर (अर्थ—मूर्ख)

'अ' नो 'आ' [१०] 'अ'—'आ'

पति—पाति

'ऋ' नो 'रि' [११] 'ऋ'—'रि'

ऋज—रिज—(अर्थ—पति)

'भ' नो 'व' [१२] 'भ'—'व'

करम्भ—करम्व

'ण' नो 'ल' [१३] 'ण'—'ल'

श्लेष्मण—श्लेष्मल

'औ' नो 'उ' [१४] औ—उ

कौङ्कुण—कुङ्कुण

कौतुक—कुतुक

'द' नो 'ज' [१५] द—ज

दस्यती—जस्यती—वैदिक शब्द

'ह' नो 'अ' [१६] ह—अ

हट्ट—अट्ट

'त' नो 'ट,' 'ट्ट' [१७] त—ट, त्त—ट्ट

कर्तक—कण्टक (वैदिक शब्द)

पत्तन—पट्टन

'कर्तक' ना 'र' नो लोप अने अनुस्वारनुं आगमन पण प्राकृतप्रभव छे. जुओ पृ० ८९, अङ्क ५ तथा पृ० ९०, अङ्क ७.

'श्म' नो 'म्भ' तथा 'क' नो 'ग'

[१८] श्म—म्भ तथा क—ग

काश्मरी—कम्भारी—गम्भारी

'ट' नो 'ड'

[१९] ट—ड

तटाक—तडाक

पेटा—पेडा

कुटी—कुडी

'व' नो 'ब' तथा 'द' नो लोप

[२०] व—ब, 'द' लोप

द्वार—बार

'ड' नो 'ल'

[२१] ड—ल ["ऋफिडादीनां डश्च लः" २—३—१०४ हैमव्या०]

ताडक—तालक

बालिश—बाडिश

जड—जल

दुलि—दुडि

बिडाल—बिलाल

कलेवर—कडेवर

कलत्र—कडत्र

बडिश—बलिश

नाडी—नाली

'स' नो 'लोप'

[२२] 'स' लोप

स्तूप—तूप

'ય' નો લોપ અને 'ર' ની વૃદ્ધિ	[૨૩] 'ય' લોપ અને 'ર' વૃદ્ધિ ચૈત્ય—ચૈત્ર પામર—પ્રામર—(આમાં 'ય' નો લોપ નથી.)
'ક' નો લોપ	[૨૪] 'ક' લોપ યોક્ત્ર—યોત્ર
'દ' નો લોપ	[૨૫] 'દ' લોપ કુદ્દાલ—કુદાલ
'મ' નો 'વ'	[૨૬] મ—વ શ્રમણ—શ્રવણ
'વ' નો 'મ'	[૨૭] વ—મ દ્રવિડ—દ્રમિડ યવની—યમની
'સ' નો 'ષ' તથા 'ખ' નો 'હ'	[૨૮] સ—ષ, ખ—હ મુસલ—મુષલ—મુખલ—મુહલ
'પ' નો 'વ'	[૨૯] 'પ'—વ ["જપાદીનાં પો વઃ" ૨—૩—૧૦૫ હૈમવ્યા૦] કપાટ—કવાટ પારાપત—પારાવત જપા—જવા લિપિ—લિવિ
'વ' નો લોપ	[૩૦] 'વ' લોપ ઊર્ધ્વ—ઊર્ધ

'क्ष' नो 'ख' [३१] 'क्ष' – ख

क्षुल्लक–खुल्लक

पक्ष–पुङ्ख

क्षुर–खुर

'य' नो लोप [३२] 'य' लोप

स्याली–शाली

मत्स्य–मत्स

तूर्य–तूर

'क्ष' नो 'छ' [३३] क्ष–छ

पक्ष–पिच्छ

क्षुरी–छुरी

कक्ष–कच्छ

'त्स' नो 'च्छ' [३४] त्स–च्छ

मत्स–मच्छ

'त' नो 'थ' [३५] त–थ

पीती–पीथी

'ति' नो 'रि' [३६] ति–रि

प्रतिदान–परिदान

'य' नो 'ज' [३७] य–ज

यमन–जमन

जानि[५६]–यानि

---

५६ "जानिः यानिः कुलत्थी च"—(शब्दरत्नाकर कांड ३, श्लो० १४७)

यातु—जातु
यातुधान—जातुधान

'ह्' नो 'घ' — [३८] ह्—घ
अंह्रि—अङ्घ्रि
घस्त—हस्त

'ष्ट्' नो 'ढ' तथा 'र' लोप — [३९] ष्ट्—ढ, 'र' लोप
दंष्ट्रिका—द्राढिका—दाढिका

'थ्र' नो 'च्छ' — [४०] थ्र—च्छ
पथ्र—पुच्छ ['पुच्छ' वेदमां पण मळे छे]

अनुस्वारलोप — [४१] अनुस्वारलोप
अम्बा—अव्वा

वचला स्वरनो अने सस्वर व्यंजननो लोप — [४२] वचला स्वरनो लोप अने वचला स्वरसहित व्यञ्जननो लोप
रसना—रस्ना
वासर—वास्र
भगिनी—भग्नी
वहनी—वेणी (प्रवाह—रघुवंश)
उदुम्बर—उम्बुरक—उम्बर
प्रदत्त—प्रत्त
आदत्त—आत्त
सुदत्त—सुत्त

---

५७ " प्रासादजालैर्जलवेणिरम्यां रेवां यदि प्रेक्षितुमस्ति कामः—" रघुवंश स० ६, श्लो० ४३).
" जलानां वेण्या प्रवाहेण " – " ओघः प्रवाहो वेणी च इति हलायुधः "—टीका

'थ' नो 'घ' [४३] थ—ध

मथुरा—मधुरा

'ई' नो 'ए' [४४] ई—ए

पीयूष—पेयूष

'क' नो 'ग' [४५] क—ग, अ—इ, इ—ए
'अ' नो 'इ'
'इ' नो 'ए'

दक—दग

द्रकट—द्रगड

कन्दुक—गिन्दुक—गेन्दुक

[४६] र—ल, ऋ—ऌ [हैमॅव्या० २=३—९९ थी २—३—१०५ सुधीनां सूत्रो]

'र' नो 'ल' तथा 'ऋ' नो 'ऌ'

हीका—ह्लीका

पुरुष—पुलुष

तरुण—तलुन

क्षुधारु—क्षुधालु

शीतारु—शीतालु

प्रवङ्ग—प्लवङ्ग

राक्षा—लाक्ष

रोम—लोम

चरण—चलन

ऋफिड—ऌफिड

---

५८ पाणिनीय अ० ८।२।१८ थी ८।२।२२ सुधी. "ऌफिडः ऋफिडः। एषोऽपि ऌफिड्डः ऋफिड्डः।"—(महाभाष्य पृ० ४६ चा० अ०)

'ल' नो लोप

[४७] 'ल'—लोप

शल्की—सक्गी

'श' नो 'ष'

[४८] श—ष

अभीशु—अभीषु

वेश्या—वेष्या

'द' नो 'त'

[४९] द—त

आदान—आतान

राजादन—राजातन

'र' नो लोप थया पछी द्विर्भाव

[५०] 'र' लोप, द्विर्भाव

दुर्भट—दुब्भट

दुर्भर—दुब्भर

वप्र—वप्प (अर्थ—बाप)

'अय' नो 'ओ'

[५१] अय—ओ

मयूर—मोर

'प' नो 'ब'

[५२] प—ब

तम्पा—तम्बा (अर्थ—गाय)

अंत्य व्यंजननो लोप

[५३] अन्त्यलोप

धामन्—धाम

महस्—मह

तमस्—तम

सोमन्—सोम

रोचिस्—रोचि
शोचिस्—शोचि
चर्मन्—चर्म
शवस्—शव
होमन्—होम
तपस्—तप

स्वर अने संयुक्त वर्णनां विलक्षण उच्चारणो

[५४] केटलाक एकार्थक शब्दोनां उच्चारणो एवां विविध देखाय छे के ए उच्चारणो ज एमनी प्राकृतता ठरावे छे:

चन्द्र—चन्दिर—चन्द
विकुस्त्र—विकस्त्र—विक्रस्त्र
बुक्कस—पुक्कस—पुल्कस
तविश—तविष—ताविष
वनीपक—वनीयक—वनवक
खोड—खोट—खोर
वराणसी—वाराणसी—वाणारसी
हण्डे—हञ्जे
सुवासिनी—स्ववासिनी
मौक्तिक—मुकुतिक—मकुतिक
मस्तक—मस्तिक
अषाढ—आषाढ
एतश—ऐतश
बिडोजा—बिडौजा
निघण्टु—निर्घण्टु

नेतृ—नेत्र

दिवोका—दिवौका

[५५] ण—न

'ण' नो 'न'

पाणिनि[59] वगेरेना धातुसंग्रहमां जे धातुओ मूळ णोपदेश—आदिमां 'ण' कारवाळा—नोंघेला—छे ते वधा य प्रयोगनी प्रक्रियामां आवतां आदिमां 'न' वाळा थाय छे.

'ष' नो 'स' [५६] ष—स

पाणिनि[60] वगेरेना धातुसंग्रहमां जे धातुओ षोपदेश—आदिमां 'ष' वाळा दर्शाव्या छे ते वधा य प्रयोग समये आदिमां 'स' वाळा थई जाय छे.

आ उपरांत निरुक्त वगेरेनो उल्लेख करीने आगळ (पृ० २२—२५) जे एकार्थक धातुओ अने एकार्थक शब्दोनां भिन्न भिन्न उच्चारणो नोंधी बताव्यां छे, ते द्वारा पण जोई शकाय एम छे के केटला जूना समयथी नानी वहेन संस्कृतने तेनी मोटी वहेन प्राकृते पोतानी मृदुता अने विविध उच्चारणनी रीत आपी तेमां अनेकगणुं वैविध्य वधारी दीधुं छे.

संस्कृतना अभ्यासिओनुं प्राकृतना अभ्यास तरफ दुर्लक्ष अने तेनुं दुष्परिणाम

५७ संस्कृत ऊपर व्यापक प्राकृतनो आवो प्रभाव होवा छतां संस्कृतना अभ्यासिओनुं प्राकृतना अभ्यास तरफ जे दुर्लक्ष्य प्रवर्तमान छे ते विशेष कठे एवुं छे. विद्वानोमां वर्तता ए दुर्लक्षने परिणामे नाटकोनुं प्राकृत भारे अशुद्धिओना गर्तमांथी नीकळी शक्युं नथी. मारे नम्रपणे कहेवुं जोईए के नाटकोना ते ते विद्वान संपादकोए नाटकगत प्राकृतना संशोधन तरफ लक्ष्य ज नथी

५९ "णो नः"—६।१।६५ पाणिनीय.

६० "धात्वादेः षः सः"—६।१।६४ पाणिनीय.

राख्युं. तेने लीधे नाटकगत प्राकृतना पाठोनुं ठेकाणुं[६१] नथी रह्युं. नाटकनां

नाटकोना प्राकृतनी दुर्दशा

केटलांक संस्करणोमां तो नाटकना मूळ पाठरूप प्राकृतने नीचे टिप्पणमां मूकी[६२] ऊपर तेनुं संस्कृत ज बेसारवामां आव्युं छे. एटलुं ज नहीं पण नाट-

---

६१ एक उदाहरण—प्रतिमानाटक, संपादक–शिवराम महादेव प्रांजपे, पूना.

	अशुद्ध पाठ	शुद्ध पाठ
पृ० १	इअह्मि	इअं म्हि
पृ० २	सङ्गीदसाळं	सङ्गीदसालं
पृ० २	काळसंवादिणा	कालसंवादिणा
पृ० २	किदं त्ति	किदं ति
पृ० ३	वक्कळं	वक्कलं
पृ० ३	ळोभेण	लोभेन
पृ० ३	सुळ्हावराहो	सुल्हावराहो
पृ० ३	किस्स	कीस
पृ० ३	अय्यरेवा	अय्यरेवा
पृ० ३	अह्मेहि	अम्हेहि
पृ० १०	रोदिदव्ये	रोदिदव्वे

उक्त अशुद्ध पाठोना शुद्ध पाठो में बतावेला छे. नाटकमां एकंदर शौरसेनी भाषा वपरायेली छे, छतां संपादके वक्कळं, सुळ्ह–, –साळं, काळ–वगेरे 'ळ' वाळा प्रयोगो–जे शौरसेनीमां संभवता ज नथी—राखेला छे. एवा 'ळ' वाळा प्रयोगो पैशाची भाषामां प्रचलित छे. वळी, संपादके पृ० ७२ ऊपर एक कोठो आप्यो छे तेमां जणावेलुं छे के नाटकमां बे भाषा–एक संस्कृत अने बीजी प्राकृत–वपरायेली छे. खरी रीते नाटकमां संस्कृत अने शौरसेनी भाषा वपरायेली छे एम स्पष्ट लखवुं जोईतुं हतुं. 'प्राकृत' लखवाथी 'शौरसेनी' नो भाव समजवो सुगम नथी.

६२ उदाहरण—रत्नावली–संपादक: एम्. आर. काळे, बी. ए.
रत्नावली (श्रीहर्षरचित) मांना बधा मूळ प्राकृतपाठोने टिप्पणमां राखेला छे अने ते पाठोनुं संस्कृत, ऊपर मूकेलुं छे. प्राकृत पाठोनुं समानरूप संस्कृत करवा तरफ उपेक्षानां उदाहरणो—

कोना केटलाक टीकाकारोने[63] हाथे सुद्धां नाटकना प्राकृतनी दुर्दशा थयेली छे.

आ जातनी फरियाद मारी एकलानी नथी. भाषातत्त्वविशारद श्रीमान विधुशेखरशास्त्रीजीए[64] पण नाटकोना प्राकृत विशे आवी ज फरियाद करेली छे.

	प्रा०	सं०	शुद्ध
रत्ना० पृ० १३	आलोएदु	अवलोकयतु	आलोकयतु
,, पृ० १४	मउलीकिद–	मुकुलायित	मुकुलीकृत
,, पृ० १७	दासीए-धीए !	दास्याः–पुत्रि !	दास्याः–दुहितः !
,, पृ० २०	केत्तिअ-दूरो	कियद्दूरे	कियद्दूरः
,, पृ० ४६	गुम्मंतरिदाओ	गुल्मान्तरिते	गुल्मान्तरितात्
,, पृ० ४७	सुहाअदि	सुखयति	सुखायते ।
,, पृ० ५२	गुरुओ	गुरुः	गुरुकः वगेरे.

६३ 'कर्पूरमंजरी' नाटिकानी टीका वांचतां आ हकीकत समजी शकाय एम छे, छतां ते माटेनुं उदाहरण नीचे प्रमाणे छे:

'समोहणासाणं' (कर्पूरमंजरी पृ० ४ निर्णय०) कर्पूरमंजरीनो उक्त पाठ अशुद्ध छे छतां टीकाकारे ते अशुद्ध पाठनी टीका करी छे. 'स+मोहण+आसा' आवो पदच्छेद कर्यो छे. टीकाकारे करेलो अर्थ–"मोहने सुरते आशासहितयोः" छे. खरो पाठ "छम्मुहणासाणं" छे. तेनो अर्थ "षण्मुखन्यासानाम्" छे अर्थात् "जेमना खोळामां षण्मुख बेठेला छे एवां शिव अने पार्वती" आ अर्थ युक्त छे अने उचित पण छे. आ रीते कर्पूरमंजरीमां तेम ज बीजां पण नाटकोमां टीकाकारोए प्राकृत पाठोनी तरफ तद्दन उपेक्षा राखी छे.

६४ आ संबंधे श्रीविधुशेखरजीनो उल्लेख आ प्रमाणे छे:

"संस्कृत दृश्य काव्यसमूहे स्थाने स्थाने प्राकृत अंश विभिन्न विभिन्न पाठे एत व्याकुल हइया उठिया छे ये, ताहा बलिबार नहे × × × संस्कृत पाठकगणेर प्राकृतेर दिके अनादरइ एइ पाठविपर्ययेर अन्यतम प्रधान हेतु । इहार संस्कार हउया नितांत आवश्यक"—पालिप्रकाशप्रवेशक पृ० १८, टिप्पण ४२.

श्रीविधुशेखरजीनो उक्त उल्लेख वधु लांबो होवाथी तेमांथी अहीं थोडो उतारो आप्यो छे. ते उल्लेखमां तेमणे 'वेणीसंहार' नुं नाम लई तेना पाठोनी अव्यवस्था बतावी छे.

संभव छे के 'प्राकृत भाषा नीच पात्रोनी भाषा छे' एवा रूढिगत वहेमने लीधे आवुं बनवा पाम्युं होय. परंतु आ मान्यता तद्दन भूल भरेली छे. जे भाषा एक काळे सर्वसाधारणमां प्रवर्तती हती एटले तेने राजा पण बोले अने रंक पण बोले, ब्राह्मण पण बोले अने चण्डाल पण बोले—एम होवाथी एवी सर्वव्यापक भाषाने नीच पात्रोनी भाषा कही उवेखवी क्यां सुधी उचित छे?

'प्राकृत' नीच पात्रोनी भाषा छे?

आर्यसंस्कृतिना असाधारण प्रतिनिधि भगवान महावीर अने भगवान बुद्धना मुखरूप हिमाचलमांथी जे भाषानी प्रशमरसपूर्ण गंगा वहेली छे, जे भाषाने कविवर हाल, वाक्‌पतिराज, रुद्रट अने राजशेखर जेवा विद्वानोए आदर आप्यो छे, जे भाषामां आर्यसंस्कृतिने लगतुं विपुल साहित्य उपलब्ध छे, जे भाषाना परिचय विना आर्यसंस्कृतिना इतिहासनो अभ्यास ज अटकी पडे एम छे अने जे भाषाना ज्ञान विना आपणा देशमां प्रवर्तती मराठी, बंगाली, गुजराती, हिंदी, मारवाडी, माळवी, मेवाडी, कच्छी, सिंधी, पंजाबी, भोजपुरी, मगही, आसामी, सिंहली, उडीया, बिहारी, कास्मीरी प्रमुखनो अरे! तामिल, तेलगु, मलयाळं सुद्धांनो अने लेटिन, जर्मन, फारसी तथा अंग्रेजी वगेरे भाषानो पण इतिहास जाणी शकाय एम नथी. टूंकामां जे भाषाने अपनाव्या विना सर्वधर्मसमभावना जीवन-हितकर सिद्धांतनुं आचरण ज शक्य नथी एवी प्राकृत भाषाने 'नीच पात्रोनी भाषा छे' वा 'अमुक संप्रदायनी भाषा छे' एम समजी तेना ज्ञान-विज्ञान अने संशोधनथी पोतानी जातने वंचित राखी आपणे राष्ट्रने

'प्राकृत' भाषाना अभ्यास विना संशोधन कार्य ज अशक्य छे

अने राष्ट्रिय साहित्यने केटलुं बधुं नुकसान कर्युं छे? ए अवश्य विचारवुं जोईए.

'प्राकृत' ना अभ्यास विना भाई भाई वच्चे पडेलुं अंतर

५८ आपणे नागरिक लोको अने आपणने पोषनारा लाखो करोडो गामडिया भाईओ ए बे वच्चे जे अन्तर वध्युं छे तेनुं कारण आपणा देशना स्नातकोए अने अध्यापकोए प्राकृतभाषाने उवेखी छे ए पण मने लागे छे. एक समयनी सर्वव्यापक भाषाने नीचोनी भाषा समझवुं तो वर्तमानमां व्यापक एवी मराठी, हिंदी, बंगाळी, गुजराती या सर्वव्यापी जेवी अंग्रेजी ए बधी नीचोनी भाषा छे के ऊंचोनी? आपणी युनिवर्सिटिओने अने तेमना जेवी बीजी मातबर संस्थाओने मारी नम्र विनंती छे के तेमणे व्यापक प्राकृतभाषाना साहित्यने शब्दविज्ञाननी नवी दृष्टिथी संशोधित करावी, तेना अभ्यास माटे अध्यापकोने अने विद्यार्थिओने उत्तेजित करी राष्ट्रहितनुं अपूर्व पुण्य उपार्जी तेमनी साची शोभा सिद्ध करवी जोईए.

व्यापक प्राकृतमां समाती भाषाओ

५९ वेदोनी भाषा साथे विशेष सरखामणी होवाने लीधे ते समयनी—वेदवारानी—बोलचालनी भाषा साथे जेनो संबंध सिद्ध करी बताव्यो छे, संस्कृत भाषा ऊपर पण जेनी प्रबल असर छे एवी उपर्युक्त व्यापक प्राकृत भाषामां पालि, अर्धमागधी के आर्षप्राकृत, धर्मलिपिओनी भाषा, चक्रवर्ती खारवेल वगेरेना प्राकृत शिलालेखोनी भाषा, साधारण प्राकृत, शौरसेनी, मागधी, पैशाची, चूलिकापैशाची अने अपभ्रंश—ए बधी भाषाओनो समावेश छे.

६० पालि वगेरे भाषाओनुं सामान्य–विशेष स्वरूप अने तेनां साहित्यगत अवतरणो आ नीचे आपी दउं छुं.

बौद्धमागधी–पालि—केटलाक विद्वानो 'पालि' शब्दने 'पंक्ति' के 'पल्ली' मांथी उतारे छे. 'पङ्क्ति' एटले शास्त्रनी पंक्ति—अक्षरश्रेणी. बौद्धधर्मनां मूळ पुस्तक पिटक ग्रंथोमां जे अक्षरपङ्क्ति छे तेनुं नाम 'पालि'भाषा. 'पल्ली' एटले गामडुं अने गामडामां जे भाषा प्रवर्ती ते 'पालि' भाषा. 'पालि' शब्दना मूळरूप अने व्युत्पत्ति संबंधे आ उपरांत बीजा पण अनेक मतो चाले छे. तेमां मारो[६५] पण एक नम्र

'पालि नो परिचय

६५ जे जे शब्दो भाषानां नामो माटे वपरायेला छे ते बे जातना छे; केटलाक कोई देश साथे संबंध राखनारा अने केटलाक भाषाना स्वभाव साथे संबंध राखनारा. मागधी, शौरसेनी वगेरे शब्दो ते ते देश साथे संबंध धरावे छे अने प्राकृत, अपभ्रंश शब्दो भाषाना स्वभावनी साथे संबंध राखे छे. आ जोतां एक विशिष्ट भाषा माटे प्रसिद्धि पामेलो 'पालि' शब्द शुं कोई देश साथे संबंध राखे छे? के भाषाना स्वभाव साथे संबंध धरावे छे? आवो प्रश्न थाय ए स्वाभाविक छे. आ संबंध में फार्बस गुजराती सभाना मुखपत्र त्रैमासिक (१९४१ जुलाई-सप्टेंबर पृ० २५०) मां 'पालिभाषा' ए मथाळा नीचे सविस्तर चर्चा करेली छे. तेमां चर्चायेली हकीकतनो तद्दन संक्षिप्त सार आ प्रमाणे छे: 'पालि' भाषाना सूचक 'पालि' शब्दना मूळ विशे खरी हकीकत आ प्रमाणे छे: 'पालि' शब्द मूळे कोई जातनी भाषाना अर्थनो वाहक ज नथी, परंतु भगवान बुद्धनी 'धर्मदेशना' ना अर्थमां ए शब्द बौद्धसाहित्यमां वारंवार वपरायेलो छे. अने भगवान बुद्धे जे भाषामां लोकोने उपदेश आपेलो ते भाषा माटे तो 'मागधी' शब्द ज वपरायेलो छे. परंतु पाछळथी भगवान बुद्धनी देशना अने मागधी भाषानो अभेद कल्पायो अने ते जातनी अभेद कल्पनाने लीधे देशना-उपदेश-वाचक 'पालि' शब्द पण लक्षणाने कारणे 'भाषा' अर्थमां रूढ थयो. आम होवाथी भाषावाचक 'पालि' शब्दना मूळनी शोध करवी व्यर्थ छे. परंतु देशनावाचक 'पालि' पदना मूळनी शोध आवश्यक खरी. बौद्ध साहित्यना मूळरूप पिटकग्रंथोमां स्थळे स्थळे 'देशना' ना अर्थ माटे 'परियाय' शब्द वपरायेलो छे

अभिप्राय ऊमेरुं छुं. प्राकृतभाषामां 'प्राकृत' शब्दनां 'पायय'[66] अने 'पायड' एवां बे उच्चारणो प्रचलित छे. स्वभाववाचक 'प्रकृति' नां पण 'पयइ'[67] अने 'पयडि' एवां बे रूपांतरो शास्त्रप्रसिद्ध छे. 'पयडि' शब्दनुं तद्धितांतरूप 'पायड', तेनुं स्त्रीलिङ्गी रूप 'पायडी' अने ते ऊपरथी स्वाभाविक भाषावाचक 'पालि' शब्द उतारवो सहेलो भासे छे. षड्भाषाचंद्रिकामां लक्ष्मीधरे बतावेला रूपकपरिभाषाना अवतरणमां प्राकृत भाषा माटे 'प्राकृती'[68] शब्दनो उपयोग थयेलो छे, ए ध्यानमां रहे, अथवा 'प्रकृति' ऊपरथी जेम 'प्राकृत' शब्द आवे छे तेम प्राकृतिक' शब्द पण आवे छे. 'प्राकृतिक'ने मळतुं उच्चारण, 'पायइअ' के 'पायडिअ' थाय छे. तेमांना 'पायडिअ' उच्चारणमांथी 'पायलिअ' अने ते ऊपरथी पण 'पालि'शब्द ऊतरी शके छे. अर्थबाध पण नथी. पालि, अर्धमागधी के आर्षप्राकृत–ए त्रणे शब्दो द्वारा सूचवाती

अने अशोकनी धर्मलिपिओमां 'देशना' ना पर्याय तरीके 'पलियाय'पद पण वपरायेलुं छे. आ 'पलियाय' शब्दमां ज 'पालि' शब्दनुं मूळ छे. एथी 'पालि' ना मूळ माटे 'पङ्क्ति' 'पल्ली' के 'प्राकृती' शब्दो कल्पवानी कशी अगत्य नथी. आ संबंधे जेमनी इच्छा सविस्तर जाणवानी होय तेमणे उक्त त्रैमासिकनुं ऊपर जणावेलुं स्थळ जोई लेवुं घटे. ए स्थळे 'पालि'ना मूळ विशे अनेक मतो, तेमनी चर्चा, ते माटेनां साधक बाधक प्रमाणो तथा बीजां अनेक उपयोगी अवतरणो आपीने ए चर्चा करेली छे.

६६ जुओ–हेमचंद्र ८।१।६७ तथा "सक्कया पायया चेव" इत्यादि. अनुयोगद्वारसूत्र तथा स्थानांगसूत्र. 'पायड' माटे जुओ पाइअसद्दमहण्णवो.

६७ 'पयइ' अने 'पयडि' माटे जुओ पाइअसद्दमहण्णवो. आ बन्ने शब्दो कर्मशास्त्रसंबंधी जैन ग्रंथोमां 'स्वभाव' अर्थना सूचक तरीके सारी रीते वपरायेला छे.

६८ "षड्विधा सा प्राकृती च शौरसेनी च मागधी" इत्यादि (लक्ष्मीधर–षड्भाषाचन्द्रिका पृ० ४, श्लो० २३–२५–२६)

तीर्थंकरो सर्वजन सुगम एवी अर्धमागधी[७३] भाषा द्वारा धर्मदेशना प्रवर्तावे छे. परंपरा जे प्राकृतभाषाने 'अर्धमागधी' कहे छे ते भाषामां आर्षप्रयोगोनी बहुलता छे. तेथी अहीं आर्षप्राकृत अने अर्धमागधी वच्चे खास भेद पाड्यो नथी. वैदिक प्रयोगोनी साधना माटे पाणिनिए जेम वैदिक प्रक्रियानी रचना पोतानी अष्टाध्यायीमां ज समावी दीधी छे, तेम आचार्य हेमचंद्रे पण परंपरामान्य अर्धमागधीना प्रयोगोनी साधना माटे कोई खास भिन्न व्यवस्था न करतां तेने पोतानी अष्टाध्यायीमां 'आर्षम्' ना नाम नीचे समावी दीधी छे. ए रीते आचार्य हेमचंद्रनी दृष्टिए पण अर्धमागधी अने आर्षप्राकृत वच्चे खास भेद जणातो नथी. अर्धमागधीनुं विशिष्ट स्वरूप जरूर होवुं जोईए—ए हकीकत वर्तमान जैन आगमोमां मळता केटलाक विशिष्ट प्रयोगो द्वारा समझी शकाय एवी छे; परंतु जेमां मूळ अर्धमागधी भाषा काळबळे घसाई गई छे एवा वर्तमान जैन आगमोमां ए भाषानुं विशिष्ट स्वरूप होवुं जोईए तेवुं सचवायुं नथी अने जेवुं ते सचवायुं छे ते घणुं ज झांखुं—आछुं भासे छे माटे तेने मात्र 'प्राकृत' न कहेतां 'आर्षप्राकृत' कहीए तो ते असंगत नथी अने भूतपूर्वन्याये 'अर्धमागधी' कहीए तो पण बाध आवे एम नथी. आगळ कही गयो छुं के पालि, आर्षप्राकृत वा अर्धमागधीमां विशेष अन्तर नथी. अनादिमां रहेला असंयुक्त व्यंजनो पालिमां हयात रहे छे तेम आर्षप्राकृतमां पण तेवा व्यंजनो अनेक प्रयोगोमां कायम रहे छे. सप्तमीनुं एकवचन 'सि' वा 'स्सिं' आर्ष-

---

७३ "भगवं च णं अद्धमागहीए भासाए धम्ममाइक्खइ"–(समवाय-अंगसूत्र पृ० ६० समिति) तथा जेमां 'अद्धमागही' नो निर्देश आवे छे एवा पण बीजा अनेक उल्लेखो छे. ते माटे जुओ मारा प्राकृतव्याकरण (विद्यापीठप्रकाशित) नी प्रस्तावना पृ० १३–१४.

प्राकृतमां छे ते पालिना 'स्मिं' प्रत्ययने अनुरूप छे. 'पुच्छिंसु' वगेरे क्रियापदोमां देखातो 'इंसु' प्रत्यय पालिमां पण वपराय छे 'अव्ववी' 'अकासी' 'विहरित्था' वगेरे क्रियापदोमां देखाता 'ई' 'सी' अने 'त्था' प्रत्ययो पालिना 'सि', 'ई' अने 'इत्थ' प्रत्ययोने मळता आवे छे. वळी 'सिलोग' 'सुणग', 'सोवाग' वगेरे शब्दोमां 'क' ने बदले 'ग'नुं उच्चारण जेम आर्षप्राकृतमां छे तेम पालिमां 'मूग' 'सागल' वगेरे शब्दोमां 'क' ने बदले 'ग' नो ध्वनि प्रवर्ते छे. 'कृत' अर्थ माटे 'कट' शब्दनो प्रयोग आर्ष अने पालि बन्नेमां प्रचलित छे तथा मागधीभाषामां सर्वत्र 'र' ने बदले 'ल' नुं उच्चारण प्रवर्ते छे तेम आर्षप्राकृतमां पण 'पतेलस' (प्रत्रयोदश) 'गिलासि' (ग्रासि), 'पलिमोक्ख', 'पलिपाग', 'पलिवाहर', 'एलिक्खग', 'अणेलिस' वगेरे शब्दोमां 'र' ने बदले 'ल' नो ध्वनि प्रचलित छे. मागधीमां प्रथमाना एकवचनमां 'ए' प्रत्यय वपराय छे तेम आर्षप्राकृतमां 'समणे', 'महावीरे' एवां 'ए' प्रत्ययवाळां प्रथमान्त रूपो पण सुप्रसिद्ध छे. आ रीते वर्तमान आर्षप्राकृत, पालि साथे वधारे टका मळतुं आवे छे. अने तेमां मागधीनी असर ओछा टका रहेली जणाय छे. माटे ज पालि अने आर्षप्राकृत वच्चे विशेष समानता होवानुं जणाव्युं छे अने 'अर्धमागधी' शब्दनो अर्थ विचारतां

---

७४ "तत्र मागधभाषालक्षणं किंचित्, किंचित् प्राकृतभाषालक्षणं यस्यामस्ति सा–अर्धं मागध्या इति व्युत्पत्त्या–अर्धमागधी"–(व्याख्याप्रज्ञप्ति–भगवती–सूत्र-टीका-शतक ५, उद्देशक ४ पृ० १८१ श्रीरायचंद्रजिना०)

"प्राकृतादीनां षण्णां भाषाविशेषाणां मध्ये या मागधी नाम भाषा "र-सोर्ल-शौ मागध्याम्" इत्यादिलक्षणवती सा असमाश्रितस्वकीयसमग्रलक्षणा अर्धमागधी–इति उच्यते, तया धर्ममाख्याति तस्या एव अतिकोमलत्वात्"–(समवायांगसूत्रवृत्ति पृ० ६०)

"र-सोर्ल-शौ मागध्याम्" इत्यादि यत् मागधभाषालक्षणं तेन अपरिपूर्णा प्राकृत-भाषालक्षणबहुला अर्धमागधी" (उववाइअसूत्र टीका पृ० ७८)

तेना ऊपर एटले आर्षप्राकृत ऊपर मागधीनी असर ठीक देखावी 'अर्धमागधी' नो जोईए छतां ते आजकाल उपलब्ध थता अर्थविचार आर्ष प्राकृतमां जळवाई जणाती नथी. माटे ज कह्युं छे के वर्तमान जैन अंग–उपांग साहित्यमां तेनी मूळभाषा अर्ध-मागधीनुं झांखुं–आछुं स्वरूप सचवायुं छे अने मूळभाषा विशेष घसाई गई लागे छे. आर्षप्राकृतनी एक खास विशेषता ए छे के जेम साधारण प्राकृतमां अनादिस्थ अने असंयुक्त एवा क, ग, च, ज, त, द, प, य, व अने ब लोप पामे छे तथा तेने बदले केटलाक प्रयोगोमां 'य' श्रुति थाय छे अने केटलाक प्रयोगोमां उद्वृत्त स्वर–शेष स्वर–कायम रहे छे तेम आर्षप्राकृतमां थतुं नथी, तेमां तो केटलाक प्रयोगोमां ते व्यञ्जनो कायम रहे छे, केटलाक प्रयोगोमां ते ते व्यञ्जनोने

---

७५ आ ज हकीकत आचार्य हेमचंद्रे पोताना व्याकरणमां मागधीभाषानुं स्वरूप बतावतां आ प्रमाणे कही छे:

"यदपि पोराणं अद्धमागहभासानिययं हवइ सुत्तं" इत्यादिना आर्षस्य अर्धमागधभाषानियतत्वम् आम्नायि वृद्धैः तदपि प्रायः अस्यैव विधानात्, न वक्ष्यमाणलक्षणस्य–(हेमचंद्र ८–४–२८७)

तात्पर्य ए के २८७ मा सूत्रमां मागधी भाषामां 'अ' नो 'ए' थवानी सूचना करेली छे. हेमचंद्र कहे छे के जैनआगमोमां मागधीनुं आ एक लक्षण घटमान छे, बीजां–बाकीनां–लक्षणो प्रायः घटमान नथी.

७६ वर्तमानमां आगमोदयसमिति द्वारा के बीजी संस्थाओ द्वारा जे अंग-उपांग सूत्रो प्रकट थयां छे तेमां छपायेला पाठो जोईने आगमोनी मूळ भाषाना स्वरूप संबंधे निश्चित अभिप्राय आपवो कठण छे. तेमां छपायेला पाठो बधा एक-धारा नथी, तेम संपादकोए पाठोनी विशिष्ट शुद्धि माटे उपेक्षा राखी छे. तेम छतां ए अव्यवस्थित पाठोमां रहेली 'त' श्रुति तेम ज क्वचित् आवती 'र' ना 'ल' नी श्रुति द्वारा जाणी शकाय छे के तेमां अत्यारे पण 'अर्धमागधी' नुं आछुं स्वरूप सचवायुं छे.

बदले कोई बीजा ज व्यञ्जनो संभळाय छे अने घणे प्रयोगोमां ते बधा व्यंजनोने बदले 'त' श्रुति थाय छे. कूणिक-कूणित,

अर्धमागधीमां 'त' श्रुति

आराधक—आराहत, अधिक—अहित, शाकुनिक—साउणित, वर्धकि-वड्ढति, सामायिक-सामायित, अन्तिक-अंतित, नाराच-नारात, वचस्-वति, वज्र-वजिर-वतिर, पूजा-पूता, राजेश्वर—रातीसर, आत्मजः—अत्तते, जितेन्द्रिय-जितिंदिय, सतत-सतत, यदा-जता, पाद-पात, नदी-नती, मृषावाद-मुसावात, यदि-जति, सामायिक-सामातित, गायति-गातति, स्थायिन्—ठाति, नैरयिक-नेरतित, परिवार-परिताल, कवि-कति वगेरे.

आ जातनी 'तँ' श्रुति नथी पालिमां के नथी मागधी वगेरे बीजी भाषाओमां; मात्र एक 'द' ने बदले 'त'नुं उच्चारण पैशाचीमां प्रवर्ते छे: दामोदर—तामोतर.

उक्त 'त' श्रुति आर्ष प्राकृतमां क्यांथी आवी? केम आवी? क्यारे

---

७७ साधारण रीते एम जणाय छे के उक्त 'आराधक—आराह्य—आराहत' वगेरे प्रयोगोमां शब्दनी अंदरना 'क' वगेरे व्यंजनोने बदले 'त' श्रुति देखाय छे; परंतु 'तुम्ह' शब्द एवो छे के जेमां शब्दना आदिभूत 'य' नी 'त' श्रुति थयेली छे. भाषाविज्ञानपंडितो 'तुम्ह' अने 'युष्म' वच्चे समानता बतावे छे तेथी तथा 'त्वया' 'तव' 'तुभ्यम्' 'त्वाम्—त्वा', 'ते', 'त्वयि' वगेरे 'युष्मद्' नां रूपोमां 'त' श्रुति छे तेथी एम कल्पना थाय छे के 'युष्म' नी आदिना 'य' नी 'त' श्रुति थई ते ऊपरथी 'तुम्ह' रूप आव्युं होय. पालि अने प्राकृत जेवी विशेष प्राचीन भाषामां 'तुम्ह' पदनो प्रयोग सुप्रतीत छे ए ऊपरथी आ 'य' नी 'त' श्रुतिनी प्रथा केटली प्राचीन छे तेनी कांई कल्पना आवी शकशे.

७८ 'त' श्रुतिबहुलभाषा संबंधे नाट्यशास्त्रकार भरत मुनि कहे छे के—

"चर्मण्वतीनदीपारे ये चार्बुदसमाश्रिताः। तकारबहुलां नित्यं तेषु भाषां प्रयोजयेत्॥"

—(नाट्यशास्त्र अ० १७, श्लो. ६२ नि०) "अर्थात् जे लोको चर्मण्वतीनदीपार रहेनारा छे अने अर्बुदनो समाश्रय करीने रहेनारा छे ते लोकोमां तकारबहुल भाषानो प्रयोग करवो."

आवी ? वगेरे अनेक प्रश्नो जरूर विचारणीय छे, ते बाबत कोई विद्वान कांई प्रकाश नांखे ए इच्छवा योग्य छे. अहीं तो ए संबंधेनी चर्चा अप्रस्तुत जेवी छे माटे तेने जती करुं छुं.

अर्धमागधी अने जैन परंपरा

'अर्धमागधी'ना स्वरूप बाबत जैन परंपरामां पण एकसरखा विचारो मळता नथी. 'निशीथचूर्णिमां' "पोराणं अद्धमागहभासानिययं हवइ सुत्तं" एवो एक उल्लेख छे. एनो अर्थ आ प्रमाणे छे—"पुरातन सूत्र अर्धमागध भाषामां नियत छे." उक्त उल्लेखमां आवेला 'अद्धमागह' पदनी व्याख्या करतां श्रीजिनदास महत्तरे तेनुं बे रीते विवेचन कर्युं छे—"मगहद्धविसयभासानिबद्धं अद्धमागहं" अथवा "अट्ठारसदेसीभासाणियतं अद्धमागधं," प्रथम विवेचन प्रमाणे मगधना अडधा—विषयमां—देशमां—भागमां जे भाषा प्रचलित होय अने ते भाषामां जे शास्त्र निबद्ध होय ते 'अद्धमागह'—'अर्धमागध' कहेवाय. अढार (जातनी) देशीभाषामां जे शास्त्र नियत होय ते पण 'अद्धमागध' कहेवाय—ए बीजुं विवेचन. आ बन्ने विवेचनो 'अर्धमागधी' ना स्वरूप विशे कशो स्पष्ट प्रकाश नाखतां नथी. आखा मगध देशनी भाषा अने मगधना अडधा भागमां चालती भाषा शुं भिन्न भिन्न हशे ? 'मागधी' शब्दनी व्युत्पत्ति ऊपरथी आखा मगध देशनी भाषाने 'मागधी' मानीए तो तेना अडधा भागमां चालती

भरतनो आ श्लोक स्पष्टपणे अवगत थतो नथी. चर्मण्वती नदी एटले चंबल नदी ? तेने क्ये पार—आ पार के पेले पार ? अर्बुद एटले आबु के बीजुं कांई ? अर्बुदनो समाश्रय एटले अर्बुदनी कई धारनो समाश्रय ? आ बाजुनी के पाछलनी बाजुनी ? वगेरे अनेक प्रश्नो उक्त श्लोकनो स्पष्ट अर्थ जाणवामां बाधक छे. छतां अहीं ए श्लोकनो केवळ शब्दार्थ सूचव्यो छे. कोई विशेषज्ञ आ संबंधे स्पष्टता करशे एवी विनती छे. श्लोक मूकवानो हेतु एटलो ज के कोई एक प्रजानी भाषा 'तवर्ण' प्रधान हती एवुं श्रीभरतना पण ध्यानमां हतुं ए बतावबानो छे.

भाषाने कई कहेवी? एवा अनेक विकल्पोने लीधे भगवदेशना अडधा भागनी भाषानो ज खुलासो थतो नथी. ए ज रीते बीजा विवेचनमां जणावेली अढार देशी भाषाओनुं स्वरूप पण अस्पष्ट छे. अढार देशीभाषाओ कई कई समजवी? अने ते प्रत्येकनुं स्वरूप केवुं समजवुं? 'नायाधम्मकहा' नामना अंगसूत्रमां अने बीजां सूत्रोमां कोई पण राजपुत्रना विद्याभ्यासनो परिचय आपतां 'अट्ठारसदेसीभासाविसारए' वा 'अट्ठारसविहप्पगारदेसीभासाविसारए' आवुं विशेषण वपरायेलुं छे. 'नायाधम्मकहा'ना टीकाकार 'अट्ठारसदेसीभासा'नो अर्थ 'अढार प्रकारनी लिपिओ' बतावे छे. आ रीते क्यांय 'अट्ठारसदेसी-भासा'नो कोई स्पष्ट अर्थ प्राप्त थतो नथी. चूर्णिकार श्रीजिनदास महत्तरे 'अद्धमागह'नो जे अर्थ जणाव्यो छे तेना करतां जुदो अर्थ नवाङ्गीवृत्तिकार श्रीअभयदेवसूरि 'अर्ध मागध्या:-अर्धमागधी' एवी व्युत्पत्ति करीने जणावी गया छे. 'अर्द्ध मागध्याः'नी व्युत्पत्तिने स्वीकारीए तो जे भाषामां ठीक अडधी-बराबर अडधी-मागधी भाषा भळेली होय ते 'अर्धमागधी' भाषा कहेवाय. आ प्रकारे अर्धमागधीने लगता जे जे उल्लेखो मळे छे तेमना द्वारा अर्धमागधीनुं स्पष्ट स्वरूप ख्यालमां नथी आवतुं छतां वर्तमान आर्षप्राकृतमां सचवायेलां-पालि भाषा साथेनुं साम्य अने पूर्वोक्त 'त' श्रुति-ए बन्ने एवुं अनुमान कराववाने पूरतां छे के पुस्तकारूढ थया पहेलानां प्राचीन जैनसूत्रोनी भाषानुं रूप तेमनामां सचवायेली वर्तमान भाषाना रूप करतां जुदुं होवुं जोईए अने ते ठीक तेना

---

७९ आ वाक्यनो उल्लेख नायाधम्मकहासूत्रनां पृ० ३८ तथा औपपातिकसूत्र पृ० ९८ मां छे. आ संबंधे विशेष जिज्ञासुए मारा प्राकृत व्याकरण (विद्यापीठ) नी प्रस्तावना पृ० १८-१९ नुं टिप्पण जोवुं.

'अर्धमागधी' नामने अनुरूप पण होवुं जोईए. जो के अर्धमागधीने लगता प्राचीन शास्त्रस्थ उल्लेखो तेना स्वरूप संबंधे स्पष्टता नथी करता अर्थात् 'पालि' शब्दनी पेठे 'अर्धमागधी' शब्दे य अनेक विकल्पो ऊभा कर्या छे, तो पण पालि भाषा एटले बौद्ध पिटकोनी मागधी भाषा अने जैनसूत्रोनुं आर्षप्राकृत ए बन्नेनुं तुलनात्मक परीक्षण करतां एवुं स्पष्ट जणाय छे के आर्षप्राकृतमां बौद्ध पिटकोनी मागधीने मळतुं रूप तो छे अने तदुपरांत 'त' श्रुति वगेरेनी बीजी केटलीक विलक्षणता य छे एथी अर्थात् आर्षप्राकृतमां एक तो बौद्धमागधीने मळतो प्रवाह तथा बीजो कोई तेनाथी विलक्षण लागतो प्रवाह—एम बे प्रवाहो मळेला होई तेनुं नाम 'अर्धमागधी' कहेवायुं होय तो ना न कहेवाय. भाषानी दृष्टिए घसारो पामेलुं वर्तमान आर्षप्राकृत जोईने पण उपर्युक्त कल्पना ऊठे छे, तो पछी जो ए जातना घसारा विनानुं आर्षप्राकृत मळतुं होत तो तेना 'अर्धमागधी' नामने खरेखर अनुरूप होत एम केम न बने ?

---

८० नीचेनी गाथामां बौद्ध पिटकोनी भाषाने 'मागधी' कहेली छे.

"सा मागधी मूलभासा नरा या य-आदिकप्पिका ।
ब्रह्माणो चऽस्सुतालापा संबुद्धा चापि भासरे"

—(कच्चायनपालिव्याकरण, प्रस्ता० पृ० ३०)

"सो च भगवा मागधो मगधे भवत्ता, सा च भासा मागधा, मागधस्स तथागतस्सायं भासा ति च कत्वा"

—(पालिप्रकाश प्रस्ता० पृ० १२, टिप्पण ३२)

सिद्धं इद्धगुणं साधु नमस्सित्वा तथागतं । सधम्मसंघं भासिस्सं मागधं सद्दलक्खणं ॥

—(मोगल्लान–पालिव्याकरणनो प्रारंभ)

८१ अंगसूत्रनी भाषानो नमूनो :

'सुयं मे आउसं ! तेणं भगवया एवमक्खायं इहमेगेसिं णो सण्णा भवइ, तं जहा–पुरत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि ? दाहिणाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि ? उत्तराओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि ? उड्ढाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि ? अहोदिसाओ वा आगओ अहमंसि ? अण्णयरीओ वा दिसाओ अणुदिसाओ वा आगओ अहमंसि ?"

—(आचारांगसूत्र प्रारंभ–मुद्रित)

जे जे अक्षरो जाडा करीने बताव्या छे तेमने स्थाने 'त' नो पाठ पण प्राचीन लखेली पोथीओमां मळे छे. जेम के **भगवया** ने स्थाने **भगवता**, **भवइ** ने स्थाने **भवति**, **आगओ** ने स्थाने **आगतो**.

ए 'त' श्रुतिवाळो पाठ अधिक प्राचीन छे अने आवा प्रयोगोमां पालिभाषामां पण 'त' श्रुति होय छे.

उपांगसूत्रनी भाषानो नमूनो—

तए णं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी–जति णं भंते ! तुब्भं समणाणं णिग्गंथाणं एसा सण्णा जाव समोसरणे जहा अण्णो जीवो अण्णं सरीरं, णो तं जीवो तं सरीरं। एवं खलु ममं अज्जए होत्था, इहेव जंबूदीवे दीवे सेयवियाए णगरीए अधम्मिए जाव सगस्स वि य णं जणवयस्स नो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेति, से णं तुब्भं वत्तव्वयाए सुबहुं पावं कम्मं कलिकलुसं समज्जिणित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु नरएसु णेरइयत्ताए उववण्णे।

(रायपसेणइय–उपांगसूत्र)

आ पाठमां पण ज्यां ज्यां–जाडा अक्षरो छे त्यां बधे 'त' श्रुतिवाळा पाठो प्राचीन–हस्तलिखित–पुस्तकोमां उपलब्ध छे.

८२ कलिंगराज खारवेलना लेखनी भाषानो नमूनो—

"नमो अरहतानं नमो सवसिधानं ऐरेन महाराजेन माहामेघवाहनेन चेतिराजवसवधनेन पसथ–सुभलखनेन चतुरंतलुठितगुनोपहितेन कलिंगाधिपतिना सिरिखारवेलेन पंदरसवसानि सिरिकडारसरीरवता कीडिता कुमारकीडिका ततो लेखरूपगणनाववहारविधिविसारदेन सवविजावदातेन नववसानि योवरजं पसासितं

संपुणचतुवीसतिवसो तदानि वधमानसेसयो वेनाभिविजयो ततिये कलिंगराजवंसपुरिसयुगे माहारजाभिसेचनं पापुनाति

—(कलिंगराज खारवेलनो शिलालेख)

हस्तलिखित प्राचीन पुस्तकोमां जैन आगमोनी जे जातनी भाषा सचवायेली छे ते अने आ खारवेलना लेखनी भाषा ए बे वच्चे घणी ज समानता छे.

मुद्रित आगमोमां जे भाषा जोवा मळे छे तेमां व्यंजनोनो घसारो देखाय छे त्यारे प्राचीन पुस्तकोमां तेवुं नथी अने खारवेलना लेखमां पण व्यंजनोनो घसारो तद्दन ओछो छे. ए ध्यानमां राखवा जेवुं छे.

छेदसूत्रो[३], मूळसूत्रो[४],

---

८३ छेदसूत्रनी भाषानो नमूनो आ प्रमाणे छे:

" आयरियउवज्झाए गिलायमाणे अन्नयरं वएज्जा अज्जो! मामंसि णं कालगयंसि समाणंसि अयं समुक्कसियव्वे, से य समुक्कसणारिहे समुक्कसियव्वे; से य नो समुक्कसणारिहे नो समुक्कसियव्वे, अत्थि य इत्थ अन्ने केइ समुक्कसणारिहे से समुक्कसियव्वे, नत्थि य इत्थ अन्ने केइ समुक्कसणारिहे से चेव समुक्कसियव्वे."

(व्यवहारसूत्र पृ० ४८ मा०)

जह कोई वणिको ऊ धूयं सेट्ठिस्स हत्थे निक्खिविउं ।
दिसिजत्ताए गतो त्ति कालगतो सो य सेट्ठीओ ॥ १७४ ॥
जह रक्खह मज्झ सुता तहेव एयातो देवि! पालेह ।
तीए वि ते ऊ पाले विण्णवियं विणीतकरणाए ॥ १७७ ॥
सविकारातो दट्ठुं सेट्ठिसुया विण्णवेइ रायाणं ।
मयहरिय-दाण-निग्गह-वणियागम-रायविण्णवणं ॥ १८० ॥

—व्यवहारसूत्रभाष्य पृ० ३३-३४ मा०)

छेदसूत्रना भाष्यनी गाथाओमां 'त' श्रुति छे अने जेमां व्यंजननो घसारो नथी एवा 'गतो' 'वणिको' वगेरे प्रयोगो पण छे.

८४ मूळसूत्रनी भाषानो नमूनो आ प्रमाणे छे :

एसणासमिओ लज्जु गामे अनियओ चरे ।
अप्पमत्तो पमत्तेहिं पिंडवातं गवेसए ॥ (६-१७)

खेलपडिअमप्पाणं न तरइ जह मच्छिआ विमोएउं ।
अन्नाणुचरो साहू न तरइ अप्पं विमोएउं ॥
जत्थित्थीकरफरिसं लिंगी अरिहा वि सयमवि करिज्जा ।
तं निच्छयओ गोअम ! जाणिज्जा मूलगुणभट्ठं ॥
(गच्छाचारपयन्ना गा० ६२-६४, ६९, ८५)

[87]निर्युक्तिओ, [88]चूर्णिओ,

---

८७ निर्युक्तिनी भाषानो नमूनो :

दव्वकरणं तु दुविहं सन्नाकरणं च नो य सन्नाए ।
कडकरणमट्ठकरणं वेलुकरणं च सन्नाए ॥
नोसन्नाकरणं पुण पओगसा वीससा य बोद्धव्वं ।
साईअमणाईअं दुविहं पुण विस्ससाकरणं ॥
धम्माधम्मागासा एयं तिविहं भवे अणाईयं ।
चक्खु-अचक्खुप्फासे एयं दुविहं तु साईयं ॥
(उत्तराध्ययन अ० ४, पृ० १९५ निर्युक्ति गा० १८४-१८६)

८८ चूर्णिओनी भाषानो नमूनो :

"एवं शीलं जहित्ताणं दुःशीलभावो दौःशील्यं तस्मिन् दौस्सील्ये रमति मृगवत् मृगः दुःशीलो सीमंतेहिं णिक्कसिज्जति । × × × श्रुत्वा-सुणिया असोहणो भावो अभावो, जहा असोहणं सीलं जस्सेति असीलः अथवा न भावः जहा अभावो देसस्स णगरस्स वा वट्टति, साणस्स पूतिकण्णस्स सूयरस्स कणगकुंडकं चइत्ताणं एवं दुस्सीलनरस्सेति"—(उत्तराध्ययनचूर्णि पृ० २७)

अंगस्स चूलिता जधा आयारस्स पंच चूलातो, दिट्ठिवातस्स वा चूलियागत्ति, विवक्खावसातो अज्झयणादिसमूहो वग्गो जधा अंतगडदसाणं × × × तेसिं चूला वग्गचूडा। वियाहो भगवती तीए चूला वियाहचूला । पुव्वभणितो अभणितो य समासतो य चूलाए अत्थो भण्णति-इत्यर्थः ।—(नन्दीचूर्णि पृ. ४९)

उक्त चूर्णिओनी रचनाशैली विलक्षण छे. जेम ललितविस्तर महापुराणनां पद्योमां संस्कृतप्राकृतमिश्रित वचनो मळे छे तेम चूर्णिओमां पण छे. आ तो शैलीनी विशेषता छे; परंतु मुद्रित चूर्णिओना पाठो विश्वस्तरीते शुद्ध होय तो ते द्वारा चूर्णिओनी भाषानुं पण वैलक्षण्य जणाई आवे छे, जेने भाषाविज्ञ पाठक सहजमां समजी शके एम छे.

सूत्रो उपरनी प्राकृत व्याख्याओ, वसुदेवहिंडी, समराइच्चकहा वगेरे कथाग्रंथो, प्राकृतमां लखायेलां तीर्थंकरचरित्रो वगेरे ग्रंथोमां आर्षप्राकृत सचवायेलुं छे.

---

८९ सूत्रो उपरनी टीकामां वपरायेली भाषानो नमूनो:

"सा वि य इत्थिया णीया णिम्माणुसं अडविं जाव तिसायितो पेच्छति महति-महालयं तत्थ ओइन्नो अभिरमति हत्थी। इमा वि सणियं सणियं उइण्णा तलागातो न दिसातो जाणइ। एक्काए दिसाए सागारं भत्तं पच्चक्खाइत्ता पहाविया जाव दूरं गता ताव तावसो दिट्ठो, तस्स मूलं गया अभिवातितो" इत्यादि (उत्तराध्ययनटीका पृ० ३००)

९० वसुदेवहिंडी (छट्ठो सैको) नी भाषानो नमूनो:

"अहं विदिण्णपवेसा सया वि उवगया रायउलं। उवणीयं च मे कुमारीए मल्लं। उक्खित्तं च पस्समाणी परितोसुव्वेल्लमाणनयणजुयला किं पि चिंतिऊण मं पुच्छइ-बालिके! केण इमं दंसियं णेपुण्णं?। मया विण्णविया-अम्ह सामिणिघरं अज्ज कओ वि एगो अतिही आगतो तेण आयरेण निम्मितं। ततो तं पुणो वि पडिभिण्णक्खरं भणइ-केरिसो सो तुब्भं अतिही? कम्मि वा वए वट्टइ? मया भणिया-न मया इहं पुरवरे नरवइपरिसाए वा तारिसो पुरिसो दिट्ठपुव्वो-तक्केमि देवो विज्जाहरो वा भवे, पढमे य जोव्वणे वट्टइ। पीईपुलयायमाणसरीरा पट्टजुयलं कडयजुयलं च दाऊण विसज्जेइ"—(वसुदेवहिंडी द्वि० खं० पृ० ३५६ पुण्य०).

९१ समराइच्चकहा (आठमो-नवमो सैको) नी भाषानो नमूनो:—

"पुच्छिया य राइणा-सुंदरि! किं ते न संपज्जइ, केण वा ते खंडिया आणा, किं वा मए पडिकूलमासेवियं जं निव्वेएण तुमं अप्पोयगा विव कुमुइणी एवं झिज्जसि त्ति। तओ पडिहिययलद्धनेहं भणियं कुसुमावलीए-अज्जउत्त! ईदिसो मे निव्वेओ णेण चिंतेमि-'अत्ताणयं वावाएमि' त्ति। राइणा भणियं-'सुंदरि! किंनिमित्तो' त्ति। कुसुमावलीए भणियं-अज्जउत्त! भागधेयाणि मे पुच्छसु त्ति भणिऊण बाहजल-भरियलोयणा सगग्गया संवुत्ता" —(समराइच्चकहा-द्वितीयभव)

९२ महावीरचरिय (अगीआरमो-बारमो सैको) नी भाषानो नमूनो:

"दाहोत्तिण्णजच्चकंचणच्छाएण पभासरेण समुग्गमंतदिणयरनियराउलं दिसि-यक्कवालं कुणंतो सो महावीरजिणो कमेण विहरमाणो वेसालिं नयरिं संपत्तो, तत्थ य × × × सिद्धत्थनरवइबालमित्तो संखो नाम गणराया, सो य भगवंतं पच्चभिजाणि-

आर्षप्राकृतनी विशेष पूज्यताने लीधे विक्रमना अढारमा सैकाना विद्वानोए[93] पण ए प्राकृतमां ग्रंथरचना करी छे. प्राचीन ग्रंथोमांना प्राकृतनी अपेक्षाए पछीना—काळना—ग्रंथोमां भाषातारतम्य थतुं आव्युं छे. आर्षप्राकृतनुं खास कोई स्वतंत्र व्याकरण नथी परंतु एक आचार्य हेमचंद्रे पोताना प्राकृत व्याकरणमां तेने 'आर्षम्' ना मथाळा नीचे ते ते स्थळे जणावेलुं छे. अंग-उपांगादिक ग्रंथोनी भाषा जोतां हेमचंद्रे बतावेलुं आर्षनुं निर्वचन पूरतुं नथी. एटले जैन आगमादिक साहित्यनो आधार लई आर्षप्राकृतनुं संपूर्ण व्याकरण करवानो खास अवकाश छे, अने प्राचीन भाषाना अभ्यासिओ माटे तेनी खास अपेक्षा पण छे.

आर्षप्राकृतनी पूज्यता

आर्षप्राकृतना सांगोपांग व्याकरनो अभाव

६२ साधारण—प्राकृत—प्राकृत एटले स्वाभाविक भाषा वा लोकोनी बोलचालनी भाषा. काळक्रमे जोतां तेमां पण अंतर थतुं आव्युं छे. वेदोमां सचवायेली भाषा जे समये लोकोनी बोलचालनी भाषारूपे जे प्रकारे प्रचलित हशे ते प्रकारनी भाषानुं नाम आदिम प्राकृत अथवा पहेला थरनी प्राकृत.

साधारण प्राकृतनो परिचय

ऊण पराए भत्तीए महया रिद्धिसमुदएण सक्कारेइ। अह कइवयदिणावसाणे सामी वाणियगामे पट्ठिओ। तस्स य अंतरा रंगंतभंगुरतरंगा महाजलुप्पीलपूरियपुलिणा महिलाहिययं व दुग्गेज्झमज्झा रणभूमि व्व कच्छवयमयराहिया गंडईया नाम महानई। तं च सामी नावाए समुत्तिन्नो समाणो वेलुयापुलिणंसि मुल्लनिमित्तं धरिओ नाविगेहिं। एत्थ य पत्थावे दिणद्धसमओ वट्टइ, खरं तावंति वेलुयं सूरस्स करपहकरा, तीए य संतप्पइ कमलकोमलं चलणतलं जिणस्स"—(पृ० २२४ देव० फण्ड)

९३ उपाध्याय श्रीयशोविजयजीए पोताना अनेक ग्रंथो प्राकृतमां रचेला छे: गुरुतत्त्वविनिश्चय वगेरे.

पहेला थरनी प्राकृत ज काळे करीने परिवर्तन पामी भगवान महावीर वा भगवान बुद्धना समयमां लोकोनी बोलचालमां जे आकारे चालती हशे, जेनुं बंधारण वैदिक भाषाने मळतुं आवे छे, अने जेनो नमूनो बौद्ध पिटको अने जैन आगमोमां सचवायेलो छे, ते बीजा थरनी प्राकृत—बौद्धमागधी[94], अथवा पालि अथवा आर्षप्राकृत[95] के अर्धमागधी. अशोकनी[96] धर्मलिपिनी भाषा अने कलिंगाधिपति[97] महाराजा खारवेलना लेखनी भाषा—ए बधी प्राकृत बीजा थरनी प्राकृत. बीजा थरनी प्राकृतोमां अमुक रीते जोतां विशेष मळतापणुं भासे छे अने अमुक रीते जोतां ते दरेकनी जुदी जुदी खास विशेषताओ पण छे. समयभेद अने स्थानभेद तथा भाषाभेदनां जे निमित्तो बाबत अहीं (पृ० १४) सविस्तर चर्चा थई गई छे ते निमित्तोने लीधे बीजा थरनी प्राकृतमां विविधता देखाय छे.

गउडवहो[98],

---

९४ जुओ टिप्पण ७०.

९५ जुओ टिप्पण ८१.

९६ जुओ टिप्पण ६९–अशोकनी धर्मलिपिनो नमूनो.

९७ जुओ टिप्पण ८२.

९८ 'गउडवहो' नी भाषानो नमूनो—

"कत्तो णाम न दिट्ठं सच्चं कइसेविएसु मग्गेसु ।
सीमंते उण मुक्कम्मि तम्मि सव्वं नवं चेअ ॥ ८५ ।
आसंसारं कइपुंगवेहिं तद्दियहगहियसारो वि ।
अज्ज वि अभिण्णमुद्दो व्व जयइ वायापरिप्फंदो ॥ ८७ ॥
को निंदइ नीययमे गरुययरे को पसंसिउं तरइ ।
सामण्णं च्चिय ठाणं थुईण परिणिंदियाणं च ॥ ८२ ॥
जस्स विअयाहिसेए विवक्खदेवीहिं णवणिओगाहिं ।
पीआइं तक्खणूप्पिअचमरंतरियाइं अंसूइं ॥ १२०८ ॥

दयियाए को वि णिद्दापरिस्समुब्भिण्णसेयविंदुइयं ।
परिउंवइ सुहेण सहियपडिवोहन्दोलियं वयणं ॥ ११६२ ॥

'गउडवहो' नी भाषामां जाणे कृत्रिम प्राकृत वपरायुं होय एम नीचेना प्रयोगो ऊपरथी समझाय छे:

विजय ने स्थाने विअय
परिचुंबति ने स्थाने परिउंवइ

'गउडवहो' मां आवा तो अनेक प्रयोगो सुलभ छे. मुद्रित 'गउडवहो' मां न दिट्ठं ने स्थाने नइट्ठं अने सुहेण सहिय ने स्थाने सुह-णसहिय-एम अशुद्ध छपायेलुं छे.

सेतुबंध.

९९ 'सेतुबंध' नी भाषानो नमूनो:

णमह अ जस्स फुडरवं कंठच्छाआघडंतणअणग्गिसिहं ।
फुरइ फुरिअट्टहासं उद्धपडित्ततिमिरं विअ दिसाअक्कं ॥ ५ ॥
णहारंभक्खुहिआ जस्स भउब्भंतमच्छपहअजलरआ ।
होंति सलिलद्दुमाइअधूमाअंतवडवामुहा मअरहरा ॥ ८ ॥
गमिआ कलंववाआ दिट्ठं मेहंधआरिअं गअणतलं ।
सहिओ गजिअसद्दो तह वि हु से णत्थि जीविए आसंघो ॥ १५ ॥
सोहइ विसुद्धकिरणो गअणसमुद्दम्मि रअणिवेलालग्गे।
तारामुत्तावअरो फुडविहडिअमेहसिप्पिसंपुडो ॥ २२ ॥

—(प्रथम आश्वास)

अह मउअं पि भरसहं जंपइ थोअं पि अत्थसारब्भहिअं ।
पणअं पि धीरगरुअं थुइसंवद्धं पि अणलिअं सलिलणिही ॥ ९ ॥

—(छट्ठो आश्वास)

'गउडवहो' नी पेठे 'सेतुबंध' नी भाषामां पण अनेक प्रयोगो कृत्रिम प्राकृतना जणाय छे:

च्छाया	ने	स्थाने	च्छाआ
णयण	ने	स्थाने	णअण
पलित्त	,,	,,	पडित्त
दिसाचक्कं	,,	,,	दिसाअक्कं

कर्पूरमंञ्जरी वगेरे ग्रंथोमां जे प्राकृत भाषानो उपयोग थयेलो छे ते, उक्त बीजा थरनी प्राकृत भाषामांथी उतरेली छे. बीजा थरमांथी उतरेली ए प्राकृतमां अनादि व्यंजनोनां उच्चारणो विशेष घसाई गयेलां देखाय छे अने ए तेनी खास विशेषता छे. वर्तमानमां जे प्राकृत व्याकरणो उपलब्ध छे अने तेमां प्रधानपणे जे भाषाओनी चर्चा छे ते भाषाओ, उक्त बीजा थरनी भाषाओना परिणामांतररूप छे.

केटलाक लोको 'महाराष्ट्र' शब्दनो वर्तमान संकुचित अर्थ करे छे अने ते देशनी भाषाने 'महाराष्ट्री' कहे छे. त्यारे बीजा विद्वानो

–रया	,,	,,	–रआ (रय–वेग)
मअरघरा	,,	,,	मअरहरा
मुत्तापयरो	,,	,,	मुत्तावअरो
गयण	,,	,,	गअण

मुद्रित सेतुबंधमां नीचेना पाठो अशुद्ध छपायेला छे:

–सिहम्
–अक्कम्
–भडव्वंत
–तलम्

आ चारे पाठो अहीं सुधारीने मूकेला छे.

१०० कर्पूरमञ्जरीनी भाषानो नमूनो—

"जअ जअ पुव्वदिसङ्गणाभुअङ्ग ! चम्पाचम्पअकण्णऊर ! राढाणिज्जिदराढाचङ्गत्तण ! विक्कमक्कंतकामरूव ! हरिकेलीकेलीआर ! अवमण्णिदजच्चसुवण्णवण्ण ! सव्वङ्गसुन्दरत्तणरमणिज्ज ! सुहाअ दे भोदु सुरहिसमारम्भो"–पृ० ९.

अत्थि एत्थ लाडदेसे चण्डसेणो णाम राआ। तस्स दुहिदा घणसारमञ्जरि त्ति, सा देव्वण्णएहिं णिद्दिट्ठा जधा एसा चक्कवट्टिघरिणी भविस्सदि त्ति। तदो सा महाराएण परिणेदव्वा जेण गुरुस्स वि दक्खिणा दिण्णा भोदि।"–पृ० १०४ कर्पूरमञ्जरी (राजशेखर आशरे नवमो सैको) हारवर्ड ग्रंथमाला.*

१०१ "महाराष्ट्राश्रयां भाषां प्रकृष्टं प्राकृतं विदुः"–(काव्यादर्श–१,३४. दंडी आशरे छठ्ठो सैको) महाकवि दंडी दाक्षिणात्य छे अने तेथी ज ते पोतानी मातृभाषाने 'प्रकृष्ट प्राकृत' कहे ए तेनी मातृभाषानी भक्तिनुं सूचक छे.

'महाराष्ट्र' नो अर्थ संकुचित न करतां 'जेनी बधी बाजुनी सीमा विशाळ छे एवो मोटो राष्ट्र'—एवो व्यापक अर्थ करे छे अने ते मोटा देशमां व्यापेली भाषाने 'महाराष्ट्री' कहे छे. मारी नम्र कल्पना 'महाराष्ट्र'ना आ व्यापक अर्थ तरफ ढळे छे. चंड अने हेमचंद्र पोताना व्याकरणमां 'प्राकृत'ने 'महाराष्ट्री' नुं विशेषण नथी आपता, तेमने अनुसरीने हुं पण साधारण प्राकृतभाषा माटे 'महाराष्ट्री प्राकृत' शब्दनो प्रयोग न करतां तेने बदले केवळ 'साधारण प्राकृत'नो प्रयोग करुं छुं. आज सुधीमां भाषानी चर्चाने लगता त्रण लेखो लख्या छे तेमां सर्वत्र में बे अर्थमां 'प्राकृत' शब्दोनो उपयोग कर्यो छे: आर्षप्राकृत अने साधारणप्राकृत. जैनसूत्रोना प्राचीन प्राकृत माटे आर्षप्राकृत अने ते पछीना प्राकृत माटे साधारण प्राकृत के जेनुं व्याकरण विद्यमान छे. मारा कोई पण लेखमां में 'महाराष्ट्री प्राकृत' जेवा वर्तमान संकुचित अर्थ माटे 'प्राकृत' शब्दने वापर्यो ज नथी.

'महाराष्ट्र प्राकृत' नो अर्थ

आर्षप्राकृत अने साधारणप्राकृतमां जे विशेषता छे ते आगळ आवी गई छे परंतु साधारणप्राकृत पण बधुं एक सरखुं नथी. चंडनुं व्याकरण जोईए अने हेमचंद्रनुं व्याकरण जोईए तो ते बन्नेमां विशेष भेद छे, तेनुं एक ज उदाहरण बस छे: आचार्य हेमचंद्र 'कृत्वा' अर्थे वपराता 'कट्टु' शब्दने आर्षप्राकृत[१०२] कहे छे, त्यारे चंड[१०३] तेने एवा भेदमां न लेतां पोते साधी बतावेला सामान्य प्रयोगोमां मूके छे. चंडमां आर्षप्राकृतनो भेद ज नथी. 'पिशाची'ने बदले

साधारण प्राकृतनी पण विधविधता

चंड अने हेमचंद्र

१०२ "क्त्वः तुं-अत्-तूण-तुआणाः"-८।२।१४६ "कट्टु इति तु आर्षे"।

१०३ "तु-त्ता-च्चा-ट्टु-तुं-तूण-तुवाण-ओ-प्पि-वि पूर्वकालेऽर्थे"-सूत्र-१९। तु, त्ता, च्चा, ट्टु, तुं, तूण, तुवाण, ओ, प्पि, वि, प्पिणु पूर्वकालार्थे भवति।

वपराता 'पिसाजी' अने 'तीर्थंकर'ने बदले वपराता 'तित्थगर' शब्दो माटे चंडे[104] "प्रथमस्य तृतीयः" एवुं सूत्र रची ते ते प्रयोगने साधे छे त्यारे आचार्य हेमचंद्रे[105] ते प्रयोगोने बाहुल्कि तरीके जणावे छे अने तेम जणावी तेवा प्रयोगोनी विरलता बतावे छे. आ परथी एम पण जणाय छे के हेमचंद्रे बतावेला प्राकृतमां अनादि व्यंजनोनो जेवो घसारो मालूम पडे छे तेवो घसारो चंडना बतावेला प्राकृतमां नथी जणातो. ए रीते 'साधारण-प्राकृत'मां पण काळकृत विशेषताओ रहेली छे.

चंडनां[106] व्याकरणमां प्रथम साधारण-प्राकृत पछी अपभ्रंश, पछी

तु–वंदितु सव्वे वि ।
त्ता–जिणंदचंदे वंदित्ता
चा–सुचा
ट्टु–कट्टु
तुं–भोतुं
तूण–भोत्तूण
ओ–वंदिओ
प्पि–कप्पि । एवं
वि–वन्दित्वा–वंदेवि
प्पिणु–वंदेप्पिणु–"उक्तसूत्रवृत्ति—चंडप्राकृतलक्षण स्वरविधान. (हस्तलिखित)

मुद्रितमां तुवाण–वि–प्पिणु आ त्रण प्रत्ययो नथी.

१०४–चंडनुं प्राकृतलक्षण–व्यंजनविधान सूत्र १२ तेनां उदाहरणो.

तीर्थंकरः–तित्थगरो ।
पिशाची–पिसाजी । वगेरे.

१०५ हेमचंद्र ८।१।१७७ सूत्रमां ए अने एवा बीजा प्रयोगोने बाहुलिक रूपे जणाव्या छे.

१०६ जुओ चंडना प्राकृतलक्षणमां भाषाओनो क्रम.

पैशाची, पछी मागधी अने पछी शौरसेनी एवो रचनाक्रम छे, [107]त्यारे हेमचंद्रना व्याकरणमां प्रथम साधारण-प्राकृत पछी शौरसेनी पछी मागधी अने पछी पैशाची, चूलिका पैशाची अने छेवटे अपभ्रंश एवो रचनाक्रम छे. वळी, हेम[108]चंद्रे अपभ्रंशनो खास जुदो निर्देश करी ते बाबत सविस्तर नियमो आप्या छे, त्यारे चंडे मात्र पोताना सूत्रमां अपभ्रंशनो नामनिर्देश करी तेने लगतुं फक्त एक ज सूत्र–"[109]न लोपोऽपभ्रंशेऽधोरेफस्य" आप्युं छे. चंडे[110]—

"संस्कृतं प्राकृतं चैवा–ऽपभ्रंशोऽथ पिशाचिका ।
मागधी सूरसेनी च षड् भाषाश्च प्रकीर्तिताः" ॥

चंड अने लक्ष्मीधर

ए रीते छ भाषाओने गणावी छे त्यारे लक्ष्मीधरे[111] वगेरे बीजा केटलाओए—

"षड्विधा सा प्राकृती च शौरसेनी च मागधी ।
पैशाची चूलिकापैशाची–अपभ्रंश इति क्रमात्" ॥ २६ ॥

ए रीते प्राकृती–प्राकृत, शौरसेनी, मागधी, पैशाची, चूलिका–पैशाची अने अपभ्रंश–ए क्रमथी छ भाषाओने सूचवेली छे. आ रीते चंड अने ते पछीना वैयाकरणोमां रचनाक्रमनी जे विशेषताओ छे, ते बधी, साधारण प्राकृतमां रहेली विशेषताओनी सूचक भासे छे. तात्पर्य ए के सामान्य रीते साधारण प्राकृत बधुं एक सरखुं कहेवाय अने भेददृष्टिथी परीक्षा करीए तो तेमां पण स्थळ अने काळादिकना बळे थयेलां परिवर्तनोनो पार नथी.

---

१०७ जुओ हेमचंद्रना प्राकृतव्याकरणमां भाषाओनो क्रम.

१०८ जुओ हेमचंद्रनुं प्राकृतव्याकरण सूत्र ८।४।३२९ थी ८।४।४४८ सुधी.

१०९ जुओ चंडनुं प्राकृतलक्षण व्यंजनविधान तृतीय, सूत्र ३७.

११० जुओ चंडनुं प्राकृतलक्षण पृ० ४६ (सत्य०)

१११ लक्ष्मीधरनी षड्भाषाचंद्रिका पृ. ४–प्राकृतविनियोग.

मध्ययुगना जैन पंडिताए आ साधारण प्राकृतनो विशेष उपयोग कर्यो छे अने तेनी सरखामणीमां ते युगना ब्राह्मण पंडितोए पण तेनो ओछो उपयोग नथी कर्यो. तेमना नाटकोमां तथा गउडवहो, रावणवहो, सेतुबंध, गाथासप्तशती वगेरे अनेक ग्रंथोमां ते साधारणप्राकृत ज वपरायुं छे. जैन पंडितोना प्राकृतमां आर्षनी छांट होय छे त्यारे ब्राह्मण पंडितोना प्राकृतमां आर्षनी छांट विशेषरूपे नथी होती. ए, ते बन्नेनी खास विशेषता छे. अभ्यासमां सरळता थाय ते माटे आर्षप्राकृत अने साधारणप्राकृतनो शब्ददेह प्राकृत व्याकरणोमां त्रण रीते वहेंचेलो छे.

बीजा थरनी अने बीजा थरमांथी ऊतरेली साधारण-प्राकृतनी शब्द-काया जो के आदिम प्राकृत द्वारा घडायेली छे, तो पण ते शब्दकायाना जे शब्दो वैदिक ऋचाओमां जळवायेला शब्दो साथे उच्चारण अने

'तत्सम' नो अर्थ

अर्थनी दृष्टिए सर्वथा समानभाव राखता होय तेमनुं समुचित नाम तत्सम शब्द. ऋग्वेदादि वैदिक साहित्यमां वपरायेला अने बौद्ध–जैन–आगमादिक प्राकृत साहित्यमां वपरायेला एवा केटलाक शब्दो नीचे प्रमाणे छे: भूरि, वसु, धूम, वीर, महावीर, भेदति, मरति, हाति, जन्तु, उत्तम, सह, भीम, देव, विभाग, बाहु, पुरंदर, धीर वगेरे. आ जातना शब्दो उक्त प्राकृत साहित्यमां हजारोनी संख्यामां मळे छे.

वैदिक शब्दोमां अने उक्त साहित्यगत शब्दोमां ज्यां उच्चारण भेद

'तद्भव' नो अर्थ

वर्ते छे छतां अक्षरयोजना अने अर्थदृष्टिएं समानता जळवायेली छे तेवा प्राकृत शब्दसमूहनुं नाम तद्भव[११२] शब्द. जेमके–मन्त्र–मंत, भक्त–भत्त, कवि–कइ, पद–पय, पर्वत–पव्वत–पव्वय, कूप–कूव, यज्ञ–जन्न, पाप–पाव,

---

११२ "प्रकृतिः संस्कृतम् तत्र भवम् तत आगतम् वा प्राकृतम्" (८-१-१ हे०) एम कहीने हेमचंद्र कहे छे के "संस्कृत शब्दने स्थाने जे शब्दने आदेशरूपे

करवानी रीते जाळवी राख्या तेवा मूळे अनार्यसंतानीय शब्दो पण ए देशी शब्दसमूहमां समझवाना छे.

अनार्यसंतानीय देश्यनो स्पष्टार्थ ए छे के, जे जे अनार्य जातिओ अहींनी हती, जे जे अनार्य जातिओ वहारथी आवीने अहीं वसी हती, तेवी बधी जातिओ साथे आर्योनो परस्पर भाषाव्यवहार हतो तेथी ते बधी जातिओना शब्दो आर्योनी भाषामां—

	अनार्यः	आर्यः
अनार्यसंतानीय देश्यशब्दो	नीम[११३] —	नेम (अडधुं)
	जीन[११४] —	जयन—जयण (घोडानुं जीन)
	चोरु[११५] —	चोर (भात)
	माल[११६] —	माला (महिला—स्त्री)

वगेरे अनेक शब्दोनी पेठे थोडा के वधु फेरफार साथे मेळवाई गया, एवो ते भेळाई गयेलो शब्दसमूह अनार्यसंतानीय देश्यनी कोटिनो समझवो.

जे अभ्यासिओ तुलनात्मक भाषाविज्ञाननी दृष्टिए गवेषणा करनारा होय अने साथे साथे द्रविडी वगेरे आदिम जातिओनी भाषाना पण जाणकार होय तेओ, संगृहीत देश्य शब्दोमांथी आदिम जातिओना शब्दोने तुरत

---

११३ नीम (अडधुं) फारसी शब्द छे.

११४ 'जीन' माटे ११७ मुं टिप्पण जोवुं.

११५–११६ आ बन्ने शब्दो माटे टिप्पण ३४ मुं तथा ३५ मुं जोई लेवुं. वर्तमानमां मळयालंभाषामां 'भात' अर्थ माटे 'चोरु' शब्द वपराय छे एम एक मद्रासी मित्र पासेथी जाण्युं छे.

तारवी शके छे. अक्कां, जयण, तंट, पड्डुवइ, पड्डी वगेरे अनेक शब्दो द्रविडी अने तेलगुना होई अनार्यसंतानीय छे.

राजकुमारोना उछेर माटे अनार्य दासीओ

राजकुटुंबमां रहेती दासीओने लगता उल्लेखो जैन आगमोमां स्थळे स्थळे मळे छे. ते उपरथी एम स्पष्ट माल्म पडे छे के ए दासीओनो मोटो भाग अनार्य जातिनो हतो.

सूत्रकार कहे छे के—"तए णं दढपतिण्णे दारए पंचधाईपरिक्खित्ते—खीरधाईए मंडणधाईए मज्जणधाईए अंकधाईए किलावणधाईए अन्नाहि य बहूहिं चिलाइयाहिं × × × बब्बराहिं, वउसियाहिं, जोण्हियाहिं, पण्हवियाहिं, ईसिणियाहिं, वालणियाहिं, लासियाहिं, लाउसियाहिं, दमिलीहिं, सिंहलीहिं, पुलिंदीहिं, आरबीहिं, पक्कणीहिं, बहलीहिं, मुरंडीहिं, सबरीहिं, पारसीहिं, णाणादेसी—विदेस—परिमंडियाहिं इंगियचिंतियपत्थियवियाणाहिं सदेसणेवत्थगहियवेसाहिं निउणकुसलाहिं विणीयाहिं, चेडियाचक्कवाल—तरुणिवंदपरियालपरिवुडे"—(रायपसेणइय पृ० ३३८, कंडिका—२१० गूर्जरग्रन्थ०)

उक्त पाठनुं विवरण करनार आचार्य मलयगिरि लखे छे के—"चिलातीभिः अनार्यदेशोत्पन्नाभिः × × × बर्बरीभिः—बर्बरदेशसंभवाभिः बकुशि-

११७ 'अक्का' (बहेन) द्रविडी शब्द छे. फारसी 'जीन' शब्दनुं 'जयण' सुधार्युं लागे छे. तेलगु भाषामा 'टुंटी' शब्द छे ए, अहीं 'तंट' रूपे आव्युं जणाय छे तंट (पृष्ठ-पीठ). पड्डुवइ (जुवान स्त्री) ने बराबर समान शब्द तेलगुमां पड्डुचु छे. पड्डी (पहेलवहेली विंआयेली) नो बराबर समान, तेलगुमां पड्डा छे. तेलगुमां पड्डा एटले 'पहेलवहेली विंआयेली गाय' आ संबंधे वधारे माहिती मेळववानी इच्छावाळा विद्यार्थिए परवस्तु वेंकट रामानुजस्वामी संपादित देशीनाममाला (मुंबई सिरीझ) नो शब्दकोश जोवो.

काभिः, यौनकाभिः, पल्हविकाभिः, ईसिनिकाभिः, वारुणिकाभिः, लासिकाभिः, लकुसिकाभिः, द्रमिलाभिः, सिंहलीभिः, पुलिन्द्रीभिः, आरबीभिः, पक्कणीभिः, बहलीभिः, मुरण्डीभिः, शबरीभिः, पारसीभि :—एवंभूताभिः नानादेशीभिः नानाविधाऽनार्यप्रदेशोत्पन्नाभिः विदेश....परिमण्डिकाभिः...स्वदेशे यद् नेपथ्यम् परिधानादिरचना तद् गृहीतो वेषो यकाभिस्ताः तथा....निपुणकुशलाभिः विनीताभिः चेटिकाचक्रवालेन अनार्यदेशसंभवेन–" (रायपसेणइय पृ० ३३८, कंडिका २१० गूर्जरग्रंथ०)–अर्थात् दृढप्रतिज्ञ राजकुमारना लालन-पालन अने संवर्धन माटे अनार्यदेशनी अनेक दासीओ राखवामां आवेली : किरात, बर्बर, बकुश, यौनिक–यवनिक (?), पल्हविक, ईसिनिक, वारुणिक, लासिक, लकुसिक, द्रमिल, सिंहल, पुलिंद, आरब, पक्कण, बहल, मुरण्ड, शबर अने पारसीक एम ए दासीओ अनेक अनार्य देशोनी जन्मेली हती, विदेशमां आवीने मंडायेली हती, अने पोताना पहेरवेशमां रहेनारी ते दासीओ निपुण, कुशल तथा विनीत हती."

आ रीते ठेठ अन्तःपुर सुधी अने वळी राजबीजना उछेर माटे बीजी बीजी प्रजाओनां बाईओने वा भाईओने जे देशमां विशिष्ट स्थान होय ते देशनी भाषामां ते ते अनार्य जातिओना शब्दो भळे ज अने ते भळेला शब्दो आर्य-उच्चारणनो ओप पामी सचवाई वारसा उतार चाल्या ज आवे ए हकीकत निर्विवाद छे. आदिम प्राकृतना काळथी के त्यार पछीना समयथी जे एवा उक्त बन्ने संतानवाळा शब्दो चाल्या आव्या छे अने एमांना जे केटलाक देशीशब्दसंग्रह वगैरे देश्यकोशादि ग्रंथोमां सचवाया छे ते 'देश्य' वा 'देशी' प्राकृतना समझवाना छे.

---

११८ वर्तमानमां जे ग्रंथ 'देशीनाममाला' शब्दथी जाणीतो छे तेनुं खरुं नाम 'देशीशब्दसंग्रह' छे. आचार्य हेमचंद्र पोते ज लखे छे के "विरइज्जइ देसीसद्-

आवा देश्य शब्दो फक्त प्राकृतमां छे एम नथी, वेदो सुद्धामां पण एवा शब्दो पेसी गयेला छे. आ बाबत महर्षि जैमिनि, शबर अने कुमारिलनां वचनोनो आधार लई आगळ (पृ० २७) चर्चा करेली छे.

लौकिक संस्कृतमां पण देश्य शब्दो

६३ लौकिक संस्कृतमां पण त्रण प्रकारना शब्दोनो प्रयोग प्रचलित छे. रूढ, यौगिक अने मिश्र. जे शब्दोमां यौगिक शब्दोनी पेठे प्रकृति-प्रत्ययनो विभाग थई शकतो नथी ते शब्दो रूढ. जेवा के—आखण्डल, मण्डप, शुण्ठी, ग्राम, कश्मीर, बर्बर, अलक्तक, कुतु, खट्ट, सूर्मि, नारङ्ग, लवङ्ग,

---

संगहो (विरच्यते देशीशब्दसंग्रहः)-देशीनाम० गा० २ अर्थात् "देशीशब्दसंग्रहने रचुं छुं" अने ए पुस्तकना अंतमां आ उपरांत एनुं बीजुं नाम पण सूचवे छे.

"इअ रयणावलिनामो देसीसद्दाण संगहो एसो ।
वायरणसेसलेसो रइओ सिरिहेमचंदमुणिवइणा" ॥ ७७ ॥

—देशीनाम० अंतिम गाथा.

अर्थात् "जेनुं बीजुं नाम 'रत्नावली' छे ते देशी शब्दोनो संग्रह—के जे (प्राकृत) व्याकरणना परिशिष्टरूप छे—मुनिपति श्रीहेमचंद्रे रचेलो छे." उक्त श्लोकना विवरणमां पण तेमणे आ ज वातने टेको आप्यो छे:

"इति एष देशीशब्दसंग्रहः स्वोपज्ञशब्दानुशासनाष्टमाध्यायशेषलेशः रत्नावलीनामा आचार्यश्रीहेमचन्द्रेण विरचित इति भद्रम् ।"

आम छतां धनंजयमाला, पाइअलच्छीनाममाला वगेरे कोशनां नामोनी पेठे प्रस्तुत 'देशीशब्दसंग्रह' नी विशेष ख्याति कोई विचक्षणे 'देशीनाममाला' शब्दथी प्रचारमां आणी छे.

११९ "व्युत्पत्तिरहिताः शब्दा रूढा आखण्डल-आदयः"

—(हैम० अभि० श्लो० २)

अर्थात् "जेमनी व्युत्पत्ति जाणी शकाती नथी परंतु जेमनो अर्थ मात्र लोकप्रचारने आधारे थाय छे ते रूढ शब्दो." आ रूढ शब्दो अने देश्य के देशी शब्दो ए बधा समानस्वभावना छे, ए ध्यानमां राखवानुं छे.

गोहिर, कफोणि, कफणि, अंगुरी, हस्त वगेरे. लौकिक संस्कृतमां आवा शब्दोनो पार नथी. शब्दव्युत्पादक वैयाकरणोए 'उणादि' नामनुं एक मोटुं प्रकरण रच्युं छे अने ते द्वारा ते ते बधा रूढ शब्दोमां प्रकृति अने प्रत्ययनी कल्पना करीने ते दरेक शब्दने साधी बताव्यो छे. तो पण ते रूढ शब्दो व्युत्पन्न नथी गणाता. रूढ शब्दो संबंधे लखतां आचार्य हेमचन्द्र कहे छे के—"न हि अत्र प्रकृति–प्रत्ययविभागेन व्युत्पत्तिरस्ति

"योगः अन्वयः स तु गुण–क्रिया–संबन्धसंभवः" (हैम० अभि० श्लो० २)

अर्थात् "जेमनी व्युत्पत्ति जाणी शकाय अने जेमनो अर्थ ए व्युत्पत्ति प्रमाणे प्रवर्ते ते यौगिक शब्द. ए यौगिक शब्दोमां केटलाक शब्दो क्रियाप्रधान, गुणप्रधान अने संबंधप्रधान होय छे."

स्रष्टा, विधाता, विधि ए शब्दो क्रियाप्रधान छेः जे सर्जन करे ते स्रष्टा, जे विधान करे ते विधाता, विधि वगेरे.

ते ज प्रमाणे रसवती–रसोई–करे ते रसोयो. कुंभ (घडो) करे–घडे ते–कुंभार. लोह–लोढुं–करे–घडे ते लुहार, चामडुं करे ते चमार. सीवे ते सई. वगेरे.

नीलकंठ, कालकंठ, त्रिलोचन, पंचबाण, दशग्रीव वगेरे गुणप्रधान शब्दो छेः जेनो कंठ नीलो छे ते नीलकंठ–महादेव. जेनो कंठ कालो छे ते कालकंठ–महादेव. जेने त्रण लोचन छे ते त्रिलोचन–महादेव. जेने पांच बाण छे ते पंचबाण–कामदेव. जेने दश ग्रीवाओ–डोक–माथां–छे ते दशग्रीव–रावण वगेरे.

जेनां त्रण पगलां छे ते त्रिविक्रम–त्रीकम. जेने चार पाग छे ते चोपगुं–पशु–गाय वगेरे. जेमां सात दिवस सुधी पारायण चाले छे ते सप्ताह. (सप्त+अह–दिवस) जेमां आठ दिवस सुधी उत्सव वा उपवासो शरू होय ते अष्टाह–अढाई.

भूपाल, चंद्रचूड, उमापति, सर्पारि, जगन्नाथ वगेरे शब्दो संबंधप्रधान छे. जे भू–पृथ्वी–ने पाळे ते भूपाल. (आमां 'भू' ए 'स्व' छे अने 'पाल' शब्द स्वामीपणुं सूचवे छे एटले 'भू' अने 'पाल' ए बे वच्चे स्वस्वामिभावसंबंध छे तेथी 'भूपाल' शब्द पण ए ज भावने बतावे छे.) ए ज रीते उमा+पति–उमापति. चंद्र+चूडा–चंद्रचूड– जेनी चूडामां चंद्र छे ते–महादेव. सर्प+अरि–सर्पारि–

× × × तथापि वर्णानुपूर्वीविज्ञानमात्रप्रयोजना तेषां व्युत्पत्तिः न पुनः अन्वर्थप्रवृत्तौ कारणम् इति रूढा अव्युत्पन्ना एव " (अभिधान–चिन्तामणिटीका श्लो० १, पृ० २ यशोवि०) तात्पर्य ए के 'हस्त' शब्दमां 'हस्+त' एवो विभाग पाडी तेनी साधना उणादि द्वारा करी बतावी

गरुड. वध्यघातकभावसंबंधने लीधे 'सर्पारि' शब्द ऊभो थयो छे. सर्प वध्य छे अने गरुड तेनो घातक छे एटले सर्पनो अरि–सर्पारि–गरुड. ए ज प्रमाणे धार्यधारकसंबंध–वृषवाहन. जन्यजनकसंबंध–विश्वजनक. आश्रयआश्रयिसंबंध—जलधि, समुद्रशायी. परस्परविरोधनो संबंध– 'सित' उपरथी असित (सित–धोळुं, असित–काळुं) ते ज प्रमाणे सितेतर (सित–धोळुं, इतर–भिन्न.) धोळाथी भिन्न–सितेतर. ब्राह्मणेतर–ब्राह्मणथी भिन्न–अब्राह्मण.

यौगिक शब्दोमां जे बे पदो होय छे तेने बदली पण शकाय छे एटले एकने बदले बीजुं पण मूकी शकाय छे. जेमके, 'जलधि' ने बदले तोयधि, नीरधि. तेम ज जलनिधि, तोयनिधि, नीरनिधि वगेरे. अर्थात् ए यौगिक शब्दोमां ए प्रकारनो फेर-फार थई शके छे माटे तेमनो स्वभाव परावृत्तिसह छे : परावृत्ति–अदलाबदली, सह –खमवुं—जे शब्दो परावृत्तिने खमी शके ते परावृत्तिसह.

मिश्र शब्दो होय छे तो यौगिक जेवा परंतु तेमनो अर्थ रूढि प्रमाणे थाय छे, नहीं के तेमनी व्युत्पत्ति प्रमाणे. ए शब्दो परावृत्तिसह नथी माटे यौगिक नथी : दशरथ. व्युत्पत्तिनी अपेक्षाए जे दश रथवाळो होय ते 'दशरथ' कहेवाय, परंतु अहीं तेम नथी. अहीं तो रूढिप्रमाणे तेनो अर्थ समझवानो छे अने ते रामचंद्रनो पिता–दशरथ. तेम 'दशरथ' ने बदले 'दशस्यन्दन' शब्द पण न वापरी शकाय अर्थात् मिश्रशब्दोनो स्वभाव परावृत्तिसह नथी. ए ज रीते 'गीर्वाण' जेनी गीर्–(वाणी) वाण जेवी छे ते गीर्वाण. व्युत्पत्ति प्रमाणे तो जे मर्मवेधी भाषा बोले तेने 'गीर्वाण' कहेवो जोईए परंतु अहीं तेम नथी. अहीं तो तेनो अर्थ रूढिप्रमाणे करवानो छे अने ते गीर्वाण–देव. वळी 'गीर्वाण' ने बदले 'वाणीवाण' शब्द न वापरी शकाय. तात्पर्य ए के यौगिक शब्दो तेमनी व्युत्पत्ति प्रमाणे प्रवर्ते छे, त्यारे मिश्रशब्दो व्युत्पत्तिवाळा होवा छतां तेमनी प्रवृत्ति रूढिप्रमाणे थाय छे अने यौगिक शब्दो परावृत्तिसह छे त्यारे मिश्रशब्दो परावृत्तिसह नथी.

छे छतां ते अव्युत्पन्न ज छे. कारण के 'हस्' धात्वर्थ साथे 'हस्त' शब्दना वाच्यनो कोई प्रकारनो संबंध नथी. एथी 'हस्त'ना मूळमां 'हस्' धातु छे अने तेने 'त' प्रत्यय लागवाथी 'हस्त' शब्द नीपज्यो छे, ए कहेवुं कल्पनामात्र छे. आ रीते व्युत्पत्तिनी दृष्टिए संस्कृतना रूढ शब्दो अने प्राकृतना देश्य शब्दोमां खास भेद जणातो नथी. परंतु देश्य प्राकृत शब्दोनुं उच्चारण प्राकृतनी पद्धतिए प्रवर्ते छे त्यारे संस्कृत देश्य शब्दोनुं उच्चारण संस्कृतनी रीते प्रवर्ते छे, एवो भेद खरो.

६४ 'देश्य' शब्दोनुं स्वरूप बतावतां आचार्य हेमचन्द्र कहे छे के—"अणाइपाइअपयट्टभासाविसेसओ देसी"—(देशीशब्दसंग्रह गा० ४) अर्थात् "देशी प्राकृत एटले अनादि काळथी प्रवर्तेली विशेष प्रकारनी प्राकृतभाषा—एक खास प्रकारनी प्राकृतभाषा" विशेष प्रकारनी

---

१२० "अनादिप्राकृतप्रवृत्तभाषाविशेषकः देशी"

अथवा

"अनादिप्राकृतप्रवृत्तभाषाविश्लेषकः देशी"

अथवा

"अनादिप्राकृतप्रवृत्तभाषाविशेषतः देशी"

"अणाइपाइअपयट्टभासाविसेसओ देसी" आ वाक्यनो अर्थ बतावतां आचार्य हेमचंद्र लखे छे के—"अनादिप्रवृत्तप्राकृतभाषाविशेष एव अयं देशीशब्देन उच्यते" अर्थात् "अनादि काळथी प्रवृत्त–प्रवर्तेल—जे विशेष प्रकारनी प्राकृतभाषा तेनुं नाम देशी." हेमचंद्रना आ 'अनादिप्राकृतप्रवृत्तभाषाविशेषकः' वाक्यमां 'प्रवृत्त' शब्द 'प्राकृत' शब्द पछी छे अने अर्थ करती वखते तेमणे ए शब्दने 'प्राकृत'नी पूर्वे मूकी 'प्राकृत'नुं विशेषण गण्यो छे.

मारी नम्र समज प्रमाणे ते वाक्यनो अर्थ जरा जुदी रीते होवो जोईए अने ते आ प्रमाणे छे: आ० हेमचंद्रे उक्त वाक्यमां जे लक्षण 'देशी'नुं आप्युं छे ते, तेमणे पोते ज ऊपजाव्युं छे वा तेमणे पोते ज नवुं रच्युं छे एम नथी लागतुं. कारण के तेओ पोते ज जणावे छे के तेमनी सामे पादलिप्त वगेरे

प्राकृत भाषा एटले प्राचीनतम आर्यभाषा साथे जेनुं कोई प्रकारनुं साम्य नथी एवी प्राकृतभाषा.

आचार्योए रचेलां बीजां अनेक देशीशास्त्रो हतां, ते बधांनुं परिशीलन करीने तेमणे आ संग्रह रच्यो छे. (जुओ देशीना० गा० २) एटले तेमणे बांधेलुं देशीनुं आ लक्षण विशेष प्राचीन छे. तेनो अर्थ मारी धारणा प्रमाणे आ नीचे जणावेली रीते करवामां आवे तो इतिहासनी दृष्टिए उपयोगी थाय: अनादिप्राकृते प्रवृत्तो यो भाषाविशेषः स देशी अर्थात् जे प्राकृत अनादि काळथी चाल्युं आवे छे तेमां प्रवृत्ति पामेलो–प्रवेश पामेलो जे खास भाषाना शब्दोनो जत्थो ते देशी. आर्य भाषा अने अनार्यभाषा एम बे भेद तो सुप्रतीत छे. अनार्यो अहींना मूळ वतनी हता अने आर्यो तो फरता फरता अहीं आवी विजयी थया. ए रीते जोतां अनार्यो देशी–तळपदा–कहेवाय. आर्योनी जे अनादिप्राकृत भाषा हती तेमां आ देशीरूप अनार्योनी भाषानो प्रवेश थयो अने ते 'देशी' नामथी जाणीती थई. आ अर्थनी अपेक्षाए अनार्यशब्दोने 'देशी' कहेवाय. आर्योनी भाषामां पण रूढ, यौगिक वगेरे त्रणे प्रकारना शब्दो हता परंतु तेमनुं सामूहिक नाम 'अनादिप्राकृत' अने तेमां जे अनार्य शब्दोनुं मिश्रण थयुं तेओ 'देशी' नामथी कहेवाया. आ रीते हेमचंद्रे बतावेला लक्षण वाक्यमां आर्य अने अनार्य शब्दोना मिश्रणनो भाव घटमान लागे छे.

बीजो पण अर्थ आ प्रमाणे छे: अनादिप्राकृतप्रवृत्तभाषाविश्लेषकः अर्थात् जे प्राकृत अनादिकालथी चाल्युं आवे छे–आर्योनी जे मूलभाषा छे वा आर्योनो जे मौलिक शब्दसंग्रह छे तेनाथी जे शब्दसंग्रह विश्लिष्ट–विभिन्न छे–पोतानी जातने जुदी रीते तारवी राखे छे–तेनाथी जे शब्दसंग्रह स्वभावे विश्लेषरूप छे तेनुं नाम देशी. आ भावमां पण आर्य अने अनार्य शब्दोना मिश्रणनो भाव छे. आर्य शब्दो करतां रचनानी दृष्टिए, व्युत्पत्तिनी दृष्टिए अनार्य शब्दो विश्लिष्ट छे तेथी ज तेओ आर्यशब्दो करतां जुदा प्रकारना भासे छे. आर्य अने अनार्यजातिना मिश्रणनो प्रसंग ऐतिहासिक छे ते उपरथी आ अर्थ सूझ्यो छे. ए सिवाय आ अर्थ माटे बीजो कोई विशेष आधार मळ्यो नथी. सुज्ञ विद्वानो 'देशी' शब्दना स्वरूपविशे गंभीर विचार करी खास प्रकाश नाखशे एवी विनंती छे.

विशेष माटे जुओ—

'देश्य प्राकृत अने तेना शब्दोनां मूल'

(बुद्धिप्रकाश १९४१ मार्च–जून पृ० १०० टिप्पण २२)

उक्त स्वरूपवाळा देश्य प्राकृतनुं कोई पण आर्यभाषा साथे साम्य न होवाथी तेना शब्ददेहनुं पृथक्करण ज न थई शके अने एम छे माटे आचार्य हेमचंद्रे तेमने मळेला शब्दोनो मात्र संग्रह ज कर्यो छे नहीं के पृथक्करणपूर्वकनुं व्याकरण.

६५ देशीशब्दसंग्रह द्वारा संग्रहेला शब्दोमां एवा पण केटलाय शब्दो संग्रहायेला छे जे संस्कृतनो ढोळ चडावीने 'अमरकोश'[१२१] वगेरे संस्कृत कोशोमां पण संग्रहायेला छे अने संस्कृत साहित्यमां पण वपरायेला छे: जेमके–हरिचन्दण, सयग्घी, सीहरअ, सिहरिणी, सुवण्णविन्दु, हरि, वेलुलिय,

---

१२१ 'हरिचंदण' वगेरे शब्दो जे अर्थमां देशीनाममालामां नोंधेला छे तेना ते ज अर्थमां अमरकोश, अभिधानचिंतामणि (हैम०) वगेरे संस्कृत कोशोमां पण संस्कृतानुसारी रीते नोंधायेला छे:

१ हरिचंदण एटले कुंकुम–विशेष प्रकारनुं चंदन–गोरुचंदन.

देशी०	अमर०	हैमकोश-अभिधा०
"हरिचंदणं च घुसिणे" –दे० वर्ग० ८, गा० ६५	"हरिचन्दनम्-अस्त्रियाम्" –कां० २, मनुष्यवर्ग श्लो० १३१	"हरिचन्दने तैलपर्णिक–गोशीर्षौ" अभिधा० कां० ३, श्लो० ३०५

२ शतघ्नी–सेंकडो माणसोनो घाण काढे एवुं विशेष प्रकारनुं हथीयार.

"सयग्घी–घरट्टि– वर्ग० ८, गा० ५		"शतघ्नी तु चतुस्ताला लोहकण्टक–संचिता" कां० २, श्लो० ४५१ वृत्ति.

पेडिय, सोहद, सारादी, संघलय, सेहस, दकरज वगेरे. आ उपरांत केटलाक एवा पण शब्दोने देशी तरीके गणावेला छे जेमनुं साम्य वैदिक वा

---

३ सीहर–शीकर–पाणीनां फणो–वरसादनी फरफर पडे ते.

देशी०	अमर०	हेम०
"सीहरओ आसारे" वर्ग० ८, गा० १२	"शीकरः अम्बुकणाः स्मृताः" –दिग्वर्ग कां० ३, श्लो० ११	"वातास्तं वारि शीकरः" कां० २, श्लो० ७९

४ सिहरिणी–शिखंड.

"सिहरिणि×मज्जिआए" –वर्ग० ८, गा० ३३	×	"रसालायां तु×शिखरिणी" –कां० ३, श्लो० ६८

५ सुवण्णबिंदु–कृष्ण–जेना शरीर ऊपर सुवर्ण वर्णनां बिंदुओ–टपकां–छे.

"कण्हे सुवण्णबिंदू" व० ८, गा० ४०	×	"पाण्डवायनः सुवर्णबिन्दवः" –कां० २, श्लो० १३१ (कृष्णनां नामो)

६ हरि एटले पोपट.

"हरी कीरे" व० ८, गा० ५९	"शुक–अहि–कपि–भेकेषु हरिः" नानार्थव० कां ३, श्लो० १७४	×

७ वेरुलिय–वैडूर्य–विशेष प्रकारनुं रत्न जे विदूरनामना स्थळमां नीपजे छे.

"वेरुलियं वेरुलिए" –व० ७, गा० ७७	×	"तत्र वैडूर्यं बालवायजम्" कां० ४, श्लो० १२९

८ वेडिय–मणियारुं वेचनारो वाणियो.

"वेडइओ वणिअए" –व० ७, गा० ७८	×	"वैकटिको मणिकारः" –कां० ३, श्लो० ५७४

कादम्बरीमां[१२३] पृ० १४१, पृ० १४७ तथा पृ० ५११ ऊपर 'पूर्णपात्र' शब्द जे अर्थमां वपरायेलो छे, देशीशब्दसंग्रहमां पण ते ज अर्थमां 'पुण्णवत्त'–(वर्ग ६ गाथा ५३) शब्द नोंधायेलो छे. गवेषणा करवामां आवे तो एवा देश्य शब्दो घणा मळी आवे जेमने संस्कृतनो ढोळ चडावी कविकुलशेखर कालिदासादि कविओए वापर्या होय.

संस्कृत काव्यमां देश्यप्रयोगनी प्रतिष्ठा

वामनरचित काव्यालंकारसूत्रमां तो संस्कृतपूजक खुद वामन ज कहे छे के "अतिप्रयुक्तं देशभाषापदम्" (अध्याय ५–१–१३) अर्थात् देशी पद होय छतां कविओए जेनो अतीव प्रयोग कर्यो होय तेवुं देशीपद संस्कृतकाव्यमां वापरवामां वांधो नथी. जेमके–

---

१२३ "पूर्णपात्राहरणविलुप्यमानवसनभूषणः"—

कादम्बरी पूर्व० ।

"पूर्णपात्रं जहार"–का० पू० ।

"सखीजनेन अपह्रियमाणपूर्णपात्राम्" का० पू० ।

कादंबरीमां वपरायेलो 'पूर्णपात्र' शब्द तेनो अर्थ जोतां पूर्ण+पात्र ए रीते नीपजेलो नथी. किंतु देशीशब्दसंग्रहमां "पुण्णवत्तं पमोअहिअवत्थे" (व० ६, गा० ५३) अर्थात् 'प्रमोदहृतवस्त्र–प्रमोद द्वारा हराई जतुं वस्त्र' ए अर्थमां 'पुण्णवत्त' शब्द छे अने तेने संस्कृतरूप 'पूर्णपात्र' आपी कादंबरीकारे ऊपरना संदर्भमां वापर्यो छे. पाछळथी आचार्य हेमचंद्रे ए 'पुण्णवत्त' ने 'पूर्णपात्र' बनावी पोताना संस्कृत कोशमां नोंधेलो छे:

"उत्सवेषु सुहृद्भिर्यत् वलादाकृष्य गृह्यते ।

वस्त्र-माल्यादि तत् पूर्णपात्रं पूर्णानकं च तत्"

—अभिधा० कां० ३, श्लो० ३४१

आ श्लोकमां हेमचंद्रे 'पूर्णपात्र' अने 'पूर्णानक' एम वे शब्दो नोंधेला छे.

"योषिदित्यभिलाष न हालाम्" अहींनो 'हाला' शब्द देश्य होवा छतां कविना संस्कृत काव्यमां पण बाधक नथी. कारण के ए शब्दने कविओए घणो वापर्यो छे.

यास्क 'सुख' अर्थ माटे बतावेला "शिम्बाता, शतरा, शातपन्ता" (निरुक्त पृ० २१४, अ० ३, सू० ११) वगेरे बीजा पण अनेक शब्दो देश्यनी कोटिना भासे छे.

आ रीते वैदिक संस्कृत अने लौकिक संस्कृत ए बन्नेमां देश्यपदोनो प्रवेश कांई आजकालनो नथी—घणो ज प्राचीन छे. एथी एम अवश्य

---

१२४ अलंकारसूत्रनो कर्ता वामन, उपर्युक्त 'हाला' शब्दने देश्य कहे छे. हेमचंद्रकृत देशीशब्दसंग्रहमां ए शब्द विद्यमान नथी परंतु 'दारुडिया' अर्थमां "हालुओ गीचे"—(वर्ग ८, गा० ६६) कहीने हेमचंद्रे 'हालुअ' शब्दने देशी तरीके नोंधेलो छे. 'हालुअ' शब्दमां मूळ 'हाला—(मद्य)' शब्द ज छे एथी वामनना कहेवा प्रमाणे 'हाला' शब्द देश्य छे ए खरुं छे. संस्कृतना महाकविओ पोताना काव्यमां ज्यारथी 'हाला' एवा देश्यपदने पण वापरवा लाग्या त्यारथी ए शब्द देश्य छतां संस्कृत जेवो गणावा लाग्यो अने अमरकोशमां तेम ज अभिधानचिंतामणि जेवा संस्कृतनामकोशमां ऊमेराइ गयो :

"सुरा हलिप्रिया हाला"—(अमर० शूद्रवर्ग कां० २, श्लो० ३९)

"शुण्डा हाला हारहूरं प्रसन्ना वारुणी सुरा"—(अभिधा० कां० ३, श्लो० ५६७)

जे हकीकत श्रीवामने कही छे ते ज हकीकतने श्रीभोज सरस्वतीकंठाभरणमां नीचे प्रमाणे जणावे छे :

"यद् अव्युत्पत्तिमद् देश्यम् इति पूर्वं निरूपितम् ।
महाकविनिबद्धं यत् तद् अप्यत्र गुणी भवेत्" ॥

—सर०—प्रथम परिच्छेद श्लो० १०४।

श्रीभोज 'तल्ल' 'गल्ल' 'लड्ह' अने 'लहरी' शब्दो देश्य छतां पूर्वकविओए प्रयोज्या छे ए वात उदाहरण आपीने जणावे छे.

कही शकाय एवुं छे के, उभय प्रकारना संस्कृत ऊपर देश्य प्राकृतनी कांई ओछी असर नथी.

शौरसेनी भाषानो परिचय

६६ **शौरसेनी**—शूरसेन देश अने तेनुं मुख्य[125] नगर मथुरा. जे भाषा मुख्यपणे मथुरा अने तेनी आसपासना प्रदेशोमां प्रवर्तती हती तेनुं नाम शौरसेनी. शूरसेन देशमां कोई एक काळे प्रवर्ततुं आदिम प्राकृत आ भाषानुं प्रभव स्थान छे. साधारण प्राकृत अने शौरसेनी प्राकृतना शब्ददेहनुं स्वरूप लगभग सरखुं छे. विशेषता 'द' श्रुतिनी छे. शब्दमां रहेलो असंयुक्त अने अपदादिभूत 'त', 'द' रूपे परिणमे छे. पूरित–पूरिद, मारुति–मारुदि, मन्त्रित–मंतिद. शूरसेन प्रजा अघोष 'त' ने बदले घोष 'द' नो ध्वनि करनारी हशे. 'शौरसेनी' भाषा एक खास पृथक् भाषा तरीके क्यारथी शरू थई ए बाबत शुं कही शकाय? मथुरा नगरी श्रीकृष्णना वखतथी विख्यात छे. संभव छे के ते पहेलां पण ते विख्यात होय. शूरसेन प्रजाना अतिशय तेजने लीधे वा तेना उच्च साहित्यने लीधे शौरसेनी भाषा विश्रुत थई हशे. वर्तमानमां तो ते भाषाना विशिष्ट साहित्यनी उपलब्धि नथी. भास वगेरे महाकविओए निर्मेला नाटकोमां केटलांक पात्रोए शौरसेनीने साचवी राखी छे. जैन परंपरानी दिगम्बर शाखाना

दिगंबर जैन साहित्य अने शौरसेनी भाषा

मध्ययुगे निर्मायेला साहित्यमां पण शौरसेनी सचवायेली छे. पालि भाषा अने आर्ष प्राकृतनी पेठे मूळ शौरसेनीमां असंयुक्त व्यंजनोनो घसारो ओछो जणाय छे. अने पछीथी ते, साधारण प्राकृतनी पेठे वधतो भासे छे. पालि भाषामां बे शब्दो वच्चे केटलेक

---

१२५ "महुरा य सूरसेणा"–(पन्नवणासूत्र–आर्य–अनार्य विचार)

स्थळे (यथा + एव—यथेरिव) 'र' उमेराय छे, तेम जैनशाखानी शौरसेनीमां 'दु + अधिग'—दुराधिग' जेवां पदोमां 'र' उमेरायो छे. दिगम्बरीय साहित्यमां भणित—भणिअं, विस्तृत—वित्थड इत्यादि प्रयोगोमां 'द्' श्रुति नथी, अने जैन—जेण्हं, तत्त्वज्ञ—तच्चण्ह इत्यादि प्रयोगोमां 'ण' ने बदले 'ण्ह'नुं उच्चारण आवे छे. ('ण्ह' उच्चारणवाळां मुद्रित पदो भ्रांत पाठरूप न होय अने खरां ज होय तो) आ जातना 'ण्ह' उच्चारणनी नोंध शौरसेनीना वर्णविकारमां वररुचि, चंड, हेमचन्द्र के लक्ष्मीधर वगेरे कोई करता नथी. चंड°, वररुचि, हेमचन्द्र, वाल्मिकिसूत्रोनो वृत्तिकार

---

१२६ जुओ "एव-आदिस्स रि पुब्बो च रस्सो" सू० ११ (पालिव्याकरण-संधि-कप्प, २ कांड)

१२७ जुओ प्रवचनसार अधि० २, गा० ७३ "समदो दुराधिगा" द्वाभ्यां गुणाभ्यां अधिका"–प्रव० टीका.

१२८ जुओ प्रवचनसार अधि० १, गा० ५९

—"वित्थडं विमलं । एगंतियं भणियं" ॥

१२९ जुओ प्रवचनसार अधि० ३, गा० ६

"अपुणब्भवकारणं जेण्हं" ॥

"सव्वभावतच्चण्हू"—प्रव० अधि० २, गा० १०५

('ण्ह' उच्चारणवाळां उक्त पदो परमश्रुतप्रभावकमंडळ (मुंबई) द्वारा प्रकाशित 'प्रवचनसार'मां विद्यमान छे परंतु तेनी साधना माटे कोई प्राकृत वैयाकरण कशुं लखतो नथी तेथी 'न' अने 'ज्ञ' ने बदले ए 'ण्ह' उच्चारणयुक्त पदोवाळो पाठ खरो छे के केम ? आना निर्णय माटे प्रवचनसारनी विशेष प्राचीन हस्तलिखित प्रतो तपासवी आवश्यक छे.)

१३० जुओ चंडना प्राकृतलक्षणनुं (पृ० ४६) शौरसेनी प्रकरण.

वररुचिना प्राकृतप्रकाशनो बारमो परिच्छेद.

हेमचंद्रना प्राकृत व्याकरणमां सूत्र ८–४–२६० थी ८–४–२८५.

सिंहराजकृत प्राकृतरूपावतारनो १८ मो शौरसेनी परिच्छेद.

लक्ष्मीधरकृत षड्भाषाचंद्रिकामां शौरसेनीविभाग पृ० २४७–२५२ (मुंबई संस्कृतसिरीझ.)

मार्कंडेयकृत प्राकृतसर्वस्व पृ० ८३–९६ (विझागापट्टम्)

सिंहराज, लक्ष्मीधर अने मार्कण्डेय ए बधाए शौरसेनी भाषाने उच्चारणनी दृष्टिए जुदी जुदी रीते समझावी छे. एथी शौरसेनी भाषानी विविधरूपता समझी शकाय एवी छे. शूरसेन देशमां ते कोई एक काळे बोलचालनी भाषा हशे अने ज्यारे ए बोलचालनी भाषा हशे त्यारे तेनी उक्त विविधरूपता अघटमान पण केम कहेवाय? शौरसेनी भाषाने बौद्ध मागधी जेटली प्राचीन मानवानुं मुख्य कारण तेमां व्यञ्जनोनो घसारो घणो ओछो छे, ए छे. ए भाषानुं साहित्य—विशिष्ट साहित्य—कोई काळे हशे तो खरुं पण अत्यारे तो नथी मळतुं एथी ते संबंधे विशेष शुं कही शकाय?

शौरसेनीनी विविधता

६७ मागधी—मगध[१३१] देश अने तेनुं मुख्य नगर राजगृह. जे आदिम प्राकृत मगधदेशमां प्रवर्ततुं हतुं ते, मागधीनुं प्रभव स्थान छे. बौद्ध पिटकोमां जे भाषा सचवायेली छे अने कच्चायन जेवा महान वैयाकरणे जेनुं स्वरूप बांधी बताव्युं छे ते भाषाने बुद्धभिक्खुओ 'मागधी' नुं नाम आपे छे ए वात आगळ आवी गई छे. (पृ० ११४ टि० ८०)

मागधीनो परिचय

जैन आगमसाहित्यमां जे भाषा सचवायेली छे अने आज सुधीना कोई वैयाकरणे जेनुं संपूर्ण व्याकरण घड्युं नथी (मात्र एक हेमचंद्राचार्ये जैनआगम साहित्यमांनां अमुक ज पदोने 'आर्षम्' कही साधी बताव्यां छे) ते भाषाने जैनपरंपरा 'अर्धमागधी' वा 'आर्षप्राकृत'ना नामे ओळखे छे.

उक्त रीते कहेवायेली बौद्धपिटकोनी मागधी अने जैनआगमोनी अर्धमागधी ए बन्ने भाषा प्रस्तुतमां 'मागधी'ना भावमां समावेश पामे एवी छे:

---

१३१ "रायगिह मगह"—पन्नवणासू० आर्य–अनार्यविभाग.

त्यारे बीजी तरफ चंड वररुचि अने हेमचंद्र वगेरे वैयाकरणोए पोतपोताना व्याकरणमां जे मागधीनुं स्वरूप बांधी वताव्युं छे ते 'मागधी' पण अहीं 'मागधी' ना भावमां समाय एम छे.

मूळे एक छे छतां अहीं उक्त रीते मागधीभाषा बे प्रकारनी कल्पी छे, तेथी अहीं व्यवहारने माटे पिटकोनी अने जैनसूत्रोनी मागधीने सारु 'सूत्रमागधी' अने वैयाकरणोए जणावेली मागधीने माटे 'व्याकरण-मागधी' एवा बे संकेतो कल्पवा पडे छे.

सूत्रमागधी अने व्याकरणमागधीनो संकेत

'सूत्रमागधी'ना स्वरूप संबंधी चर्चा तो आगळ आवी गई छे (पृ० १०४-१२०) एटले अहीं 'मागधी'ना मथाळा नीचे फक्त 'व्याकरणमागधी' विशे कहेवानुं रहे छे.

साधारण प्राकृत, शौरसेनी अने व्याकरणमागधीना वर्णविकारो लगभग सरखा छे. व्याकरणमागधीमां 'र' ने बदले 'ल' अने 'स' ने बदले 'श' ना व्यवहारनी विशेषता[१३२] छे. ए उपरांत स्त, स्प, स्क, स्म, स्व, स्ट वगेरे संयुक्त व्यंजनो व्याकरणमागधीमां टकी रह्या छे. 'ज' 'द्य' अने 'य' ए त्रणेने बदले 'य' नो ध्वनि प्रवर्ते छे. 'न्य' 'ण्य' 'ज्ञ' अने 'ञ्ज' ए चारेने बदले 'ञ्ञ' नुं उच्चारण थाय छे. अनादि 'छ' नुं 'श्च' उच्चारण चाले छे अने 'क्ष' ने बदले ≍क[१३३] आवो जिह्वामूलीय वर्ण वपराय छे.

---

१३२ जुओ हेमचंद्र प्राकृतव्या० मागधीप्रकरण ८-४-२८७ थी ८-४-३०१.

१३३ आ अक्षर 'जिह्वामूलीय' कहेवाय छे. कारण के तेनुं उच्चारण करतां जीभना मूलनो उपयोग थाय छे.

हेमचंद्रना (१-१-१६ सिद्धहेम) कहेवा प्रमाणे तेनी-'क्ष' स्थानीय प्रस्तुत वर्णनी—आकृति वज्र जेवी छे: ते वर्ण, ऊपर नीचे पहोळो अने वच्चे सांकडो छे ≍. आ वर्ण 'क' अने 'ख' नी साथे ज रहे छे. जेम विसर्गनुं उच्चारण स्वतंत्र नथी तेम आनुं उच्चारण पण स्वतंत्र नथी.

" लहशवशनमिलशुलशिलविअल्दिमंदालल्लायिदंहियुगे ।
वीलयिणे पक्खालदु मम शयलमवय्ययंवालं[१३४] "॥—हेमचंद्र—
८–४–२८८.

साधारण प्राकृत अने शौरसेनी करतां व्याकरणमागधीनी विशेषता उक्त गाथा ज बतावी आपे छे. उक्त बन्ने भाषा—साधारण प्राकृत अने शौरसेनी—करतां व्याकरणमागधीमां विजातीय संयुक्त व्यंजनो विशेष प्रमाणमां प्रवर्ते छे. एथी व्यंजनना घसारा विनानी आ भाषा सूत्रमागधी जेटली तो प्राचीन होय ज. आचारांग[१३५] सूत्रमां 'अकस्मात्' तथा अशोकनी धर्मलिपिओमां

१३४ आ गाथानुं संस्कृत आ प्रमाणे छे:
रभसवशनमिर (नम्र) सुरशिरोविगलितमन्दारराजित–अंह्रियुगः ।
वीरजिनः प्रक्षालयतु मम सकलम् अवद्यजम्बालम् ॥

१३५ नीचेना अनेक प्रयोगो ऊपरथी जणाशे के व्याकरणमागधी अने अशोकनी धर्मलिपि ए वे वच्चे केटली बधी समानता छे:

हैमव्या०—व्या० मा०	अ० ध०
८–४–२९० कोस्ट (कोष्ठ)	३ अनुसस्टि (अनुशिष्टि)
	६ उस्टान (उत्थान)
८–४–२९३ अञ्ञ (अन्य)	६ अञ (अन्य)
८–४–२८८ शालश (सारस)	६ द्रशि (दर्शि)
८–४–२८९ नास्ति (नास्ति)	६ नास्ति (नास्ति)
अकस्मात्	अकस्मात् * (अकस्मात्)
८–४–२७० } ८–४–२८८ } पुलव (पूर्व)	६ पुलुव (पूर्व)

धर्मलिपिना शब्दो सामे जे अंको मूक्या छे ते धर्मलिपिना अंको समजवा. जेमके '६ नास्ति' एटले छट्ठी धर्मलिपिमां 'नास्ति' प्रयोग छे.

आवा बीजा पण व्याकरणमागधीने मळता प्रयोगो ते धर्मलिपिओमां अनेक छे. (जुओ 'अशोक की धर्मलिपियाँ' ओझाजीसंपादन)

[* " इत्थ वि जाणह अकस्मात् "—आचार–अंग, अध्य० ७, उ० १ सूत्र १९६ पृ० २४१ आ० समिति०]

'अनुसस्टि', 'अञ', 'प्रियद्रशि' 'पुलुव' वगेरे प्रयोगोमां व्याकरण-मागधीनां उच्चारणोनी छांट भासे छे. ए उपरथी स्पष्टपणे प्रतीत थाय छे के वैयाकरणोए जे मागधीनुं स्वरूप घडेलुं छे ते प्राचीन छे अने साधारण पण छे.

अहीं ए याद राखवुं जोईए के सूत्रमागधी अने व्याकरणमागधी ए बन्ने केटलांक उच्चारणोमां तद्दन विभिन्न जेवी छे. गुजराती भाषा एक होवा छतां जेम तेमां एक शब्द परत्वे पण विभिन्न उच्चारणोने स्थान छे, तेम मागधी भाषा एक होवा छतां तेमां य एक शब्द परत्वे विभिन्न उच्चारणोने स्थान होय ए नवाई जेवुं नथी. सूत्रमागधीना साहित्यमां अमुक ज प्रकारनां उच्चारणो आदरपात्र थयां अने व्याकरणमागधीना साहित्यमां एटले विशेषतः नाटकोमां वळी तेनाथी अमुक अंशे जुदां उच्चारणोनो

मागधीनो विविधता

स्वीकार थयो. व्याकरणमागधीनुं स्वरूप बतावनारा ते ते वररुचि[१३६] वगेरे वैयाकरणोए पण उच्चारणनी दृष्टिए तेनुं वैविध्य ज बताव्युं छे. हेमचंद्रादि वैयाकरणोए निरूपेली व्याकरणमागधीभाषानुं खास साहित्य नथी रह्युं, तो पण फक्त नाटकोमांनां केटलांक पात्रोए व्याकरणमागधीने थोडे घणे अंशे जाळवी राखी छे अने गण्यागांठ्यां जैनस्तोत्रोमां पण ए जळवायेली छे.

आचारांगादिसूत्रोमां अने सम्राट अशोकनां शासनोमां व्याकरणमागधीनां केटलांक खास उच्चारणो सचवायां छे. ए उपरथी अनुमान थाय छे के ए उच्चारणो पण मगधना मोटा भागमां प्रचलित हशे. अने उक्त अनुमान द्वारा एम पण फलित न थई शके के जेमां व्याकरणमागधीनां बधां य उच्चारणो वपरायां होय एवुं कशुं साहित्य ते काळे नहीं ज लखायुं होय एम केम कहेवाय ?

---

१३६ जुओ वररुचि वगेरेए रचेलां व्याकरणोमां मागधीनुं प्रकरण.

मारा नम्र मत मुजब मागधी भाषा तो एक छे छतां मगध जेवा मोटा प्रदेशमां बोलाती ते एक भाषा पण समानकाले य हमेशा समानउच्चारणो-वाळी रहे ए बनवा जोग नथी ज. कोई पण एक विशाळ प्रदेशमां बोलाती भाषा माटे आवी परिस्थिति अनिवार्य छे अने ए अनुभवप्रतीत पण छे.

आम छे माटे ज वैयाकरणोए पण तेनां भिन्न भिन्न उच्चारणो नोंधी बताव्यां छे. चंड वगेरेए व्याकरणमागधीनुं जे स्वरूप बताव्युं छे ते पण एक सरखुं नथी.

आम होवाथी भिन्न भिन्न वर्णविकारोवाळी होवा छतां ते एक ज मागधी छे पण जुदी जुदी मागधी नथी, ए ध्यानमां राखवानुं छे.

पैशाची अने चूलिका-पैशाचीनो परिचय

६८ पैशाची अने **चूलिकापैशाची**—षड्भाषाचंद्रिकामां रूपक-परिभाषामांथी अवतरण करीने लक्ष्मीधरे[137] पाण्ड्य, केकय, बाल्हीक, सिंह अथवा सह्य, नेपाळ, कुन्तल, सुधेष्ण, भोज, गांधार, हैव, कन्नोजन ए बधा देशोने पिशाच देशो गणाव्या छे, अने तेमने पैशाची भाषाना प्रभव स्थानरूपे मान्या छे. आ देशोनां उक्त बधां नामोनो परिचय जाण्यामां नथी, परंतु पाण्ड्य, केकय, नेपाल, गान्धार—ए देशोनो जे परिचय छे ते ऊपरथी

पिशाच देशो

एम माळूम पडे छे के पाण्ड्य दक्षिणमां, केकय नेपाल वगेरे पूर्व-उत्तरमां अने गांधार बाल्हीक पश्चिम-उत्तरमां—आ रीते एक बीजाथी तद्दन भिन्न दिशामां आवेला होय

---

१३७ "पिशाचदेशास्तु वृद्धैरुक्ताः—
पाण्ड्य–केकय–बाह्लीक–सिंह–नेपाल–कुन्तलाः ।
सुधेष्ण–भोज–गान्धार–हैव–कन्नोजनास्तथा" ॥
एते पिशाचदेशाः स्युः तद्देश्यस्तद्गुणो भवेत् ।"—षड्भाषा० पृ० ४, श्लो० २९–३० (मुंबई सं०)

ते देशो कोई एक भाषाना प्रभवस्थान तरीके केम होई शके? एटले भाषाविज्ञाननी दृष्टिए विचार करतां एम स्पष्ट समझाय छे के रूपक-परिभाषाकारनी ए मान्यता विज्ञाननी भींत उपर रचायेली नथी.

पैशाचीनुं प्रभवस्थान

खरी वात एम होई शके के, 'पिशाच' नामनी मनुष्यजाति पैशाची-भाषानी जन्मदात्री छे. शोधक विद्वानोना मत प्रमाणे ए जातिनुं मूळ वतन उत्तर-पश्चिमना पंजाबनो प्रान्त-प्रदेश छे. अथवा अफगानीस्थानो पूर्व प्रांतभाग छे. एटले उक्त पंजाबना प्रांतभागमां के अफगानीस्थानना उक्त पूर्व प्रांत प्रदेशमां प्रवर्ततुं वैदिक युगनुं आदिम प्राकृत पैशाची भाषानुं प्रभव स्थान छे. संभव छे के, पैशाची भाषा बोलनारा लोको पोतानुं मूळ वतन तजी दई पाण्ड्य, केकय, भोज, कुंतल, नेपाल, गांधार वगेरे उक्त देशोमां जई वस्या होय. तेमना द्वारा ते ते देशोमां पैशाची भाषानो प्रवेश थयो होय अने ते उपरथी ज रूपकपरिभाषाना कर्ताए पाण्ड्य वगेरे देशोने पैशाचीना प्रभव स्थानरूपे कल्प्या होय. आ कल्पना असंगत न होय तो ज रूपकपरिभाषाना कर्ताए कहेला उक्त देशोनो पैशाचीसाथेनो संबंध कांईक संगत थई शके एम छे.

चूलिका-पैशाची

६९ पैशाची अने चूलिका-पैशाचीमां तद्दन नजीवो भेद छे. 'चूलिका-पैशाची' पदनो 'चूलिका' शब्द शिखा-टोच-नो सूचक छे. ए उपरथी एवो भास थाय छे के 'पैशाची' भाषावाळा प्रदेशथी वधारे पूर्वमां चूलिका-पैशाचीनो प्रचार होय. पैशाची अने चूलिका-पैशाची एवी भाषा छे के जेमां अनादि असंयुक्त व्यंजनोनो वसारो ज नथी. पैशाचीनुं आ स्वरूप ज तेने बौद्धमागधीनी निकटवर्ती ठरावे एवुं छे. कहेवाय छे के पंडित गुणाढ्ये

'बृहत्कथा' नामना कथाग्रंथने पैशाचीमां रच्यो हतो. चंडे[138] पैशाची माटे एक ज नियम जणाव्यो छे त्यारे वररुचिए[139] तेने माटे चौद सूत्रो रचेलां छे. हेमचंद्रे[140], सिंहराजे[141] अने लक्ष्मीधरे[142] पैशाची माटे चोवीस सूत्रो बनावे छे. त्यारे वळी मार्कंडेय[143] तो पोतानी रीत प्रमाणे पैशाचीने जुदी रीते वर्णवे छे.

पैशाचीनी विविधतां

"[144] पनमथ पनयपकुप्पितगोलीचलनग्गलग्गपतिबिंबं ।
तससु नखतप्पनेसुं एकातसतनुथलं लुद्दं"

(हेमचन्द्र–८–४–३२६)

पैशाचीनां विचित्र उच्चारणोने बतावबा उक्त गाथा पूरती छे. नाटकोमां अमुक अमुक पात्रोए पैशाचीना स्वरूपने साचवी राख्युं छे अने केटलांक एवां जैनस्तोत्रो पण मळे छे जेमां छए भाषानुं थोडुं थोडुं स्वरूप सचवायुं छे.

---

१३८ जुओ चण्डनुं प्राकृतलक्षण–पृ० २४ (सत्य०) "पैशाचिक्यां र–णयोः ल–नौ"

१३९ जुओ प्राकृतप्रकाश–वररुचि. दशमो पैशाचिक परिच्छेद पृ० १११ थी ११३.

१४० जुओ हेमचंद्र ८–४–३०३ थी ८–४–३२८.

१४१ जुओ सिंहराज–प्राकृतरूपावतार वीशमो पैशाची परिच्छेद. तथा एकवीशमो परिच्छेद–त्रण सूत्र.

१४२ जुओ लक्ष्मीधर षड्भाषाचंद्रिका–पैशाचीनिरूपण पृ० २५७ थी २६३ (मुंबई सं०)

१४३ जुओ मार्कंडेय–प्राकृतसर्वस्व पृ० १२३ थी १२७ (विझागापट्टम्)

१४४ आ गाथानुं संस्कृत रूपांतर आ प्रमाणे छेः

"प्रणमत प्रणयप्रकुपितगौरीचरणाग्रलग्नप्रतिबिम्बम् ।
"दशसु नखदर्पणेषु एकादशतनुधरं रुद्रम् ॥"

अवेस्ताग्रंथोनी प्राचीन भाषाना तथा लोकगीत के लोकवार्ताओमां सचवायेली प्राचीन अने अर्वाचीन पुश्तो भाषाना तथा ते ज प्रकारनी प्राचीन अने अर्वाचीन सिंधी भाषाना स्वरूप साथे पैशाचीना स्वरूपनो तुलनात्मक अभ्यास करवाथी पैशाचीना स्वरूप विशे विशेष प्रकाश पडवानो अधिक संभव छे.

ए ज प्रकारे मथुरा-वृंदावन अने तेनी आसपासनी लोकगीत के लोकवार्तामां सचवायेली प्राचीन शौरसेनीना अने वर्तमान प्रचलित लोकभाषाना स्वरूप साथे व्याकरणनियंत्रित शौरसेनीना स्वरूपनो तुलनात्मक रीते अभ्यास करवाथी शौरसेनीना वास्तविक स्वरूपनो स्पष्ट ख्याल आवशे तथा वर्तमान राजगृह—पाटलिपुत्र अने तेनी आसपासनी प्राचीन अने अर्वाचीन लोकभाषा मगहीना स्वरूप साथे व्याकरणनिबद्ध मागधीना स्वरूपनो परस्पर तोलनपूर्वक परिचय करवाथी मागधीना पण खरा स्वरूप विशे विशेष ज्ञातव्य सांपडशे.

रुद्रट वगेरे अलंकारशास्त्रना विधाताओए काव्यना शब्ददेह विशे लखतां उक्त बधी भाषाओने अने अपभ्रंशने पण याद करी छे.

वररुचिए[१४५] प्राकृतप्रकाशमां कह्युं छे के पैशाचीनी प्रकृति शौरसेनी छे. मागधीनी प्रकृति शौरसेनी छे अने शौरसेनीनी प्रकृति संस्कृत छे. त्यारे हेमचंद्र[१४६] कहे छे के शौरसेनीने प्राकृतवत् समजवी, मागधीने शौरसेनीवत् समजवी अने पैशाचीने पण शौरसेनीवत् समजवी.

---

१४५ "प्रकृतिः शौरसेनी"—प्रा० प्र० दशमपरिच्छेद सू० २
 ,, ,, —प्रा० प्र० एकादशपरिच्छेद सू० २
 "प्रकृतिः संस्कृतम्" प्रा० प्र० द्वादशपरिच्छेद सू० २

१४६ "शेषं प्राकृतवत्" ८–४–२८६
 "शेषं शौरसेनीवत्" ८–४–३०२
 "शेषं शौरसेनीवत्" ८–४–३२३

वैयाकरणोनुं उक्त कथन भाषाना कार्यकारणभावनी दृष्टिए समझवानुं नथी. परंतु तुलनात्मक पद्धतिए भाषानो अभ्यास करवा माटे एक भाषाने समझवा बीजी निकटनी भाषाने वाहनरूपे राखवानी अपेक्षाए घटाववानुं छे. शब्दविज्ञाननी दृष्टिए एवो कार्यकारणभाव घटमान ज नथी ए वात ऊपर चर्चाई गई छे.

वर्णविकारोनी दृष्टिए भाषाओनो क्रम

वर्णविकारोनी दृष्टिए भाषानो क्रम गोठववो होय तो सर्वथी प्रथम बौद्ध मागधी–पालि के आर्षप्राकृत आवे, पछी पैशाची, पछी अशोकनी लिपिओ, खारवेलनो शिलालेख, पछी मागधी, शौरसेनी अने छेल्ले साधारण प्राकृत. उत्तरोत्तर वर्णोनो फेरफार अने घसारो वधतां वधतां साधारण प्राकृतमां ते वधारे जणाय छे.

अपभ्रंशनो परिचय

७० अपभ्रंश—भ्रंश एटले पडवुं–पोताना मूळ स्थानथी च्युत थवुं. अपभ्रंश एटले वधारे नीचे पडवुं. अपभ्रंशनो शब्दार्थ एवो छे. प्राकृत शब्द जेम अमुक देशनी वा अमुक काळनी भाषा माटे नथी परंतु स्वाभाविक भाषानो सूचक छे, तेम ' अपभ्रंश ' शब्द पण तेना व्युत्पत्त्यर्थनी अपेक्षाए अमुक देशनी वा अमुक काळनी भाषाने बदले भ्रंश[१४७] पामेली गमे ते भाषानो सूचक छे.

१४७ ' भ्रंशूच् अधःपतने ' अर्थात् ' अधःपतन ' अर्थवाळा ' भ्रंश ' धातु ऊपरथी ' भ्रष्ट ' शब्द बन्यो छे. ' अप ' साथे तेनो प्रयोग ' अपभ्रष्ट ' थाय. ' अप ' उपसर्ग, अधिक अधःपतननो द्योतक छे एथी ' अपभ्रंश ' नो साधारण अर्थ :–घणुं नीचे पडेलुं–घणुं ज भ्रष्ट. ज्यारे भाषा माटे ए शब्द वपराय त्यारे तेनो अर्थ :–घणी नीच भाषा–घणी हलकी भाषा एवो थाय. जे स्वरो अने व्यंजनोनो प्रयोग वैदिक संस्कृत अने पाणिनीय संस्कृतमां छे ते ज स्वरो अने व्यंजनोनो प्रयोग प्राकृत भाषाओमां–पालि, प्राकृत, शौरसेनी, मागधी, पैशाची अने अपभ्रंश

भाषाओमां—छे मात्र ते ते भाषाओमां सरलउच्चारणनी प्रधानताने कारणे ते ते स्वरो अने व्यंजनो मेजराज परिवर्तन पामे छे. आ रीते उक्त बन्ने संस्कृत अने बीजी बधी प्राकृतो एक समान छे छतां प्राकृत भाषाओने नीचुं स्थान शा माटे? अने उक्त बन्ने संस्कृत भाषाने उच्चस्थान शा माटे? आ प्रश्न अवश्य विचारणीय छे. आ संबंधे जे खुलासो हुं समजुं छुं ते अहीं संक्षेपमां बतावुं छुं:

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अने शूद्र ए चारेना आत्मामां कशो ज भेद नथी, जगन्नियंताए तो ए चारेने एकसरखा प्रेमथी सर्ज्या छे, तेम ए चारेना देहनी आकृति के अवयवोमां कशो ज भेद नथी. जन्मे छे त्यारे तो ते बधा य एक सरखा ज होय छे छतां य एक समय एवो हतो के ज्यारे एम मनातुं के "वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः" अर्थात् बधा य वर्णोमां ब्राह्मण ज श्रेष्ठ छे. ब्राह्मण ज ब्रह्मदेवनुं मुख छे, हाथ क्षत्रिय छे, जांघ वैश्य छे अने पग शूद्र छे. आ देशमां ज्यारे धर्मगुरुओनी (मुख्यत्वे ब्राह्मणोनी) सत्ता जोर ऊपर हती त्यारनी आ मान्यता छे अने ए मान्यताने लीधे क्षत्रियोने, वैश्योने अने समाजना पायारूप शूद्रोने जे जे अन्यायो थया छे ते बधा जाणीता छे. मनुस्मृति वगेरे स्मृतिओ तेनी साक्षीरूप छे. मने लागे छे के ब्राह्मणसत्ताक समयमां जेम अन्य वर्णोने हलका—नीच—पतित कहेवामां आव्या छे अने तेमने ब्राह्मण करतां घणा ज ओछा अधिकारो आपवामां आव्या छे अने समस्त स्त्रीवर्गने तो सर्वथा अधम मानीने तेनो भणवानो अधिकार पण खुंचवी लेवामां आव्यो छे. तेम ब्राह्मणोए ब्राह्मणेतर वर्णनी अने आम लोकमां प्रचार पामेली भाषाने 'अपभ्रंश' एवुं हलकुं नाम आपीने लोकभाषानो तिरस्कार कर्यो छे. अभण ब्राह्मणो, तेमनी पत्नीओ, (जुओ टि० १४८) अने ब्राह्मणोनां बालको सुद्धां 'अपभ्रंश'नो उपयोग करतां हतां तेम छतां जातिवादने प्रधानस्थान आपनारा ते समयना ब्राह्मणोना अमुक वर्गे लोकभाषाने हलकी कहेवानी धृष्टता करेली छे तेने ज परिणामे 'संस्कृत तो देवभाषा छे अने प्राकृत वगेरे भाषाओ हलकी छे' एवी भ्रामक मान्यता फेलायेली छे. लोकभाषा हलकी ज होय तो शुं वेदोनी भाषा लोकभाषा नथी? पाणिनि जेने शिष्टभाषा कहे छे तेना करतां वेदभाषा तद्दन जुदा प्रकारनी छे, तेना प्रयोगो पण तद्दन विलक्षण छे. जेम जेम हुं विचार करुं छुं तेम तेम मने स्पष्ट जणाय छे के वेदोमां वपरायेली भाषा ते समयना लोकोनी प्रकृतिसिद्ध—स्वाभाविक—भाषा छे. जे भाषा प्रकृतिसिद्ध—प्राकृत—होय तेने हलकी केम कहेवाय? वळी, बीजी बीजी प्राकृतो अने वेदोनी ए स्वाभाविक भाषा वच्चे गाढ संबंध पण छे. प्राकृतभाषा-

ओनो जेटलो संबंध वैदिक भाषा साथे छे तेटलो पाणिनिनी शिष्ट भाषा साथे नथी. प्राकृत भाषाओनो मूळ देह अने वैदिक भाषानो मूळ देह ए बे वच्चे घणुं ज निकटनुं साम्य छे. त्यारे वेदोमां वपरायेली लौकिक भाषाने आर्ष कहीने पवित्र मानवी अने लोकोमां प्रचार पामेली प्राकृत भाषाओने हलकी–भ्रष्ट–कहीने अवगणवी एमां न्याय छे खरो? जे भाषा अर्थवाहक होय अने जेनां उच्चारणो शक्यताप्रमाणे नियत होय तेवी कोई भाषा भले होय परंतु तेमां 'अमुक भाषा तो सर्वोच्च छे अने अमुक भाषा तो हलकी छे' एवी कल्पना, भाषाना मिथ्या अभिमानथी ऊभी थयेली छे.

ज्यारे भाषानो मिथ्या आडंबर वधी गयो अने भाषातत्त्वने ज प्रधानता अपावा लागी अने ते द्वारा सामान्य लोकोने तिरस्कार पात्र गणवामां आव्या त्यारे भगवान बुद्धे अने भगवान महावीरे लोकभाषाने ज बोलवानुं वाहन बनाव्युं अने समस्त वर्गमां बोलाती भाषाने प्रधान स्थान आपी लोकोनुं प्रतिनिधित्व स्थापित कर्युं. त्यार पछी जे जे लोकप्रतिनिधिरूप संतो–ज्ञानेश्वर–तुकाराम–कबीर–तुलसीदास–नरसिंह वगेरे थया छे, तेमणे पण ते लोकभाषाने ज स्वीकारी छे. आपणे जाणिए छिए के लोकभाषानो आश्रय लेवा बदल ते ते संतोने केवी केवी पीडाओ सहन करवी पडी छे छतां तेओए लोकभाषाने ज प्रधान स्थान आपेलुं छे. वर्तमानमां पण लोकभाषाने प्रधान स्थान मळशे तो ज ग्रामीण लोको अने नागरिक लोको वच्चेनो कृत्रिम भेद मटी जशे अने ए बन्ने वच्चे पोष्यपोषकनो सनातन संबंध सचवाई रहेशे. अत्यारे जे ए संबंध तुटी गयो छे तेनुं एक कारण लोकभाषानी अवगणना पण छे.

कहेवानुं तात्पर्य ए के लोकभाषानुं 'अपभ्रंश' एं नाम जातिवादी ब्राह्मणोए आपेलुं छे. खरी रीते तो जेम एक काळे वेदोनी भाषा लोकभाषारूपे प्रचलित हती तेम 'अपभ्रंश' नामवाळी भाषा पण एक काळे समस्त भारतमां प्रचलित हती. एथी एवी समस्त लोकनुं प्रतिनिधित्व करती भाषाने हलका शब्दथी संबोधवी उचित नथी. 'लोकभाषा अपभ्रंश छे, लोकभाषा हलकी छे' एटलुं ज कहीने ब्राह्मणो अटक्या नथी परंतु तेमणे तो एम पण कह्युं छे के जे जे शास्त्रो ए लोकभाषामां छे ते पण भ्रष्ट भाषामां रचायेलां होई प्रामाणिक नथी, भले ए शास्त्रोमां अहिंसा वगेरे सत्तत्त्वो होय परंतु जेम कूतराना चामडानी कोथळीमां भरेलुं गायनुं दूध पण भ्रष्ट छे–हेय छे तेम भ्रष्टभाषामां निरूपायेलां ए सत्तत्त्व पण त्याज्य–हेय–छे.

तंत्रवार्तिकना प्रणेता महापंडित श्रीकुमारिले ऊपली हकीकत तंत्रवार्तिकमां (पृ० २३७ आनंदा०) आ प्रमाणे जणावी छे:

अहीं ए याद राखवुं जरूरी छे के अमुक ज भाषाना पक्षपाती प्राचीन पंडितोए आ 'अपभ्रंश' शब्दने पोतानी मानीती भाषा सिवायनी भाषा माटे गोठवी काढ्यो छे. मारी दृष्टिए कहुं तो बराबर अर्थवाहक कोई पण लोकप्रतिनिधिक लोकभाषाने 'अपभ्रष्ट' नाम अपाय ज केम? एटले अहीं भाषा माटे 'अपभ्रंश' अने उच्चारणो माटे 'भ्रष्ट उच्चारणो' शब्द वापरेला छे ते उक्त प्राचीन पंडितोनी रूढिने अनुसरीने छे. खरी रीते तो तेवी लोकभाषा माटे साधारणभाषा, लोकभाषा, जनपदभाषा, देशीभाषा के प्राकृत भाषा–एवां नामो योग्य छे.

"असाधुशब्दभूयिष्ठाः शाक्य–जैनागमादयः ।
असन्निबन्धनत्वाच्च शास्त्रत्वं न प्रतीयते ॥
ततश्च असत्यशब्देषु कुतस्तेष्वर्थसत्यता ।
दृष्टापभ्रष्टरूपेषु कथं वा स्यात्–अनादिता" ॥

"सन्मूलम्–अपि अहिंसादि श्वदृतिनिक्षिप्तक्षीरवत् अनुपयोगि अविश्रम्भणीयं च" ।

जेम आपणी भाषाओने गोरा लोकोए 'वर्नाक्युलर' नाम आप्युं छे तेम ते समयना जातिवादी ब्राह्मणोए साधारण जनभाषाने–लोकभाषाने–अपभ्रंश कही छे. तेम छतां वाक्पति, राजशेखर वगेरे वैदिक ब्राह्मणोए प्राकृतभाषाने घणी घणी प्रशंसी छे अने 'भाषामात्रनी–संस्कृत सुद्धांनी–जननी प्राकृतभाषा छे' एम कही प्राकृतभाषानी भक्तिपूर्वक स्तुति करी छे एटलुं ज नहीं पण ते भाषामां तेओए ग्रंथ-रचना–सेतुबंध, कर्पूरमंजरी–पण करी प्राकृतभाषानो उत्कर्ष साधी बताव्यो छे. ए, आपणी आर्यभावनानो ज विजय छे. वर्तमानमां काशी, बंगालनां नदीयाशांति के भाटपाडा वगेरे स्थळे ज्यां संस्कृतज्ञ पंडितोनुं ज अधिक प्राबल्य छे त्यां बधे उक्त कुमारिलनी वाणीनी असर छे अने आपणा देशमां (गुजरातमां) पण प्राचीन परंपराना पंडित ब्राह्मणो मोटे भागे कुमारिलनी असरथी मुक्त जणाता नथी. वैदिकपरंपरानी शिक्षणसंस्थाओमां प्राकृत भाषाओ शीखवाती होय एवुं हजु सुधी तो सांभळ्युं नथी. भाषाने लगती आ जातनी मिथ्या अस्मिता शुं समभावनी के राष्ट्रीयत्वनी विघातक नथी?

जैनो अने ब्राह्मणो–बन्नेने परमेश्वर आवा प्रकारनी मिथ्याअस्मिताथी दूर राखे.

मागधी अने शौरसेनी शब्द अमुक प्रदेशनी भाषानो बोधक छे, पैशाची शब्द अमुक जातिनी भाषानो ज्ञापक छे. तेवी रीते अमुक देशनी वा अमुक जातिनी भाषा माटे 'अपभ्रंश' शब्दनो प्रयोग नथी माटे वैदिक अने लौकिक संस्कृतनुं भ्रष्टरूप, आर्षप्राकृत के साधारण प्राकृतनुं भ्रष्टरूप, मागधीनुं भ्रष्टरूप, शौरसेनीनुं भ्रष्टरूप, पैशाचीनुं भ्रष्टरूप—ए बधी विशेष भाषानां भ्रष्टरूपो 'अपभ्रंश'ना भावमां समाई जाय छे.

'अपभ्रंश'नो सामान्य अर्थ

प्राकृत भाषानो व्यापक अर्थ छे छतां ते जेम अमुक एक विशिष्ट अर्थने पण सूचवे छे तेम अपभ्रंश शब्दनो भाव पण प्राकृतनी जेवो व्यापक छे छतां ते, अहीं तो एक खास विशिष्ट भाषाना अर्थनो द्योतक छे. जे विशेष भाषाने अपभ्रंश शब्द सूचवे छे ते भाषा अमुक समये वा अमुक संवतमां ज उत्पन्न थई हती एम कांई कही शकाय एवुं नथी.

अपभ्रंश अने वैदिकयुगनुं आदिम प्राकृत

भाषाविज्ञाननी दृष्टिए जोतां तो अपभ्रंश भाषा पण जन्मनी दृष्टिए वैदिकयुगना आदिम प्राकृत साथे ज संबंध राखे छे. वैदिक युगमां जे भाषा बोलचालनी हती तेनुं नाम 'आदिम प्राकृत.' ए आदिम प्राकृत बोलनारा आर्यो के तेमना संपर्कमां आवेला आदिम लोको ए बधानां उच्चारणो एकसरखां ज होय ए न बनवा जेवुं छे. उच्चारणभेदनी उपपत्ति अने आर्यो तथा आदिम जातिओना संपर्कथी थता शब्दपरिवर्तननी उपपत्ति ए बन्ने बाबत आगळ सविशेष चर्चाई गई छे. (पृ० १४–४४) तात्पर्य ए के उच्चार्यमाण आदिम प्राकृतनां जे उच्चारणो विशेष भ्रंश पामेलां हतां तेमनुं समग्र एक नाम अपभ्रंश एटले जे समय आदिम प्राकृतनो ते ज समय भ्रष्ट उच्चारणरूप अपभ्रंशनो. परंतु अहीं ए याद राखवुं जोईए के आदिम प्राकृतनां भ्रष्ट उच्चारणोनो सूचक 'अपभ्रंश' शब्द खास

एक भाषा-विशेषनो सूचक नथी, तो पण विशेषभाषारूप अपभ्रंशनुं बीज ते भ्रष्ट उच्चारणोमां छे, एमां शक नथी.

महाभाष्यकार[१४८] पतंजलिए वापरेलो अपभ्रंश शब्द—ते, मात्र अशुद्ध के विकृत उच्चारणोनो सूचक छे. महाभाष्यकार कहे छे के, कोई ब्राह्मणी पोतानी अशक्तिने लीधे 'ऋ' ने बदले 'लृ' नुं उच्चारण करे छे. ते 'ऋतक' ने बदले 'लृतक' बोले छे. ब्राह्मणीनुं ए 'लृतक' उच्चारण भ्रष्ट छे छतां ते भ्रष्ट 'लृतक' ना 'लृ' नो संधिकार्यमां उपयोग थाय माटे पण महेश्वरे "ऋलृक्" सूत्रमां 'लृ' नो उपदेश करेलो छे. ए रीते 'अपभ्रंश' शब्द सामान्य अशुद्धिनो—विकृतिनो सूचक हतो ते, वखत जतां, अमुक एक भाषानी अस्मितानुं प्राबल्य वधतां सर्वसाधारण एवी लोकभाषानो द्योतक थयो. अपभ्रंश पदनो साधारण एवो यौगिक अर्थ सर्वकाळे वैदिक के लौकिक संस्कृत वगेरे सर्व भाषा परत्वे विद्यमान होय छे. तेनो आदिकाळ के प्रारंभ-काळ शोधी न शकाय. परंतु साहित्यमां वपराती भाषाविशेष परत्वे 'अप-भ्रंश' शब्द क्यारथी रूढ रीते शरू थयो तेनो ऊहापोह जरूर थई शके.

महाभाष्यकार अने अपभ्रंशनो सामान्य अर्थ

अपभ्रंशनो विशेष अर्थ

आ ऊहापोह माटे अत्यारे बे जातनां साधनो उपलब्ध छे. तेमांनां एक एवां छे के जेमां साहित्यमां वपराती विशेष-भाषाना अर्थमां अपभ्रंश पदनो व्यवहार छे अने बीजां एवां छे के जेमां एवां अनेक पदो विद्यमान छे, जे तुलनात्मक भाषाविज्ञाननी दृष्टिए चोक्खां अपभ्रंशनां छे.

भाषाविशेष परत्वेना 'अपभ्रंश'नो ऊहापोह

---

१४८ जुओ महाभाष्य—"लृकारोपदेशो यदृच्छा—अशक्तिजानुकरण—प्लुत्याद्यर्थश्च" "अशक्त्या कयाचिद् ब्राह्मण्या 'ऋतक' इति प्रयोक्तव्ये 'लृतक' इति प्रयुक्तम्" इत्यादि (पृ० ४५ अभ्यं०)

७१ अपभ्रंश पदनो रूढ रीते उपयोग करनारां साधनो आ छे:

रूढार्थक अपभ्रंश अने नाट्यशास्त्रकार भरत

(१)—नाट्यशास्त्रकार भरते[149] (आशरे विक्रमना छट्ठा सैकाथी पूर्वनो समय) पोताना ए शास्त्रना सत्तरमा अध्यायमां अतिभाषा, आर्यभाषा, जातिभाषा, योन्यन्तरीभाषा, भाषा, विभाषा, एवां एवां अनेक सामान्य पदो द्वारा अनेक भाषाओनी माहिति आपी छे. उपरांत मागधी, अवन्तीजा, प्राच्यभाषा, शौरसेनी, अर्धमागधी, बाल्हीका अने दाक्षिणात्या एम सात भाषाओने भाषा तरीके जणावी छे अने वनेचरी भाषाने विभाषा तरीके बतावी छे. वळी शकारी, चांडाली, आभीरोक्ति, शाबरी, द्रामिडी वगेरे शब्दोने खास खास भाषाओनां नामरूपे सूचव्यां छे. भरते प्रयोजेला 'भाषा' पदनी टीका करतां अभिनवगुप्त[150] कहे छे के "भाषा संस्कृताऽपभ्रंशः" अर्थात् "संस्कृतनो अपभ्रंश ते भाषा" अने "भाषाऽपभ्रंशस्तु विभाषा"—"संस्कृतना अपभ्रंशनो पण जे अपभ्रंश ते विभाषा" आमां अभिनवगुप्ते वापरेलो प्रथम अपभ्रंश शब्द, महाभाष्यकारे वापरेला अपभ्रंश जेवो यौगिक छे. अने बीजो अपभ्रंश शब्द मने तो रूढार्थद्योतक लागे छे.

---

१४९ "संस्कृतं प्राकृतं चैव यत्र पाठ्यं प्रयुज्यते ।
अतिभाषा आर्यभाषा च जातिभाषा तथैव च ॥ २७ ॥
तथा योन्यन्तरी चैव भाषा नाट्ये प्रकीर्तिता ॥ २८ ॥
मागधी–अवन्तिजा प्राच्या शौरसेनी–अर्धमागधी ।
बाल्हीका दाक्षिणात्या च सप्त भाषाः प्रकीर्तिताः ॥ ४९ ॥
शकार–आभीर–चण्डाल–शबर–द्रमिल–अन्ध्रजाः ।
हीना वनेचराणां च विभाषा नाटके स्मृता ॥ ५० ॥

१५० नाट्यशास्त्र अ० १७ श्लो० ४९–५० नी टीका पृ० ३७६ (गाय०)

आ रीते भरतमुनि पण अपभ्रंश पदने रूढार्थवाचक मानता जणाय छे. तेमने तेनो यौगिकार्थ ज इष्ट होत तो तेओ ते माटे 'भाषा' शब्द वापरीने ज चलावत पण तेमणे अपभ्रंशनो बीजो अर्थ बताववा 'विभाषा' शब्द पण योजेलो छे.

वळी, भरतमुनिए ते प्रसंगमां 'आभीरोक्तिः[१५१] शब्द पण वापर्यो छे. महाकवि दंडी[१५२] जे अर्थमां "आभीरादिगिरः काव्येष्वपभ्रंशः" वाक्य वापरे छे, ते अर्थमां भरतमुनिए 'आभीरोक्तिः' शब्द वापरीने नाटकोमां स्पष्ट-पणे अपभ्रंश पदनो रूढार्थ स्वीकारेलो छे.

नाट्यशास्त्रमां अपभ्रंशपद्यो भरतमुनिना नाट्यशास्त्रमां "मोरुल्लउ[१५३] णच्चंतउ। नहागमे संभंतउ॥" —[अ० ३२ श्लो० ६६] आ अने आवी भाषावाळां बीजां चार पद्यो मळे छे.

---

१५१ नाट्यशास्त्र अ० १७ श्लो० ५६–पृ० ३७७ (गाय०)

१५२ काव्यादर्श प्रथम परिच्छेद श्लो० ३६

१५३ भरतना नाट्यशास्त्र (निर्णयसागर प्रेस) मां अध्याय ३२ मां ए पांचे दोहाओ जे प्रमाणे छपाया छे ते आ प्रमाणे छे:

१ 'मोरुल्लउ नच्चंतउ'
नहागमे संभंतउ" ॥ ६६ ॥

२ "मेह उद्दंतु नई जोण्हउं।
णिच्च णिप्पहे एहु चंदउ ॥ ७४ ॥

३ "एसा हंसवधू हित्था काणणउ।
गंतुं जस्सु (ऊसु) इया कंतं संगइया" ॥ ९९ ॥

४ "पिय वाइ वायर्तु सुवसंतकाल।
पिय कामुको पिय मदणं जणंतउ" ॥ १०८ ॥

५ "वयदि वादो एह पवाही हसिद इव"। १६९

आ पांचे ध्रुवाना पाठो ठीक ठीक अशुद्ध छे छतां जे पदो जाडा अक्षरोमां मूक्यां छे ते बधां स्पष्टपणे अपभ्रंशनां रूपो छे. स्व० केशवलालभाईए तो उक्त ध्रुवाना पाठो बदलवामां असाधारण छूट लीधी छे. मारी नम्र समज्ञ प्रमाणे कोई

तेमां वपरायेलां 'उ' प्रत्ययवाळां पदो अने हेमचंद्रे कहेला अपभ्रंशमां वपरातो स्वार्थिक 'डुल्लअँ' प्रत्यय जेने लागेलो छे एवुं 'मोल्लउ' पद, उक्त पद्यनी कायाने अपभ्रंशनी काया कहेवाने पर्याप्त छे. आ पद्योनी भाषा विशे साक्षरोमां मतभेद छे.

स्व० केशवलालभाई[155] ध्रुव ए पद्योने अपभ्रंशनां नथी मानता अने ए पद्योनी जे वाचना मळे छे तेने सुधारीने एटले प्राकृतनुं रूप आपीने वांचे छे. आम वाचना फेरववा छतांय तेओ 'मोल्लउ' पदनुं अपभ्रंशपणुं फेरवी शकता नथी. मारा नम्र मत प्रमाणे ए रीते वाचना फेरववी उचित नथी भासती. अध्यापक गुणे महाशय[156] ते पद्योनी वाचनाने फेरवता नथी. तेओ जेवी ते पद्योनी वाचना मळे छे तेवी कायम राखी तेमने अपभ्रंशनां पद्यो माने छे. मारी कल्पनाने श्रीगुणे महाशयनो टेको छे अने ते पद्योनो अपभ्रंशभाव पण मारी तरफेणमां छे.

चंड अने रूढार्थ-अपभ्रंश

(२) चंडे[157] (आशरे विक्रमनो छठ्ठो सैको) पोताना प्राकृत व्याकरणमां "न लोपोऽपभ्रंशेऽधोरेफस्य" सूत्रमां विशेषभाषावाचक रूढ अपभ्रंश पदनो उपयोग करेलो छे.

पण प्राचीन पाठोने बदली तेमने स्थाने नवा पाठो कल्पवामां भारे जोखम छे अने ए जातनी नवा पाठोनी कल्पना इतिहाससंशोधन माटे मोटा अंतरायरूप छे.

श्लोक ६६ मामां 'नहागमे' पाठ छे. नह-(नभस्) श्रावण मासनुं। आगमे-आगमन थये। अर्थात् वर्षाऋतुना श्रावणमासनुं आगमन थये मोरो नाचे छे. आवो स्पष्ट अर्थ छतां तेमणे (के० ध्रु०) 'नह' ने बदले 'मेह' पाठ कल्प्यो छे तेना कारणनी समझण पडती नथी.

१५४ "अ-डड-डुल्लाः स्वार्थिक'क'लुक् च' ८-४-४२९ हे० अपभ्रंश प्रकरण.

१५५ जुओ पद्यरचनानी ऐतिहासिक आलोचना पृ० २८३-२८६ (ठक्कर वसनजी माधवजी लेक्चर्स-१९३२ नी सालनुं मुद्रण)

१५६ जुओ भविसयत्तकहानी प्रस्तावना पृ० ५०-५१

१५७ जुओ चंडनुं प्राकृतलक्षण पृ० २४ सू० ३७ (सत्य०)

(३) राजा[१५८] धरसेनने लगता विक्रमना छठ्ठा—सातमा सैकाना एक शिलालेखमां आवेला 'अपभ्रंशप्रबंध' पदनो अपभ्रंशशब्द साहित्यिक अपभ्रंशभाषानो द्योतक छे.

अपभ्रंशप्रबंध

(४) महाकवि[१५९] दण्डीए (आशरे विक्रमनो आठमो सैको) पोताना काव्यादर्शमां 'अपभ्रंश' पदनी एक यौगिक व्याख्या करी छे. अने काव्योमां वपराती अपभ्रंश भाषाने लक्ष्यगत करीने बीजी रूढ व्याख्या पण आपी छे.

(५) कुवलयमाला[१६०] कथाना कर्ता दाक्षिण्यचिह्न वा उद्द्योतनसूरिए (आशरे विक्रमनो नवमो सैको) पोतानी ए कथामां 'अपभ्रंश' शब्दने विशेष भाषाना अर्थमां नोंधेलो छे.

अपभ्रंश अने दाक्षिण्यचिह्न

आ उपरांत राजशेखर,[१६१] भोजे[१६२] अने

---

१५८ जुओ 'गुजरातना ऐतिहासिक लेखो' (भाग १) पृ० १०७ पंक्ति ५ (श्रीफार्बसगुजरातीसभाग्रंथावलि अंक १५)

१५९ "आभीरादिगिरः काव्येष्वपभ्रंश इति स्मृताः।
शास्त्रे तु संस्कृतादन्यद् अपभ्रंशतयोदितम्" ॥ काव्यादर्श १ परि० श्लो० ३६

१६० किंचि अवब्भंसकया का वि य पेसायभासिल्ला"-(कुवलयमालाप्रारंभ हस्तलिखित अ० पा०)

१६१ "ससंस्कृतमपभ्रंशं लालित्यालिङ्गितं पठेत्"
—काव्यमीमांसा अ० ७ पृ० ३३ पं० ५.

"अपभ्रंशावदंशानि ते संस्कृतवचांस्यपि"। —पृ० ३४ पं० १०.

"अपभ्रंशभाषणप्रवणः परिचारकवर्गः"—अ० १० पृ० ५० पं० ५.

"सापभ्रंशप्रयोगाः सकलमरुभुवः टक्क-भादानकाश्च"–अ० १० पृ० ५१ पं० ६.

१६२ "अपभ्रंशेन तुष्यन्ति स्वेन नान्येन गुर्जराः ॥"
—सरस्वतीकण्ठाभरण प० २ श्लो० १३.

अपभ्रंश भाषाने भरतथी पूर्वे एक वा दोढ सैको लई जवानां ज ए निर्विवाद वात छे. तात्पर्य ए छे के, उक्त प्रकारनां साधनो द्वारा विशिष्ट प्रकारनुं अपभ्रंश—साहित्यिक अपभ्रंश विक्रमना चोथा वा पांचमा सैका सुधी पहोंचवानुं अने विशिष्ट बाधक प्रामाण न मळे त्यां सुधी आ कल्पनाने अवकाश रहेवानो.

महायानपंथना ललितविस्तर आदि ग्रंथोनां अपभ्रंशपद्यो

७२ तुलनात्मक भाषाविज्ञाननी दृष्टिए जोतां जेमां आवेलां पद्योनी भाषा चोक्खी अपभ्रंश छे, एवां बीजां साधनोनो परिचय आ प्रमाणे छे :

बौद्धमहायानपरंपरानां ललितविस्तर, लङ्कावतारसूत्र, सद्धर्मपुण्डरीक वगेरे अनेक ग्रंथो आजे उपलब्ध छे. तेमां एवां अनेक पद्यो मळे छे जे नथी संस्कृत, नथी (रूढ) प्राकृत; किन्तु ते पद्योमां वपरायेलां विभक्त्यन्त पदो जोतां अपभ्रंशनो कोई अभ्यासी तेमने अपभ्रंश पद्यो तरीके ज ओळखे एवां ए चोक्खां अपभ्रंशरूप छे.

ललितविस्तरनां पद्यो

ललितविस्तरमां आवेलां पद्यो नीचे प्रमाणे छे :—

" प्रत्येक बुद्धभि च अर्हभि पूर्णलोको
निर्वायमाणु न बलं मम दुर्बलं स्यात् ।
सो भूयु एकु जिनु भेष्यति धर्मराजो
गणनातिवृत्तु जिनवंशु न जातु छिद्येत् ॥ (वसंततिलका)
[अध्याय २१—पृ० ३०३]

रणकालि प्राप्ति यदि नाम जयो न दोषः
तत्रैव यस्तु निहतो भवते स दोषः ।

स्वप्नांतरे तु यदि ईदृश मे निमित्ता
श्रेयो उपेक्ष म रणे परिभावु गच्छेत् ॥

[अध्याय २१—पृ० ३०४]

ज्वालिथ दीपविमलां ध्वजाग्रि मणिरत्न सर्वि स्थपिथा।
ओलंवयाथ हारां प्रभां कुरुत सर्वि गेहेस्मिन् ॥
संगीति योजयेथा जागरथ अतन्द्रिता इमां रजनीम्
प्रतिरक्षथा कुमारं यथा अविदितो न गच्छेथा ॥ (आर्या)

[अ० १५—पृ० २०१]

किं तात! भिन्नवदनोऽसि विवर्णवक्त्रो
हृदयं समुत्प्लवति वेधति तेऽङ्गमङ्गम्।
किं ते श्रुतं अथव दृष्टु भणाहि शीघ्रं
ज्ञास्याम तत्त्वतु विचिन्त्य तथा प्रयोगम्।

[अ० २१—पृ० ३०४]

निष्क्रान्तु शूरो यद विदु वोधिसत्त्वो
नगरं विवुद्धं कपिलपुरं समग्रम्।
मन्यन्ति सर्वे शयनगतो कुमारो
अन्योन्यहृष्टाः प्रमुदित आलभन्ते ॥
गोपा विवुद्धा तथ अपि इस्त्रिगारा
शयनं निरीक्षी न च दृशि वोधिसत्त्वम्।
उत्क्रोसु मुक्तो नरपतिनो अगारे
हा! वञ्चिता स्मः कहि गतु वोधिसत्त्वो ॥
राजा श्रुणित्वा धरणितले निरस्तो
उत्क्रोसु कृत्वा अहो मम एकपुत्रो
सो स्तेमितो ही जलधरसंप्रसिक्तो
आश्वासयन्ती वहुशत शाकियानां ॥

गोपा शयातो धरणितले निपत्य
केशां लुनाती अवशिरि भूषणानि ।
अहो सुभाष्टं मम पुरि नायकेना
सर्वप्रियेभिर्न चिरतु विप्रयोगः ॥
रूपासु रूपा विमलविचित्रिताङ्गा
अच्छा विशुद्धा जगति प्रिया मनापा ।
धन्या प्रसस्ता दिवि भुवि पूजनीया
क्व त्वं गतोऽसी मम शयि छोरयित्वा ॥

[अ० १५-पृ०२२९-२३०]

के चागता धरणि कम्पयमान पद्भ्याम्
संकम्पिता वसुध प्रीतिकरी जनस्य ।
के चागता ग्रहिय मेरु करेतलेभिः
उत्सृष्टपुष्पपुट संस्थित अन्तरीक्षे ॥
के चागताश्चतुरि सागर गृह्य मूर्ध्ना ।
उत्सृष्ट सिञ्चि वसुधां वरगन्धतोयैः ॥
के चागता रत्नयष्टि गृहीत्व चित्रं
संबोधिसत्त्वमुपदर्शय स्थित्व दूरे

[अ० २०-पृ० २९७]

के चागता ग्रहिय मेरि यथैव मेरु
आकोट्यमानु गगणे सुमनोज्ञघोषाम् ।
यस्या रवं दश दिशे व्रजि क्षेत्रकोट्या
अद्यावबोद्धुममृतं अनुबुद्धि शास्ता ॥

[अ० २०-पृ० २९९]

न पास्यि पानं न च मधु न प्रमादं
भूमौ शयिष्ये नो मुकुटं धरिष्ये ।

स्नानं जहित्वा व्रततप आचरिष्ये
यावन्न द्रक्ष्ये गुणधरु बोधिसत्त्वम् ॥

[ललितविस्तर अ० १५—१९०२ आवृत्ति. संपादक—लेफमन्न]

अध्रुवं विभवं शरदभ्रनिभं नटरङ्गसमा जगि जन्मि च्युति।
गिरिनद्यसमं लघुशीघ्रजवं व्रजतायु जगे यथ विद्यु नभे ॥

—[ललितविस्तर पृ० २०४]

बोधिचर्यावतारनुं पद्य "सत्य इमे दुवि लोकविदूनां दिष्ट स्वयं अश्रुणित्व परेषाम्।
संवृति या च तथा परमार्थो सत्यु न सिध्यति किंच तृतीयु ॥"

[बोधिचर्यावतार परि० ९, पृ० ३६१ पं० १७ कलकत्ता—आवृत्ति]

लङ्कावतारसूत्र—

लंकावतारनां अपभ्रंश पदो	संस्कृत रूपो—
नित्यासतस्य	(नित्यासतः)—पृ० ६५—पं० ६
सोशस्य	(शशस्य)—पृ० ५८—पं० १०
अणुसो	(अणुशः)—पृ० ५८—पं० १२
देशेमि	(देशयामि)—पृ० ५४—पं० १
यथ	(यथा)—पृ० ५२—पं० १
वल्पेति	(कल्पयति)—पृ० ५२—पं० ११
वर्णेते	(वर्ण्यते)—पृ० ५२—पं० १५
मुदघेश्च	(उदघेश्च)—पृ० ५२—पं० ८
निरूप्पमाणे	(निरूप्यमाणे)—पृ० ४५—पं० ११
वदाहि मे	(वद मे)—पृ० ३२—पं० ६—७—८

ते भोन्ति (ते भवन्ति)—पृ० २६–पं० २

परिषद् सर्वा अलपी (परिषत् सर्वा अलपीत्)—पृ० २६–पं० ९

अवस्यं (अवश्यम्)—पृ० १७–पं० १३

कृतावकास:....रस्मिविमल–(कृतावकाश:....रश्मिविमल–) पृ० १६–पं० १२–१३

प्रतिगृह्ण (प्रतिगृहाण)—पृ० ५–पं० १५

अनुकम्प (अनुकम्पस्व)—पृ० ६–पं० १

अनुकम्पोऽसि (अनुकम्प्योऽसि)—पृ० ६–पं० ७

ललितविस्तरमहापुराणमां वपरायेला—

एकु[१६४], जिनु, जिनवंशु, रणकालि, प्राप्ति, ईदृश, परिभावु, ज्वलिथ, ध्वजाग्रि, सर्वि, ओलंबयाथ, संगीति, वेधति, दृष्टु, भणाहि, तत्त्वतु, निष्कान्तु, प्रमुदित, इस्त्रिगारा, दृशि, उत्क्रोशु, नरपतिनो, कहि, गतु, शाकियानां, शयातो, अवशिरि, सुभाषि, पुरि,

१६४ अनुक्रमे आ शब्दोनां संस्कृत अने प्राकृत रूपो नीचे प्रमाणे छे:

सं०	प्रा०	सं०	प्रा०
एकः	एक्को इक्को एगो	भण	भणाहि, भण
जिनः	जिणो	निष्कान्तः	निक्खंतो
जिनवंशः	जिणवंसो	प्रमुदितः	पमुदिनो
रणकाले	रणकाले	स्त्री–अगारान्	इत्थिअगारा
प्राप्ते	पत्ते	अदर्शि	दरिसीअ
ईदृशः	एरिसो	उत्क्रोशः	उक्कोसो
परिभावः	परिभावो	नरपतेः	नरपतिनो
ज्वलथ	जलह	क्व	कहिं
ध्वजाग्रे	झयग्गे	गतः	गतो
सर्वस्मिन्	सव्वंसि, सव्वम्मि	शाक्यानाम्	सक्कानं, सक्काणं
अवलम्बयथ	अवलंबेह	शय्यातः	सेज्जातो
संगीतिम्	संगीतिं	अपासृजन्	अवसरीअ
विध्यति	विज्झइ	सुभाषितं	सुभासितं
दृष्टम्	दिट्ठं	पुरे	पुरे

शयि, छोरयित्वा, धरणि, कम्पयमान, वसुध, ग्रहिय, मेरु, करतलेभिः संस्थित, चतुरि, सागर, गृह्य, रतनयष्टि, भेरिं, जगि, जन्मि, जगे, नद–व्रजतायु (व्रजति + आयु), जगे, यथ विद्यु, नभे–

ए अने एवा बीजा अनेक प्रयोगो अने लङ्कावतार सूत्रमां वपरायेला उक्त प्रयोगो अपभ्रंश सिवाय बीजी कई भाषाना संभवी शके एवा छे? प्रथमाना एकवचनमां 'उ' प्रत्ययवाळुं रूप, सप्तमीना एकवचनमां 'इ' प्रत्ययवाळुं रूप, लोपायेली विभक्तिवाळुं रूप अने ए उपरांत वर्णपरिवर्तननी विलक्षणतावाळा भोति, इस्त्रि, ग्रहिय वगेरे विविध प्रयोगो कान ऊपर आवतां ज पोताना विशिष्ट प्रकारना अपभ्रंशभावने सूचित करे छे.

ललितविस्तर वगेरेना निदर्शित प्रयोगोनुं पृथक्करण करी भाषाविज्ञानविद् श्रीमान विधुशेखर शास्त्री कहे छे के—

सं०	प्रा०	सं०	प्रा०
शय्यायाम्	सेज्जाए	गृहीत्वा	घेत्तूण
छर्दयित्वा	छड्डिऊण	रत्नयष्टिम्	रतनलट्ठिं
धरणिम्	धरणिं	भेरिम्	भेरिं
कम्पयमानाः	कम्पेमाणा	जगति	जगे
वसुधाम्	वसुहं	जन्म	जम्म
गृहीत्वा	घेत्तूण	जगति	जगे
मेरुम्	मेरुं	नदी	नदी
करतलैः	करतलेहि	यथा	जहा
संस्थिताः	संठिआ	विद्युत्	विज्जु
चतुर्–चतुरो	चत्तारो	नभसि	नहे
सागरान्	सागरे		

मूल ललितविस्तरमां वपरायेलां ए पदो संस्कृत प्राकृत नथी पण कोई त्रीजी ज भाषानां छे ते वातनो ख्याल आवे माटे आ बधां पदोनुं संस्कृत अने प्राकृत रूपांतर अहीं करीं बताव्युं छे.

"एई मूल कि? आमरा बलि अपभ्रंश प्राकृत; इहा पालिर परवर्ती, अपभ्रंश प्राकृत आलोचना करिले गाथाय एतादृश प्रयोगेर मूल जानिते पारा याइबे"—[पालिप्रकाशनो प्रवेशक. पृ० ५४]

जैनग्रंथ 'वसुदेवहिंडि' वगेरेमां अपभ्रंश पद्य अने गद्य

ए उपरांत जैनग्रंथ वसुदेव[165]हिंडि, आवश्यकचूर्णि[166], कुवलयमाला[167] वगेरे ग्रंथोमां पण स्पष्ट अपभ्रंश पद्यो विद्यमान छे.

---

१६५ वसुदेवहिंडिनी गाथा आ प्रमाणे छे:

"पासि कोप्पि चउरंसियं रेवाय(?) यपुण्णियं ।
नेडियं च गेण्हेमि मत्तिप्पभवग्गियं ॥"
—इत्यादि (वसुदे० प्र० भा० पृ० २८ पं० १ मु०)

१६६ "नंदो राया ण वि (णवनंदु नवि) जाणति जं सगडालो करेहिति ।
नंदो राया मारेविणु सिरियं रज्जे ठवेहिइ ॥"
—(जिनदासग० आव० चू० पृ० १८४) 'आ गाथा नाना बालको बोले छे' एम चूर्णिमां कहेलुं छे.

"न दुक्करं तोडिय (तोडितु) अंबलुंबिया
न दुक्करं नच्चिउ सिक्खियाए ।
तं दुक्करं तं च महाणुभावं
जं सो मुणी पमयवणम्मि वुच्छो ॥
—आवश्यकचू० पृ० १८७

१६७ "जो जसु माणुसु वल्लहउ तं जइ अन्नु रमेइ ।
जइ सो जाणइ जीवइ वि तो तहु पाण लएइ ॥
इच्चमठजल्पाडंबरसद्दहिं पावइं माणसं दुक्खं ।
सज्जणु पुणु जाणइ जि खल-जल्पइं सहावइं ॥
(कुव० हस्तलि० अप०)

कुवलयमालामां तो सुंदर संदर्भवाळुं गद्य[168] अपभ्रंश पण मळे छे. कुवलयमाला विक्रमना नवमा[169] सैकानी गणाय छे. आवश्यकचूर्णि आशरे आठमा[170] सैकानी छे अने सातमा सैकाना विशेषणवती[171] ग्रंथमां जेनो उल्लेख छे एवो वसुदेवहिंडिग्रंथ पांचमा सैकाना उत्तरार्धमां अने छठ्ठानी शरूआतमां होय ए कल्पना अघटमान नथी.

उक्त जैन ग्रंथोनो समय

---

१६८ " सो च दुज्जणु कइसउ ? हूं, सुणउ जइसउ, पढमदंसणे चिय भसणसीलु पहिमांसासउ व्व। तहे मंडलो हि अपच्चभिण्णायं भसइ मयहिं च मासाइ असइ। खलो घइं मायहे वि भसइ चडप्फडंतहं चम्मट्ठिमासाइं असइ त्ति"। इत्यादि (कुव० हस्तलि० अप०)

१६९ कुवलयमालाना कर्ता उद्द्योतन अथवा दाक्षिण्यचिह्न, हरिभद्रसूरिने पोताना गुरु तरीके याद करे छे. हरिभद्रनो समय (विक्रम० ७५७–८२७) आठमो—नवमो सैको सुनिश्चित छे एटले हरिभद्रनी पासे प्रमाणनो अने अन्य शास्त्रनो अभ्यास करनारा कुवलयमालाना कर्ता दाक्षिण्यचिह्ननो समय नवमो सैको छे.

१७० आवश्यकचूर्णि अने नंदीचूर्णि ए बन्ने चूर्णिओना कर्ता जिनदासगणिमहत्तर छे. नंदी–चूर्णिनो समय तेना अंतभागमां—

"शकराज्ञः पञ्चसु वर्षशतेषु व्यतिक्रान्तेषु अष्टनवतिषु नन्दी–अध्ययनचूर्णिः समाप्ता" आपेलो छे. शकसंवत् ५९८ बराबर विक्रमसंवत् ७३३. आ उपरथी श्रीजिनदासगणिमहत्तरकृत आवश्यक–चूर्णिनो समय पण आठमो सैको ठरावी शकाय छे.

१७१ श्रीजिनभद्रगणि (आशरे सातमो सैको) प्रणीत 'विशेषणवती'मां 'वसुदेवहिंडि'नो उल्लेख नीचे प्रमाणे छे :

" सामाइयचुन्नीए उसभस्स धणादओ भवा सत्त।
होंति अ विंडिज्जंता वारस वसुदेवचरियम्मि ॥ ३१ ॥
सीहो सुदाढ नागो आसग्गीवो य होइ अन्नेसिं।
सिद्धो मिगद्धओ त्ति य होइ वसुदेवचरियम्मि "॥ ३३ ॥
—पृ० ६ (प्रकाशक ऋषभ० के० रतलाम)

आ रीते जैनग्रंथोना समयमानथी अपेक्षाए साहित्यिक अपभ्रंश वि. ना पांचमा सैकाना उत्तरार्ध सुधी सहेजे खंचाय छे.

हवे अहीं महायान परंपराना उक्त ललितविस्तर वगेरेना समय विशे थोडो विचार करी लईए.

'ललितविस्तर' नो समय

मोघम रीते एवुं मानवामां आवे छे के, विक्रम पूर्व लगभग बसो वर्षथी मांडीने विक्रम संवत चोथी शताब्दीना गाळामां ललितविस्तर वगेरे ग्रंथो लखाया होवा जोईए. ललितविस्तर पुराणनी रचनाने मोडामां मोडी चोथा सैकानी मानीए तो साहित्यिक अपभ्रंशनो समय ललितविस्तर पूर्वे एकाद सैको तो मानवो जोईए. कोई पण चालु भाषाने साहित्यिक-रूपे आवतां ओछामां ओछो एकाद सैको तो लागी ज जाय ए तद्दन स्वाभाविक कल्पना छे. आ रीते जोतां एम थाय के बोलचालनुं अपभ्रंश पालि, आर्षप्राकृत के अर्धमागधीनुं निकटवर्ती छे अने बोलचालना अपभ्रंश पछी साहित्यिक अपभ्रंशनो आविर्भाव घटमान भासे छे. समयनी दृष्टिए साहित्यिक अपभ्रंशनो शैशवकाळ विक्रमनो त्रीजो सैको, किशोरकाळ चोथो सैको अने पांचमा सैका पछीथी तेनो खिलतो यौवनकाळ मानी शकाय.

बोलचालनुं अपभ्रंश

साहित्यिक अपभ्रंशनो समय

'अपभ्रंशप्रबंध' नो सूचक उक्त शिलालेख अने पांचमा–छठ्ठा सैकाना वसुदेवहिंडि ग्रंथमां आवतां अपभ्रंश पद्यो साहित्यिक अपभ्रंशनो जे समय सूचवे छे ते अने उक्त ललितविस्तरनां पद्यो द्वारा साहित्यिक अपभ्रंशनो जे विकासमान यौवनकाळ कल्पायो छे ते वच्चे विशेष अन्तर

१७२ " गाथाभाषा के समस्तग्रंथों का रचनाकाल खिस्तपूर्व दोसों वर्षों से ले कर खिस्त की तृतीयशताब्दी पर्यंतका है "—पाइअ० प्रस्ता० पृ० ४९.

रहेतुं नथी एटले साहित्यिक अपभ्रंश माटे साधारण रीते पांचमो सैको कहेवो होय तो ते माटे उक्त साधनो साधक छे.

अपभ्रंशनुं साहित्य

७३ साहित्यनी दृष्टिए जोईए तो अपभ्रंशनुं साहित्य विपुल छेः महाकवि चतुर्मुख, स्वयंभू, त्रिभुवन, तिलकमंजरीनो कर्ता जैन महाकवि धनपाल, भविसयत्तकथानो कर्ता बीजो जैन कवि धनपाल, पुष्पदंत, कनकामर अने जोइंदु वगेरे कविओए अपभ्रंश साहित्यने सरसरीते केळव्युं छे.

अवहट्ट अने अपभ्रंश

केटलाक कविओए अपभ्रंश भाषाने 'अवहट्ट'[१७३] (अपभ्रष्ट) शब्दथी पण कही छे ते 'अवहट्ट' अने उक्त 'अपभ्रंश' ए बे पदोना अर्थमां खास अंतर जणातुं नथी.

अपभ्रंशनुं वैविध्य

आ रीते जैन अने बौद्ध वगेरे कविओए समभावे अपभ्रंश भाषाने खिलववामां सरस फाळो आपेलो छे. देशभेदे के काळभेदे अपभ्रंशमां पण तारतम्य देखाय खरुं, अने एम छे माटे 'शौरसेन अपभ्रंश' 'मागध अपभ्रंश' 'पैशाच अपभ्रंश' वगेरे प्रांतिक अपभ्रंशोने जुदां जुदां गणावी शकाय. तात्पर्य ए के, जेम एक सर्वसाधारण 'प्राकृत' छे अने तेना

---

१७३ संदेशकरासना प्रणेता मुसलमान कवि अद्दहमाने पोताना रासमां भाषाओनी गणना करतां 'अपभ्रंश'ने बदले अवहट्टय (अपभ्रष्टक) शब्द वापर्यो छेः "अवहट्टय-सक्कय-पाइयं च पेसाइयम्मि भासाए"—गाथा ६। अर्थात् अवहट्टय अपभ्रष्टक, संस्कृत, प्राकृत अने पैशाचिक एम भाषाओनां नाम लीधां छे.

मने लागे छे के 'संस्कृत' शब्द 'कृ' ना भूतकृदंत द्वारा नीपज्यो छे अने 'प्राकृत' शब्द पण 'कृ' ना भूतकृदंत 'प्रकृत'नो आभास करावे छे ते जोईने 'अपभ्रंश' भाषा माटे पण भूतकृदंतना रूपनी कल्पना करी 'अपभ्रंश'ने बदले 'अपभ्रष्टक—अवहट्टय' शब्दनी वपराश चालु थई होय.

प्रांतिक भेदो 'शौरसेन प्राकृत' 'मागध प्राकृत' वगेरे कहेवाया, तेम एक सर्वसाधारण 'अपभ्रंश' छे अने 'शौरसेन अपभ्रंश' वगेरे तेना पेटा भेदो गणाय. अहीं ए हकीकत याद राखवी जोईए के, मूलभेद अने प्रांतिक भेद वच्चे असाधारण अंतर रह्युं नथी.

राजशेखर अने मार्कंडेये जणावेला अपभ्रंशना भेदप्रभेदो

राजशेखरनी काव्यमीमांसा वगेरे अलंकारना ग्रंथोमां अपभ्रंशना 'नागर' 'टक्क' 'व्राचड' वगेरे भेदो गणावेला छे अने ए भेदगणनानी प्राचीन परंपराने अनुसरीने मार्कंडेये पण अपभ्रंशना अनेक भेदो सूचवेला छे. एम छतां य ते ते प्रत्येक पेटा भेदना विशिष्ट नमूना न जोवा मळे त्यांसुधी ए संबंधे शुं कही शकाय?

प्राकृत-संस्कृत अने अपभ्रंश ए त्रणे बहेनोमां परस्पर सद्भाव

तात्पर्य ए के, एक काळे जे भाषा आपणा देशमां सर्वत्र व्यापक हती अने वर्तमानमां जे फक्त साहित्यमां सचवायेली छे तेवी अपभ्रंश एक अखंड भाषा छे, तेनो मूळ संबंध वैदिक युगना उक्त स्वरूपवाळा आदिम प्राकृत साथे छे. जेम प्राकृत अने संस्कृत बे बहेनो छे तेम अपभ्रंश ए तेमनी त्रीजी बहेन छे. ए त्रणे बहेनोमां परस्पर अत्यंत सद्भाव अने गाढ संपर्क होवाथी एकनी शोभा बीजीमां अने बीजीनी शोभा त्रीजीमां एम आव्या करे छे. आम छे माटे ज ललित-

---

१७४ नागर अपभ्रंश, व्राचड अपभ्रंश, उपनागर अपभ्रंश ए त्रण भेदोने, मार्कंडेय, प्रधान समजे छे. आ उपरांत लाट, वैदर्भ, बार्बर, आवंत्य, पांचाल, टाक्क, मालव, कैकय, गौड, औड्र, पाश्चात्य, पाण्ड्य, कौंतल, सैंहल, कालिंग्य, प्राच्य, कार्णाटक, काञ्च्य, द्राविड, गौर्जर, आभीर, मध्यदेशीय, वैतालिकी वगेरे सत्तावीश भेदोने जणावे छे-(जुओ मार्कंडेय प्राकृतस० पृ० २ विझागा०)

विस्तरनां[175] प्रांजल संस्कृत प्रवाहमां ए अपभ्रंश पद्योनी शोभा भळी गयेली छे. भाषाना सौष्ठवमाटे एवी शोभानो आश्रय सौ[176] कोई ले छे ए वात जाणीती छे.

---

१७५ ललितविस्तरमहापुराणनो गद्यभाग सरळ संस्कृतमां छे अने पद्यभाग अपभ्रंश भाषामां छे. तेमां आवेलां पद्यो पण ओछां नथी, जेटलुं स्थान गद्ये रोक्युं छे तेटलुं ज पद्योए रोक्युं छे. तेना गद्यभागनी प्रांजल प्रवाहरूप संस्कृत-भाषानो नमूनो आ प्रमाणे छे:

"ततः छन्दकः कण्ठकम् आभरणानि च आदाय अन्तःपुरं प्राविक्षत्। ततः तानि आभरणानि चिरेण कालेन भद्रिकस्य शाक्यकुमारस्य महानाम्नः—अनिरुद्धस्य च अवध्यन्त स्म। तानि महानारायणसंघटनकायार्थम् अन्ये न शक्नुवन्ति स्म धारयितुम्। यदा न कश्चित् तानि धारयितुं शक्नोति स्म तदा महाप्रजापत्या गौतम्या चिन्तितमभूत्—यावदहम् इमानि आभरणानि पश्यामि तावद् मम हृदये शोको भविष्यति यन्नु (यन्नु) अहम् इमानि आभरणानि पुष्करिण्यां प्रक्षिपेयम्–इति। ततो महाप्रजापती गौतमी तानि आभरणानि पुष्करिण्यां प्रक्षिपति स्म। अद्यापि सा 'आभरणपुष्करिणी' इत्येवं संज्ञायते।" तत्रेदमुच्यते:—

निष्क्रान्तु शूरो यद विदु बोधिसत्त्वो
नगरं विबुद्धं कपिलपुरं समग्रम्।
मन्यन्ति सर्वे शयनगतो कुमारो
अन्योन्यहृष्टाः प्रमुदित आलभन्ते॥

—ललितविस्तर–अभिनिष्क्रमणपरिवर्त पृ० २२९–२३०

१७६ जेम केटलाक लोकभाषामय ग्रंथोमां संस्कृत वा संस्कृत जेवी शैली भळवाथी विशेष शोभा आवे छे तेम ललितविस्तरना प्रांजल संस्कृतमां लोक-भाषानी रचनाओ भळवाथी विशेष सौष्ठव आवेलुं छे. प्रबंधचिंतामणि वगेरे प्रबंधग्रंथोनी अने एवा बीजा कथाग्रंथोनी रचनाशैली जोनाराओ आ हकीकत तुरत समझी शकशे.

लोकभाषामय रास वगेरेमां जे रीते संस्कृत शैली भळेली छे तेना नमूना आ प्रमाणे छे:

" आदि देव प्रनम्य नम्य गुरुयं वानीय बंदे पयं ।
सिष्टं धारन धारयं वसुमती लच्छीस चर्नाश्रयं ॥
तं गुं तिष्टति ईस दुष्ट दहनं सुरनाथि सिद्धिश्रयं ।
थिर्चाचर जंगम जीव चंद नमयं सर्वेस वरदामयं ॥" —पृ० १

" सुष्षासार विहार सार सुसुधा अच्छा सुधा सोधिनी ।
सेतं चीर सरीरनीर गहिरा गौरी गिरा जोगिनी ॥
वीनापानि सुवानि जानि दधिजा हंसारसा आसिनी ।
लंबोजा चिहुरार भार जघना विघ्ना घना नासिनी ॥" —पृ० १९

" परात् परतरं यांति नारायणपरायणं ।
न ते तत्र गमिष्यंति ये दुष्यंति महेश्वरं ॥ " —पृ० २२

" गंगाधा प्रफुल्लत वदन गगनं स्वच्छी उमा धौ धरं ।
" भंगं भूतकपाल माल असितं पंजंति माला हरं ॥
चर्मेमध्य विभूति भूतिस्युतं विभ्भूति मायाकमं ।
पापं विहरति सुषि आपनवियं वीयं परं देवयं ॥ " —पृ० २२

(पृथ्वीराजरासो—नागरीप्रचारिणी० बनारस)

बीजो नमूनो तुलसीदासजीरचित रामायणनो—

" नमामीश घन ज्ञान रघुवंशदासं
सदानन्ददाता सुविद्याप्रकाशं ।
विदार शैलनीलं कृपालुं निवासं
चरणाम्बुजं सेवितं पापनाशम् ॥ "

" प्रसन्नाननं नीलवदनं सुश्यामं
नमो पाहि शरणं सुरामाभिरामं ।
भाष्यो उमानाथ यशोनाथ नामं
देव्यो कृपासिंधुको रामधामम् ॥ "

(रामाश्वमेध—लवकुशकांड पृ० ११९८ क्षेम०)

" वेगवंत मारुत सरिस बुधिबल रूपनिधान ।
एवमस्तु कह ऋषि गये केशरि सुनि सुख मान ॥ ४८ "

—किष्किंधा कांड पृ० ६४१ (निर्णय०)

संस्कृत बहेन संपत्तिशाली छे, तेनां आभूषणो पण तेवां ज महामूल्य छे. परंतु ते बहेन लोकव्यापक नथी थई त्यारे प्राकृत अने अपभ्रंश ए बन्ने बहेनो साधारण छे. तेमनां आभूषणो साधारण छे परंतु ते बन्ने बहेनो लोकव्यापक थयेली छे. लोकमां संपत्तिशालिनुं प्राधान्य अने साधारण जननुं अप्राधान्य प्रवर्ते छे, परंतु भाषामां तेम नथी. भाषामां तो संपत्तिशाली भाषा साधारण भाषानो पण आश्रय ले छे अने साधारण भाषा संपत्तिशाली भाषानो पण शृंगार पहेरे छे.

गुजरातीनी माता उक्त अपभ्रंश. व्यापक प्राकृत मोटी माशी अने संस्कृत नानी माशी. गुजरातीनी मातामही वैदिकयुगनुं आदिम प्राकृत

आपणी गुजराती भाषानी मा उक्त अपभ्रंश भाषा छे अने व्यापक प्राकृत तेनी मोटी माशी छे, अने संस्कृत तेनी नानी माशी छे. वैदिकयुगनुं आदिमप्राकृत, ए बधीनी माता छे अने गुजरातीनी मातामही छे. मातामहीनो संपर्क परंपराए छतां गुजरातीए पोतानी मातामहीनो वारसो जाळवी राख्यो छे.

गुजरातीमां मातामहीनो वारसो

'आ' के 'ए' अर्थे वपरातो प्रचलित गुजरातीनो 'ई'[१७७] शब्द, 'इवँ' अर्थे वपरातुं चालु गुजरातीनुं 'न' अव्यय, 'मोटाइ' वगेरेमां आवतो भाववाचक 'ऑइ' प्रत्यय अने 'पांच वरसनो' वगेरे प्रयोगोमां आवतो 'न' प्रत्यय—ए बधुं ए मातामहीना पारंपरिक धावणनुं परिणाम छे.

---

१७७ काठियावाडमां 'ई' शब्दनो व्यवहार सुप्रतीत छे: 'ई आव्यो' 'ई नथी' 'ई छे' वगेरे.

१७८ 'चांदो न होय' 'कणे न होय' 'जम न होय' वगेरे वाक्योमां 'न' नो 'इव' अर्थ जाणीतो छे.

१७९ जुओ पृ० ६८–६९ [३७–३८]

आमुखनी शरूआतमां (पृ० १४–) भाषाभेदनां निमित्तोनी चर्चा विशेष विस्तारथी करी छे. पछी वैदिक वाणी साथे ज व्यापक प्राकृतनो गाढ संबंध छे, ए हकीकत अनेक उदाहरणो अने युक्तिओ द्वारा स्थापित करी बतावी छे. अने साथे साथे 'प्रकृतिः संस्कृतम्' एटले लौकिक संस्कृत तथा प्राकृत वच्चेना कार्यकारणभाववाळा मतने उपेक्षापात्र ठराव्यो छे अने ते मतने संगत करवानी दृष्टि पण सूचवी छे. व्यापक प्राकृतनुं प्रभव स्थान वैदिक युगनुं आदिम प्राकृत छे—नहीं के लौकिक संस्कृत—ए अहीं प्रधान सिद्धांत छे.

आमुखनो उपसंहार

संस्कृत उपर व्यापक प्राकृतनी केवी प्रबळ असर थयेली छे ए बताववा माटे प्राचीन अने अर्वाचीन अनेक उदाहरणो बतावी व्यापक प्राकृतनुं प्रभुत्व सूचित कर्युं छे. अने प्राकृतनो साथे संस्कृतनो संबंध एक बहेन जेवो वर्णवी बताव्यो छे. पछी व्यापक प्राकृतना अवान्तर भेदो—पालि वगेरेनुं साधारण स्वरूप, देश्यप्राकृतनुं स्वरूप अने छेक छेल्ले साहित्यिक अपभ्रंशना समय विशे पण ऊहापोह करी लीधो छे.

७४ आगळ कह्या प्रमाणे अहीं मारे बारमा सैकाथी अढारमा सैका सुधीनी गुजराती भाषानी उत्क्रांति विशे प्रधानपणे कहेवानुं छे अने ते हेमचंद्रे घडेला अपभ्रंशना गजने मापे मापी बताववानुं छे, एथी हवे पछी प्रचलित गुजरातीनी माता अपभ्रंशना स्वरूपनी चर्चा क्रमप्राप्त छे.

हेमचंद्रना समयनी लोकभाषानी हेमचंद्रे आपेली समझूती

भाषानुं स्वरूप साहित्यद्वारा अने व्याकरणद्वारा पण जाणी शकाय छे. व्याकरणनुं साधन उपलब्ध छे, तेथी साहित्यने डोळवानी अपेक्षा नथी. व्याकरणनुं संपूर्ण साधन पण फक्त एक हेमचंद्रकृत अपभ्रंश प्रक्रिया ज छे. हेमचंद्रे जे अपभ्रंशप्रक्रिया बतावी छे तेने हुं तेमना समयनी प्रचलित लोकभाषानी अथवा जाती गुजरातीनी प्रक्रिया समझुं

छुं अने ते, प्रचलित गुजरातीनी माता छे. व्याकरण उपरांत हेमचंद्रे पोते कुमारपालचरितमां केटलांक पद्यो पण रचेलां छे. तेने हुं साहित्यिक ऊगती गुजरातीनां प्रथम पद्यो कहुं तो मने ए वधारे पडतुं भासतुं नथी अने शरूआतमां जे में हेमचंद्रने गुजरातीना पाणिनि अने वाल्मीकि कह्या छे ते तेमना ते व्याकरण अने पद्योनी अपेक्षाए ज कह्या छे.

तेमनां पद्योनो नमूनो आ नीचे आपुं छुं:

हेमचंद्रना शब्दोमां ते लोकभाषानो नमूनो

" अम्हे निंदउ कोवि जणु अम्हइं वण्णउ कोवि।
अम्हे निंदहुं कं वि न वि न अम्हइं वण्णहुं कं वि ॥३७॥
मइं मिल्लेवा भवगहणु मइं थिर एही बुद्धि।
मत्था हत्थउ सुगुरु मइं पावउं अप्पहो सुद्धि ॥ ३८॥
अम्हेहिं केण वि विहिवसिण एहु मणुअत्तणु पत्तु।
मज्झु अदूरे होउ सिवु महु वचउ मिच्छत्तु ॥ ३९॥
अम्हहं मोहपरोहु गउ संजमु हुउ अम्हासु।
विसय न लोल्मि महु करहिं म करहि इअ वीसासु ॥ ४०॥

---

१८० आ पद्यो ऊगती गुजरातीनां छे. तेनो चालु गुजरातीमां बिंब-प्रतिबिंब न्याये जे अक्षरशः अनुवाद थाय छे ते आ प्रमाणे छे:

अमने निंदो कोई जण अमने वर्णो कोई।
अमे निंदशुं कोइने नवि न अमे वर्णवशुं कोई ॥
में (मारे) मेलवुं भवगहन मेंमां थिर एह बुद्धि
माथे हाथो सुगुरु, में पामुं आपनी शुद्धि ॥
अमे केणे बी विधिवशे एह मनुजपणुं पाम्युं।
मुज अदूरे हो शिव मुज वयुं जाओ मिथ्यात्व ॥
अमेनो मोहप्ररोह गयो संजम हुओ अममां।
विषय न लोल्ता मुज करे म कर ए विश्वास ॥

रे मण ! करसि कि आलटी विसया अच्छह दूरि ।
करणइं अच्छइं संचिअइं कलुइं सिवफलु भूरि ॥ ४१ ॥

इण परि अप्पउ सिक्खविसु तुह अक्खहुं परमत्थु ।
सुमरि जिणागम धम्मु करि संजमु वचु परमत्थु ॥ ४२ ॥

किम्वँ जम्मणु केम्वँ य मरणु किह भवु किव निव्वाणु ।
एहउ तेण परिजाणियइ जसु जिणवयण प्रमाणु ॥ ५० ॥

जांम्व न इंदिय वसि ठवइ तांम्व न जिणइ कसाय ।
जाउं कसायहं न किउ खउ ताउं न कम्मविघाय ॥ ५३ ॥

चंचल संपय ध्रुवु मरणु सव्वु वि एम्व भणेइ ।
मिलिवि समाणु महामुणिहिं पर संजमु न करेइ ॥ ६२ ॥

तित्थि वि अच्छउ अहव वणि अहवइ निअगेहि वि ।
दिवे दिवे करइ जु जीवदय सो सिज्झइ सव्वो वि ॥ ६४ ॥

रे मन ! करे छे केम आळ विषयो छो दूरे ।
करणो छे संचियां काळुं शिवफल भूर ॥
एणी परे आपने शीखव, तुंने कहिए परमार्थ ।
समर जिनागम धर्म कर संयम जा (कर) परमार्थ ॥
केम जनम केम मरण केम भव केम निर्वाण ।
एहवुं तेणे परिजणाय जास जिनवचन प्रमाण ॥
जाम न इंद्रिय वशे ठवे ताम न जिणे कषाय ।
जाव कषायोनो न कियो क्षय ताव न कर्मविघात ॥
चंचळ संपदा ध्रुव मरण सउ–सर्व वी एम भणे ।
मिली–मळी समान (साथे) महामुनिओने पण संजम न करे ॥
तीर्थे वी छो अथवा वने अथवा निजगेहे वी ।
दिए दिए (दिने दिने) करे जे जीवदया सो सीझे सउ वी ॥

सग्गहो–केहिं करि जीवदय दमु करि मोक्खहो–रेसि ।
कहि कसु–रेसिं तुहुं अवर कम्मारंभ करेसि ॥ ७० ॥
कायकुडुल्ली निरु अथिर जीवियडउ चल्लु एहु ।
ए जाणिवि भव–दोसडा असुहउ भावु चएहु ॥ ७२ ॥
ते धन्ना कन्नुल्लडा हिअउल्ला ति कयत्थ ।
जे खणिखणि वि नवुल्लडअ घुंटहिं धरहिं सुअत्थ ॥ ७३ ॥
पइठी कन्नि जिणागमहो वत्तडिआ वि हु जासु ।
अम्हारउं तुम्हारउं वि एहु ममत्तु न तासु ॥ ॥ ७४ ॥
—(कुमारपाल चरित–आठमो सर्ग–प्राकृत द्व्याश्रय)

उक्त पद्योनी नीचे ज तेमनुं चालु गुजरातीमां प्रतिबिंब आपेलुं छे. ए ऊपरथी स्पष्ट समझी शकाय एम छे के–ए पद्योनी भाषा, वर्तमान गुजरातीना वलण तरफ केटला वेगथी गति करी रही छे.—

हेमचंद्रनां पद्योनी भाषा अने वर्तमान गुजराती भाषा

अम्हे–अमे, निंदउ–निंदो, कोवि–कोई, वण्णउ–वर्णवो, जणु–जन, मिल्लेवा–मेलवुं, एही–ए, पावउं–पामुं, संजमु–संजम–संयम, मण–मन, रुंधिअइं–रुंधिआं–रुंध्यां, कड्ढउं–काढुं, इणिपरि–एणीपेरे, सुमरि–सुमर्य–सुमर–समर्य–समर. किम्व–केम, प्रम्वाँणु–प्रमांण, वसि–वशे, खउ–खो, एम्व–एम, भणइ–भणे–(कहे), मिलिवि–मळी–मळीने, पर–पण, वणि–वने, गेहे–गेहे (घरे), कायकुडुल्ली–कायकोटडली, जीवियडउ–

स्वर्ग माटे करे जीवदया दम करे मोक्ष माटे ।
कहे कोने माटे तुंह ओर कर्मारंभ करे छे ॥
कायकोटडली निरु अथिर जीवितडुं चळ एह ।
ए जाणी भवदोषोने अशुभ भाव तजेह ॥
ते धन्य कानलडा हैयलडां ते कृतार्थ ।
जे क्षणेक्षणे वी नवलडा घुंटे (पीए) धरे श्रुतार्थ ॥
पेठी काने जिनागमनी वातडी वी जास ।
अमारुं तमारुं वी एह ममत न तास ॥

जीवितडुं, जाणिवि—जाणी—जाणीने, पइठी—पेठी, वत्तडिआ—वातडी, अम्हारउं,—अमारुं, तुम्हारउं—तमारुं, एहु—ए.

उक्त शब्दोमां प्रथम शब्द हेमचंद्रनो छे, ते पछीनो चालु गुजरातीनो छे अने ते पछी धनुपचिह्नमां क्यांय ते मूळशब्दनो अर्थ मूकेलो छे. ७२ मा पद्यमां आवेलुं 'घुंटहिं' क्रियापद 'पीए छे' नो अर्थ सूचवे छे. धात्वादेशना प्रकरणमां हेमचंद्रे 'पा'—(पीवुं) धातुने बदले 'घोट्ट' धातु वापरवानी भलामण करी छे: "पिबेः पिज्ज—डल्ल—पट्ट—घोट्टाः— [८—४—१०]—सूत्रोक्त ते 'घोट्ट' धातु, देश्य जणाय छे. 'पिब' नो आदेश नथी. हेमचंद्र अहीं वापरेलो 'घुंट' धातु, उक्त 'घोट्ट' नुं रूपान्तर छे अने ते गुजराती 'घुंटडो' के 'घुंट' शब्दमां सचवायेलुं छे. वळी, बीजा 'इणि परि' वगेरे शब्दो तो चोक्खा गुजराती ज छे. माटे हेमचंद्रनां ते पद्योने गुजराती भाषाना जन्म काळनां कहुं छुं.

एमना समयमां एमना देशनुं नाम 'गुर्जरत्रा' जाणीतुं हतुं, परंतु भाषा माटे हजु ए शब्द रूढ थयो नहोतो एम लागे छे. दाक्षिण्यचिह्न वा उद्द्योतनसूरिनी कुवलयमाळामां एक बे स्थळे गुर्जरोनी भाषानो नमूनो मूकेलो छे. ए उपरथी भाषाना स्वरूपनो स्पष्ट ख्याल आवे एम नथी. छतां गुर्जरो जे भाषाने बोलता हशे ते भाषाने क्या विशेष नामथी ओळखवी ? ए प्रश्न तो थाय छे ज. एनो उकेल करवानां विशेष साधनो उपलब्ध नथी छतां ए बाबत उक्त कुवलयमाळानो उल्लेख[१८१] जे थोडो घणो प्रकाश नाखे छे ते आ प्रमाणे छे—

कुवलयमाळामां आवेलो गुज्जरो लाटो अने मालवोनी भाषानो उल्लेख

१८१ आ उल्लेख घणो लांबो छे. तेमां अनेक देशना लोकोनी भाषानां जुदां जुदां पदोनां उदाहरण छे. तेमांथी अहीं तो मात्र गुज्जर, लाट अने मालव लोकोनी भाषानां ज उदाहरण मूकेलां छे. जे पदो जाडा अक्षरमां मूक्यां छे ते, भाषानां पदो छे. पहेली गाथामां गुज्जर पछी लाट अने पछी मालव प्रवासी बोले छे. आ लांबा उल्लेख माटे जुओ विद्यापीठ प्रकाशित प्राकृतव्याकरणनी प्रस्तावना पृ० २०—२३ टिप्पण.

" धणलोणियपुट्ठंगे धम्मपरे संधिविग्गहे निउणे ।
'न उ रे भल्लउं' भणिरे अह पेच्छइ गुज्जरे अवरे ॥ "
" ण्हाओलित्तविलित्ते कयसीमंते सोहियंगत्ते ।
'अम्हं काउं तुम्हं'—भणिरे अह पेच्छइ लाडे ॥ "
" तणुसाममडहदेहे कोवणए माणजीवणे रोद्दे ।
भाइ य भइणी तुब्भे—भणिरे अह मालवे दिट्ठे[१८२] ॥ "

उपर्युक्त उल्लेखोमां 'जुदा जुदा देशना वाणियाओ जुदी जुदी भाषा बोले छे' ए बाबतनुं सूचन छे. पहेलो उल्लेख गुर्जर बोलनाराओनो छे, पछी लाट अने मालव बोलनाराओनो छे. (गुर्जर वगेरेए बोलेला शब्दो जाडा अक्षरमां मूकेला छे)

अपभ्रंश अने प्रांतिक भाषाओ

जे वखतनो आ उल्लेख छे ते समये बोलचालनी प्रधान भाषा अपभ्रंश हती पण ए प्रधान अपभ्रंशना प्रवाहमां, कारणमां कार्य सत होय छे ए रीते सद्रूपे रहेली प्रांतिक भाषाओ कारणथी जेम कार्य पृथक थाय तेम जुदी पडी माता-अपभ्रंशनुं स्थान लेती जती हती. एटले ज कुवलयमालाकार गुर्जरोनुं, लाटोनुं अने मालवोनुं संभाषण जुदुं जुदुं टांकी बतावे छे. ए वात पण खरी छे के, ए वखते भाषा माटे

---

१८२ उपर्युक्त त्रणे पद्योनो अर्थ अनुक्रमे आ प्रमाणे छे:

हवे, धन अने माखणद्वारा जेओनुं अंग पुष्ट छे, जेओ धर्मपरायण छे, संधि अने विग्रहमां निपुण छे तथा जेओ " न उरे भल्लउं— " —'नोरे भलुं' एम बोलनारा छे एवा बीजा गुज्जरलोकोने जुए छे. १

हवे, स्नान अने विलेपनथी विलिप्त (?), तथा सेंथावाळा अने सुशोभित शरीरवाळा " अम्हं काउं तुम्हं "—'अमारुं तुमारुं शुं (?)' एम बोलनारा लाटोने जुए छे. २.

हवे, काळा अने मोटा पातळा शरीरवाळा, खारीला, मानपूर्वक जीवनारा, रौद्र तथा " भाइ य भइणी तुब्भे " —'भाई अने बेन तमे' एवुं बोलनारा मालवी लोकोने दीठा ३.

गुर्जरी, लाटी के मालवी शब्दो रूढ रीते नहीं वपरायेला. परंतु संभव छे के समग्र जनपदनी एकतासूचक 'देशी भाषा' एवो कोई त्यारेके शब्द चालतो होय. ए समयनी देशी भाषाओ एकरूपक होवा छतां उच्चारणवैचित्र्यने लीधे अंशतः विविक्तप्राय हती एटले ज कुवलयमालाकार ते वर्गोनी जुदी जुदी वाणी वनावे छे. ते वर्णमांनो गुर्जर जे वाणी बोल्यो छे ते भले ते समये 'देशी भाषा' के एवा बीजा कोई सामान्य नामथी ओळखाती होय, परंतु त्यार पछीना समये चालती ए ज वाणीने 'गुर्जरी' वा 'गुजराती' ना अभिधानने योग्य कहेवामां वाध नथी.

अंतिम अपभ्रंश के ऊगती गुजराती

कुवलयमालाना कर्ता पछी आ० हेमचंद्र आशरे त्रण सैका बाद आवे छे. विद्वानो हेमचंद्रना समयमां जे लोकभाषा प्रचलित हती तेनुं नाम 'अंतिम अपभ्रंश' आपे छे. मारा नम्र कथन प्रमाणे तेओ जे भाषाने 'अंतिम अपभ्रंश' कहे छे ते ज आ आपणी ऊगती गुजराती छे.

१८३ छेक सोळमा, सत्तरमा अने त्यार पछीना सैकाना पण कविओ आपणी भाषा माटे यौगिकार्थी अने व्यापक 'प्राकृत' शब्द वापरे छे त्यारे अमुक अमुक कविओ 'गुर्जरभाषा' शब्द वापरे छे. एथी एम जणाय छे के गुजरातनी भाषा माटे प्रांतिकतासूचक 'गुजराती भाषा' शब्द घणो मोडो रूढ थयेलो होय:

(१) "संस्कृत में जाण्यूं नहीं जाणी प्राकृत वाण"–नाकरकवि.

(२) "प्राकृत भाषाए मुणीने कह्युं मधुसूदन"–मधुसूदन कवि.
(कविचरित–रा० रा० के० का० शास्त्री. गु० व० पृ० २०३, २२५)

(३) "गुर्जर भाषाए नलराना गुण मनोहर गाऊं"–भालण (उक्त कविच० पृ० ९८)

(४) "संस्कृत मांहिथी सो॥......गुजरभाष्य"–शामलदास (हस्तलि० पु० यादी भा० २, रा० रा० अंबालाल बु० जानी. फा० गु० पृ० ३७)

(५) "हीरे जड्यूं सोहे हेम॥ प्राकृत उपर परठ्युं तेम"–केशवदास (उक्त यादी पृ० ५९)

(६) "करो प्राकृत शु प्रीतमां इष्ट उपार्गा एह"–शामलभट्ट (उक्त यादी पृ० ५२)

'गुजराती' के 'गुजराती योद्धो' ना अर्थमां आ० हेमचंद्रे 'गुज्जर' शब्दनो प्रयोग अनेकवार कर्यो छे. परंतु भाषा माटे ए शब्दनो प्रयोग आ० हेमचंद्रे के ते समयना बीजा विद्वाने कर्यो होय एम जाण्युं नथी. 'देशी-राग'नो सूचक '[185]गुर्जरी' शब्द छे, किन्तु तेवा अर्थमां वपरायेला 'गुर्जरी' नो प्रयोग सौथी प्रथम कोणे कर्यो छे ते जाणवानुं साधन नथी. उक्त '[186]गुर्जरी' शब्दनो संबंध गुज्जर लोको वा गुज्जरदेश साथे छे एटले राग माटे जेम 'गुर्जरी' शब्द वपरायो छे तेम भाषा माटे ए शब्द ते वखते केम नहीं वपरायो होय? ए शोधनीय तो खरुं ज.

'देशीराग' अने 'मेळो' अर्थनो गुर्जरी शब्द

जे माटीमांथी घडो नीपजतो होय ते माटीने अंतिम माटी कहो के 'घडो' कहो ए बधुं सरखुं छे तेम हेमचंद्रना समयनी 'अंतिम

---

१८४ "गुज्जरदलम्मि"—गूर्जरसैन्ये–प्रा० द्व्या० सर्ग ६ श्लो० ५९.
"लज्जिरगुज्जरेहि"—लज्जनशीला ये गुर्जराः तैः—सर्ग ६ श्लो० ६५.
"गुज्जरलोओ"—गूर्जरलोकः—सर्ग ६ श्लो० ६८.

१८५ हिंदीशब्दसागरमां 'गुर्जरी' रागनो परिचय आ प्रमाणे छेः "भैरव रागकी स्त्री। यह संपूर्ण जातिकी रागिनी है। इसमें तीव्र मध्यम और शेष सब स्वर कोमल लगते हैं। यह रामकली और ललितको मिला कर बनती है इसके गाने का समय दिनको १० दण्डसे १६ दंड तक है।
गुर्जरीनो बीजो अर्थ—"गुजरात देशकी स्त्री" पण ते कोशमां आपेलो छे.

१८६ फारसी भाषामां 'गुज़री' शब्द स्त्रीलिंगी छे. तेनो अर्थ 'मेळो' छे "वह बाजार जो प्रायः तीसरे प्रहर सड़कोंके किनारे लगता है" आ अर्थ 'गुज़री' शब्दनो छे (जुओ उर्दू-हिंदीकोश-हिं०) फारसी भाषामां "निकास–गति। निर्वाह–कालक्षेप, पैठ–पहुँच–प्रवेश"। अर्थमां नरजातिवाळो 'गुज़र' शब्द छे अने एवा ज अर्थवाळुं 'गुज़रना' क्रियापद छे अने एने मळतो 'गुज़रबसर' बोल पण छे. प्रस्तुत फारसी 'गुज़र' कोई स्वतंत्र ज शब्द छे के एनो संबंध 'गुर्जर' पद साथे छे ए विचारणीय खरुं.

अपभ्रंश' ना नामथी ओळखाती भाषा अहीं माटेनि रचने छे, अने ए, भाषामां अभिव्यक्तिस्वरूपे अंतर्भूत जूनी गुजराती 'घट' ने रचने छे. एथी ए 'जूनी गुजराती' ने 'कारण' शब्दथी कहेवा करतां अभिव्यक्ति, समान लक्षणोने लीधे 'कार्य' शब्दथी कहेवी ए वधारे सुगम भासे छे. माटे ज अहीं हुं हेमचंद्रे 'अपभ्रंश' ना नामथी नोंधेली भाषाने 'अंतिम अपभ्रंश' ने बदले 'जूनी गुजराती' एवुं विशिष्ट नाम आपुं छुं.

गुज्जरीनी वाणीनो नमूनो

७५ धर्मघोषसूरि नामना एक जैनाचार्य लगभग बारमा सैकामां ख्यात हता. तेमना शिष्ये तेमनी स्तुति ने परिचयनी प्रचलित भाषामां रचेल्यो छे. तेमां 'गुज्जरी' नी पासे नीचेनां पद्यो कहेवराव्यां छे:

"गुज्जरि[188] चोल्लइ चाल्लु प्रिय! मज्झु मणोरह पूरि।
देसण सुणहु सुहावणिय वंदविणु जससूरि ॥ ७ ॥
महियलि विमलउ सयलु जलु पय पहुतउ आसोय मासु
धम्मसूरि-केरउं चित्त जिम्व पय निम्मलु ठिउ आगासु ॥ ८ ॥

---

१८७ गायकवाड प्राच्यविद्यामंदिर तरफथी प्रकाशित थयेला पाटणना भंडारोना सूचिपत्रमां पृ० ३६६–३६७–३६८–३६९–३७० ऊपर श्रीधर्मघोषसूरि अथवा धर्मसूरिनी स्तुति छे. तेमां तेमनो परिचय आपेलो छे. ते स्तुति-परिचय तेमना शिष्य रविप्रभे रचेलो छे.

१८८ आ पद्यो ते ज सूचिपत्रमां पृ० ३७१ ऊपर छे. ते, 'बारह नावउं-छादश नाम अपभ्रंश' नामनी धर्मसूरिस्तुतिमां ७–८ मां छे. तेनुं वर्तमान गुजराती पद्य नीचे प्रमाणे छे:—

गुजरी बोले चालो प्रिय मुज मनोरथ पूर।
देशना सुणो सुहावणी वंदीने यशःसूर ॥
महितले विमल सकल जल, पं पहोंत्यो आसो मास
धर्मसूरिकेरुं चित्त जेम पं निर्मल थियुं आकाश ॥

बारमा सैकानी आ भाषा ऊगती गुजराती नथी एम कोण कही शकशे ?

७६ आचार्य हेमचंद्रे पोताना समयनी ऊगती गुजरातीने व्याकरण द्वारा नियंत्रित करवा जे जे नियमो आप्या छे ते बधानुं अहीं सविस्तर आलेखन आवश्यक छे, कारण के अहीं ते नियमोनी तुलना द्वारा ज बारमा सैकाथी अढारमा सैका सुधीनी गुजराती पद्य के गद्य एवी कतिपय कृतिओनी भाषानुं अवलोकन करवानुं छे:—

हेमचंद्रनुं ऊगती गुजरातीनुं व्याकरण

स्वरपरिवर्तन

(१) प्रायिक स्वरपरिवर्तन

(हेमचंद्रनां सूत्रोनां अंको)
८–४–३२९

'अ' नो आ—कच्च, काच (काच)
'ई' नो ए—वीण, वेण (वीणा)
'उ' नो अ, आ—बाह बाहा, बाहु (बाहु)
'ऋ' नो अ, इ, उ—तण, तिण, तॄण (तृण)
पट्ठ, पिट्ठ, पुट्ठ (पृष्ट)
सुकिद, सुकृद (सुकृत)

[पालि, आर्षप्राकृत के अर्धमागधीमां 'ऋ' नो उपयोग समूळगो नथी त्यारे अपभ्रंशमां तेनो उपयोग प्रचलित थाय छे जो के ते पण विरल छे.]

१८९ वैदिकसंस्कृतमां अने पाणिनीय संस्कृतमां 'ऋ' स्वरनो प्रयोग छे त्यारे पालि, आर्षप्राकृत, शौरसेनी, मागधी, पैशाची अने चूलिकापैशाचीमां 'ऋ' स्वरनो प्रयोग ज नथी. वळी पाछुं अपभ्रंशमां 'ऋ' नो प्रयोग चालु थाय छे. तृण, सुकृत वगेरे एनां उदाहरणो छे.

'ऌ' नो इलि—किलिन्नओ, किन्नओ (क्लृन्न)
'ए' नो इ, ई—लिह, लीह° लेह (रेखा)
'औ' नो अउ, ओ—गउरी, गोरी, (गौरी)

लघु उच्चारण
८–४–४१०

(२) लघु उच्चारण

व्यञ्जन साथे मळेला 'ए' अने 'ओ'नुं लघु उच्चारण थाय छे.

सुर्वे–(सुखेन)
दुल्लहो–(दुर्लभस्य)

८–४–४११ पदने छेडे आवेला उं, हुं, हिं अने हं नुं लघु उच्चारण थाय छे.

तुच्छउं–(तुच्छकम्)
तरुहुं–(तरुभ्यः)
जहिं–(यत्र)
तणहं–(तृणानाम्)

व्यंजनपरिवर्तन

(३) असंयुक्त अने अनादिस्थ व्यंजननुं परिवर्तन

---

१९० भाषामां प्रचलित 'लींटी' के 'लीटी' अने 'लींटो' के 'लीटो' ना मूळमां प्रस्तुत 'लीह' पद छे, वधू+टी–वधूटी. कच्छा+टी–कच्छाटी (काछडी) ग्राम+टी–ग्रामटी (गामडी) वगेरेनी माफक 'लीह' ने स्वार्थिक 'टी' लागतां 'लीहटी' पद थाय अने ते द्वारा लीटी, लींटी, लीटो अने लींटो ए बधां पदो आवे छे. वधूटी वगेरे माटे जुओ अभिधान–चिंतामणि कां० ३ श्लो० ६० तथा ३३९.

१९१ "'एको' 'सोत्तं' वगेरे प्रयोगोमां 'ए' अने 'ओ' एकमात्रिक छे एटले ह्रस्व छे" एम पोताना प्राकृतव्याकरणमां आचार्य शुभचंद्र जणावे छे तेम अहीं 'सुर्वे' अने 'दुल्लहो' वगेरे प्रयोगोमां वपरायेला 'ए' अने 'ओ' लघुउच्चारणवाळा एटले ह्रस्वरूप छे एम समजवानुं छे.

१९२ चालु गुजरातीमां-जइं, ज्यां, जहिं वगेरे प्रयोगो प्रचलित छे. अने ए ज प्रमाणे तहिं, कहिं, अहिं वगेरे पण छे.

८–४–३९६	'क' नो ग –	विच्छोहगरॅ[१९३] (विक्षोभकर)
	'ख' नो घ –	सुघ (सुख)
		मुघ (मुख)
	'त' नो द –	कधिदं[१९४] (कथित)
	'थ' नो ध –	कधिद (कथित)
		सवधें[१९५] (शपथ)
	'प' नो ब –	सबध (शपथ)
	'फ' नो भ –	सभल (सफल)
८–४–३९७	'म' नो वँ –	भमर, भवँर (भ्रमर)
८–४–४१२	'म्ह' नो म्भ –	गिम्भ, गिम्ह (ग्रीष्म)
८–४–४००	'य' नो इ –	आवयाँ–आवइ (आपत्)[१९६]

१९३ चालुभाषाना 'कद्यागरो' 'कामगरो' 'नगीनगर' वगेरे शब्दमां आवेलो अंत्य 'गर' अने 'विच्छोहगर'नो अंत्य 'गर' ए बन्ने समान लागे छे. फारसीभाषामां 'कारीगर' 'शीशागर' 'कलईगर' वगेरे शब्दोमां जे अंतिम 'गर' छे ते प्रत्ययरूप छे अने तेनो अर्थ 'करनेवाला या बनानेवाला छे' 'विच्छोहगर'नो अंतिम 'गर' अने फारसीनो उक्त 'गर' प्रत्यय ए बे वच्चे कांई साम्य छे के केम ? ए विचारणीय छे. 'विच्छोहगर' नो अंतिम 'गर' सं० 'कृ' उपरथी आवेला 'कर' नुं उच्चारणांतर छे. कर्मकर, सुखकर, दुःखकर वगेरे ए बधा शब्दोमां वपरायेलो अंत्य 'कर' अने अपभ्रंशनो उक्त 'गर' ए बन्ने समान छे.

१९४ 'कह्युं' ना अर्थमां जे 'कीधुं' पदनो प्रयोग काठियावाडमां प्रचलित छे. ते 'कीधुं' अने प्रस्तुत 'कधिद' ए बन्ने पदो सरखाववां जेवां छे. कधिदकं कधिअअं–किधिअउं–कीधउं–कीधुं.

१९५ 'सोगन' ना अर्थमां वपरातो 'सम' शब्द अने प्रस्तुत 'सवह' ए बन्ने सरखावी शकाय एम छे. सवह–संवह–सम.

१९६ "आपद्–विपद्–संपदां दः इः" सूत्रमां आचार्य हेमचंद्र 'आपद्' वगेरेना अंत्य 'द' नो 'इ' करवानी भलामण करे छे. भाषाविज्ञाननी दृष्टिए 'द'

विवया–विवइ (विपत्)
संपया–संपइ (संपत्)

'र' नो लोप अने वधारो

(४) 'र' नो लोप

८–४–३९८ संयुक्त व्यंजनमां पाछळ आवेलो 'र' विकल्पे लोपाय छे–पिय, प्रिय (प्रिय)

(५) 'र' नो वधारो[197]

८–४–३९९ कोई कोई पदमां 'र' वधाराल्पे आवी जाय छे–वास, व्रास (व्यास)

केटलाक शब्दो

(६) केटलाक शब्दो

८–४–४०२	जेह[198]	(यादृश)	जेहवुं–जेवुं
	तेह	(तादृश)	तेहवुं–तेवुं

नुं 'इ' उच्चारण थाय केवी रीते? 'द' अने 'इ' मां उच्चारणनी दृष्टिए लेश पण साम्य नथी. मने लागे छे. के—

संपदा—संपया–संपय–संपइ.
विपदा—विवया–विवय–विवइ.
आपदा—आवया–आवय–आवइ

आ प्रकारे 'संपइ' वगेरे शब्दो नीपजाववा भाषाविज्ञाननी दृष्टिए विशेष संगत भासे छे.

१९७ प्रस्तुत 'र' नो वधारो वैदिक प्रयोगोमां पण थयेलो छे त्यारे पाणिनीय संस्कृतमां एवा 'र' वधारावाळा प्रयोगो उपलब्ध नथी. वैदिकप्रयोगो माटे जुओ पृ० ५८ कंडिका [१७] प्रस्तुत व्याख्यान.

१९८ 'यादृश' वगेरे उपरथी 'जेह' 'जेहवुं' के 'जैसा' पद लाववा माटे नीचेनो क्रम सुघटित भासे छे:

केटलाक निपातो (७) केटलाक निपातरूप देश्य शब्दो—

	हेमचंद्रे कल्पेलां पदो:		अर्थ:
८–४–४२१	वुन्न	(विषण्ण)	विषादयुक्त
	वुत्त[202]	(उक्त)	कहेलुं
	विच्च	(वर्त्म)	वच्चे—मारगमां
८–४–४२२	घंघल	(झकट[203])	झगडो
	वहिल्लं[204]	(शीघ्र)	वहेलुं—शीघ्र
	विट्टाल	(अस्पृश्यसंसर्ग)	वटाळ—अस्पृश्यसंसर्ग
	द्रवक्क	(भय)	डर—भय
	अप्पण, अप्पणउं	(आत्मीय)	आपणुं
	द्रेहि	(दृष्टि)	दृष्टि—नजर
	निच्चट्ट	(गाढ)	असर करे तेवुं
	सड्ढल	(असाधारण)	असाधारण
	कोड्ड, कुड्ड,	(कौतुक)	कोड
	खेड्ड[205]	(क्रीडा)	क्रीडा—खेल

---

२०२ 'वच्+त'नी दशामां 'व' नो 'वु' थतां 'वुक्त' थाय अने ए द्वारा 'वुत्त'ने साधी शकाय अथवा 'प्रोक्त–पोक्त–पुत–वुत्त' एम बने.

२०३ . झंकट- ?

२०४ 'पथमिल्ल' (प्रथम) पद साथे 'वहिल्ल' ने सरखावी शकाय एम छे. पथमिल्ल–पहमिल्ल–पहिल्ल–वहिल्ल–प्रथमनुं–पहेलुं–वहेलुं–शीघ्र.

२०५ संस्कृत 'क्रीडा' वा 'खेला' पद साथे 'खेड्ड' ने सरखावी शकाय. "क्रीडा खेला च कूर्दनम्"–अमर० नाट्यवर्ग कां० १ श्लो० ३३.

रवण्णं[२०६]	(रम्य)	रम्य—सुंदर
ढक्करि	(अद्भुत)	आश्चर्य
हेल्लि[२०७]	(हे सखि !)	हे+आलि !—हे सखि ! —एलि !
जुअंजुअं[२०८]	(पृथक्पृथक्)	जुदंजुदं

२०६ 'रम्य' अने 'रवण्ण' करतां 'रमण' अने 'रवण्ण' ए बे शब्दो वच्चे विशेष समानता छे.

२०७ हेमचंद्र 'हे सखि !' शब्दनो 'हेल्लि' शब्द बनाववानी भलामण करे छे. भाषाविज्ञाननी रीते जोतां 'हे सखि' अने 'हेल्लि' ए बे पदो वच्चे अक्षरसाम्य नथी तेथी 'हे सखि' नुं 'हेल्लि' थाय ज केवी रीते? 'सखी' अर्थनो सूचक 'आलि' शब्द प्रसिद्ध छे. 'हे+आलि' अने 'हेल्लि' ए बे वच्चे अर्थनुं अने अक्षरनुं एम बन्ने रीते समानपणुं पण छे तेथी हे+आलि' उपरथी कोई रीते 'हेल्लि' पदने लाववुं अधिक सुगम जणाय छे.

अथवा

सं० एतन्—प्रा० एत. ए 'एत'ने स्वार्थिक इल्ल (८-२-१६४) प्रत्यय लगाडतां 'एतिल्ल' पद थाय, तेनुं बीजुं उच्चारण 'एइल्ल' पण थाय; ए 'एइल्ल' उपरथी भाषानो 'एलो' शब्द आवेलो छे. एलो एटले ए–पेलो. 'एला आम आव' 'एली आम आव' वगेरे वाक्योमां 'एला' तथा 'एली' नो प्रयोग प्रसिद्ध छे. 'हे+एइल्ली'–'हेल्लि' ए द्वारा पण प्रस्तुत 'हेल्लि' ने साधी शकाय.

२०८ 'पृथक्–पृथक्' शब्दनो आदेश, 'जुअंजुअ' छे एम हेमचंद्र कहे छे. अक्षरपरिवर्तनना नियमो जोतां कोई पण रीते 'पृथक्–पृथक्' नुं 'जुअंजुअ' एवुं रूपांतर संभवे नहीं. हेमचंद्रनुं कथन मात्र अर्थनी दृष्टिए संगत करी शकाय. अक्षरपरिवर्तननी दृष्टिए तो 'युतंयुत' शब्द द्वारा 'जुअंजुअ' शब्द साधी शकाय. हैमअनेकार्थसंग्रह कां० २ श्लो० १८६ मां 'पृथक्' अर्थनो वाहक 'युत' शब्द हेमचंद्र नोंधे छे. "युतः अन्विते पृथक्" प्रस्तुत 'युत' शब्द द्वारा 'एक्कमेक्क' 'अन्नमन्न' (हे० ८-३-१) नी पेठे 'युतंयुत' ने साधिए तो ते द्वारा 'जुअंजुअ' पद स्वाभाविकपणे आवी शके. प्रस्तुत 'युतंयुत' के 'जुअंजुअ' पदनी साथे तत्समानार्थक फारसी 'जुदाजुदा' शब्दनो कोई प्रकारनो संबंध छे के केम ए जरूर विचारणीय छे.

नालिअँ[९] वढ	(मूढ)	मूढ
नवखँ[१०]	(नव)	नोखुं-अनोखुं
दडवड	(अवस्कन्द)	झट अथवा धाड—धाडुं
छुडु	(यदि)	जो
मब्भीसी[११]	(मा भैषीः)	न बी—भय न पाम

२०९ 'नालिअ' अने 'वढ' ए बन्ने पदो 'मूढ' पदना समानार्थी छे. तेमां 'नालिअ' अने 'मूढ' वच्चे लेश पण अक्षरसाम्य नथी. एथी 'नालिअ' माटे मूळरूपे 'मूढ' पदने न कल्पाय. अनार्य—अनारिय—अनालिय—नालिअ आ रीते कदाच 'नालिअ' पद आव्युं होय. भाषानो 'अनाडी' अने प्रस्तुत 'नालिअ' ए बन्ने समान अर्थना वाहक छे. अथवा "नालीकः अज्ञे" इत्यादि कहीने आचार्य हेमचंद्रे सं० 'नालीक' शब्दनो 'अज्ञ—मूर्ख' अर्थ पण नोंधेलो छे (अनेकार्थ कां० ३ श्लो० ५२) ए ऊपरथी ए सं० 'नालीक' अने प्रस्तुत 'नालिअ' ए बे वच्चे सरखामणी थई शके एम छे अने 'मूढ' तथा 'वढ' ए बे वच्चे जे अक्षरसाम्य छे ते स्पष्ट छे. एथी 'वढ' नी साधनामां 'मूढ' पदनो उपयोग करवानो बाध नथी.

२१० 'नूतन'नी पेठे 'नवीन' अर्थनो द्योतक सं० 'नव' शब्द पण छे. नव+क (क—स्वार्थिक)—नवक. प्रस्तुत 'नवक' अने आ 'नवख' ए बे वच्चे विशेष साम्य छे.

२११ "सत्थावत्थहं आलवणु साहु वि लोउ करेइ ।
आदन्नहं मब्भीसडी जो सज्जणु सो देइ ॥"

अर्थात् "लोको, स्वस्थ अवस्थावाळाओने तो सारी रीते बोलावे चलावे छे परंतु सज्जन तो ते कहेवाय के जे दुःखीओने पण अभयवचन दे" ए अर्थवाळा उक्त पद्यमां 'अभयवचन' माटे 'मब्भीसडी' शब्द छे. हेमचंद्र 'मा भैषीः' क्रियापद साथे प्रस्तुत 'मब्भीसडी'ने सरखावे छे अने ए ज क्रियापद द्वारा 'मब्भीसा' पदने साधी बतावे छे. मने लागे छे के मा+भीषा—माभीषा 'मब्भीसा' ए रीते नाम द्वारा प्रस्तुत 'मब्भीसा' नामने साधवुं विशेष योग्य छे. भीति, भय अने भीषा ए त्रणे शब्दो 'भय' अर्थना सूचक छे. एथी मा+भीषा द्वारा 'मब्भीसा'ने साधवानी रीत व्याकरणनी दृष्टिए पण अबाधित छे. 'मब्भीसा'ने स्वार्थिक 'ड' लागतां स्त्रीलिंगी 'मब्भीसडी' पद साधवुं सुलभ छे.

जाइट्ठिआँ (यद् यद् दृष्ट तत् तत्) जे जे जोयुं ते ते
तरफ राचवानी वृत्ति

अनुकरण शब्दो (८) शब्दानुकरण
८-४-४२३ हुहुरु 'हुहुरु—हडड' शब्दनुं अनुकरण
घग्घइ ग्यारी वगने 'घचरक घचरक'
चेष्टानुकरण थता ध्वनिनुं अनुकरण
घुग्घिअ वांदरानी जेवी चपळतावाळी
चेष्टानुं अनुकरण
उट्ठबईस ऊठबेस—ऊठवुं अने बेसवुं क्रियानुं अनुकरण

पादपूरको (९) अर्थ विनाना पादपूरक पदो
८-४-४२४ घंइं

---

२१२ सं. यद्+दृष्ट+का = यद्दृष्टिका—प्रा० जाइट्ठिआ. प्रस्तुत 'जाइ-ट्ठिआ' अने प्रा० 'जाइट्ठिआ' वच्चे सरखामणी करी शकाय एम छे.

२१३ 'एहिरेयाहिरा' एवुं एक संस्कृत पद छे. एहि रे—(रे आव) याहि रे—(रे जा) जे क्रियामां 'रे! आव, रे! जा' एवुं वारंवार कहेवुं पडे ते क्रियानुं नाम 'एहिरेयाहिरा' क्रिया कहेवाय. आ शब्दमां बे क्रियापदोनो समास थयेलो छे जे अपवादरूप छे. 'मयूरव्यंसकेत्यादयः' (३-१-११६ हैम०) एवुं सूत्र एवा बधा अपवादभूत समासो माटे छे. आपणो 'आवरोजावरो' के 'अवरजवर' शब्द तथा 'एहिरेयाहिरा' नो अर्थ ठीक रीते बतावे छे. जेम 'एहिरेयाहिरा' शब्द क्रियापदोनो बनेलो छे तेम प्रस्तुत 'उट्ठबईस' शब्द पण बे क्रियापदो द्वारा साधायेलो छे. जे क्रियामां 'ऊठ' अने 'बेस' एम वारंवार बोलवुं पडे वा करवुं पडे ते क्रियानुं नाम 'उट्ठ-बईस' छे. 'उट्ठ' 'उवविस' इति यस्यां क्रियायां सा 'उट्ठबईस' क्रिया—'उट्ठ' एटले ऊठ—ऊभो था, 'उवविस' एटले बेस—बेसी जा. एम बीजा पुरुषना एकवचनरूप 'उट्ठ-उवविस' ए बे क्रियापदो द्वारा प्रस्तुत 'उट्ठबईस' शब्दने साधवानो छे. 'बईस' ए 'उवविस'नुं ज उच्चारणांतर छे. सं. उत्तिष्ठ+उपविश—प्रा० उट्ठ+उवविस—उट्ठबईस—ऊठबेस.

२१४ "पुरुष एवेदं घिं सर्वं यद् भूतं यच्च भाव्यम्"—श्वेताश्वतरोप० ३,१५।
"'घिं' इति वाक्यालंकारे"—(आवश्यकटीका पृ० २४८ आ० स०)
उक्त 'घिं' अने प्रस्तुत 'घंइं' वच्चे तुलना करी शकाय एम छे.

खाइं

अव्ययो	(१०) अव्ययो		
८-४-४०१	केम किम किह किध	(कथम्)	केम किम
	जेम[२१५] जिम जिह जिध	(यथा)	जेम जिम

---

२१५ 'था' अने 'म' वच्चे कशुं ज साम्य नथी तेथी 'था' नो 'म' बोलाय ज केम? ए जोतां भाषाविज्ञाननी दृष्टिए 'यथा' द्वारा 'जेम' साधी शकाय तेम नथी. 'यथा' नो अर्थ जोतां मने लागे छे के सं० 'यद्+इव—' यदिव प्रा० जइव—जइवँ—जइम—जेम. आ प्रकारे 'जेम' ने साधवामां आवे तो अर्थ अने अक्षरपरिवर्तन ए बन्ने प्रकारे कशुं बाधक जणातुं नथी. 'यथा' एटले जे प्रकारे—जे रीते. 'यदिव' एटले जेनी पेठे—जे रीते—(यत्-एटले जे. इव-पेठे.) आ ज प्रकारे—

तद्+इव-तदिव-तइव-तइवँ-तइम-तेम.

क+इव-कइव—कइवँ-कइम-केम. वगेरेने पण साधी शकाय.

अथवा

यद्+एवं-यदेवं-जएवं-जएवँ-जेवँ-जेम.

तद्+एवं-तदेवं-तएवं-तएवँ-तेवँ-तेम.

क+एवं—कएवं—कएवँ—केवँ-केम. ए रीते पण साधी शकाय.

यदेवं एटले जे आ रीते.

तदेवं—ते आ रीते.

कएवं—शी रीते.

	तेम तिम तिह तिध	(तथा)	तेम तिम
८–४–४०४	जेत्थु[२१६] जत्तु	(यत्र)	ज्यां
	तेत्थु तत्तु	(तत्र)	त्यां
८–४–४०५	केत्थु	(कुत्र)	क्यां
	एत्थु	(अत्र)	अहीं
८–४–४०६	जाम जाउं जामहिं	(यावत्)	ज्यांसुधी
	ताम ताउं तामहिं	(तावत्)	त्यांसुधी
८–४–४०९	अवरोप्पर[२१७]	(अपरस्पर)	परस्पर-अरस्परस

---

२१६ 'जहिं' अने 'जेत्थु' ए बन्ने पदोनो अर्थ 'ज्यां' (यत्र) छे. वर्तमान गुजरातीमां 'जहिं' अने तेनुं उच्चारणांतर 'जइं' प्रचलित छे त्यारे पंजाबीभाषामां 'जित्थे' अने मारवाडी भाषामां 'जठे' ए बन्ने 'ज्यां' अर्थना वाहक छे अने ते बन्ने प्रस्तुत 'जेत्थु' नां भिन्न उच्चारणो छे अने 'जेत्थु' पद पण सं० यत्र प्रा० जत्थ साथे सरखावी शकाय एवुं छे.

२१७ हेमचंद्र, 'परस्पर' शब्दनी आदिमां 'अ' ऊमेरी प्रस्तुत 'अवरोप्पर'ने साधे छे. मने लागे छे के एम करवा करतां 'अपर' अने 'पर' ए बे शब्दो द्वारा 'अवरोप्पर' शब्दने साधवो ए सुगमतावाळी रीत छे.

८-४-४१४	प्राउ प्राइव प्राइम्व पग्गिम्व	(प्रायः)	प्रायः-प्राये
८-४-४१५	अनु अन्नह	(अन्यथा)	बीजी रीते
८-४-४१६	कउ कहन्तिहु	(कुतः)	क्यांथी
८-४-४१७	तो	(ततः) (तदा)	तेथी त्यारे
८-४-४१८	एम्व	(एवम्)	एँमे
	पर	(परम्)	पण
	समाणु	(समम्)	साथे
	ध्रुवु	(ध्रुवम्)	ध्रुव
	मं	(मा)	मा
	मणाउ	(मनाक्)	मणा
८-४-४१९	किर	(किल)	निश्चय
	अहवइ	(अथवा)	अथवा
	दिवे	(दिवा)	दिवस
	सहुं	(सह)	साथे
	नाहिं	(नहि)	नहीं

---

२१८ एतद्+एवम्-एतदेवम्-प्रा० एअएवं-एअएवँ-एवँ-एम । एतद्-ए, एवम्-एम. जुओ टिप्पण २१५

८–४–४२०	पच्छइ	(पश्चात्)	पछी
	एम्वइ	(एवमेव)	एम ज
	जि[२१९]	(एव)	ज
	एम्वहिं	(इदानीम्)	हमणां
	पच्चलिउ	(प्रत्युत)	आम नहीं ने आम
	एत्तहे	(इतस्)	अहींथी
८–४–४२६	पुणु	(पुनः)	वळी
	विणु	(विना)	वण–विना
८–४–४२७	अवसें / अवस	(अवश्यम्)	अवश्य
८–४–४२८	एक्कसि	(एकशः)	एकवार
८–४–४३६	एत्तहे	(अत्र)	अहीं
	तेत्तहे	(तत्र)	तहीं
	जेत्तहे	(यत्र)	जहीं
	सव्वेत्तहे	(सर्वत्र)	सर्वत्र–बधे
	केत्तहे	(कुत्र)	कहीं
८–४–४४४	नं[२२०] / नउ / नाइ / नावइ / जणि / जणु	(न)	इव–पेठे / इव–पेठे–जाणे

२१९ अवेस्तानी भाषामां 'हि' ने बदले 'जी' बोल अनेकस्थळे (खोर० पृ० ३५, १९५, २४१,) वपरायो छे. प्रस्तुत 'जि' अने अवेस्तानो 'जी' ए बन्ने कदाच एकमूलक होय. प्राकृतभाषामां 'हि' ना अर्थे 'चिअ' पद वपराय छे. 'जि' 'जी' अने 'चिअ' ए त्रणेमां घणी समानता छे.

२२० 'नं' साथे सरखावी शकाय एवो 'पेठे' सर्थनो' 'न' शब्द वेदमां पण वपरायो छे. जुओ पृ० ७४ कंडिका [५१]

८-४-४४५ **जातिनुं अनियंत्रण** (११) शब्दोनी जाति व्यवस्थित[221] नथी एटले नरजातिनो शब्द नान्यतरमां पण वपराय छे, नान्यतर जातिनो शब्द नरजातिमां पण वपराय छे. नान्यतर जातिनो शब्द नारीजातिमां पण आवे छे.

(कुम्भाः) नर०	नान्यत० कुम्भइं
(अभ्राणि) नान्यत०	नर० अब्भा
(अन्त्राणि) ,,	नारी० अन्त्रडी[222]
(शाखाः) नारी०	नान्यत० डालइं[223]

८-४-४४७ **काळनुं अनियंत्रण** (१२) क्रियापदमां वपरायेला वर्तमानकाळना प्रत्ययो भूतकाळने सूचवे छे अने भूतकाळना प्रत्ययो वर्तमानकाळने सूचवे छे.[224]

८-४-४४६ **शौरसेनीवत्** (१३) शौरसेनी भाषामां जे जे विधानो सूचव्यां छे तेमांनां घणाखरां, आ भाषामां पण समझवानां छे. आचार्य हेमचंद्र शौरसेनी भाषामां जे खास विधानो बताव्यां छे ते आ प्रमाणे छे—

१ 'त' नो 'द', २ 'न्त' नो 'न्द', ३ 'र्य' नो 'य्य' के 'ज्ज', ४ 'थ' नो 'ध' के 'ह' ५ 'इह' अव्ययना 'ह' नो

---

२२१ जुओ पृ० ७० [४१]

२२२ भाषानो 'आंतरडी' शब्द अने प्रस्तुत 'अन्त्रडी' ए बन्ने तद्दन समान छे. 'अंत्रडी' एटले आंतरडां.

२२३ भाषानो 'डाळां' शब्द अने प्रस्तुत 'डालइं' ए बन्ने पदो वच्चे सर्वथा समानता छे. मूल "दल विशरणे" अर्थात् 'दल' धातु द्वारा ए शब्द सधायो छे.

२२४ जुओ पृ० ५३ [५] तथा पृ० ७० [४१]

विकल्पे 'ध' अने बीजा पुरुषना बहुवचनने सूचवता 'ह' प्रत्ययने बदले विकल्पे 'ध'.

उक्त पांच विधानोमांनुं पहेलुं अने चोथुं विधान तो हेमचंद्रे पोते अहीं स्वीकारेलुं ज छे.—(जुओ व्यंजनपरिवर्तन नियम ३ पृ० १८९ कथिद, सवध) शौरसेनीनां विधानो उपरांत साधारण प्राकृतमां जे जे विधानो तेमणे बताव्यां छे ते पण प्रस्तुत भाषामां इष्ट छे. ए हकीकत आ "शौरसेनीवत्" (८–४–४४६) सूत्र सूचवे छे. कारण के शौरसेनीना प्रकरणमां "शेषं प्राकृतवत्" (८–४–२८६) एवुं कही आव्या छे.

'शौरसेनीवत्' सूत्रनो आशय

अहीं ए ध्यानमां राखवानुं छे के शब्दविज्ञाननी दृष्टिए मागधी, पैशाची के चूलिकापैशाची साथे हेमचंद्रे बतावेली प्रस्तुत अपभ्रंशनुं साम्य नथी परंतु प्राकृत अने शौरसेनी साथे छे, एवो आशय आ "शौरसेनीवत्" सूत्रनो छे. वळी, आ सूत्रद्वारा कोई एवुं विधान करे के हेमचंद्रे बतावेलुं अपभ्रंश, शौरसेनी–अपभ्रंश छे तो ते बराबर नथी.

हेमचंद्र, पोताना समयनी लोकव्यापक भाषानुं व्यापक व्याकरण बनावे छे. एटले तेमना समयमां प्रवर्तती व्यापक भाषानां जे जे व्यापक लक्षणो छे ते, तेमणे सूचव्यां छे. परंतु तेमणे शौरसेन अपभ्रंश, पैशाच अपभ्रंश वगेरे कोई एकदेशीय भाषानां लक्षणो सूचववा प्रयास कर्यो होय एवुं सूचन तेमना व्याकरणमांथी मळतुं नथी. तेमने कोई एकदेशीय भाषा ज इष्ट होत तो "स्वराणां स्वराः प्रायोऽपभ्रंशे"–(८–४–३२९) सूत्रमां तेओ 'अपभ्रंश' एवो सामान्य शब्द ज न मूकत; किन्तु कोई विशेष शब्दनुं सूचन करत. वळी, ए सूत्रनी वृत्तिमां " 'प्रायः'–ग्रहणात् यस्य अपभ्रंशे विशेषो वक्ष्यते तस्यापि क्वचित् प्राकृतवत् शौरसेनीवच्च कार्यं भवति" एवी भलामण पण न करत.

आ० हेमचंद्र गुजराती छे एटले तेओ पोते रचेला व्याकरणमां व्यापक अपभ्रंशमां समायेली एवी पोताना समयनी अने पोताना प्रदेशनी भाषानां व्यापक लक्षणो आपे ए स्वाभाविक छे अने एम छे माटे तेमनां ए लक्षणोने वर्तमान गुजरातीनी अपेक्षाए ऊगती गुजरातीनां लक्षणो कहुं छुं. वळी, तेमणे रचेलां उक्त पद्यो अने बीजां उदाहरणोथी पण एम जणाई आवे छे के तेओ पोताना समयनी गुजराती भाषाने समझावी रह्या छे जेने में अहीं 'ऊगती गुजराती' नाम आप्युं छे. हेमचंद्र बीजा कोई अपभ्रंशोनो निषेध नथी करता परंतु ते बावत कशी चर्चा पण नथी करता, ए ध्यानमां राखवानुं छे.

नामविभक्ति (१४) नामनी विभक्तिओ

अकारान्त नाम—नरजाति

	एकवचन	बहुवचन	
प्रथमा	उ, ओ[२२५], ०	०	८-४-३३१ ८-४-३३२
द्वितीया	उ, ०	०	८-४-३३१
तृतीया	एण, एं[२२६]	हिं, एहिं	८-४-३३३ ८-४-३४२ ८-४-३४७ ८-४-३३५

---

२२५ नानको, रेवलो, घोडो, गधेडो, बाजरो वगेरे प्रयोगोमां जे अंतिम 'ओ' छे ते ज आ प्रत्यय छे. ज्यां ० छे त्यां प्रत्ययनो लोप समझवानो छे. माणस, कुंभार, लुहार वगेरे रूपो लुप्त प्रत्ययवाळां छे.

२२६ में, तें, तेणें, माणसें वगेरे तृतीया विभक्तिवाळां रूपोमां जे अंतिम 'एं' छे ते ज आ प्रत्यय छे. केणे, जेणे, एणे वगेरेमां 'एण' प्रत्यय वपरायेलो छे.

चतुर्थी	सु, स्सु, हो, ०	हं, ०	८-४-३३८ ८-४-३३९
पञ्चमी	हु, हे	हुं	८-४-३३६ ८-४-३३७
षष्ठी	सु, स्सु, हो, ०	हं	८-४-३३८ ८-४-३३९
सप्तमी	इ, एँ	हिं	८-४-३३४ ८-४-३४७
संबोधन	उ, ओ, ०	हो, ०	८-४-३४६

८-४-३३० (१५) '०' एटले अनेक प्रयोगोमां नामने प्रथमा, ८-४-३४४-३४५ द्वितीया, चतुर्थी, षष्ठी अने संबोधननी विभक्तिओ नथी लागती परंतु ते ते विभक्तिओमां नामनो अंतिम दीर्घ स्वर मात्र ह्रस्व थाय छे अथवा ह्रस्व स्वर मात्र दीर्घ थाय छे :

			प्र० गु०	सं०
'ढोल्ल'नुं	ढोल्ला	प्र० ए०	(ढोला)	धवलः
'रेहा'नुं	रेह	,,	(रेह)	रेखा
'घोड'नुं	घोडा	प्र० ब०	(घोडा)	घोटकः
'वग्गा'नुं	वग्ग	द्वि० ए०	(वाग-चोकडुं)	वल्गा

२२७ कूवे, घरे, दरिए वगेरे सप्तमी विभक्तिवाळां रूपोमां जे अंतिम 'ए' छे ते ज आ प्रत्यय छे.

२२८ मूळ 'धव' एटले पति-धणी. धव+उल्ल-('उल्ल' स्वार्थिक) धवुल्ल-धउल्ल-डउल्ल-डोल्ल-ढोल्ला. एवो परिवर्तनक्रम भासे छे.

२२९ 'घोटक' नो 'ओ' संवृत छे त्यारे ते द्वारा सधायेला 'घोडा' नो 'ओ' विवृत छे. वळी, 'घोडियुं' नो 'ओ' संवृत छे. आ रीते एक ज शब्दना स्वरमां उच्चारणनी विविधता ध्यानमां राखवा जेवी छे.

(१६) व्यंजनादि प्रत्ययो लागतां नामनो अंतिम स्वर विकल्पे दीर्घ थाय छे: देवसु, देवासु

(१७) ८–४–३३५ त्रीजीना बहुवचननो प्रत्यय लागतां नामना अंतिम 'अ' नो विकल्पे 'ए' थाय छे: देवहिं देवाहिं, देवेहिं

(१८) ८–४–३४५ केटलाक प्रयोगोमां षष्ठी विभक्तिमां मूळ

लुप्तविभक्ति — नाम ज वपराय छे. जेमके; गय (गज-गजानाम्)

(१९) ८–४–४२२ संबंध बतावबा माटे गमे ते पदनी पछी

संबंधसूचक प्रत्ययो — 'तण' अने 'केर' शब्दो पण वपराय छे: जसु—केरउं (जस–केरुं–जेनुं) अम्हहं–तणा (अमतणा–अमारा)

(२०) ८–४–४२५ 'ते माटे' एवो अर्थ बतावबा सारु गमे ते पदनी पछी 'केहिं', 'तेहिं', 'रेसि', 'रेसिं', अने 'तणेण' ए पांचमांनो गमे ते एक शब्द मूकाय छे:

तउ केहिं—(तारा माटे)
अन्नहि रेसि—(अन्यने माटे)
वडत्तणहो तणेण—(वडाईने माटे)

सर्वादिशब्द — (२१) सर्वादि शब्द.

८-४-३६६	साह सव्व[230]	(सर्व)	व० उ० सहु, सौ
८-४-३६५	आय[231]	(इदम्)	आ, आय

---

२३० भाषाना सब (हिन्दी) अने सउ के साउ (गुजराती) शब्दनी साथे प्रस्तुत 'सव्व' अने 'साह'नी सरखामणी सुघटमान छे.

२३१ भाषानो 'आ' अने पारसीलोकमां बोलातो 'आय' ए बन्ने शब्दनी साथे प्रस्तुत 'आय' नुं विशेषतः साम्य छे.

८-४-३६७	कवण[232] काइं क	(किम्)	कोण कांई को, क्यो

अकारान्त सर्वादि शब्दोने लागती विशेष विभक्तिओना प्रत्यय—

८-४-३५५ पञ्चमी एक० हां—जहां, तहां, कहां (ज्यांथी, त्यांथी, क्यांथी)

८-४-३५६ „ „ इहे—('क' अने 'कवण' ने ज लागे छे) किहे, जिहे (कंईथी, जंईथी)

८-४-३५७ सप्तमी एक० हिं— सव्वहिं, सव्वाहिं

८-४-३५८ षष्ठी एक० आसु ('ज', 'त', 'क', अने 'कवण' ने ज लागे छे)

जासु	तासु	कासु
जस्स	तस्स	कस्स
जास	तास	कास

शेष पूर्ववत्

(२२) विशेष रूपाख्यान

प्र० एक० द्वि० एक०	ध्रुं[233], जु, जं (यत्)	८-४-३६०	(जे)
प्र० एक० द्वि० एक०	त्रं[234], सु, तं (तत्)	„	(ते)

२३२

२३३ 'यत्' नुं 'जं' उच्चारण तो सुघट छे परंतु 'ध्रुं' उच्चारण केम थयुं ? ए समझातुं नथी. कदाच 'ध्रुं' उच्चारणनुं मूल प्रस्तुत 'यत्' नहीं किन्तु बीजुं कोई पद होय. अहीं 'ध्रुं' अने 'जं' बन्ने समानार्थक होई हेमचंद्र साथे जणावेलां होय.

२३४ 'तत्' ना 'तं' उच्चारणमां वधारानो 'र' उमेरावाथी 'त्रं' उच्चारण नीपज्युं छे. आवो 'र' नो वधारो प्राचीन भाषामां स्वाभाविक छे. जुओ पृ० ५८ कंडिका [१७].

प्र० एक०, द्वि० एक० इमु नान्यतर-(इदम्) ८–४–३६१

" " , " " एहो[२३५] नरजाति-(एषः, एतम्) ८-४-३६२
व० गु० एह, ए

" " , " " एह नारीजाति-(एषा, एताम्)
व० गु० एह, ए

" " , " " एहु नान्यतरजाति (एतत्)
व० गु० एह, ए

प्र० ब०, द्वि० ब० एइ नर० { एते, एतान् } ८-४-३६३
नारी० { एताः } व० गु० ए, एय.
नान्य० { एतानि }

" " , " " [२३६]ओइ नर० { अमी, अमून् } ८-४-३६४
नारी० { अमूः } व० गु० ओ, ओइ
नान्य० { अमूनि }

(२३) तुम्ह– (युष्मद्)

	ए० व०	ब० व०	
प्र०	तुहुं (तुं)	तुम्हे तुम्हइं (तमे, तमो)	८-४-३६८ / ८-४-३६९
८-४-३७० द्वि०	पइं, तइं	तुम्हे, तुम्हइं	[८-४-३६९
" तृ०	पइं, तइं (तें)	तुम्हेहिं (तमें, तमोए)	[८-४-३७१

२३५ भाषामां त्रणे जातिमां 'ए' के 'एह' शब्द प्रचलित छे.

२३६ भाषानो 'ओ' शब्द अने प्रस्तुत 'ओइ' बन्ने समान छे. 'ओ पेलो आव्यो' एवा प्रयोगोमां 'ओ' शब्द वपराय छे अने ते दूरताना के परोक्षपणाना भावनो सूचक छे. संस्कृतनो 'अदस्' पण ए ज भावनो द्योतक छे.

वर्तमानकाळ

	एक०	बहु०	
८-४-३८५	१. पु० उं, मि.[२४३]	हुं, म, मु, मो	[८-४-३८६
८-४-३८३	२. पु० हि, सि, से.	हु, ह, ध, इत्था	[८-४-३८४
	३. पु० दि, दे, इ, ए.	हिं, न्ति, न्ते, इरे	[८-४-३८२

(३४) भविष्यकाळ

वर्तमानकाळना प्रत्ययोने शरूआतमां 'स' के 'स्स' लगाडवाथी ते प्रत्ययो भविष्यकाळमां वपराय छे.

स्सउं, सउं[२४४]	स्सहुं, सहुं	[८-४-३८८
स्सहि, सहि[२४५]	स्सहु, सहु[२४६]	
स्सइ[२४७], सइ	[२४७]स्सहिं, सहिं वगेरे.	

शेष प्राकृत प्रमाणे.

---

२४३ भाषामां वपरातां करुं छुं, बोलुं छुं, कहुं छुं वगेरेनो अंतिम 'उं' अने प्रस्तुत 'उं' ए बन्ने तद्दन समान छे.

२४४ भाषामां वपरातां प्रथम पु० ए० करीश, प्रथम पु० ब० करीशुं क्रियापदो अने प्र० ए० करिस्सउं, प्र० ब० करिस्सहुं क्रियापदो ए बन्ने वच्चे निकटनी समानता छे अर्थात् 'करीश,' 'करीशुं' मां अंते रहेला 'ईश' अने 'ईशुं' (ते बन्ने) ना मूळमां अनुक्रमे 'स्सउं' अने 'स्सहुं' प्रत्ययो छे.

२४५ 'तुं करशे' अने 'तुहुं करिस्सहि' ए बन्ने एकसरखां क्रियापदो छे अर्थात् 'करशे' नो अंतिम 'शे', 'करिस्सहि' ना अंतिम 'स्सहि' प्रत्यय द्वारा सधायेलो छे.

२४६ ए ज प्रमाणे 'तमे लखशो' अने 'तुम्हे लिखिस्सहु' ए बन्ने पण तद्दन समानतावाळां क्रियापदो छे अर्थात् भविष्यकाळना बीजा पुरुषना बहुवचननो 'शो', प्रस्तुत 'स्सहु' प्रत्यय द्वारा सधायेलो छे.

२४७ 'ते करशे' अने 'तेओ करशे' ए क्रियापदो अने 'सु करिस्सइ' 'ते करिस्सहिं' ए क्रियापदो पण एकसरखां छे अर्थात् भविष्यकाळना तृतीय पुरुषना एकवचननो अने बहुवचननो 'शे', प्रस्तुत 'स्सइ' अने 'स्सहिं' प्रत्यय द्वारा अनुक्रमे सधायेलो छे. ए रीते चालु गुजरातीमां वपराता भविष्यकाळना समग्र प्रत्ययो, ऊगती गुजरातीमां वपराता भविष्यकाळना प्रत्ययो द्वारा सधायेला छे.

(३५) आज्ञार्थ अने विध्यर्थ

८-४-३८७ २ पु० ए० इ, उँ, ए. शेष प्राकृत प्रमाणे.

(३६) विशेष रूपाख्यान

८-४-३८९ कीसु (क्रिये) कराउं छुं

(३७) विशेष धातुओ

८-४-३९०	हुच, पहुच	– (प्र+भू–प्रभू–पहोंचवुं-पूरतुं थवुं)
८-४-३९१	ब्रुव	– (ब्रू–बोलवुं)
८-४-३९२	वुञ्	– (व्रज–जवुं)
८-४-३९३	प्रस्स	– (स्पश्–जोवुं)
८-४-३९४	गृण्ह	– (ग्रह–गृह्णा–ग्रहण करवुं)

देश्यधातु (३८) देश्य धातुओ

८–४–३९५	छोल्ल	(तक्ष–छोलवुं[250])
	झलक्क	(ज्वल्–जळवुं–बळवुं–झळकवुं)

---

२४८ चालु गुजरातीमां आज्ञार्थ के विध्यर्थमां वपरातां (तुं) कर्य–कर, लख्य–लख, भण्य–भण, (तमे) करो, भणो, लखो, (तुं) करे, भणे, लखे वगेरे क्रियापदोमां जे य–अ, ओ अने ए प्रत्ययो वपराय छे तेनी साधना प्रस्तुत 'इ', 'उ' अने 'ए' द्वारा समजवानी छे. प्रस्तुत 'इ' प्रत्यय तो वेदमां पण वपरायेलो छे. जुओ–प्रस्तुत भाषण पृ० ६६ कंडिका [३२]

२४९ कच्छी भाषामां 'जवुं' अर्थमां 'वँञ्' धातु प्रचलित छे. तेनी साथे प्रस्तुत 'वुञ्' नी समानता छे.

२५० प्रस्तुत 'छोल्ल' धातुना मूळनी खबर नथी पडती. हेमचंद्रना कहेवा प्रमाणे 'तक्ष्' अने 'छोल्ल' ए बन्ने धातुओ समानार्थक छे. ए बे वच्चे लेश पण अक्षरसाम्य नथी तेथी ए बे वच्चे कोई संबंध होई शके नहीं. 'छाल ऊतारवी' अने 'छोलवुं' ए बन्नेनो भाव एक समान छे तेथी कदाच 'छल्ली' (छाल) शब्द साथे 'छोलवुं' नो संबंध जोडी शकाय.

	खुड्डुक	(खटकवुं)
	घुड्डुक	(घुष्ट 'घुडुडु' एम गाजवुं)
	चम्प[251]	(संवाध-संवाह— (आक्रम-चांपवुं-दाबवुं-दबाववुं)
	घुट्ठुअ	(घृष्ट—नकामुं गाजवुं)
	पराव[252]	(प्राप्—पामवुं) वगेरे
कृदंतो	(३९) विध्यर्थ कृदंत	

व० गु०

८–४–४३८	इएव्वउं एव्वउं एवा	(तव्य)	करिएव्वउँ—करवा जेवुं करेव्वउं—करवुं करेवा

(४०) संबंधक भूतकृदन्त

८–४–४३९	इ	(मारि—मारीने)
	इउ	(भञ्जिउ—भांजीने—भांगीने)
	इवि	(चुंबिवि—चुंबीने)

---

२५१ प्रस्तुत 'चम्प' ना मूळनी खबर पडती नथी. दोधकवृत्तिमां 'चम्प' नो पर्याय 'आक्रम' जणावेलो छे. संभव छे के 'क्रम' ना 'क' नो 'च' थई 'चम' थतां ते द्वारा 'चम्प' आव्युं होय अथवा 'चांपवुं' अर्थमां संवाध–संवाह पद पण वपराय छे एटले ते 'संवाह' ना आद्य 'सं' नो 'चं' थई 'चंवाह' द्वारा 'चंप' आव्युं होय. आ बाबत निर्णीत कशुं जणायुं नथी.

२५२ प्राप्–पराव ए जातनो अक्षरपरिवर्तन–क्रम छे 'प्रा' ना 'प्' अने 'र्' वच्चे 'अ' वधतां प्+अ+र्+आप्–'पराप्', पछी अंत्य 'प' नो 'व' थये 'पराव' पद थाय.

अवि (विछोडवि—वछोडीने—छोडावी दईने)

८—४—४४० एप्पि — (जेप्पि—जित्वा—जीतीने)

एप्पिणु— (देप्पिणु—दईने)

एवि — (लेवि—लेई—लेईने)

एविणु — (झाएविणु—ध्याईने—ध्यान करीने)

(४१) हेत्वर्थकृदन्त

८-४-४४१ एवं (देवं—देवा माटे)

अण (करण—करवामाटे)

अणहं (भुंजणहं—भोजन करवा माटे)

अणहिं (भुंजहिं— ,,)

एप्पि (जेप्पिणु—जीतवा माटे)

एप्पिणु (चएप्पिणु—त्याग करवा माटे)

एवि (पालेवि—पाळवा माटे)

एविणु (लेविणु—लेवा माटे)

८-४-४४२ (४२)—गमेप्पिणु, गंप्पिणु, गमेप्पि, गंप्पि — (गत्वा—जईने) अथवा (गन्तुम्—जवा माटे)

(४३) कर्तृसूचक कृदन्त

८-४-४४३ अणअ —
मारणउ—मारनार
बोल्लणउ—बोलनार
वज्जणउ—वागनार—वजनार
भसणउ—भसनार

(४४) तद्धितप्रत्यय

८-४-४२९ कोई पण नामने स्वार्थमां अ, अड, उल्ल,
८-४-४३० अड-अ[२५३], उल्ल-अ, उल्ल-अड—उल्लड प्रत्ययो लागे छे.

अ—करालिअ + अ—करालिअअ (करालक—कराल)
अड—दोस + अड—दोसड (दोष—दोषडा)
उल्ल—कुडी + उल्ल—कुडुल्ली (कुटी—कोटडली—कोटडी)
अड-अ—हिअअ + अडअ—हिअडउ (हृदय—हैडुं)
उल्ल-अ—चूडा + उल्लअ—चूडुल्लअ (चूडलो)
उल्लड—बल + उल्लड—बलुल्लड (बल—बळ)
उल्ल-अड-अ—बल + उल्लडअ—बलुल्लडअ (,,)

(४५) पूर्वोक्त प्रत्ययो लाग्या पछी नामने स्त्रीलिङ्गी
८—४—४३१ करवुं होय तो तेने छेडे ' ई ' आवे छे अने ' अ ' प्रत्यय जेने छेडे छे तेवा पूर्वोक्त प्रत्ययो लाग्या पछी नामने स्त्रीलिंगी करवुं होय तो तेने छेडे ' आ ' आवे छे.

८—४—४३२ गोरडी—(गोरी)
धूलडिआ (धूली—धूड—धूडली)

८—४—४३३ (४६) उक्त ' आ ' प्रत्यय लागतां पूर्वना ' अ ' नो ' इ ' थाय छे. (धूलड + आ = धूलडिआ)

(४७) ' प्पण[२५४] ' प्रत्यय भावसूचक छे.

---

२५३ मूळ प्रत्ययो 'अ' 'अड' अने 'उल्ल' ए त्रण छे. ते त्रणेने एक-बीजामां भेळववाथी बीजा लगभग बार प्रत्ययो नीपजे छे. ते आ प्रमाणे :—

१ अ—अड । २ अड-अ । ३ अ-उल्ल
४ उल्ल-अ । ५ अड—उल्ल । ६ उल्ल—अड । ७ अ – अड—उल्ल ।
८ अ—उल्ल—अड । ९ अड—अ—उल्ल । १० उल्ल—अ—अड ।
११ अड—उल्ल—अ । १२ उल्ल—अड—अ ।

२५४ भाषामां घडपण, देवपणुं, मनुष्यपणुं वगेरेनो पण, पणुं भावसूचक छे, प्रस्तुत 'प्पण' अने भाषानो पण, पणुं—ए बधा तद्दन समान छे.

८–४–४३७ वड्डप्पणु—वडपण.

ऊपर जणावेला नियमोमां आ० हेमचंद्रे पोताना समयनी व्यापक भाषानुं व्याकरण समावेलुं छे. आंपेला ए नियमो मोटा मोटा छे अने व्यापक जेवा छे. वैदिक भाषा अने व्यापक प्राकृतभाषा वच्चे जे समानता बतावी गयो छुं (पृ० ५१–७४) ते जोतां स्पष्ट जणाई आवे एम छे के प्रस्तुत ऊगती गुजरातीमां पण ते समानता केटला बधा अंशमां ऊतरी आवी छे.

७७ आगळ कह्युं छे तेम वैदिक काळना व्यापक अर्थवाळा आदिम अपभ्रंश द्वारा हेमचंद्रे बतावेला अंतिम अपभ्रंशनी के ऊगती गुजरातीनी उत्पत्ति थई अने ते द्वारा आ आपणी वर्तमान गुजराती आवी एटले वैदिक काळनुं उक्त अपभ्रंश, ऊगती गुजरातीनी जननी थाय अने वर्तमान गुजरातीनी मातामही थाय. पुत्रीमां मातानां खास खास लक्षणो ऊतर्या विना रहे नहीं एटलुं ज नहीं, पौत्रीमां पण मातामहीनो स्वभाव तो ऊतरे ज.

हेमचंद्रे दर्शावेली ऊगती गुजराती अने वैदिक भाषा वच्चेनी समानता

हेमचंद्रे बतावेली भाषा		वैदिक भाषा
करि	(आज्ञार्थ बीजो पुरुष एकवचन).......	बोधि
	कर+इ–करि–'इ' प्रत्यय....बोध+इ –	बोधि
देवाहो	(संबोधन बहुवचन)........	देवासः
करि	(संबंधक भूतकृदन्त)........	पीत्वी
कुह	(क्यां)................	कुह
दिविदिवि	(रोज रोज)........	दिवे दिवे
त्रास	(व्यास 'र' वधारे)....'अग्गिगु' नुं	'अग्रिगु'
गय	(षष्ठी विभक्ति)...	चर्मन् (सप्तमी विभक्ति)
नं	(उपमासूचक)........	न

चालु गुजराती अने वैदिक भाषा वच्चे समानता	चालु गुजराती :	वैदिक भाषा :
	'चांदो न होय'-न	(उपमासूचक)....न [जुओ पृ० ७४ कं० ५१]
	भलाई-(भलुं+आई)....	(शिवताति) भावसूचक 'ताति' प्रत्यय. [जुओ पृ० ६८ कं० ३७]

अहीं उक्त समानता विशे विशेष न कहेतां हवे बारमा अने तेरमा सैकानी गुजराती भाषाना प्रयोगोनुं आ० हेमचंद्रनी दृष्टिए पृथक्करण करी बतावनारुं छे.

व्याख्यान बीजुं

वारमो अने तेरमो सैको

अभयदेव-वादिदेव हेमचंद्र (वारमो सैको) सोमप्रभ, धर्मसूरि अने विजयसेन (तेरमो सैको) एमनी कृतिओ

७८ वारमा अने तेरमा सैकानी गुजरातीनो नमूनो वताववा अहीं वारमा सैकाना श्रीअभयदेवसूरि, वादिदेवसूरि अने आ० हेमचंद्रनी तथा तेरमा सैकाना सोमप्रभसूरि, धर्मसूरि अने श्रीविजयसेन-सूरिनी कवितानो आधार लीधेलो छे.

आ वे सैका अने त्यार पछीनो चौदमो सैको आवे त्यां सुधी केवळ जैन पंडितोनी कवितानो आधार लेवानो छे. ए त्रण सैका दरमियान वैदिक परंपराना वा बीजी कोई परंपराना गुजराती पंडिते रचेलुं गुजराती साहित्य मने मळ्युं नथी.

पन्नरमाथी तो उक्त वंने परंपराना पंडितोनी अनेक कृतिओना नमूना सुलभ छे.

वारमा सैकानी त्रण कृतिओ अहीं लीधेली छे, ए त्रणे पद्य छे. तेमां सौथी प्रथम 'श्रीथंभणपार्श्वनाथ'नुं स्तोत्र छे. तेना रचयिता श्रीअभयदेवसूरि.

अभयदेवनो समय

७९ अभयदेवसूरिनुं वृत्तान्त प्रभावकचरित्रमां[२५५] अने खरतरगच्छनी पट्टावलीओमां पौराणिकरीते नोंधायेलुं छे. तेमनुं जन्म-स्थान धारा—राजा भोजनी धारानगरी. दीक्षित थया पछी तेओ आचार्य पद मेळवी गुजरात तरफ आव्या हता अने पाटणमां लांवा समय सुधी रह्या हता. वार जैन अंगोमांना नव अंग ऊपर तेमनी रचेली वृत्तिओ उपरांत वीजुं पण आचारविषयक

---

२५५ जुओ प्रभावकचरित्र–श्रीअभयदेवप्रवंध.

पंचाशकवृत्ति वगेरे घणुं साहित्य तेमनुं रचेलुं छे. 'अंगो ऊपरनी वृत्तिओ तेमणे पाटणमां रहीने रचेली छे' ए हकीकत ते ते वृत्तिओमां आवेली प्रांत-पुष्पिकाओमां[२५६] तेमणे पोते ज जणावेली छे. जैन परंपरामां 'नवांगीवृत्तिकार' तरीके तेमनी विशेष ख्याति छे. तेमनो समय-बारमो सैको सुनिश्चित छे. तेमनुं अवसान पाटणमां के कपडवंजमां थयेलुं एवुं लखेलुं छे. गुजरातमां सेढीनदीने कांठे थांभणा नामनुं गाम छे. त्यां श्रीथंभणपार्श्वनाथनी स्तुति करतां तेमणे जे स्तोत्र बनावेलुं, तेने अहीं नमूनारूपे मूकेलुं छे. स्तोत्रनां बधां मळीने ३० पद्यो छे. तेमांथी अहीं अमुक ज लीधेलां छे. जैन परंपराना खरतरगच्छमां आ स्तोत्रनो विशेष प्रचार छे. स्तोत्रनी भाषा ते समयनी चालु लोकभाषा छे. रचनार गुजराती, रचवानुं स्थळ गुजरातनुं एक गाम ए जोतां स्तोत्रनी भाषा पण सापेक्ष रीते गुजराती कहेवाय. स्तोत्रनी कडीओ ज ए हकीकतने साबीत करे छे.

देवसूरिनो समय

८० बीजी कृति श्रीवादिदेवसूरिनी छे. ए कृति ते, वादिदेवसूरिए रचेलुं पोताना गुरु श्रीमुनिचंद्रनुं स्तवन. तेनी भाषा ते समयनी गुजराती छे. वादिदेवसूरि संस्कृत अने प्राकृत भाषाना प्रकांड पंडित हता, प्रखर नैयायिक अने अद्भुत कवि हता.

---

२५६ "शिष्येण-अभयदेवाख्यसूरिणा विवृतिः कृता।
ज्ञाताधर्मकथाङ्गस्य श्रुतभक्त्या समासतः" ॥ १ ॥
"एकादशसु शतेषु-अथ विंशत्यधिकेषु विक्रमसमानाम्।
अणहिलपाटकनगरे विजयदशम्यां च सिद्धेयम्" ॥

अर्थात् श्रीअभयदेवसूरिए ज्ञाताधर्मकथांगसूत्रनी विवृति विक्रमवर्ष ११२० मां अणहिलपाटक-अणहिलवाड-पाटणमां रहीने विजयादशमीने दिवसे पूरी करी. व्याख्याप्रज्ञप्ति-भगवतीसूत्र-नी टीका पण तेमणे ११२८ मां पाटणमां रहीने रची छे. आ माटे जुओ भगवतीसूत्रनी में लखेली प्रस्तावना-'व्याख्याप्रज्ञप्तिना टीकाकार'-पृ० २४ (विद्यापीठप्रकाशन)

श्रीहरिभद्रसूरिनी अनेकान्तजयपताका ऊपर टिप्पण लखनार मुनिचंद्र-सूरि—देवसूरिना गुरु—पण महापंडित, तपस्वी अने सुविहिताग्रणी हता अने वादिदेवसूरिना शिष्यो भद्रेश्वरसूरि तथा रत्नप्रभसूरि वगेरे पण महा-विद्वान हता. वादिदेवसूरिनुं जन्मस्थान 'मद्दाहृत' आजनुं 'मदुआ'. आबुनी आसपास गुजरात देशना अष्टादशशती नामना एक प्रांतमां ते स्थान आवेलुं छे. सूरिनो जन्म विक्रम संवत् ११४३. जाति पोरवाड. पिता वीरनाग, माता जिनदेवी. आचार्यनुं मूळनाम पूर्णचंद्र. 'मदुआ'मां महामारिनो उपद्रव थयो. वीरनाग पोताना ए गामने छोडीने भरूचमां रहेवा आव्यो. मुनिचंद्रसूरि पासे पूर्णचंद्रे भरूचमां ज दीक्षा लीधी. दीक्षित नाम रामचंद्र. विक्रम संवत् ११७४ मां रामचंद्र, देवसूरि थया अने वादकळामां विशेष पटु होवाने लीधे तेमनी ख्याति 'वादि देवसूरि' ने नामे थई. गुजरातना चक्रवर्ती राजा जयसिंह देवनी सभानुं ए रत्न हता. तेमनो 'स्याद्वादरत्नाकर' नामनो चोराशी हजार श्लोकप्रमाण एक अद्भुत न्यायग्रंथ आजे संपूर्ण तो नथी मळतो परंतु जेटलो मळे छे ते उपरथी एमनुं असाधारण पांडित्य समझी शकाय एम छे. मातृभाषामां रचेला पोताना गुरुना स्तवनमां तेमणे घणी ज सरळ अने मधुर भाषा वापरी छे. अहीं ते स्तवन पूरेपूरुं लीधेलुं छे.

हेमचंद्रनी कृतिओ

८१ त्रीजी कृति गुजराती भाषाना पाणिनी अने साहित्यिक गुजरातीना आद्यकवि बारमा सैकाना सुप्रसिद्ध आचार्य हेमचंद्रनी[२५८] छे. आचार्य हेमचंद्रे स्वोपज्ञवृत्तिवाळा सिद्धहेमना आठमा अध्यायना चोथा पादमां जे पद्यो उदाहरणरूपे मूकेलां छे,

२५७ जुओ प्रभावकचरित्र–श्रीदेवसूरिप्रबंध.

२५८ जुओ प्रभावकचरित्र–श्रीहेमचंद्रसूरिप्रबंध तथा हेमचंद्राचार्य (श्रीसयाजी बालज्ञानमाळा पुष्प १३८ मुं)

तेमांथी अहीं केटलांक पद्यो लीधेलां छे अने बीजां तेमना छंदोनुशासनमांथी अवतारेलां छे. व्याकरणनां पद्योमां हेमचंद्रे पोते रचेलां केटलां अने बीजानां रचेलां पण तेमणे संग्रहेलां केटलां एवो विभाग करवो जोईए ए खरुं पण कयुं पद्य कोणे रचेलुं छे एवो निर्णय करवो हाल तुरत कठण छे. वळी, एमां हेमचंद्रे पोते ज बनावेलां केटलां पद्यो छे ते पण स्पष्टपणे जणातुं नथी. छतां ए पद्योमां हेमचंद्रनां पोतानां पद्यो नथी ज एम पण कही शकाय एवुं नथी.

छंदोनुशासनमां उदाहरणरूपे दर्शावेलां पद्योमां केटलांक संस्कृत भाषामय छे, केटलांक साधारण प्राकृतनां छे अने केटलांक हेमचंद्रनी पोतानी मातृभाषानां छे. ए बधां त्रिविध पद्यो हेमचंद्रे पोते न बनावेलां होय एवुं कांई नथी. परंतु ए पद्योमां राजा सिद्धराजे अने कुमारपाळ संबंधी जे केटलांक पद्यो छे ते अने बीजां संयम वा जैनधर्मने लगतां जे पद्यो छे ते तो हेमचंद्रनां पोतानां कही शकाय एवां छे. वळी, ए पद्योमां जे बीजां अनेक पद्यो रतिरसने लगतां छे ते पण हेमचंद्रनां पोतानां नथी एम केम कहेवाय? रतिरसने लगतां पद्यो कदाच लोकप्रचलित पण होई शके, एथी एमना कर्ता विशे कोईनुं चोकस नाम न कल्पी शकाय. अहीं तो ए अनेक प्रकारना भाववाळां मातृभाषामय पद्योने उदाहरण रूपे मूकेलां छे. कुमारपाळ[260] चरितना आठमा सर्गमां १४ थी ८२ सुधीनां स्वभाषामय पद्योमां श्रीहेमचंद्रे कुमारपाळने उपदेश आपेलो छे अने ते बधां पद्यो तेमनां पोतानां ज छे. एमांनां थोडांक पद्यो तो आगळ जणावी गयो छुं.

---

२५९ जे पद्यो राजाओने लगतां छे ते बधां छंदोनुशासनमांथी लीधेला—आ साथे आपेला—उतारामां 'राजा' शब्दथी सूचित कर्यां छे.

२६० 'प्राकृतद्व्याश्रय' नुं बीजुं नाम 'कुमारपाळचरित' छे.

८२ तेरमा सैकाना शतार्थी[261] महापंडित सोमप्रभसूरिए विशेषतः

सोमप्रभनो समय

साधारण प्राकृतमां रचेला कुमारपाळ प्रतिबोधमांथी भाषानी बे कृतिओनी अहीं थोडी वानकी बतावेली छे. विक्रम संवत् १२४१ मां कुमारपाळ प्रतिबोधनी[262] रचना पाटणमां ज थयेली छे एटले तेमनो समय तेरमो सैको नक्की छे.

८३ तेरमा सैकानी कृतिओमां अहीं प्रथम ए सोमप्रभनी कृतिओ

धर्मसूरिनो समय

लीधी छे, पछी महेन्द्रसूरिना शिष्य धर्मसूरिनुं जम्बूचरित्र मूक्युं छे. जम्बूचरित्रना छेल्ला पद्यमां[263] तेनी रचनानो समय विक्रम संवत् १२६६ जणावेलो छे. एटले धर्मसूरिना समय विशे पण शंका नथी.

८४ तेरमा सैकानी त्रीजी कृति तरीके रेवंतगिरिरासमांनां अनेक पद्यो

विजयसेननो समय

अहीं जणावेलां छे. तेना कर्ता विजयसेनसूरि छे, रासने प्रांतभागे[264] कर्ताए पोतानुं नाम स्पष्टपणे जणावेलुं छे. कर्ता, महामात्य वस्तुपालना धर्मगुरु हता एटले तेमनी हयाती तेरमा सैकामां ज होय.

ते ते कृतिओनी रचना-कर्ताना समय वगेरे विशे जे अहीं आटलुं जणाव्युं छे, तेथी अधिक जणाववुं प्रस्तुत नथी.

---

२६१ आचार्य सोमप्रभे असुक एक श्लोकना सो अर्थो करी बताव्या छे माटे तेओ 'शतार्थी' तरीके पण प्रसिद्ध छे.

२६२ " शशिजलधिसूर्यवर्षे शुचिमासे रविदिने सिताष्टम्याम् ।
जिनधर्मप्रतिबोधः क्लृप्तोऽयं गूर्जरेन्द्रपुरे " ॥

२६३ " महिंदसूरिगुरुसीस धम्म भणइ हो धामीउ ह ।
बारह बरस सएहि कवितु नीपनूं छासठए "

२६४ "रंगिहि ए रमइ जो रासु सिरिविजयसेणि सूरि निम्मविउ ए"

८५ हवे उक्त बन्ने सैकानी ते ते कृतिओनी भाषामीमांसा ज करुं.

बारमा अने तेरमा सैकानी भाषा-मीमांसा

बारमा सैकामां रचायेली उक्त त्रणे कृतिओनी भाषाने में ऊगती गुजरातीनुं नाम आपेलुं छे. ऊगतो आंबो अने फूलेल, फळेल एवो मोटो घटादार आंबो ए बे वच्चे अंतर तो छे, परंतु उद्गम्यमान अने उद्गत ए बन्ने स्थितिओनुं अहीं सामानाधिकरण्य होवाथी कहेवा पूरती ज ते बे जुदी स्थितिओ वच्चे उष्ट्र अने अश्व जेवो भेद मानी न शकाय. 'जे उद्गम्यमान छे ते ज उद्गतदशाने पामे छे' ए न्याये बारमा सैकानी जे ऊगती गुजराती छे, ते ज वर्तमानमां घटादार आंबा जेवी उद्गत स्थितिए पहोंचेली छे. भाषामीमांसाना प्रस्तुत प्रसंगे मारे प्रधानपणे बताववुं पण ए ज छे.

हेमचंद्रे बतावेला ऊगती गुजरातीना नियमो अने प्रत्ययो वगेरेने आगळ संक्षेपमां बतावी गयो छुं. ते नियमो अने प्रत्ययो वगेरेनी दृष्टिए उक्त कृतिओना प्रयोगोमां जे विशेष भेदभाव ज्यारथी जणावो शरू थयो छे तेने यथास्थाने देखाडतो रहीश, पण ज्यां कशो भेदभाव नथी एवां स्थळोने बताववानी अपेक्षा नथी. एवां स्थळो तो सहज सुज्ञान छे.

भाषानुं फरतुं वलण बताववा माटे ते ते कृतिओमांथी केटलांक वाक्यो

ते कृतिओनां वाक्यो अने शब्दो

अने केटलाक शब्दोने टांकी बतावीश अने आवश्यकतानी दृष्टिए वच्चे वच्चे प्रत्ययो अने शब्दोना इतिहासनी पण चर्चा करीश.

८६ शरूआतमां आ नीचे बारमा सैकानी अने तेरमा सैकानी गुजरातीनां केटलांक वाक्यो अने शब्दो क्रमवार नोंधी बतावुं छुं, जेमने वांचतां ज भाषाना वलणनो ख्याल आवी जशे.

१ अभयदेव (बारमो सैको)

	ऊगती गुजराती :	चालु गुजराती :
अभयदेवनां	तुहु सामिउ तुहु माय-बप्पु	तुं सामी—स्वामी—तुं मावाप
वाक्यो	तुहु मित्त पियंकरु,	तुं मित्र प्रियंकर,
	तुहुँ गइ तुहु मइ तुहु जि	तुं गति तुं मति तुं ज
	ताणु तुहु गुरु खेमंकरु।	त्राण तुं गुरु खेमंकर।
	हउं दुहभर भारिउ वराउ	हुं दुःखभर भार्यो वराक
	राउ निब्भग्गह	राय निर्भाग्योनो
	लीणउ तुह कमकमलसरणु	लीनो तुह क्रमकमळशरण
	जिण! पालहि चंगह। २०	जिन! पाळ चंग।
	तुह पत्थण नहु होइ विहलु।	तुह प्रार्थना न ज होय विफल
देवसूरिनां	२ वादिदेवसूरि	
वाक्यो	जिम बोलइ तिम्व जो करइ	जेम बोले तेम जे करे
	सीलु अखंडु धरेइ। १८	शील अखंड धरे।
हेमचंद्रनां	३ हेमचंद्र	
वाक्यो	सायरु उप्परि तणु धरेइ	सायर ऊपर त्र (तृ) ण धरे
	तलि घल्लइ रयणाइं।	तळे घाले रयणोने।
	सामि सुभिच्चु वि परिहरइ	सामी सुभृत्य वी परहरे
	सम्माणेइ खलाइं। २।	संमाने खलोने।
	एक्कहिं अक्खिहिं[२६५] सावणु	एके आंखे श्रावण

२६५ 'अक्खिहिं' ए विशेष्य छे अने 'एक्कहिं' तथा 'अन्नहिं' विशेषण छे. ते ज रीते 'पियहो' ए विशेष्य छे अने 'परोक्खहो' ए विशेषण छे. प्रस्तुत रचनामां विशेष्य अने विशेषण बन्ने विभक्तिवाळां छे त्यारे चालु भाषामां 'भला माणसनुं' वगेरे वाक्योमां मात्र विशेष्यने विभक्ति लागेली होय छे, विशेषणने नहीं—विशेषण लुप्तविभक्तिक होय छे.

ऊगती गुज०	चालु गुज०
अन्नहिं भद्दवउ। १२।	अन्ये भादरवो।
हिअडा! फुट्टि तड त्ति करि	हैडा! फूट तड करी
कालक्खेवें काँइं[266]। १४	कालक्षेपे कांइ।
एह कुमारी एहो नरु। १६	एह कुमारी एह नर।
अम्हे थोवा रिउ बहुअ	अमे थोडा रिपु बहु
कायर एम्व भणंति[267]।	कायर एम भणे छे-कहे छे।
पुत्तें जाएं कवणु गुणु	पुत्रे जाये कोण गुण
अवगुणु कवणु मुएण।	अवगुण कोण मुये।
जा बप्पीकी भुंहडी	जो बापुकी भोंयडी
चंपिज्जइ अवरेण। ३५	चंपाय अवरें।
जेवडु अंतरु रावण—रामहं	जेवडुं आंतरुं रावण—रामनुं
तेवडु अंतरु पट्टण—गामहं	तेवडुं आंतरुं पाटण—गामनुं।
। ४६	
पियसंगमि कउ निद्दडी	प्रियसंगमे क्यांथी नींदरडी
पिअहो[268] परोक्खहो केम्व।	प्रिय परोक्षे केम।
मइं विन्नि वि विन्नासिआ	में वन्ने वी वणसाव्या—वणसाड्या
निद्द न एम्व न तेम्व। ४९	नींद न एम न तेम।
कहिं ससहरु कहिं मयरहरु	कहीं शशधर कहीं मकरधर
कहिं वरिहिणु कहिं मेहु।	कहीं वरिहिण कहीं मेह

२६६ भाषानुं 'कां' अने प्रस्तुत 'काइं' वन्ने समानार्थक छे. मारवाडीमां तो 'कां' नो अर्थ 'कांइ' पद वतावे छे.

२६७ 'भणंति' क्रियापद 'कहे छे' अर्थने सूचवे छे, वर्तमान भाषामां 'भण' नो अर्थ 'भणवुं' थाय छे त्यारे मराठीमां तो तेनो 'कहेवुं' अर्थ ज प्रचलित छे: भण—म्हण्—म्हणणें.

२६८ जुओ टि० २६५.

ऊगती गुज०	चालु गुज०
दूरठिआहं वि सज्जणहं	दूरथियां वी सज्जनोनो
होइ असड्ढल्ल नेहु । ५८।	होय अशिथिल नेह ।
सरिहिं न सरेहिं न	सरिताओए न सरोए न
सरवरेहिं नवि	सरोवरोए नवि
उज्जाण—वणेहिं।	उद्यान—वनोए।
देस रवण्णा[269] होंति वढ!	देशो रमण होय छे मूढ!
निवसंतेहिं सुअणेहिं।५९	निवसंतां सुजनोए।
एक्क कुडुल्ली पंचहिं रुद्धी	एक कोटडली पांचे रुंधी
तहं पंचहं वि जुअंजुअ बुद्धी	ते पांचेनी बी जुदीजुदी बुद्धी
बहिनु ए! तं घरु कहि किव	बहेन ए! ते घर कहे केम
नंदउ जेत्थु कुटुंबउं	नंदो ज्यां कुटुंब
अप्पण—छंदउं। ६०	आपण-छंदुं।
गयउ सु केसरि पिअहु जलु	गयो ते केसरी पिओ जल
नच्चिंतइं हरिणाइं	नचिंतां हरणां
जसु केरएं हुंकारडएं मुहहुं	जस केरे होंकारडे मोंथी
पडंति तृणाइं। ६१।	पडे तरणां।
सिरि जरखंडी लोअडी	शिरे जरखंडी लोबडी
गलि मणिअडा न वीस	गले मणका न वीश
तो वि गोट्ठडा कराविआ	तो बी गोठडा कराव्या
मुद्धए उट्ठवईस। ६२	मुग्धाए ऊठबेश।

२६९ 'देस रवण्णा' वाक्यमां विशेष्य लुप्तविभक्तिक छे अने विशेषण 'रवण्णा' ए विभक्तिवाळुं छे. 'आ भलो माणस छे' ए चालु भाषानी वाक्यरचना ए ज प्रकारनी छे.

हिअडा ! जइ वेरिअ घणा	हैडा ! जो वेरी घणा
तो किं अब्भि चडाहुं ?।	तो च्यम्–शुं आभे चडहुं ?।
अम्हाहिं वे हत्थडा	अमोने वे हाथडा
जइ पुणु मारि मराहुं । ७४	जो पण–वळी मारी मरहुं ।
पाइ विलग्गी अंत्रडी	पाये वळगी आंतरडी
सिरु ल्हसिउं खंधस्सु	शिर ल्हसियुं खांध
तो वि कटारइ हत्थडउ	तो वी कटारे हाथडो
वलि किज्जउं कंतस्सु ।८२	वलि कीजुं–(करुं–वारि जाउं–) कांत ।
ते ज्जि पंडिअ ते ज्जि	ते ज पंडित ते ज
गुणवंत ते तिहुअण सिर उवरि	गुणवंत ते त्रिभुवन शिर उपर
ताहं चिअ जम्मु जाणहु जे	तेओनो ज जन्म जाणो जे
मत्तविलासिणिहिं न वि	मत्तविलासिनीओथी नवि
खोइआ सुद्धझाणओ । २६	क्षोदाया शुद्धध्यानथी ।
कित्ति तहारी वण्णविणु कइ	कीरति तारी वर्णवीने कवि
अन्नु न वण्णहिं ।	अन्यने न वर्णे हे–वर्णे
मालइ माणिवि किं भमर	मालती माणी च्यम्–शुं भमर
धत्तुरइ लग्गहिं ? १६	धत्तुरे लागे हे–लागे ?
कुइ धन्नु जुआणउ । ३९	कोई धन्य जुवानियो
जे निअहिं न परदोस	जे जुए हे न परदोष
गुणिहिं जि पयडिअतोस	गुणोए ज प्रकटिततोष
ते जगि महाणुभावा	ते जगे महानुभावा
विरला सरलसहावा । १२४	विरला सरलस्वभावा

८७ बारमा सैकानी भाषाना शब्दो अने चालु भाषाना शब्दो

(१) अभयदेव

अभयदेवना शब्दो

जय जय—जे जे

समरंत—समरंत—स्मरंत—समरता

पिक्खइ—पेखे

पसाइण—पसाये—(प्रसादने लीधे)

सिद्धिउ—सिद्धिओ—सिद्धिउं

सिज्झहि—सीझे हे—सीझे छे—सिद्ध थाय छे.

होइ—होय (थाय)

नित्थारइ—निस्तारे (पार उतारे)

दय करि—दया करी

आणा—आण—आज्ञा

जसु—जस—जेना

थंभेइ—थंभे छे—थंभावे छे.

हरउ—हरो (दूर करो)

सेवहि—सेवे हे—सेवे छे

मद्दउ—मरडो—(नाश करो)

पक्खालिय—पखाळेल—प्रक्षालित

नर—नर—नरो—(माणसो)

झायहि—झाये हे-ध्याये छे (ध्यान करे छे)

वद्धउ—वधो—वाधो

आलस—आळस—आळस

विलवंतउ—विलवंत-विलवंतो-विलपंतो

कप्पिउं—कल्प्युं

जंपिउं—जल्प्युं

किय—करी—की

कि वि—के इ

केण—केणे—केणे

झंखंत—झंखंत—झंखतो

सोहिय—शोभित—सोहियुं—सोह्युं

जोयहि—जोवे हे—जोवे छे

पाल—पाल—(रक्षा कर)

हउँ—हुं

एउ एउ—ए ए

उंबर—उंबरो

अप्पु—आप (पोतानी जात)

किज्जउ—कीजो—करजो

जग—जगमां

होउ—होईश

महारिय—माहरी—मारी

एम—एम

विन्नवइ—वीनवे

(२) वादिदेवसूरि

देवसूरिना शब्दो

जयओ—जयो (जय पामो)
मोडिअ—मोड्युं
जिम—जेम
खंखडुलाइं—खंखडलां
सिंचइ—सींचे
वक्खाणंतओ—वखाणंतो—वखाणतो
वयणु—वेण
जिणि—जेणे
सोसीउ—शोषन्युं—शोष्युं
जो—जे
नंदउ—नंदो
वूहउ—वह्यो
सत्थाहु—सयवारो
सुमरियइं—सुमरीए—समरीए
गल्यउ—गरवो
मज्जहिं—माचे हे—माचे छे.
जे तणा—जे तणा—जेना
संख—संख्या
रयणह—रतननी
कोइल—कोयल
वाणि—वाण
सो—ते
नमेहु—नमेउ—नमो
खाणि—खाण
दलेइ—दे छे.
आवइं—आवे
नासइ—नासे
नउलु—नोळ—नोळियो
ठावडइ—ठामडे—स्थाने
हिंडइ—हिंडे
मोरह तणा—मोर तणा—मोरना
सप्पु—साप
हंसुला—हंसला
गउ—गयुं
विहल—विफल
दिट्ठु—दीठो
संपडहिं—सांपडे हे—सांपडे छे.
छिद्दहिं—छेदे हे—छेदे छे.
जाल—जाळ
रयणिहिं—रयणिए (रात्रे)
उट्ठिउ—ऊठ्यो

एहउं—एहवुं—एवुं
पच्छइ—पछी
विहाणु—वहाणुं (प्रातःकाळ)
वड्डाइं—वडां—(मोटां)
जोइ—जो—(देख)
कुहइ—कोहे—(सडे)
डज्झइ—दाझे
छारु—छार—(राख)
जलि—जले—जलवडे
वल्लहइ—वल्लभे—वल्लभवडे
पूरिअ—पूरी—पूरी करी
वारइवार—वारेवार—वारंवार
धार—धारा
देहु—देउ—द्यो
मग्गहु—मग्गउ—मागो
कोइ—कोइ
भमरा—भमरा
लिंबडइ—लिंबडे (लिंबडा ऊपर)
दियहडा—दिहाडा—दहाडा
विलंबु—विलंब—(विलंब कर)
फुल्लइ—फूले
झडप्पडहिं—झटपट—झटपटे
पच्छि—पछी—पाछळ
अच्छइ—छे

मच्छें—मच्छे
गिलिज्जइ—गळाय
मच्छु—मच्छ—माछलुं
किअउं—कीयुं—कर्युं
दिट्ठउं—दीठुं
तेवडउं—तेवडुं
निहालहि—निहाळ—(देख)
बप्पीहा !—बपैया !
चूडुल्लउ—चूडलो
झलक्किअउ—झळक्यो-(झाळ लागेलो)
हिअइ—हैये
खुडुक्कइ—खटके
गोरडी—गोरडी—(स्त्री)
घुडुक्कइ—घडके—('घडड' एम गाजे)
संकडु—सांकड—संकट
एहु—एह—ए
तेवडु—तेवडो
पलु—पळ (समय)
हसिउ—हस्यो—हसायो
माणुस—माणस
विच्छोह—वछो—(वियोग)
विच्छोहगरु-विच्छोहकर-(वियोगकर)
गिलि गिलि—गळ गळ (गळीजा गळीजा)

माणिअइ—माणीए
होसइ—होशे—हशे.
करतु—करतो
जु—जे
कीसु—कराउं छुं.
समप्पइ—समापे—समाप्त थाओ
लल्लसइ—लळचू
वहइ—वहे
वद्दलि—वादळे
मंडइ—मंडे
मइं—में
भणिअउ—भण्यो—कह्यो
केहउ—केहवो—केवो
मग्गण—मागण
एहु—एह—ए
जेहु तेहु—जेवो तेवो
होइ—होय
नेह—नेह—स्नेह
गलंति—गळे छे—(नीकळी जाय छे)
ते ज्जि—तेज
निट्ठवि—पीठी
अंकिसा—अकीया—अणकर्युं
कुड—कोड
परसुं—परसाशुं—परसाश

पाणीउ—पाणी—(जळ)
नवइ—नवे
पइसीसु—पेसीश
केस—केस
वलंति—वळे छे
उल्हवइ—ओलवे छे
अप्पणं—आपणं
रिउरुहिरें—रिपुरुधिरे—(रिपुना रुधिरवडे)
काइं—कांइ
होसइ—होशे—(थशे)
माणि—माने
देसडा—देशोने
लुअडउ—लुपियो
पहुच्चइ—पहोंचे
दूअडउ—दूतडो
आवट्टइ—ओटे छे.
कणिअ—कणी
ओहट्टइ—ओटे छे—(ओट थाय छे)
वल्लहाइं—वहेळा
डोंगर—डुंगर
घड—घोळ
छइल्ल—छेल (चतुर)
चंपा—चांपा

वइल्ल—बेल—(बळद)
झुंपडा—झुंपडां
लग्गइ—लागे
कुडुल्ली—कोटडली—कोटलडी-कोटडी
सहेसइ—सहशे—स्हेशे
अधिन्नइ—अधीन
अवसें—अवश्य
सुक्कइं—सूकां
पण्णइं—पान
देज्जहिं—दीजे हे—(देवाय छे)
आइउ—आयो—आव्यो
वत्तडी—वातडी
कन्नडइ—कानडे
धूलडिआ—धूलडी—धूळ
संदेसे—संदेशे
तुहारेण—तुहारे—तारे
धाइ—धाय छे (दोडे छे)
ठाइ—ठाय—स्थिर रहे
कढणु—कढवुं—(उकाळवुं)
घणकुट्टणु—घणकुट्टण—घणथी कूटवुं
मंजिट्ठए—मजीठे
कोट्टरइं—कोतरां
संचि—संच—(संचय कर)
द्रम्मु—दाम

लेखडउ—लेखडो
पट्ठाविअइ—पठवाय—पाठवाय.
वाह—वांह—वांय
विछोडवि—विछोडी—वछोडी—वछोटी
जाहि—जाय—जा
नीसरहि—नीसरे—नीसर—नीहर
जेप्पि—जीपी—जिती
देप्पिणु—देवीने—देईने—दईने
लेवि—लेवीने—लईने
मुआ—मुआ
परावहि—पराव—प्राप्-परापत करे छे
मुअइ—मुए छे—मरे छे
जाइ—जाय छे
थाह—थाह—ताग
पविसइ—पेसे
वइट्ठउ—वेठो
चडिआ—चड्या
डालइं—डाळां
मोडंति—मोडे छे—मरडे छे
वोल्लहिं—वोले हे—(कहे छे)
हूओ—हुओ (थयो)
सहेव्वउं—सहेवुं
जग्गेवा—जागवुं
जिआवंतिहिं—जीवाडंतीओए

सुणिवि–सुणि–(सांभळी)	कंठिआ–कंठी (गळे पहेरवानी कंठी)
वसंति–वसंते–वसंतऋतुमां	वट्टुलओ–वाटलो
सुमरि–सुमरी (याद करी)	चंदुल्लओ–चंदलो-चांदलो-चांदलियो
तक्खणि–टांकणे (ते वखते)	गंडुअ–गेंद–कंदुक (दडो)
पहिउ–पैं–(पथिक–प्रवासी)	मन्नावि–मनावी
गाम्वि–गांवे–गामे	देक्खिवि–देखी
पट्टणि–पाटणे	वेल्लडी–वेलडी
हट्टि–हाटे	सत्थ–साथ–(समूह)
चउहट्टि–चौटे	मुआ–मुआ
राउलि–रावळे–रावणे	घट्टइं–घाट–घाटडी (ओढवानुं स्त्रीनुं वस्त्र)
देउलि–देवळे	
दीसइ–दीसे छे	त्रुट्टी–त्रुटी–तुटी
पत्तिज्जइ–पतीजे (विश्वास कीजे)	छड्डेविणु–छंडीने
मेल्लइ–मेले (छोडे)	गोवालीअण–गोवालण
भोलिम–भोळप	लग्गी–लागी
जगु–जग	पाइ–पाय
मुज्झइ–मुंझे छे–मुंझाय छे	जलइ–जळे छे
झलकंति–झलकती–चळकती	तवइ–तवे छे–तपे छे

---

२७० भाषामां 'पथिक-प्रवासी' ना अर्थमां प्रस्तुत 'पइ' शब्दनो व्यवहार चालु छे. ज्यारे आपणे त्यां कोई नोतरियो नोतरुं देवा आवे छे त्यारे बोले छे के "सगटंम सइ परोणो पइ" सगटंम एटले सहकुटुंब, सइ–सहित, परोणो एटले अतिथि अने पइ एटले पथिक–प्रवासी–मुसाफर. अर्थात् कुटुंब साथे अने मेमान तथा पथिक साथे–ए बधांने लईने जमवा आववानुं नोतरुं छे. "सगटंम सइ परोणो पइ" ए वाक्य काठियावाडमां प्रचलित छे अने अमरेलीमां तो में अनेकवार सांभळ्युं पण छे. पथिक–पहिअ–पइ–ए त्रणे समान शब्दो छे.

मन्नइ—माने छे
उक्खिविअ—ऊखेवीने (ऊंची करीने)
कद्दम—कादव
भग्गा—भाग्या
मग्गुल्या—मारगडा
भमइ—भमे छे.
सामलि—शामळी
अच्चब्भुअ—अचंबो
फुल्लिअ—फलिअ—फूली—फळी
लंघइ—लांघे—(टपी जाय)
नउक्खी—नोखी
गंग—गंगा
पुक्कारइ—पोकार करे (बोले)
चक्किण—चक्रे
दलिओ—दळ्युं—दळ्यो
लेइ—ले छे
सवु—सव—सव
संतवणु—संतपन—सतावबुं
तिं—तें
सिंदुरिअ—सिंदुरिया
अग्गलि—आगले—आगळ
मेहमज्झि—मेहमध्ये—मेहमां
अंधारइ—अंधारे
तोरी—तोरी—तारी

उच्छलिल—उछळेल
पंडरु—पांडरुं (धोळुं)
रणझणंत—रणझणतुं
गहिल्लि—घेली
सिंती—सींचाती
पत्तउ—पहोंत्यो—(आव्यो)
मलंतउ—मल्तो—मरडतो
धरइ—धरे छे
दुब्बली—दूबळी
घण—घणुं
पंडुर—पांडरुं (धोळुं)
कालइ—काळे
वुड्ढ—वध्युं
तुट्ट—तुट्युं
सुमरइ—सुमरे छे—समरे छे.
पलिअ—पळियां
जर—जरा
जज्जरइ—जादरुं करे छे—(जीर्ण करे छे)
होएसइ—होशे (थशे—थाशे)
पारणओ—पारणुं (तप कर्या पछीनुं भोजन)
पद्धडी—पद्धति—पाधरी
हणिअ—हणी

मुहु—मों—म्हों	भंडार—भंडार
धण—धण	हार—हार
आइउ—आयो—आव्यो	वल्लिउ—घाल्यो
कुक्कडि—कूकडी	तिणु—तृण
रडिअ—रडी (बोली)	निट्ठ—नेठ—नेठुं (अंत)
इण—एणे	अंसु—आंसु
कारणि—कारणे	पलुट्टउ—पलुट्यो,—(नीकळी पड्यो—दडी पड्यो)
चुंबिज्जइ—चुंबीजे—चुंवाय छे.	

बारमा सैकानी त्रणे कृतिओनां केटलांक वाक्यो अने केटलाक शब्दो ऊपर जणाव्या छे अने ते वाक्यो अने शब्दोनी सामे आजनुं गुजराती मूक्युं छे. ए ऊपरथी बारमा सैकानी अने आजनी गुजराती वच्चे उद्गम्यमान—उद्गततानो जे संबंध ऊपर बताव्यो छे ते वधारेमां वधारे स्पष्ट थाय एम छे. वाक्यो अने शब्दोना वलणने ध्यानपूर्वक जोवाथी बारमा सैकानी अभयदेव, वादिदेवसूरि अने हेमचंद्रनी मातृभाषाने ऊगती गुजराती कहेवामां जरा पण वांधो जणातो नथी अने ए हकीकत दीवा जेवी चोक्खी छे माटे ए विशे विशेष लखवानी अगत्य पण नथी.

८८ अभयदेव वगेरेनी उक्त त्रण कृतिओमां वपरायेलां प्रत्ययो अने सर्वनामो तथा अव्यय वगेरेने लगतो विचार करीए:

अभयदेव-वादिदेव-हेमचंद्रे वापरेली नामविभक्तिओ अने तेनी चर्चा नरजातिनां अने नान्यतरजातिनां नामोने माटे प्रथमाना अने द्वितीयाना एकवचनमां 'उ' प्रत्यय विशेष वपरायेलो छे.

अभयदेव–'देउ' (देव) 'वराउ' (वराक) 'राउ' (राजा) अणिसिद्धउ–(अनिषिद्धक)–नरजा०.

प्रथमा अने द्वितीया विभक्ति 'माहप्पु' (माहात्म्य), मणु (मन) पमाणु (प्रमाण) नान्य० जा०.

देवसूरि–'चंदु' (चांदो) 'भारु' (भारो) 'कुमारु' (कुमार)–नरजा०.

'नाणु' (ज्ञान) 'चरणु' (चरण–चारित्र) संमत्तु (सम्यक्त्व) नान्य० जा०.

हेमचंद्र–'सायरु' (सागर) दुमु (द्रुम) वायसु (वायस) नरजा०.

'घरु' (घर) कज्जु (काज) बलु (बल) नान्य० जा०.

अहीं आ 'उ' प्रत्ययनो इतिहास लखवानुं प्रस्तुत नथी तो पण कहेवुं जोईए के ते 'उ' प्रत्यय घणो प्राचीन छे. आगळ जणावेलां ललितविस्तरनां पद्योमां ए 'उ' प्रत्यय छूटथी वपरायेलो छे. एटले ते, विक्रमना पांचमा सैका जेटलो तो जूनो खरो.

'सो' 'चित्' वगेरे वैदिक प्रयोगोमां जे 'ओ' वपरायो छे ते ज, आ 'उ' ना मूळमां छे.

केटलाक प्रयोगोमां फक्त नरजातिवाळां नामोने 'ओ' प्रत्यय लागेलो छे.

अभयदेव–'अपवित्तओ', 'रोगहरो', 'समो'.

देवसूरि–'वक्खाणंतओ', 'सो', 'जो'.

हेमचंद्र–'जो', 'एहो', 'एसो'.

'उ' अने 'ओ' प्रत्ययना उपयोगनी सरखामणी करतां 'ओ' प्रत्ययनो उपयोग ओछो छे अने 'उ' प्रत्ययनो उपयोग तेना ('ओ' ना)

करतां वधारे छे. हेमचंद्रना छंदोनुशासनगत पद्योमां 'ओ' प्रत्ययनो उपयोग फक्त प्रथमा माटे नान्यतरजातिमां पण थयेलो छे: 'विरइओ अंगु' – १४, 'पंकओ' – ६०, 'दलिओ' – ७१. परंतु आवा प्रयोगो अतिविरल छे. 'उ' अने 'ओ' प्रत्यय सिवाय मूळ अंग पण प्रथमा अने द्वितीयामां वपरायेलां छे:

अभयदेव–समरंत, जण, नर, –काय, –काम, नीरोय, कय, झंखंत, निप्फल.

देवसूरि – भवियजण, संसार, मुणिंद, मुणिचंद, थिर.

हेमचंद्र – मेह, खग्ग, वग्ग, फल, गय, पल्लव, गय (गत).

आ रीते प्रथमा अने द्वितीयामां मूळ अंग वापरवानी रीत ललितविस्तरना समयथी चाली आवे छे. आवां अंगो त्रणे लिंगमां वपरायेलां छे.

नान्यतरजातिनां 'क' प्रत्ययान्त नामोने प्रथमाना एकवचनमां 'उं' प्रत्यय लागेलो छे अने बहुवचनमां तथा द्वितीयाना बहुवचनमां 'आइ', 'आइं', 'इ', 'इं', 'आ' अने 'आं' प्रत्ययो लागेला छे.

अभयदेव– सुहाइ, कलत्तइ, रज्जइ, दुरियइ.

देवसूरि – खंडुलाइं, गावडां, पन्हुत्तरइ, पसन्ना.

हेमचंद्र – रयणाइं, कुंभइं, वलया, विसमा.

हेमचंद्र – भग्गउं, पसरिअउं, वल्लहउं, एहउं, तेवडउं [प्रथमा एकवचन]

ऋग्वेदमां [पृ० १९४, ४६९–म० सं०] 'अद्भुता' (अद्भुतानि) कर्त्वा (कर्तव्यानि) विश्वा (विश्वानि) काव्या (काव्यानि) वगेरे, उक्त 'वलया'नी पेठे 'आ' प्रत्ययवाळा प्रयोगो अनेक मळे छे. ते जोतां 'वलया' वगेरेमां वपरायेला 'आ' नुं मूळ मळी जाय छे

अने 'गावडां' मां जे 'आं' लागेलो छे तेनुं मूळ पण ते 'आ' होय अथवा व्या० प्रा० ना 'आनि' ऊपरथी नीपजेलो ते 'आं' होय.

चालु गुजरातीमां पूर्वोक्त 'चंदु' जेवुं 'उ' प्रत्ययवाळुं रूप नथी देखातुं पण फक्त नान्यतरजातिमां 'भगउं' नी पेठे 'केळुं' वगेरे 'उं' प्रत्ययवाळां रूपो प्रचलित छे.

'ओ' प्रत्ययवाळां रूपो 'घोडो, छोकरो, लाडवो' वगेरे व्यवहारमां छे अने बहुवचनमां नरजातिमां 'आ' 'आओ,' तथा 'ओ' प्रत्ययनी अने नान्यतरजातिमां 'आं' प्रत्ययनी वपराश छे. आ उपरांत पहेली बन्ने विभक्तिमां मूळ अंग पण वपराय छे.

'छोकरो,' 'घोडो' वगेरेमां जे 'ओ' प्रत्यय छे तेना मूळमां वैदिक 'सो चित्' वाळो 'ओ' छे. अने घोटक:—घोडओ–घोडउ–घोडो ए रीते तेनो क्रमपरिवर्त छे. छोकरा, घोडा वगेरेमां जे 'आ' प्रत्यय छे ते वैदिक 'देवा:' 'जना:' प्रयोगना 'आ:' प्रत्ययनुं रूपांतर छे. 'माणसो' 'देवो' वगेरेमां छे तो पूर्वोक्त 'ओ' प्रत्यय परंतु ते बहुवचनमां फेरवायो छे अने 'छोकराओ' वगेरे प्रयोगोमांना 'आओ' नुं मूळ, उक्त 'आ:' अने 'ओ' ए बन्ने प्रत्ययना मिश्रणमां छे अर्थात् 'छोकराओ' वगेरेमां 'आ' अने 'ओ' एम बेवडो प्रत्यय लागेलो छे. अथवा वैयाकरण पाणिनिए वैदिक अने लौकिक उभय प्रकारना नामोने लगता प्रत्ययोने जणावतां प्रथमाना बहुवचनमां 'अस्' प्रत्यय जणावेलो छे. जे 'सखाय:' 'वाच:' वगेरे रूपोमां मूळरूपे जळवाई रह्यो छे. संभव छे के ते 'अस्,' 'ओ' रूपे परिणाम पामी 'माणसो' वगेरेमां लाग्यो होय. अहीं वधु संगत ए छे के 'माणसो' वगेरेमांनो बहुत्वसूचक 'ओ' प्रत्यय पूर्वोक्त एकवचननो 'ओ' न होय किन्तु ते आ 'वाच:'ना

'अस्'नो 'ओ' होय. एकवचननो 'ओ' लईए तो तेने बहुवचनमां फेरववो पडशे अने उक्त बहुवचनना 'अस्'नो 'ओ' लईए तो ते सीधो ज लागी शकशे. एथी 'माणसो' वगेरे रूपोमां उक्त 'अस्'नो 'ओ' लगाडवाने वांधो नथी. 'छोकराओ' वगेरेमां पण ते ज 'ओ' लेवो; पण तेवां रूपोमां बेवडो प्रत्यय लागेलो छे. 'छोकराओ' वगेरे रूपोना अंतिम 'आ-ओ' प्रत्ययनी अहीं चर्चा करी तो छे परंतु चालु भाषामां एवां रूपोनो व्यवहार वधारे जणातो नथी ए ध्यानमां राखवुं.

बीजी विभक्तिमां 'दीणयं' जेवुं शुद्ध प्राकृत रूप वपरायेलुं छे पण आवां रूपो अतिविरल छे. दय, संख वगेरे रूपो बीजी विभक्तिनां छे. अहीं विभक्ति लोपायेली छे, एटलुं ज नहीं किन्तु मूळ अंग 'दया' 'संख्या'नो अंत्य 'आ' पण 'अ'मां फेरवायेलो छे. अपभ्रंशमां सविभक्तिक नामना अंत्य स्वरनो ह्रस्व उच्चार पण थाय छे. (जुओ पृ० २०५, १५) ए धोरणे 'दया' अने 'संखा'नुं 'दय' अने 'संख' थयेलुं छे. घणे स्थळे नारीजातिना नामनी प्रथमा विभक्तिमां पण 'दय' अने 'संख' जेवां रूपो वपरायेलां छे अने 'उ' प्रत्ययवाळां रूपो पण आवे छे.

अभयदेव—निप्फलु, जुग्गय, पत्थण, महारिय, जत्त.

वादिदेवसूरि—संख, संख.

हेमचंद्र—त्रोड्डिअ, एह, स, मुइअ, गइअ, धण.

अभयदेव—विसंठुलु, अब्भुअउ.

साधारण रीते जोतां 'आ', 'ई', अने 'ऊ' ए त्रण प्रत्ययो नारीजातिना सूचक छे. अजा, प्रजा, दया, संख्या वगेरेमां 'आ' प्रत्यय छे. नारी, नदी, शची वगेरेमां 'ई' प्रत्यय छे अने वधू, करभोरू वगेरेमां 'ऊ' प्रत्यय छे. ऊगती गुजरातीमां 'ई' अने 'ऊ' प्रत्ययो घणे भागे सचवायेला छे त्यारे स्त्रीत्वसूचक 'ई' अने 'ऊ' प्रत्ययनी

सरखामणीमां 'आ' प्रत्यय सचवायो नथी. 'जुग्गया' ने बदले जुगय, 'संखा' ने बदले 'संख' 'गंगा' ने बदले 'गंग' अने 'जत्ता' ने बदले 'जत्त' एवां जे अनेक रूपो उपलब्ध छे ते नारीजातिसूचक उक्त 'आ' प्रत्ययनी वपराशनी अल्पता सूचवे छे. अने ए ज रीते—

(सं०) निष्फला प्रार्थना—(प्रा०) निप्फला पत्थणा। (अभय०) निप्फल्ल पत्थण।

(सं०) मदीया यात्रा—(प्रा०) मईया जत्ता—(अभय०)महारिय जत्त। वगेरे प्रयोगोमां जेम संस्कृत अने प्राकृतमां विशेष्य अने विशेषण बन्नेमां नारीत्वसूचक 'आ' प्रत्यय जळवायो छे तेम अभयदेव वगेरेनी गुजरातीमां ते बन्ने स्थळे ए 'आ' प्रत्यय टक्यो नथी ते पण उक्त हकीकतनुं ज समर्थन छे.

खरी वात तो ए छे के विशेषण अने विशेष्यमां लिंग अने संख्या समान होय तो ज विशेषण-विशेष्यभावनुं धोरण जळवाई रहे छे. संस्कृत अने प्राकृतमां समासमां नहीं वपरायेलां विशेषण मात्र विकारी छे एटले विशेष्यनी जातिने अनुसरनारां छे. सं० 'एका यात्रा' प्रा० 'एगा जत्ता' आने बदले भाषामां 'एक जात्रा' नो प्रयोग सुप्रतीत छे. ए प्रयोगमां 'जात्रा' विशेष्य छे अने 'एक' तेनुं विशेषण छे. विशेष्य नारीजातिमां छे तेथी विशेषण पण खरी रीते नारीजातिमां ज होवुं जोईए एटले 'एक' ने बदले 'एका' प्रयोग थवो जोईए; पण लोकभाषानी खासियत प्रमाणे एवा प्रयोगोमां स्त्रीसूचक 'आ' टकतो नथी; परंतु तेनुं ह्रस्व उच्चारण थाय छे. अहीं ए ख्यालमां रहे के 'एक जात्रा' प्रयोगनो 'एक' शब्द स्त्रीलिंगी ज छे. फक्त 'एका' ने बदले 'एक' उच्चारण थयुं छे. चालु गुजरातीनी पेठे आ रीत उक्त त्रणे कृतिओमां बराबर उप-

भाषामां विशेष्य प्रमाणे विशेषणमां प्रत्यय न होवानी पद्धतिने वैदिक भाषानी एवी पद्धतिनो टेको

लब्ध छे. आ अने आवा बीजा अनेक प्रयोगो जोतां भाषामां वपरातां विशेषणो विकारी पण छे अने अविकारी पण छे, ए हकीकतनुं मूळ उक्त रूपोमां रहेलुं मालूम पडे छे. वैदिक पद्धतिमां बराबर आवां तो नहीं पण आने मळतां अनेक रूपो मळे छे:

आगळ (पृ०७२ [४७]) जणावेला 'लोहिते चर्मन्,' 'परमे व्योमन्' वगेरे प्रयोगोमां 'चर्मन्' अने 'व्योमन्' विशेष्य छे. अने विशेष्य होवाथी ते बन्ने विशेषण प्रमाणे सातमी विभक्तिमां आववां जोईए छतां ते बन्ने विभक्तिना संसर्ग विनानां ज छे. एटले जेम उक्त वैदिक रचना विशेषण अने विशेष्यना समानविभक्तिकताना नियमने तोडी पाडे छे. तेम तेथी आगळ वधीने चालु भाषाना प्रयोगो विशेषण अने विशेष्यना सर्वथा विकारीपणाना नियमने अवगणे छे अने आ अवगणनानुं मूळ उक्त वैदिकरचनामां समायुं होय तो ना नहीं. उक्त 'व्योमन्' वगेरे प्रयोगो छे तो विभक्तिना संसर्ग विनाना परंतु तेमने सप्तमी विभक्तिनां समझवानां छे ए न भुलाय. 'वाया विसंठुलु' जेवा प्रयोगोमां 'विसंठुलु' शब्द 'वाया' नुं विशेषण छे एटले साधारण रीत प्रमाणे तो 'वाया विसंठुल' एम थवुं जोईए पण लोकभाषानुं तंत्र विशेष अनियत होवाने लीधे 'वाया विसंठुलु' प्रयोग पण थयो छे.

छोकरो, घोडो, लाडवो वगेरे प्रयोगो प्रथमा विभक्तिवाळा छे, तेमां मूळ अंग अकारान्त छे अने 'ओ' प्रत्यय छे ए ध्यानमां रहे. 'घोडो' वगेरेमां अंगने अकारान्त मानवामां न आवे तो 'छोकरी', 'घोडी' वगेरे स्त्रीलिंगी रूपोनी निष्पत्ति केवा प्रकारना अंगथी थशे?

ए वात तो नक्की छे, के 'छोकरी', 'घोडी' वगेरेमां मूळ 'छोकर+ई', 'घोडअ+ई' ए जातनो प्रकृति-प्रत्ययविभाग छे. 'घोडो' के 'छोकरो' उपरथी 'घोडी' के 'छोकरी' रूपो नथी नीपजी शकतां.

बारमा सैकानी गुजरातीमां ह्रस्व के दीर्घ इकारान्त वा उकारान्त स्त्रीलिंगी नामोने माटे प्रथमा अने द्वितीयाना एकवचनमां कोई खास प्रत्यय नथी. जेवुं ने तेवुं मूळ अंग ज वपराय छे वा तेना अन्त्य स्वरमां ह्रस्व के दीर्घ जेवो फेरफार करीने वपराय छे. बहुवचनमां पण क्यांय उक्त रीते मूळ अंग ज वपराय छे अने क्यांय मूळ अंगने 'उ' के 'ओ' प्रत्यय लागेलो छे.

अभयदेव—सिद्धिउ, सिद्धि.

वादिदेवसूरि—खाणि, वाणि.

हेमचंद्र—थलि, कुमारी, निद्दडी, रयणी, बुद्धी, माली.

चालु गुजरातीमां 'वेलडीओ', 'नदीओ' वगेरे 'ओ' प्रत्ययवाळां रूपो प्रतीत छे. काठियावाडीमां ए 'ओ' ने बदले 'य' श्रुतियुक्त 'उं' प्रत्यय पण प्रचलित छे. 'वाडीयुं' 'सखीयुं', 'आंगळीयुं' वगेरे.

वैदिक भाषामां नद्यः, वध्वः वगेरे रूपोमां 'य' अने 'व' श्रुतियुक्त 'अस्' प्रत्यय लागेलो छे. पालिभाषामां नदियो, इत्थियो, वधुयो वगेरेमां जे अंत्य–'य' श्रुतियुक्त–'ओ' छे तेनुं मूळ उक्त 'अस्' प्रत्ययमां छे. एक ए 'ओ' ने बदले प्राकृतमां 'उ' अने 'ओ' एम बे प्रत्ययो नोंधाया छे. अने हेमचंद्रनी जूनी गुजरातीमां पण ए बे प्रत्ययोनी भलामण छे. 'ओ' उपरथी 'उ' थईने ते बे प्रत्यय जुदा बनेला जणाय छे. 'ओ' वाळुं स्त्रीलिंगी रूप विशेष प्राचीन छे.

८९ उक्त त्रणे कृतिओमां त्रीजी विभक्ति माटे जुदा जुदा प्रत्ययो-

त्रीजी विभक्ति वाळां रूपो वपरायेलां छे.

एकवचन
- **अभयदेव**–पसाइण, नामिण, सूलिण, रसायणेण.
- **वादिदेव॰**– तवि, जिणि.
- **हेमचंद्र**–वाएं, तें अग्गिं, उड्डावंतिए, पुत्ते, सरिण, कन्नणेण, सिरेण.

बहुवचन	अभयदेव—छप्पन्निहिं वादिदेव०—सूरिहिं, जचंथिहि, लोयणिहि हेमचंद्र—गुणहिं, रुक्खेहिं

त्रणे कृतिओना उक्त प्रयोगो जोतां इण, एण, इ, एं, मात्र अनुस्वार, ए, (एकवचनमां) अने बहुवचनमां इहिं, हिं, इहि अने एहिं प्रत्ययो वपराया छे. चालु गुजरातीमां 'ए' प्रत्यय विशेष प्रचारमां छे. अने क्वचित् क्वचित् 'एण' अने 'इण' प्रत्ययो पण वपराय छे. छोकरे, घोडे, माणसे वगेरेमां 'ए' प्रत्यय छे अने 'केणे,' 'एणे,' 'तेणे' रूपोमां तथा 'किणि' 'इणि,' तिणि' जेवा केटलाक तळपदा ग्रामीण प्रयोगोमां 'एण' अने 'इण' वपराया छे.

वैदिकमां त्रीजी विभक्ति माटे मूळ 'एन' प्रत्यय छे. ए 'एन' प्रत्यय ज उक्त इण, एण, इ, एं, मात्र अनुस्वार के 'ए' ना मूळमां छे. पालिमां 'एन' अने प्राकृतमां 'एण' के 'एणं' प्रत्ययोनो प्रचार छे. ए जोतां गुजरातीना त्रीजी विभक्तिना एकवचने पोतानी मूळ परंपरा साचवी राखेली छे. बहुवचनमां वैदिक 'एभिस्' प्रत्यय छे. उपर्युक्त 'इहिं,' हिं, 'इहि' अने 'एहिं' प्रत्ययोनुं मूळ आ 'एभिस्'मां छे. चालु गुजरातीमां ए 'एभिस्' साथे संबंध धरावतो कोई प्रत्यय नथी सचवायो पण तेने बदले उक्त 'ए' प्रत्यय वपराय छे. एकवचननो 'ए' भाषामां बहुवचनमां पण वपरावा लाग्यो छे: छोकराओए, माणसोए,

बेवडा प्रत्ययो अने वैदिक भाषानी पद्धति

छोकरांए वगेरे रूपोमां उक्त 'ए' प्रत्यय तो छे पण ते अनुक्रमे उक्त रीते बहुत्वसूचक एवा आ-ओ, ओ अने आं प्रत्यय पछी लागेलो छे. एटले ए बधा अने एवा बीजा पण प्रयोगो बेवडा प्रत्ययवाळा छे ए ध्यानमां रहे. 'जेणे,' 'केणे' 'तेणे' 'एणे' ए बधा त्रीजी

विभक्तिवाळा सर्वनामना प्रयोगो छे. तेमां मूळ अंग 'ज,' 'क,' 'त' अने 'ए' छे, तेमने 'एण' प्रत्यय लाग्या पछी फरी पाछो 'ए' प्रत्यय लागेलो छे.

एकवार प्रत्यय लागेलुं रूप, अमुक वखते, लागेला प्रत्ययनो अर्थ सूचववा असमर्थ नीवडे छे त्यारे फरीवार तेने बीजो प्रत्यय लगाडवो पडे छे. ए धोरणे उक्त प्रयोगोने बेवडा प्रत्ययो लागेला छे. आ बेवडा प्रत्यय लगाडवानी पद्धति कांइ आजकालनी नथी, बारमा सैकामां तो ते हती ज एम 'जिणि' वगेरे रूपो ज बतावी आपे छे.

वैदिक भाषामां केटलांक क्रियापदोमां बबे अने त्रण त्रण विकरण प्रत्ययो लगाडवानुं विधान वैदिकप्रक्रियामां छे. ए जोतां बेवडा के त्रेवडा प्रत्ययो लगाडवानी पद्धति घणी ज जूनी जणाय छे. "'नेषतु'—नयतेर्लोट् शप–सिपौ द्वौ विकरणौ। तरुषेम–तरेम–इत्यर्थः तरतेर्विध्यादौ लिङ् उः–शप्–सिप् चेति त्रयो विकरणाः" [वै० प्र० ३–१–१८५]

चतुर्थीने बदले छट्ठी विभक्ति

९० उक्त कृतिओमां चोथी विभक्तिनो प्रयोग दुर्लभ छे, पण तेने बदले छट्ठीनो प्रयोग मळे छे. चोथीने बदले छट्ठी विभक्ति वापरवानी प्रथा वेदकाळ जेटली जूनी छे. ए वात आगळ कहेवाई गई छे. (पृ० ५२ [६])

'तेमाटे' अर्थना द्योतक निपातो

हेमचंद्र—वड्डत्तणहोतणेण—(वडपणमाटे) आ प्रयोगमां 'वड्डत्तणहो' एटलुं रूप षष्ठीवाळुं छे अने 'तणेण' शब्द 'ते माटे' ना अर्थने सूचववा जोडेलो छे.

हेमचंद्र कहे छे के 'ते माटे' अर्थने बतावबा 'केहिं', 'तेहिं', 'रेसि', 'रेसिं' अने 'तणेण' ए पांच निपातो वापरवाना छे. (८–४–४२५) वळी, विक्रमना

आठमा सैकाना विद्वान आचार्य हरिभद्रसूरि पोतानी समराइच्चकहामां 'रेसि'ने बदले '[271]रेसंमि' पद वापरे छे. त्यां तेनुं पाठांतर 'रसम्मि' पण नोंधायेलुं छे. तथा पंचाशकमां '[272]रेसिम्मि' पद ए ज आचार्य वापरेलुं छे. आ रीते 'रेसंमि' अने 'रेसिम्मि' निपातो पण तादर्थ्यना अर्थने सूचवे छे.

एमने निपातो एटला माटे कह्या छे के तेमनुं मूळ मालूम पडतुं नथी.

'रेषा' उपरथी 'रेसि' लाववानी भ्रामक कल्पना

सर्वनाम 'क' अने 'त' नुं तृतीयाबहुवचन 'केहिं', 'तेहिं' थाय छे. ए 'केहिं', 'तेहिं' उपरथी उक्त तादर्थ्य-सूचक 'केहिं', 'तेहिं' ने लाववानी कल्पना थयेली छे. तथा 'रेषा' ने प्रा० 'रेसा' रूपे कल्पी ते उपरथी 'रेसि' के 'रेसिं' उपजाववानी कल्पना थयेली छे. आचार्य हरिभद्र जेने **रेसंमि** अने '**रेसिंमि**' रूपे नोंधे छे अने हेमचंद्र जेने 'रेसि' वा 'रेसिं' आकारे जणावे छे एवा 'रेसिं' निपातनुं खरुं स्वरूप अनिश्चित छे त्यां एनी व्युत्पत्तिनी कल्पना पण शी रीते थई शके ?

९१ मारा नम्र मत मुजब उक्त बन्ने कल्पनाओ केवळ अक्षरसाम्यने आभारी छे. व्युत्पत्तिना क्षेत्रमां मात्र अक्षरसाम्यनो आधार सविशेष

---

२७१ "जो तण सद्धारहिओ दाणं देइ जसकित्ति **रेसंमि** ।
अहिमाणेण व एसो देइ अहं किं न देमि त्ति ॥
पाठांतर-'रसम्मि'-समरा० पृ० १५७ (जे०)

२७२ सव्वगुणपसाहणमो णेओ तिहिं अहमेहिं परिसुद्धो ।
दंसण-नाण-चरित्ताण एस **रेसिंमि** सुपसत्थो-पंचा० १९-गाथा-४० ।
टीका "रेसिंमि निमित्तम्-" अभयदेव ।

भ्रामक छे. एटले जे व्युत्पाद्यरूप माटे अर्थसाम्य के अक्षरसाम्य बंने साथे सचवाई शके एवी व्युत्पत्ति न करी शकाती होय त्यां गमे ते कल्पना करवा जतां साची व्युत्पत्तिने बदले व्युत्पत्त्याभासने समर्थन आपवा जेवुं थाय छे. वळी, प्रसंग छे तेथी कहुं छुं:

व्युत्पत्ति माटे केवल अक्षर-साम्य भ्रामक छे

'जूनी गुजराती भाषा' नामना पुस्तकमां तेना साक्षर लेखके पृ० १७५ ऊपर 'पहेल्वहेलुं' नी व्युत्पत्तिसंबंधे विचार कर्यो छे. तेमां तेमणे एम जणाव्युं छे के [" 'प्हेल व्हेलुं'. प्रथम 'प' नो लोप थतां बनतुं 'हल्लविहल्ल' रूप जूनी गुजरातीमां वपरायुं छे. एटलां वांनां 'हल्ल-विहल्ल' बेटा न्हइं आपिआं (संदर्भ ८४-२) तेम ज 'उवएसमाल-कहाणय छप्पय' मां 'हल्लविहल्ल' रूप वपरायुं छे"—पृ० १७५] तेमनुं आ लखाण मात्र अक्षरसाम्य ऊपर अवलंबतुं होई भ्रांतिमूलक छे. एमणे जे 'संदर्भ' अने 'उवएसमालकहाणय' नो आधार टांक्यो छे तेमां 'हल्लविहल्ल' शब्दनो अर्थ ज 'पहेल्वहेलुं' नथी. राजा कोणि-कना बे भाई नामे 'हल्ल' अने 'विहल्ल' छे ए जैनकथामां सुप्रतीत छे.

ते बाबतनां उदाहरणो

'एटलां वांनां हल्लविहल्ल बेटाहूं आपिआं' ए वाक्यनो खरो अर्थ आ प्रमाणे छे: एटलां वानां—एटली चीजो. हल्ल विहल्ल बेटाहूं—हल्ल विहल्ल बेटाने—हल्ल, विहल्ल नामना बेटाने—पुत्रोने. आपिआं—आप्यां.

तेम ज 'उवएसमालकहाणय' (गाथा ५२) मां "हल्ल विहल्लहं हार गुरुय गयवर सिउ दिद्धउ" हल्ल विहल्लहं—एटले हल्ल अने विहल्लने, गुरुय—मोटा, गयवर—हाथी, सिउ—साथे, हार—हार, दिद्धउ—दीधो.

आ रीते वाक्य के शब्दनो वास्तविक अर्थ समज्या विना मात्र अक्षर-साम्यने वळगवाथी व्युत्पत्तिना क्षेत्रमां घणा भ्रमो नीपजे छे.

ए ज लेखके 'पलांठी' शब्दने 'पट्टयष्टि' उपरथी लावतां (पृ० ७६) मात्र अक्षरसाम्यनो आधार लई एवो ज भ्रम पेदा करेलो छे. 'पलांठी' नुं सं० मूळ 'पर्यस्तिका' प्रा० 'पल्हत्थिआ' मां छे.

'निर्व्याधिक' उपरथी 'नरवो' (पृ० ३५०) 'गह्वरक' उपरथी 'गभारो' (पृ० ७६) अने 'प्रहरणक' उपरथी 'परोणो' (पृ० ३४८) लावतां ए उक्त लेखके मात्र अक्षरसाम्यने आधारे भ्रांत व्युत्पत्ति जणावी छे. खरी रीते 'नीरुज' (निर् + 'रुज्' वा रुजा) उपरथी 'नरवो' 'गर्भागार' उपरथी 'गभारो' अने 'प्रतोदन' उपरथी 'परोणो' शब्द आवेला छे.

अभिधान-चिंतामणिमां आचार्य हेमचंद्रे कहेलुं छे के "पटु-उल्लाघ-वार्त-कल्यास्तु नीरुजि" (काण्ड ३-श्लो० १३८) अर्थात् पटु, उल्लाघ, वार्त, कल्य अने नीरुज् ए बधा, रोगरहित-साजा-अर्थने दर्शावनारा पर्याय शब्दो छे. "निष्क्रान्तो रोगात् नीरुक्" एवी व्युत्पत्ति 'नीरुज्' शब्दनी तेमणे आपेली छे. 'रुज्' अथवा 'रुजा' बन्ने शब्दो लई शकाय एम छे. ए कांडना श्लोक १२६ मां 'रोग,' 'रुजा,' 'मान्द्य,' 'व्याधि' वगेरेने पर्यायशब्दो रूपे नोंधेला छे.

---

२७३ "नेव पल्हत्थियं कुज्जा-" (उत्तरा० अ० १, गा० १९) "नैव पर्यस्तिकाम्-जानुजङ्घोपरिवस्त्रवेष्टनात्मिकां कुर्यात्"—(उत्तरा० शांति० टीका)

पर्यस्तिका परिकरः पर्यङ्कः च-अवसक्थिका"

—(हेम० अभि० कां० ३, श्लो० ३४३)

चोरामां वा बीजे स्थळे वृद्ध माणसोनी-कड उपर कपडुं वींटीने-बेसवानी रीतनुं नाम पर्यस्तिका-पल्हत्थिया छे. भाषामां प्रचलित पलांठी के पलोंठी शब्दनो संबंध प्रस्तुत 'पल्हत्थिया' साथे छे. वडीलोनी सामे 'पर्यस्तिका' नी ढबे बेसवुं ए अविनय छे एम उत्तराध्ययनसूत्रमां कहेलुं छे.

'गह्वर' नो अर्थ 'पोतानी मेळे थयेलो मोटो खाडो' के 'गुफा' थाय छे. "अखातबिले तु गह्वरं गुहा" (अभिधान० कां० ४–श्लो० ९९) 'गह्वर' नो उक्त अर्थ अने 'गभारा' नो 'घरनी अंदरनो भाग' ए अर्थ; ए बे वच्चे लेश पण साम्य नथी. खरी रीते 'गर्भागार' शब्द उपरथी 'गभारो' शब्द आवेलो छे. जैनमंदिरमां ज्यां जिनमूर्तिओने प्रतिष्ठित करेली होय छे ते स्थळनुं नाम 'गभारो' छे. केटलाक लोको 'गभारो' ने बदले 'गंभारो' उच्चारण पण करे छे. 'गर्भागार' शब्दनी व्युत्पत्ति बतावतां आचार्य हेमचंद्र कहे छे के "अगारस्य गर्भो गर्भागारम्" "गर्भागारोऽपवरको वासौकः शयनास्पदम् (अभिधानचि० कां० ४–श्लो० ६१) अमरकोशमां[२७४] पण 'गर्भागार' शब्दने नोंधेलो छे. (पुरवर्ग कां० २–श्लो० ८) त्यां अमरनो टीकाकार कहे छे के 'गर्भागार' 'वासगृह' द्वे गृहमध्यभागस्य 'माजघर' इति प्रसिद्धस्य" —(पृ० ७४)

'प्रवयण' के 'प्रतोदन' उपरथी 'परोणो' शब्द आवेलो छे: प्रवयण–परवयण–परउयण–परोयण–परोणो. आचार्य हेमचंद्र कहे छे के "प्रतोदस्तु प्रवयणं प्राजनं तोत्र–तोदने (अभि० कां० ३–श्लो० ५५७) अमरकोशमां[२७५] पण एनी नोंध छे: (वैश्य–वर्ग कां० २ श्लो० १२) त्यां अमरनो टीकाकार कहे छे के "प्राजनं तोदनं तोत्रं त्रीणि वृषादेः ताडनोपयोगिनः तोत्रस्य आसूड चाबूक इति ख्यातस्य" (पृ० २१२).

'गुजराती भाषानुं बृहद् व्याकरण' ना समर्थ लेखक एक स्थळे (बृहद् व्याकरण–पृ० १३४) "दीसि अगासि तावडि दाझइ" एवुं (कान्ह० खंड–१ पवाडु–१५३) वाक्य आपे छे.

---

२७४. "गर्भागारं वासगृहम्"—(अमरकोश)
२७५ "प्राजनं तोदनं तोत्रम्"—(अमरकोश)

[ए आखुं पद्य आ प्रमाणे छे :

"वंदीवान घणा सीदाता दीठा पाडइ दाठि,

दीसि अगासि तावडि दाझइ राति वाइ टाढि"—(१,१५२)

अर्थ :—सीदाता—पीडाता एवा घणा वंदीवान दीठा के जेओ राडो पाडे छे. अगासि—अगासामां—छापरा विनानी खुल्ली जग्यामां—जेओ तावडि—तडकावडे के तडकामां दाझे छे अने रात्रे टाढ वाय छे]

उक्त व्याकरणकार आ वाक्यमां वपरायेल 'तावडि' शब्दना 'डि' ने पांचमी विभक्तिनो जूनो प्रत्यय कहे छे. तेओ लखे छे के "डी ('थी' ने ठेकाणे जूनो प्रत्यय)"

परंतु उक्त लखाण अक्षरसाम्यनी भ्रांतिमांथी नीपजेलुं छे. 'डि' ए पांचमीनो प्रत्यय नथी अने 'तावडि' ए रूप पांचमी विभक्तिनुं पण नथी. 'तडका'ना अर्थमां 'ताप' शब्दनी पेठे 'तावड' (तावडो) शब्द पण पालणपुर तरफनी भाषामां अने मारवाडी भाषामां प्रचलित छे. तेनुं त्रीजी विभक्तिनुं एकवचन 'तावडि' रूप छे. अन्त्य 'इ' त्रीजीनो प्रत्यय छे. मूळ 'सं०—ताप—प्रा०—ताव' शब्द छे अने 'ड' स्वार्थिक प्रत्यय छे. "खाटला तावडे नाख्या" (खाटला तडके नाख्या) एवुं वाक्य जैन प्रतिक्रमणसूत्र—अतिचारना पाठमां सुप्रसिद्ध छे. ए वाक्यमां 'तावडे' सप्तमी विभक्तिवाळुं रूप छे. 'डि' प्रत्यय पांचमीनो होय तो 'तावडे' रूप ज क्यांथी थाय ?

मात्र अक्षरसाम्यनो आधार लेवाथी केवा प्रकारनी भ्रांतिओ जन्मे छे ए सादी हकीकतने बताववा ज अहीं थोडुं विषयांतर जेवुं करीने पण आटलुं उदाहरणरूपे कचवाते मने जणाववुं पड्युं छे. 'जूनी गुजराती भाषा'ना अने 'गुजराती भाषानुं बृहद्व्याकरण' ना विद्वान लेखकोए करेली भाषासेवा विशेष प्रशंसनीय छे. अहीं तेमनी खोड बताववानो

मारो आशय नथी. परंतु गुजराती भाषानी व्युत्पत्तिनुं क्षेत्र एटलुं विशाळुं छे. एटले तेमां मारे तेने हाथे आवी भ्रांतिओ थाय ज. मारी आवी भ्रांतिओथी वाचनार ए एक ज उद्देशने लक्ष्यमां राखीने में आटलुं लखाण करेलुं छे. एथी कोई साक्षर एनो विपरीत अर्थ न ज करे एवी तेमने मारी फरी फरीने नम्र विनंति छे.

१२. उक्त ग्रंथे कृतिओमां वपराएलां छठ्ठी विभक्तिनां रूपो नीचे

छठ्ठी विभक्ति प्रमाणे छे:

अभयदेव—गुरुह, सयणह, निम्मणाह (ब०), दीणह.

देवसूरि—मेरुहु, सायर (लुप्त वि०), तारयहं (ब०), तेरहं, मोरहतणा, जेतणा (ब०), रयणह, भविआणं, मणुयहं (ब०) मणुयह.

हेमचंद्र—परस्सु, दुल्लहहो, सुअणस्सु, अइमत्तहं (ब०) गय (लुप्त वि०) कस्सु, चिंतंताहं (ब०) लोयहो, कंतुहे (स्त्री०) नायहं (ब०) कंतहो, सीहहो, जिणहे, लोअहं (ब०) निवइणो, —रयणिहुं.

उक्त रूपो उपरथी जणाय छे के एकवचनमां 'ह,' 'हु', 'हो'; 'स्सु', 'हु' अने 'णो' प्रत्यय छे. स्त्रीलिंगमां 'हे' प्रत्यय छे. बहुवचनमां 'हं' 'आणं' अने 'ह' प्रत्यय छे. 'तण' शब्द षष्ठी विभक्तिनो सूचक छे. अने एनो प्रयोग लुप्त के अलुप्त षष्ठी विभक्तिवाळा नामनी साथे थाय छे.

'नो' प्रत्यय षष्ठीना एकवचन माटे पालिभाषामां छे. अने 'णो' प्रत्यय प्राकृतमां छे. वैदिक भाषामां 'मधुनः' (षष्ठी एकवचन) वगेरे रूपोमां जे अन्त्य 'नस्' छे ते उपरथी उक्त 'नो' के 'णो' आवेल छे.

वैदिक 'स्य' (प० ए०) उपरथी पालि के प्राकृतमां 'स्स' अने ने द्वारा 'हु' अने 'स्सु' आवेला छे. अने ए 'सु' उपरथी 'हु' अने 'हो' ने आववानी संभावना उचित लागे छे. 'दिवस' ना 'स' नुं 'ह' उच्चारण विहित छे. [८-१-२६३] तेम 'सु' प्रत्यय उपरथी 'हु' अने 'हो' प्रत्यय आववाने बाध नथी जणातो. 'ह' प्रत्यय पण उक्त 'स्स' मांथी जन्मेलो छे. अहुरो (असुरः), हो (सः) [खोरदेह-अवेस्ता पृ० १५४, २२७] वगेरे प्रयोगोमां 'स' ने बदले 'ह' बोलवानी पद्धति अवेस्ता भाषामां सुप्रतीत छे. एटले ए रीत घणी जूनी जणाय छे.

श्रौरसेनी 'हे' नो संबंध थोडे घणे अंशे 'स्य' साथे जोडी शकाय; परंतु तेनुं मूळ बराबर स्पष्ट कळातुं नथी. खोरदेहअवेस्ता पृ० १८१ उपर षष्ठीना एकवचन माटे 'अहुरह्या' रूप नोंधेलुं छे. तेमां 'अहुर' प्रकृति छे अने 'ह्या' प्रत्यय छे. प्रस्तुत 'ह्या' ए प० ए० 'स्य'

---

२७६ 'स' ने बदले 'ह' ना उच्चारणवाळा अनेक प्रयोगो खोरदेहअवेस्तामां मळे छे. तेमांना थोडाएक आ नीचे आपुं छुंः

अस्मात्–अह्मात्–पृ०६१	समदश–हमदश–पृ० १५४
सा–हा–पृ०६५,	अस्मि–अहिम–पृ०१५४
अस्ति–अहि–पृ०७८	समाः–हमा–पृ०१२६
सव्यः–हव्य–पृ०२७४	

प्राकृतभाषामां 'तस्य'-के 'तस्याः' ने बदले 'से' रूपनो व्यवहार सुप्रसिद्ध छे (८-३-८१ हेम०) खोरदेहअवेस्तामां 'तस्य' के 'तस्याः' ना अर्थमां अनेक स्थळे 'हे' रूप वपरायेलुं छे (पृ० २२७ तथा २५६) ए प्रा० 'से' अने आवेस्तिक 'हे' वच्चे विशेष साम्य छे.

वळी, क्यांय 'ह' ने बदले 'स' पण वपरायो छे.

'अहि' ने बदले 'अस्ति'–(खोर० अ० पृ० १६)

नुं जुदुं उच्चारण छे. एटले षष्ठीना एकवचन उक्त 'हे' नो संबंध 'स्य' ना भिन्न उच्चारण 'ह्य' साथे जोडी शकाय एम छे. 'ह्य' मां 'य' छे तेथी तेनुं 'हे' एवुं परिणामांतर थवुं अशक्य नथी. आ रीते जोतां 'ह्य' के 'हे' ए बन्नेना मूळमां वैदिक 'स्य' ज रहेलो छे. वळी, 'जरथुस्त्रहे, 'स्पितामहे'' 'अस्पहे' (खोरदेहअवेस्ता पृ० २२८, २८३) वगेरे प्रयोगोमां अवेस्तानी भाषामां [२७७]षष्ठीविभक्तिना एकवचनमां 'हे' प्रत्यय वपरायेलो छे. हेमचंद्रे स्त्रीलिंगी नामने माटे षष्ठी विभक्तिमां जे 'हे' प्रत्यय बताव्यो छे ते 'हे' अने उक्त आवेस्तिक 'हे' ए बे वच्चे संबंध बांधी शकाय के केम ए प्रश्न छे परंतु ए बन्ने प्रत्ययोमां साम्य तो घणुं छे. बहुवचननो 'आणं' तो वैदिक 'देवानाम्' (पा० देवानं, प्रा० देवाणं) मां वपरायेला 'आनाम्' साथे संबंध धरावे छे. 'हं' प्रत्यय वैदिक 'सर्वेषाम्' पालि 'सब्बेसं' अने प्राकृत 'सब्वेसिं' ना अंत्य 'सं' तथा 'सिं' प्रत्यय साथे संबंध धरावे छे अने 'हुं' प्रत्यय, उक्त 'हं' नुं उच्चारणान्तर छे. 'मोरहतणा' अने 'जेतणा' रूपोमां वपरायेलो अंत्य 'तण' षष्ठीनो सूचक छे. 'मोरह' ए रूप पोते ज षष्ठ्यंत छे. छतां ए रूप षष्ठीनो अर्थ बतावबा असमर्थ नीवड्युं त्यारे तेने संबंधसूचक 'तण' लगाडीने षष्ठीनो अर्थ बताव्यो छे. आचार्य हेमचंद्रे 'संबंध'नो अर्थ सूचववा माटे 'तण' अने 'केर' पदो वापरवानी भलामण करेली छे अने 'अम्हहंतणा' वगेरे उदाहरणो पण जणावेलां छे: (८-४-४२२ हे.) ए रीते अहीं षष्ठीसूचक प्रत्यय वेरडायो छे. 'जेहतणा'–'जे तणा' ए रूप पण ए रीते बनेलुं छे.

---

२७७ षष्ठीना एकवचन माटे 'हे' प्रत्ययवाळां अनेक रूपो खोरदेहअवेस्तामां वपरायेलां छे:

असुरस्य-अहुरहे-पृ० ६८. विश्वस्य–वीस्पहे–पृ० १५१. श्यामस्य-सामहे-पृ० २२९.

आ 'तण' नी उत्पत्ति विशे एक मत सुनिश्चित नथी. केटलाक विद्वानो षष्ठीविभक्तिवाळा आत्मनः—अत्तनो—अत्तणो रूपना अंगभूत 'त्तण' उपरथी उक्त 'तण' ने नीपजावे छे. त्यारे केटलाक विद्वानो तद्धितना 'पुरातन' वगेरे शब्दोमां वपरायेला 'तन' प्रत्यय उपरथी उक्त 'तण' नी व्युत्पत्ति बतावे छे. संबंध अर्थने सूचववा माटे कीय (परकीय, जनकीय, राजकीय ६—३—३१ हे०), इक (वार्षिक, मासिक ६—३—८० हे०), ण (पुराण ६—३—८६ हे०) अने तन (पूर्वाण्हेतन, अपराण्हेतन, सायंतन, चिरंतन, अद्यतन ६—३—८७,८८ हे०) वगेरे अनेक प्रत्ययो वपराय छे. 'तन' वगेरे प्रत्ययो लाग्या पछी तैयार थयेलुं अंग विशेषण रूप बने छे, अने तेथी ते विशेष्यनी पेठे लिंग अने विभक्ति—वचनोने धारण करे छे: रामतणो भाई. रामतणी वात. रामतणुं कुळ. मारा विचार मुजब 'पुरातन' वगेरेमां वर्तता 'तन' उपरथी 'तण' लाववामां आवे तो विशेष्य—विशेषणभावनी घटना बराबर थशे. जो के ए 'तन' संस्कृतमां सार्वत्रिक प्रत्यय नथी तो पण लोकभाषामां एने सार्वत्रिक थयेलो मानी शकाय एम छे. एवां तो बीजां घणां उदाहरणो छे के जे प्राचीन समयमां सार्वत्रिक न होय अने पछीथी सार्वत्रिक थई गयां होय:

षष्ठीसूचक 'तण' नी व्युत्पत्तिचर्चा

सप्तमीनो 'स्मिन्' प्रत्यय संस्कृत व्याकरणनी दृष्टिए सार्वत्रिक नथी पण लोकभाषामां तो ए सर्वत्र व्यापक जेवो छे अने एम छे तेथी ज पालिभाषामां अने आर्षप्राकृतमां 'बुद्धस्मिं,' 'बुद्धम्हि' (पा०) 'लोगंसि,' 'बंभचेरंसि' (आ०) वगेरे प्रयोगो उपलब्ध छे.

२७८ संस्कृत व्याकरणमां सप्तमीना एकवचनो 'स्मिन्' प्रत्यय मात्र सर्वादि 'सर्वनामो' पूरतो छे—"ङसि—ङ्योः स्मात्—स्मिनौ"—(पाणि० ७।१।१५। काशिकावृत्ति)

आपणी भाषामां प्रचलित षष्ठी विभक्तिवाळां (रामतणो के रामनो वगेरे) रूपो विशेषण जेवां छे. एटले तेमनी विशेषणरूपता टकाववा विशेषणरूप 'चिरंतन' ना 'तन' उपरथी 'तण' आवे तो विशेष सुगमता थाय एम छे.

'आत्मन:'—'अत्तनो'—'अत्तणो' रूपना 'तणो' अंश उपरथी 'तण' ने नीपजावीए तो तेमां नीचेनी आपत्तिओ छे:

१. 'आत्मनः' रूप फक्त षष्ठी–विभक्तिवाळुं ज नथी, द्वितीया अने पंचमीमां पण ए ज रूप वपराय छे एथी प्रस्तुतमां षष्ठीना चोक्स अर्थनी असंगति थशे.

२. 'त्तनो' अंशमां 'त्तन्' एटलो अंश 'आत्मन्' ना 'त्मन्' नुं रूपांतर छे अने मात्र 'अस्' षष्ठीसूचक प्रत्यय छे एथी 'त्तनो' उपरथी आणेलो 'तण' षष्ठीने केम सूचवी शकशे? वळी 'त्तनो' ना 'त्त' अने 'ओ' ने कोई पण सबळ आधार विना वदली पण केम शकाय?

३. उक्त 'त्तनो' अंशमां विशेष्य प्रमाणे परिवर्तन पामवानुं सामर्थ्य ज नथी तो ए उपरथी उपजेला 'तण' मां ए सामर्थ्य शी रीते आवे?

उक्त 'चिरंतन' मां आवेलो 'तन' संबंधसूचक प्रत्यय छे एथी ए उपरथी 'तण' ने लावीए तो उक्त एक पण आपत्तिनो संभव नथी. चालु गुजरातीना षष्ठी विभक्तिना 'नो' 'नी' 'नुं' प्रत्ययोना मूळमां पण आ 'तन' प्रत्यय छे.

पंचमी विभक्ति

९३ उक्त त्रणे कृतिओमां पंचमीनो प्रयोग विरल छे. हेमचंद्रना "वच्छहे गृण्हइ फलइं" ए वाक्यमां 'हे' प्रत्यय पंचमीनो सूचक छे. तृतीया अने पंचमी विभक्तिनो अर्थ लगभग सरखा जेवो छे. तृतीयाना बहुवचनमां वैदिक–भाषामां

'भिस्' प्रत्यय वपराय छे. ते उपरथी पालिमां अने प्राकृतमां 'हि' प्रत्यय आवेलो छे. प्रस्तुत 'हे' नुं मूळ आ 'हि' मां छे. तृतीयानो 'हि' बहुवचननो छे, पण लोकभाषामां ते एकवचनना 'हे' नुं मूळ बनी शके छे. वैदिक भाषामां अने लोकभाषामां विभक्ति अने वचनना व्यत्ययनो पार ज नथी.

९४ सप्तमी विभक्तिनां रूपो ते कृतिओमां नीचे प्रमाणे छे :

सातमी विभक्ति अभय०—सत्थिहिं (ब०), जग (लुप्त वि०)
देवसूरि—अडविहिं, सूरिहिं (ब०) कमलि, ठावडइ, मेहागम, (लुप्त वि०), सरयागमि,—रयणिहिं.

हेमचंद्र—महिहि, एक्कहिं, अक्खिहिं, पंकइ, अप्पिए, दिट्ठइ, गयणि, सव्वंगे, पट्टणि, हट्टि.

उक्त रूपोमां 'हिं', 'इ', 'हि' अने 'ए' प्रत्ययो वपरायेला छे.

वैदिक भाषामां सप्तमीना 'देवे' रूपमां वपराता 'ए' प्रत्यय साथे प्रस्तुत 'इ' अने 'ए' प्रत्ययनो संबंध छे. अने वैदिक 'सर्वस्मिन्' पालि 'बुद्धम्हि' मां वपरायेला 'म्हि' साथे उक्त 'हिं' अने 'हि' नो संबंध जोडी शकाय एम छे. चालु गुजरातीमां 'ए' प्रत्यय टकी रह्यो छे. 'घरे गयो', 'खळे गयो', 'खेतरे गयो' वगेरे प्रयोगोमां सप्तमीना 'ए' प्रत्ययनो प्रयोग तद्दन स्पष्ट छे. गुजरातीमां सप्तमीना अर्थ माटे 'महिं' के 'मइं' वचन पण हाल वपराय छे. पालिना सप्तमीना उक्त 'म्हि' प्रत्यय साथे ते 'महिं' के 'मइं' अने 'में' (हिन्दी) नी सरखामणी थई शके एम छे. सप्तमीना सूचक 'मां' अने 'मांहि' बोलनो संबंध पण ते 'महिं' साथे घटावी शकाय खरो. केटलाक भाषाविज्ञो 'महिं' साथे 'मध्ये 'नी सरखामणी करे छे. गुजरातीमां कोई पण प्रत्यय लगाड्या विना

पण सप्तमीनो अर्थ दर्शावी शकाय छे. 'जग जश व्याप्यो' एवां वाक्योमां 'जग' सप्तमी विभक्तिवाळुं पद छे. अभयदेवनी कृतिमां आवा ज अर्थमां 'जग' पद वपरायेलुं छे.

संबोधननी विभक्तिओनी प्रक्रिया प्रथमा जेवी छे. एटले ए माटे खास कशुं लखवानुं नथी.

९५ हवे ए त्रणे कृतिओमांनां केटलांक क्रियापदो, कृदंतो, सर्वनामो अने अव्ययोनो विचार करीए:

बारमा सैकानी
क्रियापद विभक्ति

अभयदेव—द्वि० पु० ए० कुणसु, जय, पालिहि, पालहि, भव, अवहारि, जोयहि, पाल, पसीअसु.

,, ,, व० पसीयह.

तृ० पु० ए० होइ, मदउ, हरउ, थंभेइ, भुंजइ, नियइ. पच्चइ (कर्मणि).

,, ,, व० लहंति, झायहि, सेवहि.

प्र० पु० ए० होसु (भविष्य०).

वादिदेव०—द्वि० पु० ए० ....

,, ,, व० वंदओ, नमहु.

तृ० पु० ए० जयओ, सिंचइ, सुमरियइं, नंदउ, कहेइ, प्पल्हइ.

,, ,, व० मज्जहिं, हरिसिज्जंति, संपडहिं.

हेमचंद्र—तृ० पु० ए० जाणीअइ (कर्मणि), परिहरइ, गृण्हइ, गज्जहि, अच्छइ, माणिअइ, धरेइं, होसइ, होइसइ. वण्णिअइ, कप्पिज्जइ, गिलिज्जइ

(कर्मणि). चइज्ज, भमिज्ज, ठवइ, होइ, पहुच्चइ.

,, ,, व० भुंजंति, घेप्पंति (कर्मणि). सरइं, वोल्लहिं, अणुहरहिं. होसइ (भविष्य०).

द्वि० पु० ए० आणहि, देक्खु, अच्छि, विसूरहि, भणि.

प्र० पु० ए० किज्जउं, कीसु, करीसुं, पावीसुं.

९६ उक्त रूपो ऊपरथी नीचेना प्रत्ययो तारवी शकाय छे:

प्र० पु० ए०—उ, उं। द्वि० पु० ए०—सु, उ, हि, इ, ०—कांइ नहीं।

,, वहुव० ह, हु, ओ।

तृ० पु० ए०—इ, इं, उ, हि।

,, वहु०—न्ति, हिं, इं।

क्रियापदना प्रत्ययोनी व्युत्पत्ति

बीजा पुरुष एकवचन अने वहुवचनना प्रत्ययो आज्ञार्थने सूचवे छे. आज्ञार्थनो 'सु' वैदिक प्रत्यय 'स्व' नी साथे बराबर मळतो आवे छे. 'हि' पण वैदिक 'हि' साथे संबंध राखे छे. 'इ' प्रत्यय उक्त 'हि' मांथी नीपजेलो छे. अने 'इ' प्रत्ययवाळुं रूप वेदोमां पण मळे छे. एटले बारमा सैकामां वपरातो आज्ञार्थसूचक 'इ' प्रत्यय कांई नवो नथी पण वेदकाळ जेटलो जूनो छे, ए ख्यालमां रहे. आ बाबत हुं आगळ बतावी गयो छुं. (पृ० ६६ कं० ३२)

चालु भाषामां वपरातां कर, लख, भण वगेरे क्रियापदो पण मूळे 'इ' प्रत्ययवाळां ज छे.

कोई पण प्रत्यय विनानुं आज्ञार्थ-क्रियापद वेदनी भाषामां पण उपलब्ध छे. पच, लिख, भव वगेरे.

बहुवचनमां वपरायेला 'ह' नुं मूळ, वैदिक 'थ'—साथे मळता आवता अने पालिमां वपराता 'थ' (आज्ञार्थ द्वितीय पुरुष बहुवचन) अने प्राकृतमां वपराता (आ० द्वि०पु० व०) 'ह' प्रत्ययमां छे. 'हु' नो संबंध पालिमां वपराता 'व्हो' (भवव्हो, ददव्हो, कुरुव्हो) साथे छे, अने 'वंदओ'—'वंदो'—'वांदो' प्रयोगमां वपरायेला 'ओ' नो संबंध पण उक्त 'व्हो' साथे जोडी शकाय एम छे: व्हो—हो—ओ एवुं परिवर्तन संभवे छे. अने द्वितीय पुरुषनो सूचक 'उ' प्रत्यय उक्त 'ओ' मांथी फळेलो छे. वैदिक संस्कृतमां बीजा पुरुषना आज्ञार्थ बहुवचनमां 'ध्वम्' प्रत्ययनो व्यवहार छे. उक्त 'व्हो' अने आ 'ध्वम्' वच्चे जे साम्य टकी रहेलुं छे ते स्पष्ट छे. चालु भाषामां करो, लखो, भणो वगेरे द्वितीयपुरुष सूचक आज्ञार्थ क्रियापदोमां वपराता 'ओ' नुं मूळ उक्त 'व्हो' मां छे. आज्ञार्थ त्रीजा पुरुष एकवचनमां पण 'उ' अने 'ओ' प्रत्यय वपरायेला छे. वैदिक 'तु' अने प्राकृत 'उ' मांथी ए 'उ' प्रत्यय आवेलो छे. अने 'ओ' पण उक्त 'उ' नुं रूपान्तर छे. "जयो जयो मा जुगदंबे" मां वपरायेला 'जयो' अने अहीं वपरायेला 'जयओ' ए बे वच्चे साधारण उच्चारण भेद सिवाय बीजो कशो भेद नथी.

अहीं वर्तमान काळना त्रीजा पुरुषना एकवचनमां 'इ,' 'इं' अने 'हि' प्रत्ययो वपरायेला छे. बहुवचनमां 'न्ति,' 'हिं,' अने 'इं' प्रत्ययो वपरायेला छे. वैदिक 'ति' प्रत्यय, पालि 'ति' अने प्राकृत 'इ' ऊपरथी त्रीजा पुरुषना एकवचनना 'इ' अने 'इं' प्रत्यय आवेला छे. वैदिक 'न्ति'—पालि 'न्ति' अने प्राकृत 'न्ति' ऊपरथी बहुवचननो 'न्ति' प्रत्यय आवेलो छे. आचार्य हेमचंद्रे त्रीजा पुरुषना बहुवचनमां 'हिं' प्रत्ययनुं विधान करेलुं छे. अहींनो 'हिं' अने हेमचंद्रे कहेलो (८-४-३८२) 'हिं' बन्ने एक ज छे. आ 'हिं' प्रत्यय ऊपरथी त्रीजा

पुरुषना बहुवचननो 'हिं' प्रत्यय नीकळ्यो छे. ते बेमां मात्र साधारण उच्चारणनो भेद छे. आंं तृ० पु० बहुवचनमां वपरायेलो 'इं' ते बहुवचनना उक्त 'हिं' साथे समानता धरावे छे. ते बे वचे मात्र 'ह' श्रुति जेटलो भेद छे. वळी एकवचनमां वपरायेलो 'हि' पण उक्त 'हिं' साथे पोतानुं स्वत्व साचवी रह्यो छे. उच्चारणनी दृष्टिए जोतां ए बे वचे नासिक्य श्रुतिनी विशेषता छे. अने अर्थदृष्टिए एकवचन बहुवचन जेवो भेद पण छे. परंतु आवो वचनभेद तो वेदोनी भाषामां पण प्रचलित छे. एटले परंपराए पण वेदभाषामूलक एवी जगती गुजराती भाषामां एवो भेद थाय न ज केर. तात्पर्य ए के उक्त कृतिओमां वपरायेला 'हिं' 'हि' अने 'इं' ए त्रणे त्रीजा पुरुषना सूचक छे अने त्रणे परस्पर समानतावाळा छे.

आ 'हिं' प्रत्ययनुं मूळ कळी शकातुं नथी. कदाच वैदिक 'सन्ति' अने आवेस्तिक 'हंति' क्रियापदमां न्यूनाधिकता करीने आपणा पूर्वजोए आ 'हिं' प्रत्यय नीपजावेलो होय. 'हंति' क्रियापद खोरदेहअवेस्तामां (पृ० ५,२३,३५) अनेकवार वपरायेलुं छे. अथवा तृतीय पु० एकव० ना वैदिक 'ति' उपरथी आवेला उक्त 'इ' प्रत्ययमां 'ह' श्रुति अने नासिक्य श्रुतिनी विशेषता उमेरी तेने बहुत्वसूचक 'हिं' प्रत्ययरूपे योजवामां आव्यो होय एवी संभावना थई शके.

---

२७९ वाग्व्यापारनी दृष्टिए स्वरमां 'ह' नुं मिश्रण सर्वथा स्वाभाविक छे. आजे पण 'एवुं' ने बदले 'हेवुं' अने 'आवां' ने बदल 'हावां' नो ध्वनि सुप्रतीत छे. एथी 'इ' प्रत्ययमां 'ह' श्रुति उमेरायानी कल्पना असंगत नथी.

२८० नासिक्यश्रुति माटे हेमचंद्र पोते ज कहे छे के अ, इ अने उ वर्ण (ह्रस्व अने दीर्घ) जो विराममां आवेला होय तो तेनी नासिक्यश्रुति पण थाय छे अर्थात् विराममां आवेलो अ-अँ, इ-इँ, उ-उँ ए रूपे पण बोलाय छे. हेमचंद्र १-२-४१ (अ-इ-उ-वर्णस्य अन्ते अनुनासिकः—अनीदादेः) सूत्रमां उक्त हकीकत कहेली

उक्त कृतिओमां पहेला पुरुषनुं बहुवचन वपरायुं नथी. एकवचनमां 'उं' अने 'उ' प्रत्यय वपराया छे. वैदिक 'मि' प्रथम पुरुषना एकवचननो प्रत्यय छे. ते ऊपरथी 'उं' प्रत्यय सीधी रीते आवी शके एम नथी परंतु प्रथम पुरुषना बहुवचनमां वपराता प्रा० 'मु' साथे ए 'उं' के 'उ' नी सरखामणी करी शकाय एम छे.

आचार्य हेमचंद्रे प्रथम पुरुषना बहुवचनमां 'हुं'[२८३] प्रत्यय जणावेलो

छे अने साम-सामँ, खट्वा-खट्वाँ, दधि-दधिँ, कुमारी-कुमारीँ, मधु-मधुं एवां उदाहरणो पण आपेलां छे. हेमचंद्रनुं आ विधान जोतां उक्त नासिक्यश्रुतिनी कल्पनाने प्रबल संवाद मळे छे. आ दृष्टिए जोतां 'इ' प्रत्यय 'इं' रूपे बने अने तेमां वाग्व्यापारनी दृष्टिए 'ह' श्रुति ऊमेराय ए कल्पना असंगत भासती नथी.

२८१ विद्वानोमां एक एवी कल्पना प्रवर्ते छे के संस्कृत वा प्राकृत क्रियापदोमां वपराता पुरुषवाचक प्रत्ययो 'अस्' धातुनां रूपो ऊपरथी आव्यां छे वा सर्वनामोनां रूपो ऊपरथी आव्यां छे. तेमनी आ हकीकत समझाय ए माटे आ नीचे वर्तमानकाळ तृ० पु० ना प्रत्ययो अने 'अस्' धातुनां रूपो तथा 'अस्मद्' सर्वनामनां रूपो आपुं छुं:

	वैदिक प्र०		'अस्' धातुनां रूपो—	
३—	ति	अन्ति	अस्ति	सन्ति
२—	सि	थ	असि	स्थ
१—	मि	म	अस्मि	स्म
	पालि प्र०		'अस्'-नां रूपो	
३	ति	अंति	अत्थि	संति
२	सि	थ	असि, अहि	अत्थ
१	मि	म	अस्मि, अम्हि	अस्म, अम्ह
	प्राकृत प्र०			
३	ति, इ	अंति	अत्थि	संति
२	सि	थ, ह	असि	त्थ
१	मि	मो, मु, म	म्हि	म्हो म्हु म्ह

छे. जो के ते आ कृतिओमां वपरायो नथी तो पण प्रसंगवशात् तेनी उत्पत्ति विशे थोडुं जणावी दउं. 'उं' अने 'हुं' मां 'ह' ध्वनिपूरतो भेद छे. 'उं' मां 'ह' श्रुति भळवाथी 'उं' नो 'हुं' थइ जाय एम छे. आ 'ह' श्रुतिनो स्पष्ट खुलासो थई शकतो नथी, परंतु उच्चारणोनी विविधताने कारणे स्वरमां 'ह' ने भेळवीने बोलतां सुगमता थती होय तो ना नहीं. घणा लोको 'आवुं' ने बदले 'हावुं' अने 'एवुं' ने बदले 'हेवुं' बोले छे; ए सुप्रतीत छे.

बारमा सैकानी गुजराती भाषामां प्रथम पुरुष एकवचनमां 'उं' प्रत्ययवाळां रूपो छे. तेम चालु गुजरातीमां करुं छुं, भणुं छुं, लखुं छुं वगेरे क्रियापदो 'उं' प्रत्ययवाळां छे.

उक्त बधा प्रत्ययो अने 'अस्' धातुनां रूपो जोतां अने तेमने बराबर सरखावतां एम जणाय छे के प्रत्ययो अने रूपो वच्चे समानतानी कल्पना निराधार नथी.

'अस्मद्' नां वैदिकरूपो		पालिरूपो		प्राकृतरूपो	
एक०	बहु०	एक०	बहु०	एक०	बहु०
अहम्	अस्मे, वयम्।	अहं,	अम्हे, वयं।	अहं, अहयं, हं	अम्हे, मे
				अम्हि, अम्मि, म्मि	अम्ह
					अम्हो
					मो
					वयं

'अस्मद्' नां आ रूपो पैकी अहं, अहयं के हं साथे हेमचंद्रे जणावेला प्रथम पुरुषना बहुवचनना 'हुं' प्रत्ययनी सरखामणी करी शकाय एम छे अने एकवचनना 'उं' प्रत्ययनी सरखामणी 'वयं' वा 'मयं' रूप साथे अथवा एकव० 'अहयं' साथे के प्राकृत 'मु' वा 'मो' प्रत्यय साथे करी शकाय एम छे. 'हुं' अने 'उं' ए बन्ने प्रत्ययोने पेला पुरुषना बहुवचन अने एकवचनमां वापरवानी सूचना अनुक्रमे ८-४-३८६ अने ८-४-३८५ सूत्रमां आचार्ये करेली छे. 'हुं' अने 'उं' प्रत्ययोनुं निश्चित मूळ हुं शोधी शक्यो नथी तो पण सरखामणीनी कल्पनाने अहीं दर्शाववानी वृत्ति रोकी शक्यो नथी.

९७ उपर जणावेलां क्रियापदोमां केटलांक भविष्यकाळनां क्रियापदो छे. अने केटलांक वर्तमानकाळनां पण कर्मणि-क्रियापदो छे.

भविष्यकाळनां क्रियापदो

'होसु,' 'करीसुं' अने 'पावीसुं' ए त्रणे क्रियापदो प्रथम पुरुष एकवचन भविष्यकाळनां छे. अंत्य 'उ' के 'उं' प्रथम पुरुषने सूचवे छे अने 'स्' भविष्यकाळने बतावे छे. वैदिक भाषामां भविष्यकाळने सूचववा 'स्यति,' 'स्यते' वगेरे 'स्' वाळा प्रत्ययो छे. तेम अहीं पण भविष्य-काळने सूचववा 'उ' के 'उं' प्रत्ययने 'स्' लगाडेलो छे. 'स्' ने बदले 'ह्' पण लगाडी शकाय छे. होहु, करीहुं अने पावीहुं-एम ए रूपो 'ह्' वाळां थई भविष्यकाळने सूचवी शके छे.

बारमा सैकानां आ रूपो वर्तमान गुजरातीमां पण जेवां ने तेवां ज रह्यां छे. करीशुं—करशुं, पामीशुं—पामशुं. फक्त 'स्' ना 'श्' जेटलो भेद थयो छे.

'होसइ' रूप त्रीजा पुरुष एकवचननुं छे. तेनो अंत्य 'इ' त्रीजा पुरुषने सूचवे छे अने 'स' भविष्यकाळने. वैदिक भाषामां त्रीजा पुरुष एकवचननो 'स्यति' अने 'होसइ' नो 'सइ' ए बेमां एकदम निकटता छे. चालु भाषामां वपरातुं होशे—हशे क्रियापद अने उक्त 'होसइ' ए बेमां सर्वथा समानता छे.

विध्यर्थ क्रियापदो

९८ 'भमिज्ज' अने 'चइज्ज' क्रियापदो कर्तृसूचक छे, पण ते विध्यर्थने बतावे छे. विध्यर्थ एटले 'आम करवुं जोईए.' 'भमिज्ज'—भमजे—भमवुं जोईए. 'चइज्ज' एटले तजजे—तजवुं जोईए. ए क्रियापदोमां 'इज्ज' नो 'ज्ज' प्रत्यय अंश

छे अने 'इ' तेनो पूर्वग छे. वैदिक भाषामां विध्यर्थ माटे 'यात्' वगेरे आदिमां 'य' वाळा प्रत्ययो वपराय छे. पालिभाषामां 'एय्य' वगेरे प्रत्ययो छे अने प्राकृतमां 'एज्ज' वा 'इज्ज' के 'एज्जा' वा 'इज्जा' नो प्रचार छे. उक्त 'भमिज्ज'–'चइज्ज'मां 'इज्ज' प्रत्यय लागेलो छे. उक्त यात्–एय्य–एज्ज ए बधां परस्पर समानता-वाळां छे.

आ उपरांत कर्तृसूचक एक 'ज्जइ' प्रत्यय पण विध्यर्थने सूचवे छे. जे हालनां करिज्जइ-करजे, भमिज्जइ-भमजे, पामिज्जइ-पामजे वगेरे रूपोमां वपरायेलो छे.

९९ जाणीअइ–जणाय छे, कप्पिज्जइ–कपाय छे, गिलिज्जइ-गळाय छे, माणिअइ-मणाय छे; वगेरे क्रियापदो उक्त कृतिओमां वपरायां छे. अने ते बधां कर्मणिरूपो छे. वैदिकभाषामां कर्मणि–क्रिया-

कर्मणि–क्रियापदो

पदोमां कर्मसूचक 'य' प्रत्यय वपराय छे. क्रियते, पीयते, गीयते, स्थीयते, दीयते, धीयते, वगेरे. पालिमां पच्चते, पच्चति, तुसियति, मथीयति, गच्छीयते, करीयते, कय्यति वगेरे कर्मणि–भावे रूपोमां य, इय, ईय अने य्य प्रत्यय लागेलो छे. प्राकृतमां कर्म अने भाव अर्थमां 'ईअ' अने 'इज्ज' प्रत्ययोनी भलामण आचार्य हेमचंद्रे करी छे: (८–३–१६०) वैदिक 'य' पालिना 'य' 'इय', ईय, के य्य अने प्राकृतना 'ईअ' वा 'इज्ज' ए बधा समानवंशना छे. ए बधामां थोडा थोडा उच्चारणभेद सिवाय बीजो भेद नथी. बधानुं मूळ एक छे.

१०० अहीं प्रसंगवशात् कर्म अने भावे रूपनी थोडी चर्चा करी लईए :

सोळमा सैकाना वाक्यप्रकाश[282] नामना औक्तिक जेवा हस्तलिखित ग्रंथमां लख्युं छे के,

कर्मणि अने भावे प्रयोगनी चर्चा

" द्विधोक्तिः प्रध्वरा वक्रा, प्रध्वरा कर्तरि स्मृता ।
वक्रा कर्मणि भावे च धातोः साप्यात्–अनाप्यतः ॥२॥

——अर्थात् क्रियाने सूचवती बोलवानी पद्धति बे जातनी छे: एक पाधरी–सीधी अने बीजी वांकी. कर्तरि प्रयोगवाळी बोलवानी रीत पाधरी छे. (करुं छुं, जाउं छुं वगेरे) अने कर्मणि प्रयोगवाळी तथा भावे प्रयोगवाळी बोलवानी रीत वांकी छे. (कर्मणि–कराय छे, जवाय छे, हसाय छे.) (भावे–जगाय छे, रमाय छे, बीवाय छे.) ज्यां क्रियापदनुं वचन कर्ता प्रमाणे फरे ते 'कर्तरिप्रयोग' अने ज्यां क्रियापदनुं वचन कर्म प्रमाणे फरे ते 'कर्मणिप्रयोग'. भावेप्रयोगमां तो एकवचन होय छे अने तेनो संबंध क्रिया साथे रहे छे.

---

२८२ वाक्यप्रकाशनो आरंभ—

" प्रणम्यात्मविदं विद्यागुरुं श्रीदेववर्धनम् ।
मुग्धबुद्धिप्रबोधार्थम्–उक्तियुक्तिः प्रतन्यते " ॥ १ ॥

वाक्यप्रकाशनो अंत—

" गुरुतपगणगगनाङ्गणतरणिश्रीरत्नसिंहसूरीणाम् ।
शिष्याणुना–इदम्–औक्तिकम्–उदितम् उदयसंज्ञेन " ॥ १३० ॥
" मुनि–गगन–शर–इन्दुमिते (१५०७) वर्षे हर्षेण सिद्धिपुरनगरे
प्राथमिकस्मृतिहेतोर्विहितो वाक्यप्रकाशोऽयम् । १३१ ॥

तात्पर्य ए के श्रीदेववर्धन-विद्यागुरु–ना शिष्य अने रत्नसिंहसूरिना हस्तदीक्षित शिष्य उदयसिंहमुनिए प्रस्तुत वाक्यप्रकाशनी रचना सिद्धपुरनगरमां १५०७ विक्रमसंवत्‌मां करी छे. आ पुस्तकनी पोथी साणंदमां श्रीमती साध्वी हेतश्रीजीना संग्रहमां छे.

चालु भाषामां कर्तरिप्रयोगनो विशेष प्रचार छे अने कर्मणिप्रयोगनो प्रचार विरल छे. परंतु भूतकाळमां कर्तरिने बदले कर्मणिनो[२८३] विशेष व्यवहार छे. रामे (तृ० वि०) रावण (प्र० वि०) हण्यो, अमें (तृ० वि०) पुस्तक (प्र० वि०) लख्युं, तेओए (तृ० वि०) चोपडी (प्र० वि०) वांची. आ बधा कर्मणिप्रयोगो छे. 'रामवडे रावण हणायो,' 'अमारा वडे पुस्तक लखायुं,' 'तेओ वडे चोपडी वंचाई' आ प्रयोगो पण कर्मणि छे, मात्र बोलवानी रीतनो भेद

२८३ चालु भाषामां भूतकाळ माटे विशेषे करीने कर्मणिप्रयोगो रह्या छे, कर्तरिप्रयोगो प्रमाणमां घणा ओछा छे तेनुं शुं कारण? आ संबंधे विशेष विचारतां एम जणाय छे के, संस्कृतादि प्राचीन भाषाओमां भूतकाळने दर्शावनारा कर्तृसूचक प्रत्ययो छे अने कर्मसूचक वा भावसूचक भूतकृदंतो पण छे: 'रामे रावण हण्यो' एम कहेवा माटे संस्कृतमां रामः रावणम् अहन् अवधीत् के जघान (कर्तरिप्रयोग) एम बोलाय अने रामेण रावणो हतः (कर्मणिप्रयोग) एम पण बोलाय, त्यारे भाषामां भूतकाळने माटे कोई खास कर्तृसूचक प्रत्ययो नथी पण तेने बदले विशेषे करीने कर्म के भावना सूचक भूतकृदंतो द्वारा नीपजेलां क्रियापदो वपराय छे. 'हन्' नुं कर्मणि भूतकृदंत प्रा० 'हणिओ' थाय अने भाषामां क्रियापद तरीके तेनुं 'हण्यो' एवुं उच्चारण थाय. कर्मणिभूतकृ० साथे आवतो कर्ता त्रीजी विभक्तिमां ज होय, ए जोतां भाषामां भूतकाळने माटे कर्तरिप्रयोगने तद्दन अल्प अवकाश छे. हा, ज्यां संस्कृतादि प्राचीन भाषाओमां भूतकाळ माटे कर्तरिभूतकृ० पण वपराय छे त्यां भाषामां पण ए ज रीते व्यवहार छे अने एवे स्थळे भाषामां पण भूतकाळमां कर्तरिप्रयोगनो प्रचार छे: रामः गतः—रामो गओ—राम गयो. पण आ जातनां कर्तरिभूतकृ० घणां विरल छे. अर्थात् भाषामां भूतकाळ माटे कर्मणि-भूतकृ० द्वारा नीपजेलां क्रियापदोना प्रयोगोनी अधिकता होवाथी भूतकाळमां कर्तरिप्रयोगने घणो ओछो अवकाश छे अने आम छे तेथी भाषामां भूतकाळ माटे कर्मणि के भावे प्रयोगोनो विशेष प्रचार छे. 'राम गयो' एम कहेवा माटे संस्कृता-दिभाषाओमां 'रामः अगच्छत्, अगमत्, जागम, गतः' एम बोलाय अने 'रामेण गतम्' एम पण बोलाय त्यारे भाषामां तो एकलुं 'राम गयो' एम ज बोलाय ए ध्यानमां रहे.

छे. कर्तरिप्रयोगमां कर्ता प्रथमा विभक्तिमां अने कर्म बीजी विभक्तिमां आवे छे, त्यारे कर्मणिप्रयोगमां कर्ता त्रीजी विभक्तिमां अने कर्म पेली विभक्तिमां आवे छे.

वाक्यप्रकाशनो कर्ता कहे छे केः

"कालेऽतीते प्राकृतोक्तौ न भेदः कर्तृ-कर्मणोः ।

यथा जिनोऽवदद् धर्मम् धर्मोऽवादि जिनेन वा" ॥ ५ ॥ आ श्लोकनुं विवरण करतां ते ग्रंथकार लखे छे के—"प्राकृतोक्तौ कालेऽतीते कर्तृ-कर्मणोः भेदो न स्यात् । जिनो धर्ममवदत् । धर्मोऽवादि जिनेन वा । अत्र 'वीतरागिं धर्म बोलिउ' इति—उदाहरणद्वयेऽपि समानमेव प्राकृतजनानां वचः । इदं च देशविशेषे जनभाषामाश्रित्य उक्तम् । अन्यथा कचिद् देशे वाक्यद्वयेऽपि भाषाभेदो दृश्यते यथा—'जिनोऽवदद् धर्मम्' इत्यत्र 'वीतराग धर्म बोलतु हूउ' इति वदन्ति 'धर्मोऽवादि जिनेन'— 'वीतरागिं धर्म बोलिउ' इति भेदोऽपि दृश्यते ।" कहेवानुं तात्पर्य ए छे के कोई प्रदेशमां जनसाधारणनी भाषामां भूतकाळसूचक प्रयोगोमां कर्मणि के कर्तरि संबंधी वाक्यभेद नथी त्यारे कोई प्रदेशमां ए बन्ने प्रयोगोने बोलवानी जुदी जुदी रीत पण छे.

कर्मणि अने कर्तरि प्रयोग उपरांत 'कर्मकर्तरि' नामनो एक त्रीजो प्रयोग पण छे तेनुं उदाहरण आपतां ते ज ग्रंथकार लखे छे के—"सुखं भणाइ ए ग्रंथ (सुखे भणाय ए ग्रंथ) आफणी कण वीकाइं (आफरडा—पोतानी मेळे—कण—दाणा वेकाय—वेचाय) भगवन्! तुम्हि वंदाउ आफणी—(भगवन्! तमे वंदाओ आफरडा—पोताने गुणे), आफणी अम्हि पूजाउं (आफरडा—अमारी मेळे—अमे पूजाइए), पचाणु आफणी कूर (पचाणो—रंधाणो—आफरडो कूर—कुरियानो भात), मंडाइ आफणी कन्या (मंडाई

आवरणी चल्या-चल्या पोतानी मेळे मेळाय छे—झळगाय छे." वगेरे. कर्मकर्तरिप्रयोग कर्मनी शक्तिनो प्रकर्ष बतावे छे अने एज छे माटे ज ते प्रयोगमां बीजा कर्तानी अपेक्षाने गौण करीने कर्मने कर्ता गणवामां आवे छे. आपणी भाषामां पण आवा प्रयोगोनो प्रचार तो छे ज. कर्मणि अने कर्मकर्तरिप्रयोगोमां क्रियापदोनी साधनामां खास अन्तर नथी.

चालु भाषामां 'जणाय छे' वगेरे मांना 'जणाय' नी व्युत्पत्तिचर्चा

१०१ अहीं एक वात खास विचारवानी छे के साधारण रीते प्राकृत भाषामां 'ईअ' अने 'इज्ज' प्रत्ययवाळा धातुओ कर्मणिमां वपराया छे. उक्त कृतिओमां वपरायेलां 'जाणीअइ' 'कणिज्जइ' वगेरे अंगो पण ए प्राकृतना धोरणने अनुसरे छे, तो पछी भाषामां 'जणाय छे', 'कपाय छे' एवा प्रयोगोमां जे 'जणा', 'कपा' एवुं आकारांत अंग छे ते क्यांथी आव्युं ? अने शी रीते आव्युं ? आ विशे चोक्खस निर्णय आपवो कठण छे तोपण निर्णयसाधक जे केटलीक सामग्री मारा ध्यानमां छे ते अहीं जणावी दउं छुं:

'जणाय छे', 'कपाय छे' जेवा प्रयोगो कर्तामां पण मळे छे. हेमहंस—"मोर कीगाइ" (केकायते), फिणाय छे (फेनायते समुद्रः), कनडाय छे (कष्टायते), रोमन्थायते—वागोळे छे, लोहितायते—लाल थाय छे, वफाय छे (वाष्पायते), धुंधवाय छे (धूमायते), ऊष्मायते; सुहाय छे (सुखायते—सुखमनुभवति), दुहाय छे (दुःखायते), शब्दायते, कलहायते, वैरायते, आमांना 'सुहाय छे', 'दुहाय छे', 'कनडाय छे' 'वफाय छे' 'धुंधवाय छे' वगेरे प्रयोगो तो भाषामां पण प्रचलित छे. 'दुहाय छे' वगेरे प्रयोगोमां जे 'आय' प्रत्यय छे, तेनुं ज अनुकरण करीने लोको 'जणाय छे' 'कपाय छे', 'वेचाय छे' वगेरे प्रयोगोमां

'आय' केम न बोलता होय? ते एक संभावना. 'दुहाय छे' वगेरेमां 'आय' कर्तृसूचक छे अने 'जणाय छे' वगेरेमां कर्मसूचक छे. छतां अनुकरण करतां ते भेद रहेतो नथी एटले विपर्यास पण थई शके.

यायते (जवाय छे), ज्ञायते (जणाय छे), ध्मायते (धमाय छे), घ्रायते (सुंघाय छे), आम्नायते (अभ्यासाय छे) वगेरे प्रयोगो कर्मणि छे अने तेमां स्पष्टपणे 'आय' नो ध्वनि रहेलो छे. ए बधा प्रयोगो शुद्ध संस्कृतना छे. ए प्रयोगोना पूर्व संस्कारथी अने विशेष परिचयथी 'जणाय छे,' 'बोलाय छे' वगेरेमां 'आय' आवी शके एम छे, ए बीजी संभावना. भाषामां थयेला बधा विकारो प्राकृतमां थईने ज आवे एवो कांइ एकांत नियम नथी. केटलाक एमे आवे अने केटलाकनो सीधो संबंध संस्कृतमां पण होय.

पालि भाषामां 'कृ' धातुनां करीयति, करिय्यति, करिय्यते, कयिरति अने कय्यति एवां अनियत रूपो थाय छे. आमांनुं 'करिय्यति' रूप लोकभाषामां ऊतर्युं होय अने तेना 'कारि' नो 'कर' थई 'करय्यति' करायति–'करायइ' एवुं रूप नीपजतां चालु 'कराय छे' एवुं रूप तेमांथी नीपजी शके एवुं छे. आ क्रममां कोई प्रकारना अर्थभेदने स्थान नथी. एक 'कराय छे' रूप नीपज्या पछी एनां जेवां 'जणाय छे,' 'बोलाय छे,' 'वर्णवाय छे' वगेरे रूपो ते ज रीते आवी शके तेम छे, ए त्रीजी संभावना.

'चोराविज्जइ' के 'चोरावीअइ' जेवां सादां कर्मणि रूपो थाय छे. तेना 'चोरा' अंशना अनुकरण द्वारा 'कराय छे,' 'जणाय छे' वगेरे रूपो आवी शके छे. चोराविज्जइ–चोरावीअइ–चोराईअइ–चोराअइ–चोराय–छे. ए चोथी संभावना.

संस्कृतमां केटलाक धातु ज एवा छे के जेमने स्वार्थमां 'आय' प्रत्यय लागे छे अने ए प्रत्यय आव्या पछी ज तेमनां क्रियापद तरीकेनां रूपो नीपजे छे:

	कर्तरि	कर्मणि
गुप्—	गोपायति—	गोपाय्यते
धूप्—	धूपायति—	धूपाय्यते
विच्छ्—	विच्छायति—	विच्छाय्यते
पण्—	पणायति—	पणाय्यते
पन्—	पनायति—	पनाय्यते

उक्त रूपोमां 'गुप्' उपरथी 'गोपाय' अने तेनुं कर्मणि 'गोपाय्य' बने छे. अहीं विचारवा जेवुं छे के जेम उक्त अमुक धातुओने ज स्वार्थिक 'आय' प्रत्यय लागे छे तेम लोकभाषामां कर्मणि प्रयोगमां वपराता धातुमात्रने ते 'आय' केम न लागी शके? ए पांचमी संभावना.

विशेष विचारतां लागे छे के 'जणाय छे' वगेरेमां आवेलो 'आय' ज्ञायते, ध्यायते वगेरेना अनुकरणरूप होय अथवा 'करिष्यति' द्वारा 'करय्याति' थई ते द्वारा 'करायति' आव्युं होय अथवा 'गोपाय्यते' नी पेठे तेनी उत्पत्ति होय. आ बाबत आ करतां पण विशेष गवेषणाने अवकाश छे.

'करीए छीए' ना 'ईए' नी व्युत्पत्तिचर्चा

१०२ बीजुं विचारवानुं ए छे के पहेला पुरुषना बहुवचनमां 'करीए छीए' 'बोलीए छीए,' 'भणीए छीए वगेरे रूपो व्यवहारमां प्रचलित छे अने बारमा सैकानी गुजरातीमां तो पहेला पुरुषना एकवचननो 'उं' अने बहुवचननो 'हुं' प्रत्यय आचार्य हेमचंद्रे बतावेलो छे. आ 'उं' प्रत्ययवाळुं रूप तो आजे पण चालु छे. अने 'हुं' प्रत्ययने

बदले 'ईए' प्रत्यय चालु व्यवहारमां छे. वादिदेवसूरिनी कृतिमां "सुमरियइं' एटले 'स्मरीए—याद करीए' एवो प्रयोग मळे छे. तो ते प्राचीन 'इयइं' के चालु 'ईए' क्यांथी आव्यो? 'अमे करीए छीए' वगेरे 'ईए' प्रत्ययवाळां क्रियापदो कर्तृसूचक छे. एटले तेमां 'ईअ' के जे कर्म अने भावसूचक प्रत्यय छे तेने लाववो अने तेना अर्थनो व्यत्यय करी 'करीए' रूप नीपजाववुं ते करतां कर्तामां वपराता 'करिज्जइ' ना 'इज्जइ' प्रत्यय उपरथी उक्त 'इअइं' अने चालु 'ईए' प्रत्यय नीपजावी प्रचलित 'करीए छीए' वगेरे रूपो बनाववां विशेष उचित जणाय छे. प्राकृतमां सर्वपुरुष अने सर्ववचनमां हसिज्जइ, बोल्लिज्जइ, नमिज्जइ, होइज्जइ, ठाइज्जइ वगेरे रूपो नीपजे छे. हसिज्जइ—हसीजइ—हसीअइ—हसीए. ए ज प्रमाणे बोल्लिज्जइ—बोलीजइ—बोलीअइ—बोलीए. नमिज्जइ—नमीजइ—नमीअइ—नमीए. होइज्जइ—होईजइ—होईअइ—होईए. ठाइज्जइ—ठाईजइ—थाईअइ—थाईए—थईए के थाईए. आ प्रकारे विशेष सुगमता पूर्वक प्रचलित 'ईए' प्रत्यय आवी शके छे. अहीं ए ध्यानमां राखवानुं छे के उक्त 'इज्जइ' सर्वपुरुष अने सर्ववचनने सूचवे छे. तेनो अंत्य 'इ' त्रीजा पुरुषना एकवचननो 'इ' नथी. ए 'इज्जइ' प्राकृतमां विध्यर्थने सूचवे छे (८–३–१६५ हे०) त्यारे अहीं तेने वर्तमानकाळमां लाववानो छे. विध्यर्थनो प्रत्यय वर्तमानकाळने सूचवे अने वर्तमानकाळनो प्रत्यय विध्यर्थने सूचवे ए वात वेदोनी भाषामां, प्राकृतमां तेम ज लोकभाषामां नवाईनी नथी.

'अच्छइ'नी व्युत्पत्तिचर्चा

१०३ त्रीजी कृतिमां 'छे' ना अर्थने बतावनारुं 'अच्छइ' रूप मळे छे अने 'बेसी रहे'ना अर्थवाळुं 'अच्छि' रूप मळे छे.

धातुसंग्रहमां 'अस्' धातु अनेक छे. पहेला गणनो 'अस्'

'दीप्ति,' 'गति' अने 'आदान' एम त्रण अर्थोने बतावे छे. बीजा गणनो 'अस्' सत्ता–विद्यमानताना भावने सूचवे छे. त्रीजो चोथा गणनो 'अस्' 'क्षेपण' अर्थनो वाचक छे. एक दशमा गणनो 'अस्' धातु चंद्राचार्यने (बौद्ध चंद्रगोमिने) मते 'विभाग' अर्थने बतावे छे. बीजा गणनो 'आस्' धातु उपवेशन–बेसवाना–भावनो दर्शक छे.

उक्त धातुओमांथी 'छे' ना अर्थने सूचवनार 'अच्छइ' क्रियापदनुं मूळ बीजा गणना 'अस्' धातुमां छे. केटलेक स्थळे उक्त 'आस्' अने 'अस्' बन्ने सरखा जेवा अर्थमां वपराया छे. हेमाचार्य पोताना व्याकरणमां 'अच्छ'नो संबंध 'आस्' साथे बतावे छे अने 'अस्'नुं 'अत्थि' रूप जणावे छे. 'अत्थि' रूप सर्व पुरुष अने सर्व वचनमां वपराय छे. अर्थदृष्टिए जोईए तो 'अस्' मांथी 'अच्छ' नीपजाववो विशेष संगत लागे छे. 'स्'नुं 'छ' परिणाम संभवित छे अने संगत पण छे. मूर्धन्य 'ष'नुं, तालव्य 'श'नुं अने दंत्य 'स'नुं 'छ' रूपे परिवर्तन हेमचंद्र पोते बतावे छे. षट्–छ.। षट्पद–छप्पय। षष्ठ–छट्ठ। षण्मुख–छम्मुह। शमी–छमी। शाव–छाव। शिरा–छिरा। सुधा–छुहा। सप्तपर्ण–छत्तिवण्ण। स्पृहा–छिहा । [८–१–२६५, २६६. ८–२–२३.] हेमचंद्रे पोते 'अस्' ना 'स्' नो 'छ्' कह्यो बताव्यो नथी, पण 'अस्' ना छवाळा जे जूना प्रयोगो मळे छे ते उपरथी तेने समझवानो रह्यो.

जैन आगम व्याख्याप्रज्ञप्ति–भगवतीसूत्र–नामना अंगमां 'अत्थि' अने 'अच्छिति' तथा 'अच्छेज्जए' एवा बन्ने प्रकारना प्रयोगो मळे छे:—

"तो मे अत्थि उट्ठाणे कम्मे बले वीरिए पुरिसक्कारपरक्कमे जाव य मे धम्मायरिए धम्मोवदेसए समणे भगवं महावीरे जिणे सुहत्थी अच्छिति"—

(व्याख्याप्रज्ञप्ति—भगवतीसूत्र शतक २. उद्देशक १. स्कंदकनो अधिकार पृ० २४२ राय० जिना०)

उक्त वाक्यनो अर्थ एम छे के—एक स्कन्दक नामनो तपस्वी पोताना मनमां आवी धारणा राखे छे के—"ज्यां सुधी मारां उत्थान, बल, वीर्य अने पुरुषपराक्रम हयात छे त्यां सुधीमां अने ज्यां सुधी मारा धर्मोपदेशक धर्माचार्य श्रमण भगवान महावीर जिन **अच्छिति**—जीवता बेठा छे—हयात छे." (त्यां सुधीमां हुं तेमनी पासे जाउं ए श्रेयरूप छे) उक्त '**अच्छिति**' क्रियापदनुं मूळ, सत्तासूचक 'अस्' मां छे. ए ज व्याख्याप्रज्ञप्ति—भगवतीसूत्रमां बीजे स्थळे (शतक १, उद्देशक ७, प्रश्न २५८ मां) जणावेलुं छे के—"जीवे णं भंते! गब्भगए समाणे उत्ताणए वा पासिल्लए वा अंबखुज्जए वा **अच्छेज्जए** वा, चिट्ठेज्जए वा, निसीएज्ज वा, तुयट्टेज्ज वा, माउए सुवमाणीए सुवइ, जागरमाणीए जागरइ, सुहिआए सुहिए भवइ, दुहिआए दुहिए भवइ?"—अर्थात् "हे भगवन्! गर्भमां गयेलो जीव चत्तो **अच्छेज्जए**—होय, पडखाभेर होय, केरीनी जेवो कुब्ज होय, **चिट्ठेज्जए**—ऊभेलो होय, **निसीज्जए**—बेठेलो होय के **तुयट्टेज्ज**—सूतेलो होय? तथा ज्यारे माता सूती होय त्यारे सूतो होय, माता जागती होय त्यारे जागतो होय, माता सुखी होय त्यारे सुखी होय अने माता दुःखी होय त्यारे दुःखी होय?"

अहीं 'अच्छेज्जए' नो अर्थ आपतां टीकाकार कहे छे के "'**आसीत**' सामान्यतः" अर्थात् "साधारणपणे 'होय'" एवो अर्थ समझवो. 'बेसवुं' एवा खास अर्थनी सूचना माटे मूळकारे 'निसीएज्ज—' 'निषीदेत्' एवुं जुदुं क्रियापद आप्युं छे. तेथी अहींनी '**अच्छेज्जए**' क्रिया 'होवा'ना अर्थने—सत्ताना भावने—सूचवे छे. अने ए अर्थ 'जोतां 'होवा'—सत्ता—अर्थवाळा 'अस्' धातु द्वारा उक्त 'अच्छिति' के

'अच्छेज्जए' क्रियापदने नीपजाववुं असंगत नथी. टीकाकारे जणावेलुं 'आसीत' पद उक्त 'अस्' धातुनुं पर्यायसूचक छे ए ख्यालमां रहे.

श्रीमान वेबर साहेब भगवतीसूत्रना उपर्युक्त पाठनो आधार लई 'अच्छेज्जए' नो अर्थ 'जाय–गति करे' एवो कल्पे छे. अने तेम कल्पी ए 'अच्छेज्जए' क्रियापदना 'अच्छ' अंगने 'गति' अर्थवाळा 'गच्छ' धातुमांथी लाववानी वात करे छे. तेमनी ते वात सर्वथा भ्रांत छे. उक्त पाठमां 'अच्छेज्जए' नो 'जाय' अर्थ ज नथी.

वेबरनी भ्रांत कल्पना

व्युत्पत्तिशास्त्रना ऊंडा अने प्रामाणिक अभ्यासी श्रीमान दिवेटिया महाशय अहींना 'निसीएज्ज'नो अर्थ 'ते सुवे'एवो आपे छे. अने 'अच्छेज्जए'नो अर्थ "बेशे" एवो करे छे–[गुजराती भाषा अने साहित्य पृ० २४९] अहीं मारे विशेष नम्रपणे जणाववुं जोईए के उक्त पाठमांनुं 'निसीएज्ज' क्रियापद 'नि-शी' उपरथी नथी ज आव्युं, परंतु सं० निषीदेत्, पालि-निसीदेय्य, प्राकृत-निसीएज्ज ए रीते आवेलुं छे. 'निसीएज्ज' नी टीका करतां टीकाकार कहे छे के "निसीएज्ज-निषद्-नस्थानेन, 'तुयट्टेज्ज'त्ति शयीत" अर्थात् मूळकार 'सुवा' ना अर्थ माटे 'तुयट्टेज्ज' क्रियापद जुदुं ज आपे छे एटले 'निसीएज्ज'नो अर्थ 'बेसे' एवो ज अहीं लेवानो छे. नहीं के 'अच्छेज्जए' नो 'बेसे'.

नरसिंहराव भाईए जणावेलो अर्थ बराबर नथी

वेबर महाशय तो 'तुयट्टेज्ज' ने बदले 'उयट्टेज्ज' पाठ आपे छे अने ए पाठनो अर्थ तेओ 'ऊठे' एवो करे छे. तेमनो आ अर्थ पण तद्दन खोटो छे अने मूळपाठ पण तेमणे खोटो कल्पेलो छे. 'ऊठवा' ना अर्थमां प्राकृत साहित्यमां 'उयट्टेज्ज' क्रियापद ज नथी. 'उट्ट' धातु 'ऊठवा'ना अर्थने बतावे छे परंतु 'उट्ट'नुं 'उयट्टेज्ज' रूप कोई काळे

संभवतुं नथी. ए तो तेमणे मूळपाठ अने तेनी टीका तरफ ध्यान नथी आप्युं तेथी ज मुद्रणमां पाठनी अने समझणमां अर्थनी भ्रांति थई गई छे.

टेसीटोरीनी कल्पना विवादास्पद

बीजा टेसीटोरी साहेब 'ऋछ' धातु ऊपरथी 'अच्छ' धातुनी कल्पना करे छे, ते पण बराबर नथी. तेमनी आ कल्पना मात्र अक्षरसाम्यने आभारी छे. वळी, व्यंजन विनाना एकला 'ऋ' नुं प्राकृत उच्चारण 'रि' थाय छे. ए हेमचंद्रना ८-१-१४० ना नियम ऊपर तेमनुं लक्ष्य नथी गयुं. खरी रीते 'ऋच्छ' मांथी बहु बहु तो 'रिच्छ' लावी शकाय पण 'अच्छ' आववानो संभव नथी. आम छतां य नियमोनी अनिश्चितताने लीधे तेओ 'ऋच्छ' मांथी 'अच्छ्' लाववामां कदाच सफळ थाय पण 'अच्छ' अने 'ऋच्छ' ना अर्थमां जे जमीन-आसमान जेटलुं अंतर छे तेनुं शुं? वर्णनो विकार थतां अर्थमां पण फेर थाय छे, एवुं बनतुं कदी जाण्युं नथी. एटले 'ऋच्छ' मांथी 'अच्छ' उपजाववानी कल्पना पण संगत भासती नथी.

बीम्स महाशयनी 'अक्ष' द्वारा 'अच्छ' लाववानी कल्पना

बीजा केटलाक महाशयो 'अक्ष' मांथी 'अच्छ' लाववानी वात करे छे. जेओ एम कहे छे तेओ 'अक्ष' धातुनो 'दीप्ति' अर्थ बतावे छे. में पाणिनीयनो अने हेमचंद्रनो एम बन्ने धातुसंग्रह तपास्या पण तेमां एकेमां 'अक्ष' धातु 'दीप्ति' अर्थमां नथी. 'अच्' अने 'अस्' धातु 'दीप्ति' अर्थमां छे अने 'अक्ष' धातु 'व्याप्ति' अने 'संघात' अर्थमां छे. 'अक्ष' मांथी 'अस्' लाववानी कल्पना निरपवाद वर्णविकारनी दृष्टिए अने धात्वर्थनी दृष्टिए एम बन्ने रीते असंगत छे. स्व० श्रीमान नरसिंहराव भाईए 'अक्ष' मांथी 'अस्' लावनार गृहस्थनो मत पोताना उक्त पुस्तकमां (पृ० २५३) सविस्तर

जणावेलो छे. तेमां तेओ जणावे छे के भोजपुरी भाषामां वपराता 'हशे' के 'होवुं' अर्थने सूचवता 'होखे' रूपमां देखाता 'ख'नी उपपत्ति करवा सारु उक्त महाशय, 'अक्ष' मांथी 'अख' अने 'अस' बन्नेने लाववानुं सूचवे छे. आ संबंधे मारे 'अक्ष' मां 'अख्' अने 'अस्' नुं मूळ शोधनार बीम्स साहेबना मतनो विशेष नम्रताथी अनादर करवो रह्यो.

भोजपुरी 'होखे'ना 'ख' नी उपपत्ति बीजी रीते पण प्रामाणिकपणे थई शके एम छे: जैन-आगम उत्तराध्ययन सूत्रना मूळमां-अध्ययन बीजुं गाथा बेरमीमां-'होक्खामि' अने 'होक्खं' एवा बे स्पष्ट प्रयोगो मळे छे. आशरे दशमा सैकाना विद्वान टीकाकार शांतिसूरिए ए बन्ने प्रयोगोने भविष्यकाळ प्रथम पुरुष एकवचनना जणाव्या छे अने तेनो संस्कृत पर्याय 'भविष्यामि' जणावेलो छे.

'ष्यामि' ए भविष्यकाळ प्रथम पुरुष एकवचननो प्रत्यय छे. संभव छे के ए 'अस्' धातुमांथी नीपजेलो होय. 'भू' धातुनुं प्राकृत अंग 'हो' छे. ए 'हो' ने आ 'ष्यामि' प्रत्यय लागतां 'होष्यामि' एवुं थाय. 'ष्यामि' ना आदिभूत मूर्धन्य 'ष' नुं लोकभाषानी रीतप्रमाणे 'ख' उच्चारण थतां 'होख्यामि' एवुं नीपजे अने पछी 'ख्यामि'नो संयुक्त 'य' प्राकृत पद्धति प्रमाणे लोप पामतां, शेषनो द्विर्भाव थया पछी 'ख्खा' नो 'क्खा' थतां 'होक्खामि' रूपनी सहेजे उपपत्ति थई शके छे अथवा 'हो+स्सामि' अने 'हो+स्सं' एवो विभाग राखीए. तेमां

२८४ प्रस्तुत गाथा आ प्रमाणे छे:
"परिजुन्नेहिं वत्थेहिं होक्खामि त्ति अचेलए ।
अदुवा सचेलए होक्खं इइ भिक्खु न चिंतए" ॥
"होक्खामि–भविष्यामि"–टीका ।
"होक्खं–भविष्यामि"–टीका ।

'हो' ते 'भू' धातुनुं प्राकृत अंग छे अने 'स्सामि' तथा 'स्सं' ते भविष्यकाळना प्रथम पुरुषना एकवचनना प्रत्ययो छे (८–३–१६९) संस्कृतमां वपरातो 'स्यामि' अने आ प्राकृत 'स्सामि' तद्दन मळता छे. पालिभाषामां पण एवो ज 'स्सामि' अने 'स्सं' प्रत्यय छे. 'होस्सामि' अने 'होस्सं' मां आवेला 'स' नुं 'ह' उच्चारण तो हेमचंद्रे नोंधेलुं छे (८–३–१६७). उक्त 'होक्खामि' अने 'होक्खं' रूपमां 'स्सामि' अने 'स्सं' ना 'स' नुं 'ख' उच्चारण थयेलुं छे. 'अस्मि' वगेरे रूपोमां पालि अने प्राकृत बन्ने भाषामां 'स' नुं 'ह' उच्चारण सुप्रतीत छे. तेम ज खोरदेह-अवेस्तानी भाषामां तो 'स' नुं 'ह' उच्चारण विशेष प्रचलित पण छेः हन्ती[२२] (सन्ति) पृ० ५, हूक्तेम्[१६] (सूक्तम्) पृ० ९. वोहुँ[०] (वसु) पृ० ९–खोरदेह-अवेस्ता। हार्ताम्–(सताम्) पृ० १२, हुमतांचा (सुमत) पृ० २८, हाँ (सा) पृ० ६५, हथँ (सह) पृ० ७९,९०, हप्तँ–(सप्त–) पृ० १५४, हॅथ्रा (सत्रा) पृ० १८०, अहुरह्यो (असुरस्य) पृ० १८१, ह्वो[११] (स्वः) पृ० १८४, (–खोरदेह-अ०) वगेरे अनेक प्रयोगोमां 'स' नुं 'ह' उच्चारण विद्यमान छे. ए ज रीते खोरदेह-अवेस्तामां 'स' ने बदले 'ख' नुं उच्चारण पण प्रचलित छे. ख्यात्–(स्यात्) पृ० १७४, १८४, ख्यामाँ (स्याम) पृ० १८४, नेमख्या-महो–(नमिष्यामहे) पृ० १८३ वगेरे. जेम अवेस्तानी भाषामां 'स' नुं 'ख' उच्चारण उपलब्ध छे तेम प्राचीन प्राकृतमां पण ते जरूर संभवी शके अने तेथी ज उक्त उत्तराध्ययन सूत्रमां 'होस्सामि' नुं 'होक्खामि' अने 'होस्सं' नुं 'होक्खं' एवां रूपो मळे छे. संभव छे के 'स' नुं 'ह' मां परिवर्तन थया पछी ते 'ह' 'ख' रूपे उच्चारातो होय. 'ह' अने 'ख' मां कंठस्थाननी समानता छे अने प्राकृतमां 'ख' नुं परिवर्तन 'ह' मां थाय पण छे. जेम 'ख' 'ह' रूपे परिणमे छे तेम

वाग्व्यापारनी विलक्षणताने लीधे सीधो 'स' 'ख' रूपे परिणमे अथवा 'स' नो 'ह' थई ते 'ख' रूपे परिणमे. एक 'पाषाण' अने 'षंड' शब्दना पाषाण–पासाण–पाहाण–पाखाण. वनषंड–वनसंड–वनखंड. ("षण्डः कानने इट्चरे" हेम० अने० कां० २, श्लो० १२७)—आवा अनेक ध्वनिओ सुप्रतीत छे.

तात्पर्य ए के 'होखे' रूपमां 'ख' जोई तेनी उपपत्ति माटे श्री बीम्स-साहेबे 'अक्ष' मांथी 'अख' उपजावी अने तेने 'हो' साथे जोडवानी जे कल्पना करी छे तेने अवकाश नथी एटले 'अक्ष' मांथी 'अख' अने 'अस' ने उपजाववानी कल्पना पण निरवकाश छे.

१०४ बीजुं 'बेसी रहे' अर्थवाळुं 'अच्छि' रूप 'आस्' धातुमांथी आवेलुं छे. 'आस्' ना 'अच्छ' माटे तो हेमचंद्रनो पोतानो संवाद होवाथी कोई विवादने अवकाश नथी. (८–४–२१५ हे०)

१०५ त्रीजी कृतिमां 'घेप्प' धातु 'ग्रहण' अर्थमां वपरायो छे. हेमचंद्र तेने 'ग्रह' साथे सरखावे छे पण खरी रीते तेम नथी. जे अर्थमां 'ग्रह' धातु छे ते ज अर्थमां वेदनी भाषामां 'गृभ' धातु छे. 'हृ–ग्रहोः भः छन्दसि' ३-१-८४–पाणि० सूत्रना वार्तिकमां वैदिक 'गृभ' धातुनो उल्लेख छे. गृभ्णामि, गृभाय वगेरे रूपो ए 'गृभ' धातुनां छे अने 'घेप्पंति' रूपवाळा 'घेप्' धातुनुं मूळ ए 'गृभ' मां छे, नहीं के 'ग्रह' मां.

१०६ हेमचंद्रे आपेलां पद्योमां 'खणेण पहुच्चइ दूअडउ' ए वाक्यमां 'पहुच्चइ' क्रियापद मळे छे. 'क्षणमां दूत पहोंचे छे–आवे छे' एवो ए वाक्यनो अर्थ छे.

'पहोंचवुं'नी व्युत्पत्तिचर्चा

'पहोंचवुं' क्रियापदनी व्युत्पत्ति विचारवा जेवी छे. स्व० श्रीमान नरसिंहराव भाई 'प्राप्त' कृदन्त उपरथी निष्पन्न थता प्रा० 'पत्त' पदमां 'पहोंचवुं' क्रियापदना मूळने शोधे छे. 'प्राप्त' अने 'पहोंचवुं' ना अर्थमां विशेष भेद नथी. 'प्राप्त' शब्द थी सूचवातुं 'प्रापण' विशेष व्यापक छे, त्यारे 'पहोंचवुं' द्वारा सूचवाती 'प्राप्ति' 'प्रापण' करतां संकुचित छे. 'सुख पाम्यो', 'दुःख पाम्यो', 'लाभ पाम्यो', 'बायडी पाम्यो' 'भायडो पामी' वगेरे वाक्योमां 'पाम्यो' नो जे भाव छे ते, 'नदीए पहोंच्यो', 'घाटे पहोंच्यो', 'गाम पहोंच्यो' 'माणस पहोंच्यो' वगेरे वाक्यमां वपरायेला 'पहोंच्यो' ना भाव करतां सहेज जुदो पडे छे. तात्पर्य ए के 'सुख पाम्यो', 'भायडो पामी' वगेरे वाक्यमां जे कर्ता छे ते गतिशील ज होय छे एवो नियम नथी त्यारे 'गाम पहोंच्यो' वगेरे वाक्यमां कर्ता गतिशील होवो ज जोईए, ए जातनो भेद 'प्राप्त' अने 'पहोंच्यो' मां स्पष्टपणे जोई शकाय छे. संस्कृत अने प्राकृतोमां तो सुखं प्राप्तः—सुहं पत्तो, नदीं प्राप्तः—नइं पत्तो, ग्रामं प्राप्तः—गामं पत्तो, वगेरे प्रयोगोमां एक सरखी रीते 'पत्त' शब्दनो उपयोग थयेलो छे. ए जोतां 'प्राप्त' ना 'पत्त' द्वारा आवता 'पहुच्च' मां अर्थनी विषमता नथी. परंतु 'पत्त' मां 'ह्' अने 'उ' आव्या सिवाय 'पहुच्च' बनी ज न शके एथी 'पहुच्च' रूपनी निष्पत्ति माटे 'पत्त' मां 'ह्' अने 'उ' ने प्रक्षिप्त मानवा पडे छे.

आ संबंधे श्रीमान् दिवेटीया साहेब पोताना व्याख्यानमां जणावे छे के [""पत्तउं' मां आगन्तुक 'उ' समेत 'ह्' प्रविष्ट थाय छे एटले 'पहुत्तउं' बने छे, आम थवानुं कारण अविदित छे पण उच्चारणनी अनुकूळता ज कारण हशे एम जणाय छे" पृ० २४४.]—आ रीते अहीं

थाय छे ए सिद्धांत सर्व प्रतीत छे. एथी 'प्र' नी साथेनो 'भू' 'पहोंचवा' अर्थने बतावे छे.

'भू' ना अर्थ विशे लखतां आचार्य हेमचंद्र कहे छे के "उपसर्गवशाच्च धातोरनेकोऽर्थः प्रकाशते यथा–'प्रभवति' इति स्वाम्यर्थः प्रथमतः उपलम्भश्च"–(धातुपारायण पृ० २) अर्थात् 'प्रभवति' एटले प्रभु–स्वामी–थाय छे–समर्थ थाय छे ए एक अर्थ अने बीजो अर्थ प्रथम प्राप्ति–प्रथम पहोंच–गमन. 'पहुच्च' ना मूळरूप 'प्रभूत' नो आ बीजो अर्थ लेवानो छे, एटले अर्थ संबंधी असामंजस्य रहेतुं नथी अने 'हु' ने प्रक्षिप्त मानवानी पण अपेक्षा नथी.

अथवा एक बीजो ज 'भू' धातु 'प्राप्ति' अर्थवाळो छे. ते उपरथी 'प्रभूत' अने ते द्वारा 'पहुत्त' ने निपजाववाथी व्युत्पत्तिनो मार्ग विशेष सरळ थई जाय छे.

'सत्ता' ना अर्थवाळा 'भू' धातुनो आश्रय लेतां तेनो अर्थ फेरववा 'प्र' उपसर्गनुं शरण लेवुं पडे छे अने 'प्राप्ति' अर्थवाळा 'भू' धातुनो आधार लईए तो उपसर्गनी अधीनता तो जती रहे छे अने कोई अपवाद पण वहोरवो पडतो नथी.

"भूङः प्राप्तौ णिङ् ।३।४।१९। भुवः प्राप्त्यर्थाद् णिङ् वा स्यात् भावयते, भवते–प्राप्नोति इत्यर्थः ।.... सर्वं भवते–प्राप्नोति–इत्यर्थः"–(सिद्धहेम०) "भूङः प्राप्तौ णिङ्–भावयते पदम्–प्राप्नोति–इत्यर्थः। पक्षे उत्साहाद् भवते लक्ष्मीम्"–(धातुपारायण पृ० ४) "भू १८४५ प्राप्तौ–आत्मनेपदी भावयते–भवते"–(वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी पृ० ३०१ उत्तरार्ध) "प्राप्ते तु भावितम् । लब्धम्, आसादितम्, भूतम्" (अभिधान० कां० ६, श्लोक० १२६) उक्त बधां प्रमाणो 'प्राप्ति' अर्थवाळा 'भू' धातुनां निदर्शक छे.

७ "देस रवण्णा होंति"–५९–देशो रम्य थाय छे.

ऊपर जे वाक्यो आप्यां छे तेमां मूळ वाक्योमां तो बधे 'भू' धातुनो ज प्रयोग छे. छतां अनुवादमां क्यांय 'थाय छे' ए रीते 'स्था' धातुना क्रियापदथी अर्थ बताव्यो छे अने क्यांय 'भू' धातुना 'होय छे' क्रियापदथी अनुवाद आप्यो छे. आ एक प्रकारनी भाषाशैली छे.

हेमाचार्यना जमानामां वा तेमनाथी पूर्वना जमानामां पण जे अर्थ आपणे हमणां 'स्था' ना 'था' धातुथी अने 'अस्' ना 'छे' द्वारा बताविए छिए ते अर्थ पण 'भू' धातु द्वारा सूचवातो परंतु पछीना समयमां एक 'भू' धातुना अर्थ माटे 'अस्' 'स्था' अने 'भू' एम त्रण जुदा जुदा धातुओ वपरावा लाग्या एटले विद्यमानता सूचववा 'छे'– 'अस्', 'थवुं' अर्थ माटे 'था'–'स्था', अने 'होवुं' अर्थ माटे 'हो'–'भू' एवो विभाग थई गयो.

आ तो एक भाषाशैलीना परिवर्तनतुं उदाहरण छे. एवुं ज बीजुं उदाहरण 'भण' धातुने लगतुं छे. हेमाचार्यना समयमां वा तेमनाथी य पूर्वना समयमां 'कहेवा'ना अर्थमां 'भण' धातुनो प्रयोग अनेकानेक स्थळे थयेलो छे अर्थात् 'ते कहे छे' एवा अर्थमां 'भणति' एवुं क्रियापद वपरायेलुं छे त्यारे आपणी चालु भाषामां 'भण' धातुनो प्रयोग मात्र 'भणतर भणवाना' अर्थमां आवी संकोच पाम्यो छे. आपणे त्यां 'भणे छे' एटले 'विद्याभ्यास करे छे' एवो ज अर्थ रह्यो छे.

'भण्' नो उपयोग

'भण' धातुनो मूळ अर्थ 'शब्द करवो–अवाज करवो' छे. छंदोनुशासनना उक्त ३२ मा पद्यमां '**भणि**' क्रिया 'कहे' ना अर्थने बतावे छे. आपणी भाषामां 'भण' नो अर्थ संकोच पाम्यो छे त्यारे मराठी

भाषामां 'भण' उपरथी आवेला 'म्हण्' नो मूळ अर्थ—सामान्य कहेवुं—'वात चीत करवी' ए सर्वत्र प्रचलित छे.

ए ज रीते हिंदी भाषामां आपणी भाषानी पेठे 'थवुं' ना अर्थ माटे जुदो धातु नथी, परंतु 'थवुं' नो अर्थ 'भू' धातु द्वारा ज सूचवाय छे. आम प्रत्येक भाषानी जुदी जुदी विशिष्टता होय छे.

शैलीभेदनी एक बीजी वात पण कहेवा जेवी छे. आपणी चालु भाषामां 'मास्तरे छोकराने ऊठबेश करावी' ए वाक्यमां 'करावी' साथे 'ऊठबेश' पदनो संबंध छे त्यारे हेमचंद्रे आपेला एक दोहामां ए ज रीते वपरायेला 'करावुं' क्रियापदनो संबंध 'ऊठबेश' साथे नथी परंतु 'ऊठबेश करनार' साथे छे.

ते वाक्य आ प्रमाणे छे: "तो वि गोट्ठडो कराविआ मुद्धए उट्ठ-बईस" ६३—"तथापि मुग्धया गोष्ठका:—गोपाला: उत्थानोपवेशनं कारिता:[२८६]" अर्थात् 'ते मुग्ध स्त्रीए गोवाळोने ऊठबेश करावी.'

उक्त वाक्यना विवरण उपरथी चोक्खुं जणाय छे के 'कराविआ' नो संबंध गोवाळो साथे छे नहीं के ऊठबेश साथे.

संस्कृत शैलीनी रचना आवी ज होय छे, अने विद्वानोनी रचनामां ते शैली जाण्ये अजाण्ये पण आवी ज जवानी. 'मुग्ध स्त्रीवडे गोवाळो ऊठबेश करावाया' आवो अनुवाद उक्त वाक्यनो अक्षरश: अनुवाद छे, परंतु एवो अनुवाद सारो जणातो नथी.

१०८ उक्त त्रणे कृतिओमां वपरायेलां कृदंतोनो परिचय आ प्रमाणे छे:

---

२८६ आ प्रयोगनी साधना माटे जुओ सिद्धहेम २।२।८। "हृ-क्रोर्नवा" (कारक प्रकरण) मुद्धा गोवाले उट्ठवईस करावेइ अथवा 'मुद्धा गोवालेहिं उट्ठवईस करावेइ." ए रीते प्रेर्य कर्ता 'गोवाल' बीजी अने त्रीजी विभक्तिमां वाराफरती आवे छे.

अभयदेव—समरंत, कारि, विलवंतउ, जंपिउ, चिट्ठिउ, कप्पिउ, अवलंबिउ, किय, पत्तउ, पियंकरु, खेमंकरु, झंखंत, सोहिय, थुणंतउ, मुयवि, जोइवि, पासिवि, दुक्खिय, पयासिउ.

बारमा सैकानां कृदंतो अने तेमना प्रत्ययोनां मूळ

उक्त पदोमां 'कारि', 'अवलंबिउ', 'मुयवि', 'जोइवि' अने 'पासिवि' ए बधां संबंधक भूतकृदन्त छे.

'समरंत', 'विलवंतउ', 'झंखंत', अने 'थुणंतउ' ए वर्तमान-कृदंत छे.

'पियंकरु' अने 'खेमंकरु' ए कर्तृसूचक कृदंत छे.

तथा जंपिउ, चिट्ठिउ, कप्पिउ, किय, पत्तउ, पयासिउ, अने दुक्खिय ए बधां भूतकृदंत छे अने क्रियापदने स्थाने वपरायां छे.

देवसूरि—वक्खाणंतओ—वर्तमानकृदंत.

परिवारियओ, सोसीउ, वूहउ, फेडिय, वक्खाणिय, दिट्ठु, पसन्ना, उट्ठिउ.—भूतकृदन्त.

पयडिवि, मुणिवि.—संबंधक भू० कृदंत.

हेमचंद्र—निसिआ, लिहिआ, दड्ढा, दिट्ठउ, पुट्ठ, पसरिअउं, आवासिउ, वाहिउं, मुइअ, गइअ, किअउं, दिट्ठउं, पूरिअ, हूआ, मुंडियउं, निहित्तउं, संसित्तउ, मुएण, जोइउ, भग्गा, लग्गया, निम्मविअ, मुआ, त्रुट्टी, किउ, आइउ, पइट्ठ, बइट्ठउ, पइट्ठउ, विलग्गी, अकिया, लुक्का, पणट्ठइ, विनासिआ, विढत्तउं, चडिआ, हसिउ, पम्हट्ठउ. —भूत० कृ०

दारंतु, चिंतंताहं, करतु, नवंताहं, संता, झलकंति, जिआवंतिहिं, रणझणंत, सिंती.—वर्त० कृ०

सुणिवि, सुमरि, मनाविं, देक्खवि, भणवि, करेण्पिणु, विछोडवि, जेप्पि, देप्पिणु, लेवि, झाएविणु, गंप्पिणु, गंप्पि, गमेप्पि, जिणेप्पि, पडेविणु.—संबंधक भू० कृ०

अब्भत्थणि, विच्छोहगरु, सोएवा, जग्गेवां.—सामान्य कृ०

१०९ उक्त कृदंतोनी रचना जोतां ते बे प्रकारनां जणाय छे. एक तो एवां छे के जेओ संस्कृतमांथी प्राकृतना धोरणे वर्णविकार पामी सीधां आव्यां छे: दृष्ट—दिट्ठ, लग्ग—लग्न, मृत—मुअ, प्रनष्ट—पणट्ठ, दग्ध—दड्ढ, प्रविष्ट—पइट्ठ, कृत—किय, भूत—हूअ वगेरे.

बीजां धातुना अंगद्वारा मूळथी प्राकृतना धोरणे तैयार थयेलां छे.

भूतकृदंत

प्राकृतमां भूतकृदंत बनाववा माटे धातुमात्रने 'त'—'अ' प्रत्यय लागे छे. एक एवो नियम छे के प्राकृतमां कोई पण व्यंजनांत धातुने अंते 'अ' उमेराय छे. [८–४–२३९ हे०] तथा अकारांत सिवायना स्वरांत धातुने छेडे पण 'अ' विकल्पे उमेराय छे. [८–४–२४० हे०] अने भूत कृदंतोमां लागेला ए 'अ' नो 'इ' थाय छे: (८–३–१५६ हे०) आ प्रक्रिया द्वारा जंप्+अ+अ=जंपिअ, पसर्+अ+अ=पसरिअ, शुष्—सोस्+अ+अ=सोसिअ—सोसीअ. 'ध्या' धातुनुं झा+अ+अ=झाइअ. 'व्याख्यान' उपरथी नामधातु—वक्खाण्+अ+अ=वक्खाणिअ. 'लुक्क' 'तुट्ठ' वगेरे भूतकृदंतो अनियमित रीते सधायेलां छे.

वर्तमानकृदंत

११० वर्तमान कृदंत माटे प्राकृतमां 'अंत' अने 'माण' प्रत्यय छे: (८–३–१८१ हे०) धातुना अंगने ए प्रत्ययो लागतां ज वर्तमान कृदंत बने छे अने प्रत्ययो लाग्या पछी पूर्वोक्त नियमथी धातुने लागेला अंत्य 'अ' नो 'ए' पण थाय छे: (८–३–१५८ हे०)

स्मृ–सुमर् + अ + अंत = सं० स्मरत्–सुमरंत, सुमरंत; दृ–दार् + अ + अंत = दारंत (दारयत्), कृ + अ + अंत = करंत (कुर्वत्) आ कृतिओमां वपरायेलां वधां वर्तमान कृदंतो 'अंत' प्रत्ययवाळां छे. संस्कृतमां 'माण' प्रत्यय आत्मनेपदी धातुने ज लागे छे, पण प्राकृतमां 'माण' प्रत्ययनो व्यवहार सर्वत्र अवाधित छे. छतां आ कृदंतोमां तेनो प्रयोग देखातो नथी.

चालु भाषामां वर्तमान कृदंतना 'अंत' अने 'अत' प्रत्ययो प्रचलित छे: वदंती, जमंतो, हलंतो अने करतो, जमतो, भणतो वगेरे. प्राकृतनो 'अंत' अने आ 'अंत' तथा 'अत' ए बन्ने एक ज छे.

हेमचंद्रना ३१ मा पद्यमां 'करतु' पद वर्तमान कृदंतरूपे वपरायुं छे, एटले आपणी आजनी भाषामां वपरातो वर्तमान कृदंतनो 'अत' प्रत्यय ठेठ हेमाचार्यना समयथी चाल्यो आवे छे अने वर्तमान कृदंत माटे विशेषे करीने ए एक 'अत' प्रत्ययनो ज भाषामां व्यवहार छे.

संबंधक भूतकृदंत

१११ संबंधक भूतकृदंत माटे हेमाचार्य अनेक प्रत्ययो आपे छे. इ, इउ, इवि, अवि, एप्पि, एप्पिणु, एवि, एविणु–आ आठ प्रत्ययो संबंधक भूतकृदंतना छे. प्राकृतमां संबंधक भूतकृदंत माटे तुम्, अ, तूण अने तुआण प्रत्ययोनो व्यवहार छे. प्राकृतना आ प्रत्ययो अने हेमाचार्ये बतावेला ऊगती गुजरातीना उक्त प्रत्ययो वच्चे साम्य जणातुं नथी. संस्कृतमां ज्यां 'क्त्वा' ने बदले 'य' वपराय छे ते ऊपरथी प्राकृतनो 'अ' अने उक्त 'इ' 'इउ' आव्या होय अने पालिमां संबंधक भूतकृदंतना 'सुणित्वा' वगेरे प्रयोगोमां 'त्वा' प्रत्यय आवे छे. ते 'त्वा' वा 'इत्वा' ऊपरथी 'इवि' के 'अवि' आव्या होय अने 'त्व' नो 'प्प' थई ते द्वारा 'एप्पि' अने एवि' आव्या होय तथा वैदिकमां वपरायेला संबंधक भूतकृदंतना 'त्वीन' प्रत्यय द्वारा के

पालि-प्रयोग 'सुणित्वान' वगेरेमां वपरायेला 'इत्वान' द्वारा 'एप्पिणु' अने 'एविणु' आव्या होय एवी संभावना छे. 'इष्ट्वीनं' 'पीत्वी' वगेरे वैदिक रूपो साथे आ रूपोनी समानता छे, एम आगळ (पृ० ६७) जणावी गयो छुं. आमांना 'इ' 'इउ' ए बे प्रत्ययो अभयदेवे वापरेला छे. वादिदेवसूरिए 'इवि' प्रत्यय वापरेलो छे. अने उदाहरण आपवानी दृष्टिए आ० हेमचंद्रे ते बधा प्रत्ययोने वापर्या छे.

'करी' अने 'करीने' ना 'ई' तथा 'ईने' नी व्युत्पत्ति

चालु भाषामां करी, जमी, भणी वगेरेमां 'ई' प्रत्ययनो उपयोग छे अने करीने, जमीने, भणीने वगेरेमां 'ईने' प्रत्यय लागेलो छे. हवे 'ई' अने 'ईने' आ बे प्रत्ययोनी उत्पत्ति विशे विचार करतां अने तुलनात्मक रीते परीक्षण करतां मालूम पडे छे के उक्त 'इ' प्रत्ययनो विकार थतां 'ई' प्रत्यय आव्यो होय अथवा 'इवि' के 'एवि' प्रत्यय द्वारा तेना संक्षिप्त रूप तरीके आ 'ई' आव्यो होय. कर्+इ= करि, ते ऊपरथी 'करी' अथवा 'करिवि' ऊपरथी 'करी' के 'करेवि' ऊपरथी 'करी' वगेरे 'ई' प्रत्ययवाळां रूपो ऊतरवानो संभव छे. अभयदेवे 'करि' तो वापर्युं ज छे अथवा प्राकृत 'करिअ' ऊपरथी पण 'करी' नो 'ई' प्रत्यय आववो सुघट छे. 'करीने' वगेरेमांनो 'न' मारा विचार प्रमाणे कोई आगंतुक नथी; परंतु ते संबंधक-भूतकृदंतनो अंगभूत होय एम लागे छे. वैदिक, पालि, प्राकृत ए बधी भाषाओमां संबंधक भूतकृदंतना प्रत्ययोमां 'न' अंगभूत तरीके स्पष्ट छे. तो पछी आधुनिक गुजरातीमां तेने आगंतुक मानवानुं कशुं कारण जणातुं नथी. तेनी उपपत्ति करवानी रीत आ प्रमाणे छे: मने जणाय छे के वैदिक 'त्वीन' प्रत्ययमां गुजराती 'करीने' ना 'ईने' नुं मूळ होय; परंतु तेमां अंते 'ए' क्यांथी आव्यो? आ 'ए' वा 'ईने'

माटे 'त्वीन' नी साथे तेनो समानार्थक 'इ' प्रत्यय ऊमेरीए तो 'त्वीनइ' थाय अने वखत जतां आ 'त्वीनइ', 'तीनइ'–'ईनइ'–'ईने' ना रूपमां आवी शके. समानार्थक बेवडा प्रत्ययोनो व्यवहार लोकभाषामां सुप्रतीत छे. एटले अहीं पण 'त्वीन+इ' एवो बेवडो प्रत्यय लगाडीए तो हरकत जेवुं जणातुं नथी. 'ई' अने 'ईने' प्रत्ययनी उपपत्ति विशे आ एक तुलनात्मक कल्पना छे. ते माटे कोई संवाद के उदाहरणो आपीं शकाय तेम नथी. मात्र 'ईने' ना 'न' ने आगंतुक न मानवो अने प्रत्ययनुं अंग मानवो एवा विचारमांथी उक्त कल्पना ऊभी थई छे. आ माटे भाषाशास्त्रना विद्वानो विशेष प्रकाश नाखी ते प्रत्ययोनो शुद्ध इतिहास आपशे एवी आशा छे. 'करी' 'करीने' एवा प्रयोगोनी पेठे संबंधक भूतकृदंत माटे 'भागु' 'भागुने' 'बांधु' 'बांधुने' 'जीतु', 'जीतुने' एवा प्रयोगो पण काठीओनी भाषामां चालु छे. श्रीमेघाणीजीनी रसधारोमां एवा अनेक प्रयोगो[२८७] उपलब्ध छे. ए प्रयोगोनी साधना आ प्रमाणे छे: प्राकृतमां संबंधक भूतकृदंत तरीके 'उं' 'उ' 'ऊण' वगेरे प्रत्ययो प्रसिद्ध छे: (८–२–१४६). 'भागु' वगेरेमां (भाग्+उ) 'उ' प्रत्यय छे अने 'भागुने' वगेरेमां (ऊण+इ–

---

२८७ जेमां 'भागीने' वगेरे अर्थसूचक 'भागुने' वगेरे प्रयोगो आवे छे एवां सौराष्ट्रनी रसधारमां आवेलां वाक्यो आ प्रमाणे छे:

"हाल्य, काम पताबुने वळे नीकळीए"
"गाम सोंसरवा थइने जोता जाइएं"
"कागळमां वींटुने पछेडी लाव्य"
"डायरामां बेसुने बटाइ हांकशे"
"तरत आवुने मने चोर ठेरवशे"—

—सौराष्ट्रनी रसधार भाग ३, पोटांनी परीक्षा.

ऊनइ—ऊने) ऊने प्रत्यय छे 'ऊन' मां छेडे मळेलो 'इ' संबंधक भूत-कृदंतने सूचवे छे, ए हकीकत हमणां ज आवी गई छे.

११२ संस्कृतमां अने प्राकृतोमां भूतकाळने सूचववा माटे मोटे भागे स्वतंत्र क्रियापदो ज वपराय छे अने भूतकृदंतो ओछां वपराय छे, त्यारे गुजराती भाषामां भूतकाळने सूचववा माटे मोटे भागे भूतकृदंतो ज वपराय छे. आ रिवाज पण कांइ आजकालनो नथी. वेदोमां[२८८] पण भूतकाळनी क्रियाने सूचववा भूतकृदंतो वपरायेलां छे. ए प्राचीन पद्धति प्रमाणे अभयदेव, वादिदेवसूरि अने हेमचंद्रे पण पोतानां पद्योमां भूतकाळने सूचववा भूतकृदंतो वापर्यां छे. एटले जे भूतकृदंतो संस्कृतादि प्राचीन भाषाओमां क्रियादर्शक विशेषणरूप हतां ते आपणी भाषामां क्रियापदरूप बनी गयां छे.

भूतकृदंतो द्वारा भूतकाळसूचक क्रियापद

खरी रीते क्रियापद मुख्यपणे क्रियानुं सूचक छे एटले ते द्रव्य—सत्व—रूप नथी अने एम छे माटे तेने जाति न होय अने जाति न होवाथी क्रिया-पदने लिंग पण न होय. आ सिद्धांत वैदिकादि प्राचीन बधी भाषामां सच-वायो छे, परंतु लोकभाषामां ते सिद्धांत टकी शक्यो नथी. कारण के लोकभाषामां तो विशेषणरूप भूतकृदंतोने क्रियापदरूपे वापरवानी प्रथा निरपवादरीते संमत छे, तेथी ज तेमां विशेषणनी जेम लिंग वगेरे टकी रह्यां छे. 'रामे रावणने मार्यो' ए वाक्यमां 'मार्यो' क्रियापद छे. छतां ते रावणनुं विशेषण छे. एटले ज ते नरजातिमां छे. वळी, ए वाक्यमां बीजी खूबी ए छे के 'मारितः—मारिओ—मार्यो' ए रीते 'मार्यो'नी

---

२८८ "स्कन्नम्" (ऋ० सं० ५-३-२४ निरुक्त पृ० २४०) "पपिवान्" (ऋ० सं० ८-३-२० निरुक्त पृ० ४६५) "जातानि" (ऋ० सं० ८-७-४-५, निरुक्त पृ० ४६१)

उपपत्ति छे, एटले ते, प्रथमा विभक्तिवाळुं छे छतां कर्मरूप एटले द्वितीया विभक्तिवाळा 'रावण'नुं विशेषण छे. 'माळीए कूकडीने मारी,' 'शिकारीए पक्षीने मार्युं' ए वाक्योमां पण 'मारी' 'मार्युं'—एमां एक कूकडीनुं विशेषण होई नारीजातिमां छे अने बीजुं पक्षीनुं विशेषण होई नान्यतरजातिमां छे. वाक्यनां बन्ने विशेष्यो कर्म छे माटे द्वितीयांत छे छतां तेनां विशेषणो प्रथमांत छे. आ पण लोकभाषानी विलक्षणतानो एक नमूनो छे. एवा बधा प्रयोगोमां भूतकृदंत प्रथमाना एकवचन के बहुवचनमां आवशे पण बीजी कोई विभक्तिमां नहीं आवे. भले तेनुं विशेष्य द्वितीया विभक्तिमां होय.

कर्मणि भूतकृदंतवाळा संस्कृतादि भाषाना प्रयोगोमां ('रामेण रावणो हतः') 'रावण' कर्म छे छतां तेनो कर्मार्थ उक्त थवाने लीधे ते प्रथमा विभक्तिमां आवे छे, त्यारे भाषामां तेवो नियम नथी. भाषामां उक्तार्थ कर्म बीजी विभक्तिमां पण आवे छे अने प्रथमा विभक्तिमां पण आवे छे. तात्पर्य ए के भाषामां भूतकृदंतो क्रियापदने स्थाने वपरावा लाग्यां छतां तेमां, क्रियापदमां अघटमान एवां जाति अने विशेष्य प्रमाणेनुं परिवर्तन टकी रह्यां छे अने विभक्ति तो एक प्रथमा ज तेने लागे छे.

भाषामां पण जे भूतकृदंतो क्रियापदरूपे वपराय छे तेमांनां केटलांक सीधां संस्कृत उपरथी प्राकृतना वर्ण विकारने पामीने आवेलां छे अने केटलांक प्राकृतनी प्रक्रियाथी ज पहेलेथी सधाईने पछी भाषामां आवेलां छे.

आपणी भाषामां विशेषे करीने भूतकृदन्तोमांथी भूतकाळसूचक क्रियापदो आव्यां छे. एथी मूक्युं, चूक्यो, लाग्यो वगेरे प्रयोगोमां 'मुक्त' उपरथी 'मुक्क' 'च्युतक' उपरथी 'चुक्क' अने 'लग्न' उपरथी 'लग्ग' आवे त्यार बाद ते द्वारा भूतकाळ सूचववानुं थतां वळी पाछो भूतकृदंतने

लागतो (भूतकाळसूचक) 'इअ' (इ+अ)–प्रत्यय तेमने लागे छे. मुक्त-मुक, मुक + इअ + क = मुकिउं–मूक्युं, ए ज रीते चुक + इअ = चुकिअ–चुकिओ–चूक्यो. लग + इअ = लगिअ–लगिओ–लाग्यो.

'मृ' धातु उपरथी प्राकृत मरिअ–मरिओ अने ए उपरथी 'मर्यो' रूप आवे एम छे, तथा 'मृ' धातु उपरथी थता 'मृत' द्वारा मृतकम्–मुअउं–मुउं रूप पण आवे छे तेथी 'मुउं' माटे बीजा कोई धातुनी कल्पना युक्त नथी.

११३ 'आव्यो' माटे ६९ मा पद्यमां हेमचंद्रे 'आइउ' रूप मूक्युं छे.

'आव्यो' नी व्युत्पत्ति

'आइउ' रूपनी निष्पत्ति माटे 'आयात' वा 'आगत'ने मूळरूपे कल्पवामां आवे छे अने तेमांथी 'आइउ' रूप नीपजी पण शके. परंतु 'आव्यो' मां जे 'व' श्रुति छे ते जोतां 'आव्यो' माटे 'आयात' वा 'आगत' शब्द बंध बेसे के केम? ए मने विचारणीय लागे छे. 'आववाना' अर्थमां 'आ' साथे 'पत्' धातुनो प्रयोग मळे छे. "आगमने × × × आपतति, चोपतिष्ठति, उपनयति, तथा उपसादयति"—(क्रियाकलाप–पृ० ५, श्लो० १४) आपतित:—आवइओ अने 'आवइओ' रूप उपरथी 'आविओ' 'आइओ' के 'आव्यो' वगेरे रूपो विना बाधाए आवी शके छे. जो के 'पत्' धातु उपरथी प्राकृतमां 'पड्' रूप आवे छे, पण तेनुं 'ड'–करण निश्चित नथी. कारण के पउमचरियमां अने जैनसूत्र ज्ञातीधर्म-कथामां 'आ' साथे 'पत्'नुं 'आवय' रूप पण वपरायुं छे एटले घणा जूना वखतथी वपराशमां चाल्या आवता 'आवय' उपरथी 'आव-इओ' नीपजावी तेमांथी 'आव्यो' रूप नीपजावीए तो 'व' श्रुतिनुं

२८९–जुओ पाइअसद्दमह० 'आवय' शब्द.

समाधान थई जाय तेम छे. नहीं तो 'आयात' के 'आगत' ऊपरथी 'आव्यो' लाववामां आयात–आयातो–आआओ–आओ अथवा आगत–आगयो–आयो एम रचना निपजावी अंत्य ओकारने वळे 'व' ना प्रक्षेपनी कल्पना करवी पडे एम छे. परंतु उक्त 'आइउ' रूप निपजाववा तो आथी पण वधारे खेंचवुं पडे एम लागे छे. हिंदीनुं 'आया' के मराठीनुं 'आले' रूप 'आगत' ऊपरथी सुखपूर्वक आवी शके एवुं छे, तेमां 'व' 'श्रुति नथी. त्यारे आपणा 'आव्यो'नी तेथी भिन्न प्रकारनी रचना होवामां वांधाने अवकाश नथी. वळी, ऊगती गुजरातीमां अनेक स्थळे 'आवे छे' अर्थमां 'आवइ' क्रियापद वपरायेलुं छे. 'आयात' वा 'आगत' कृदंत द्वारा 'आवइ' आववानो संभव नथी; किन्तु आपतति–आपतइ–आवतइ–आवयइ–आवइ ए रीते 'आवइ' क्रियापद सहेजे साधी शकाय छे. कहेवानुं ए के जे रीते 'आवइ' क्रियापद आवे छे ते ज रीते 'आव्यो' ए भूतकाळसूचक पद पण आव्युं छे–ए बन्नेना मूळमां मने तो 'आ + पत्'नो संबंध भासे छे.

पद्योमां 'कृ' धातु ऊपरथी नीपजेलुं 'किय' क्रियापद वपरायुं छे त्यारे चालु भाषामां 'कृ' धातुथी ऊपजेलुं 'करिअ' अने तेमांथी आवेलुं 'कर्युं' पद वपराय छे–ए ध्यानमां रहे. हिंदीमां 'कर्युं' अर्थमां 'किया' पदनो प्रचार छे.

कर्तृसूचक कृदंत

११४ पियंकरु, विच्छोहगरु ए बधां कर्तृसूचक कृदंतो छे. तेमांनो अंत्य 'करु' के 'गरु,' 'कृ + अ' द्वारा 'कर' थईने उत्पन्न थयेलो छे. (जुओ पृ० १९०, टिप्पण १९२)

'अब्भत्थणि'नुं मूळ 'अभ्यर्थन' छे अने ते भाववाचक 'अन'–प्रत्ययवाळुं कृदंत छे.

११५ 'सोएवा' अने 'जग्गेवा' ए, भाववाची के कर्मवाची कृदंत छे अने तेनो विध्यर्थ कृदंत तरीके पण उपयोग छे. वैदिक भाषामां 'तव्य'ने बदले 'तवै' पद वपराय छे:

विध्यर्थ कृदंत

"न म्लेच्छितवै नापभाषितवै." पालिमां 'तव्य'ने बदले 'तव्व' के 'तव्व' 'तय्य' वा 'तेय्य' अने प्राकृतमां 'तव्व' के 'अव्व' पदनो व्यवहार छे: भवितव्वं,; मातव्वं, ञातय्यं के ञातेय्यं (पालि) भवितव्वं, भासिअव्वं, सुणेअव्वं (प्राकृत) त्यारे जूनी गुजरातीमां 'तव्य'ने बदले 'इएव्वउं' 'एव्वउं' अने 'एवा' पदो आवे छे. प्रस्तुत 'सोएवा' अने 'जग्गेवा'मां 'सो+एवा,' जग्ग+एवा' एवो पदविभाग छे. 'स्वप्–सूवुं' धातुने स्थाने प्राकृतमां 'सोव्–सो' धातु पण आवे छे अने तेने 'एवा' लागतां 'सोएवा' रूप बने छे. 'सोएवा' एटले सूवानुं अने 'जग्गेवा' एटले जागवानुं.

प्राकृतमां 'तव्य' प्रत्यय लागतां पहेलां धातुने छेडे रहेला अंत्य 'अ' ना 'इ' अने 'ए' थाय छे–[८–३–१५७ हे०]. हसिअव्व, हसेअव्व (हसितव्य) ए प्रयोग जोतां तेमांना 'इअव्व, एअव्व' अंशनी साथे उक्त 'इएव्वउं', 'एव्वउं' अने 'एवा' बराबर मळता आवे छे.

आपणी भाषामां पूछवुं (प्रष्टव्य), देखवुं (द्रष्टव्य), जाणवुं (ज्ञातव्य), बोलवुं (वक्तव्य), जवुं (यातव्य), आववुं (आपतितव्य-आगन्तव्य), करवुं (कर्तव्य) वगेरे पदो कृदंतरूप छे अने तेमां जे अंतिम 'अवुं' छे तेनुं मूळ उक्त (तव्य) छे. तेम ज लेवुं (लातव्य), देवुं (दातव्य), सहेवुं (सोढव्य–सहेव्वउं) वगेरेमां जे अंतिम 'एवुं' अंश छे तेनुं मूळ पण उक्त 'तव्य' छे. 'सहेव्वउं' रूप हेमचंद्रना ७२ मा पद्यमां आवेलुं पण छे.

वळी, आपणी चालु भाषामां करवानुं, भणवानुं, हसवानुं, बोलवानी वात, खावानो मोदक वगेरे विशेषणरूप विध्यर्थ कृदंतोनो पण व्यवहार प्रचलित छे. ए पदोमां रहेला छेल्ला अवानुं (भण्+अवानुं), अवानी (बोल्+अवानी) अने अवानो (खा+अवानो) अंशनी उपपत्ति विशे बे युक्तिओ सूझे छे: ए 'अवानुं' वगेरे विध्यर्थ प्रत्ययो छे. आगळ कह्या प्रमाणे 'तव्य' प्रत्यय विध्यर्थनो सूचक छे. 'तव्य' नी पेठे बीजो एक 'अनीय' (करणीय) प्रत्यय पण विध्यर्थनो दर्शक छे एटले 'तव्य' अने 'अनीय' बन्ने समानार्थक छे. जुनी भाषाओमां केटलांक पदो बेवडा प्रत्ययो ले छे ए हकीकत आगळ आवी गई छे. ए जोतां तव्य+अनीय–तव्यानीय–तव्वानीय–अव्वानीय. ('तव्व' नुं 'अव्व' उच्चारण 'भासिअव्वं' वगेरे पदोमां सुप्रसिद्ध छे) आ बेवडा प्रत्ययरूप 'अव्वानीय' पद साथे उक्त 'अवानुं,' 'अवानी' अने 'अवानो' अंशनी सरखामणी थई शके एम छे. एमां शब्दपरिवर्तननी अने अर्थनी दृष्टिए पण कोई दोष जणातो नथी. फक्त आवो कोई संवाद शोधवो जोईए.

'करवानुं' नी व्युत्पत्ति

अथवा उक्त 'अवान' नो 'अवा' अंश 'तव्य' नुं परिवर्तन छे अने 'न' अंश संबंधदर्शक 'तण' नुं रूपांतर छे एम पण सरखामणीनी दृष्टिए कही शकाय: करवातणुं–करवाअणुं–करवानुं.

प्रधानपणे विध्यर्थनी सरखामणी करतां उक्त रूपोनी सिद्धिने सारु मने तो प्रथम युक्ति विशेष संगत लागे छे.

११६ जे कृदंतो उपर जणाव्यां छे ते सिवाय बीजां कृदंतो उक्त कृतिओमां वपरायां नथी एथी कृदंतनुं विवेचन पूरुं करी हवे सर्वनामोनी चर्चा करुं छुं:

अभयदेव—(द्वि०) तइ, (प०) तुह, (प०) मह, (प्र०) तुह, (प०) जसु, (प्र०) सो, (प०) कासु, (तृ०) अम्हेहि, (तृ०) पइ, (प्र०) तुहु, तुहुँ, (प्र०) हउँ, (प्र०) कि, के, (द्वि०) मइ, (तृ०) केण, तइ, (प्र०) अहमेव, (स्त्री० प्र०) कि, (तृ०) अन्निण, (प्र०) सु, (प्र०) तुम्ह, एउ, एउं, (प्र०) अन्नु, एह, महारिय.

बारमा सैकानां सर्वनामो

२ वादिदेवसूरि—जिणि, सो, जो, कोइ, ते, जेतणा, को, जेहि, जेहिं, तुह.

३ हेमचंद्र—एइ, एह, एइ, जो, ते, तसु, तें (तेन), जु, तुह, महु, विहुं, मइं, तुहुं, के, जे, विन्नि, जेण, जसुकेरए, हउं, तउकेहिं, अन्नहिंरेसि, अन्नइं, काइं, तहो, तुहारेण, अम्हाहिं, अवरु, (प०) एहु, ताहं, सा, को, पइं, कासु, दोण्णि, एह (स्त्री०) एहो, एहु (नान्यत०), जं, तं, सु, तुज्झु, मज्झु, कवणेण, आयइं, (इमानि), आयहो (अस्य), विहिं, महु, तइं, ताए, स, अन्नें, तुहुं, तुम्हेहिं, अम्हेहिं, अम्हे, कस्सु, कवणहिं, कवणु, तहारी, अन्नु, कुइ, तहु, तुह, जसु, स, तोरी, कवण, (स्त्री०) ताहं.

आ बधां सर्वनामोनी विभक्तिओ विशे जे कहेवानुं छे ते आगळ आवी गयुं छे. अहीं तो एमानां अमुक विशे कहेवानुं छे.

उक्त पद्योमां गुजरातीना प्रचलित 'तुं' माटे 'तुहुं' 'तुहुँ' के, 'तुहु' पद वपरायेलुं छे. हेमचंद्रे 'तुहुं' आपेलुं छे. वैदिकमां त्वम्, पालिमां त्वं अने तुवं, प्राकृतमां तुं, तुवं, तुह अने तुमं पदो वपराय छे.

'तुं' ना बहुवचन माटे 'तमे' अने ते सारु हेमचंद्र 'तुम्हे' अने 'तुम्हइं' रूपो आपे छे. वैदिकमां युष्मे, पालिमां तुम्हे अने प्राकृतमां तुब्भे, तुज्झे, तुम्हे, तुय्हे अने उम्हे रूपो वपरायेलां छे.

वळी, आपणी चालु भाषामां करवानुं, भणवानुं, हसवानुं, बोलवानी वात, खावानो मोदक वगेरे विशेषणरूप विध्यर्थ कृदंतोनो पण व्यवहार प्रचलित छे. ए पदोमां रहेला छेल्ला अवानुं (भण्+अवानुं), अवानी (बोल्+अवानी) अने अवानो (खा+अवानो) अंशनी उपपत्ति विशे बे युक्तिओ सूझे छे: ए 'अवानुं' वगेरे विध्यर्थ प्रत्ययो छे. आगळ कह्या प्रमाणे 'तव्य' प्रत्यय विध्यर्थनो सूचक छे. 'तव्य' नी पेठे बीजो एक 'अनीय' (करणीय) प्रत्यय पण विध्यर्थनो दर्शक छे एटले 'तव्य' अने 'अनीय' बन्ने समानार्थक छे. जुनी भाषाओमां केटलांक पदो बेवडा प्रत्ययो ले छे ए हकीकत आगळ आवी गई छे. ए जोतां तव्य+अनीय—तव्यानीय—तव्वानीय—अव्वानीय. ('तव्व' नुं 'अव्व' उच्चारण 'भासिअव्वं' वगेरे पदोमां सुप्रसिद्ध छे) आ बेवडा प्रत्ययरूप 'अव्वानीय' पद साथे उक्त 'अवानुं,' 'अवानी' अने 'अवानो' अंशनी सरखामणी थई शके एम छे. एमां शब्दपरिवर्तननी अने अर्थनी दृष्टिए पण कोई दोष जणातो नथी. फक्त आवो कोई संवाद शोधवो जोईए.

'करवानुं' नी व्युत्पत्ति

अथवा उक्त 'अवान' नो 'अवा' अंश 'तव्य' नुं परिवर्तन छे अने 'न' अंश संबंधदर्शक 'तण' नुं रूपांतर छे एम पण सरखामणीनी दृष्टिए कही शकाय: करवातणुं—करवाअणुं—करवानुं.

प्रधानपणे विध्यर्थनी सरखामणी करतां उक्त रूपोनी सिद्धिने सारु मने तो प्रथम युक्ति विशेष संगत लागे छे.

११६ जे कृदंतो ऊपर जणाव्यां छे ते सिवाय बीजां कृदंतो उक्त कृतिओमां वपरायां नथी एथी कृदंतनुं विवेचन पूरुं करी हवे सर्वनामोनी चर्चा करुं छुं:

त्रीजीना एकवचनमां वैदिक–त्वया, पालि–त्वया के तया, प्राकृत–ते, तइ, तए, तुमे, भे वगेरे रूपो थाय छे. ऊगती गुजरातीमां 'पइं' अने 'तइं' रूपो हेमचंद्रे आपेलां छे. प्रस्तुत पद्योमां त्रीजीना एकवचनमां तइ, तइं, पइ, पइं, रूपो वपरायेलां छे. चालु गुजरातीमां 'तें' रूप प्रचलित छे. हेमचंद्रे आपेला 'पइं' अने 'तइं' नुं मूळ वैदिक 'त्वया' मां छे. 'त्वया' ऊपरथी 'तइं' तो सरळ रीते आवी शके छे.

भाववाचक वैदिक 'त्वन' प्रत्ययनुं 'प्पण' रूपांतर हेमचंद्रे आपेलुं छे. ए जोतां अने वाग्व्यापारनी दृष्टिए जोतां पण 'आत्मा'ना 'अप्पा'नी पेठे 'त्व'नो 'प्प' थवो स्वाभाविक छे. आ रीते वैदिक 'त्वया'ना 'त्व'नो 'प' ऊपजे अने ते द्वारा ऊगती गुजरातीना 'पइं' रूपनी निष्पत्ति थाय. प्राकृत 'भे' रूपनी साथे पण प्रस्तुत 'पइं'नी सरखामणी करी शकाय.

षष्ठी विभक्तिमां तुह, तुज्झ, तहारी अने तोरी ए पदो उक्त पद्योमां वपरायेलां छे. वैदिक–तव, पालि–तव, तुम्ह अने तुम्ह, प्राकृत–तव, तुह तुब्भ–उब्भ, तइ, वगेरे अनेक रूपो वपराय छे. अपभ्रंशमां एने माटे तउ, तुज्झ अने तुध्र रूपो कहेलां छे. 'तुज्झ'नुं मूळ पालि 'तुम्ह'मां जणाय छे. 'तुह' पण एमांथी आवेलुं होय. 'तहारी' अने 'तोरी' पदो तद्धितांत छे. हेमचंद्र कहे छे के युष्मद्, अस्मद् वगेरे शब्दोने संबंध–सूचक 'आर' प्रत्यय लागे छे. [८–४–४३४ हे०] तुह + आर= तुहार. स्त्रीलिंगी तुहारी, ते ऊपरथी तहारी. भाषामां 'तारी'के 'त्हारी' रूप प्रचलित छे. 'तोरी' नुं मूळ पण ए 'तुहारी' छे. कवितामां 'तारुं' अर्थमां 'तोरी' अने 'मारुं' अर्थमां 'मोरी' पदो वपरायेलां छे: मोरी अरजी, तोरी कृपा. 'तुहार'नी पेठे 'महार' 'महारी' वगेरे पदो पण समझवानां छे. अभयदेवनी कवितामां 'महारिय' पद ए ज अर्थमां

आवेलुं छे. भाषामां 'मारुं' के 'म्हारुं' बन्ने प्रवर्ते छे. पद्यमां वपरायेला 'तुहारेण' नी पण ए ज उपपत्ति छे. 'तुहार' ऊपरथी तृतीयामां 'तुहारेण'.

'अमे' ने बदले पद्यमां 'अम्हे' वपरायुं छे. वैदिक 'अस्मे,' पालि 'अम्हे' अने प्राकृत 'अम्हे' छे. अपभ्रंशमां हेमचंद्रे 'अम्हे' अने 'अम्हइं' आपेलां छे. एकवचनमां 'हउं' के 'हउँ' पद वपरायेलुं छे. चालु भाषामां 'हुं' छे, वैदिक अहम्, पालि अहं, प्राकृत हं, अहं, के अहयं वगेरे छे. ऊगती गुजरातीमां हेमचंद्र 'हउं' आपे छे. ते 'हउं' अने पद्योमां वपरायेलां 'हउं' वगेरे तद्दन मळतां छे.

पद्योमां (स्त्री०) एह, एइ, (पुं०) एहो, (न०) एहु पदो भाषाना 'ए' अर्थमां वपरायेलां छे. उक्त कवितामां त्रणे लिंगमां जुदां जुदां रूपो मूकेलां छे. त्यारे भाषामां 'ए' शब्द त्रणे लिंगमां सरखो छे. वैदिक 'एतद्', पालि 'एत', प्राकृत 'एअ' अने भाषामां ए. भाषामां 'एणी' रूप पण प्रचलित छे, ते वैदिक 'एन' नुं स्त्रीलिंगी छे.

'आयइं' रूप 'आ' अर्थमां वपरायुं छे. हेमचंद्र 'इदम्' ने बदले 'आय' नी भलामण करे छे. भाषानुं 'आ' ते उक्त 'आय' मांथी आव्युं छे अने भाषानुं 'इ' वैदिक 'इ' ऊपरथी आव्युं छे, ते आगळ कही दीधुं छे. पृ० ७३ [४९].

उक्त कविताओमां कवण, काइं उपरांत नरजाति अने नारीजातिनां कि, के, कुइ, कुवि, कोइ वगेरे रूपो आवेलां छे. वै० कश्चित्, पालि कोचि, प्रा० कोइ अने भाषामां पण कोइ. भाषामां वपरातुं 'कांइ' हेमचंद्रे बतावेला 'काइं' मांथी थोडा फेरफार साथे आवेलुं छे. 'कवँणं' शब्दनुं मूळ अज्ञात छे, पण

'कवण' विशे निरुक्तकार

२९० जुओ टिप्पण २३२.

'कः' नुं निरुक्त करतां यास्काचार्य 'कमनः वा क्रमणः' शब्दनो निर्देश करे छे, ए ऊपरथी माळूम पडे छे के 'कमन' के 'क्रमण' शब्दनो निर्देश करनार यास्कनी सामे 'कवण' शब्दनी हयाती होय. 'कवण'–'कमन' के 'क्रमण' मां विशेष फेर नथी. यास्काचार्य लखे छे के–"कः कमनो वा क्रमणो वा सुखो वा" [पृ० ७३८].

उक्त पद्योमां 'ते' ना अर्थ माटे 'सो', 'सु', 'सा' के 'तं' पद वपरायां छे. वैदिकादि भाषाओमां 'ते'नां रूपो लिंगप्रमाणे जुदां जुदां थाय छे. आ पद्योमां पण तेनो ए रीते व्यवहार थयेलो छे, त्यारे भाषामां तो त्रणे लिंगमां प्रथमाना एकवचनमां 'ते' पद ज वपराय छे, एटलुं ज नहि पण बधी विभक्तिओमां 'ते' रूप ज मूळ अंग तरीके वपराय छे. भाषामां 'ते'नी आवी वपराश क्यारथी शरू थई ए बाबत हवे पछीनां अवतरणो द्वारा जणाववानी छे.

'जे' ना अर्थ माटे पण उक्त पद्योमां 'ते' माटे जणावेली रीते 'ज' शब्द वपरायेलो छे. त्यारे भाषामां तो त्रणे जातिमां 'जे' वपराय छे अने सर्व विभक्तिओमां पण 'जे' अंग चाले छे. 'जसु केरए' मां 'जसु' छठ्ठी विभक्तिवाळुं रूप छे अने तेने संबंधसूचक 'केर' प्रत्यय लागेलो छे. [८–२–१४७] मा सूत्रमां हेमचंद्र, संबंधदर्शक 'केर' प्रत्ययनी नोंध करे छे. संस्कृत 'कीय' अने आ 'केर' वच्चे साम्य होय एवुं माळूम पडे छे.

तउकेहिं–तारा माटे, अन्नहिरेसि–अन्यने माटे. (पृ० २४६–२४७)

भाषामां वपरातां (स्त्री०) जेणी, केणी अने तेणी उक्त 'एणी' ना अनुकरण ऊपरथी आव्यां लागे छे.

'बिन्नि' नो भाषाप्रचलित प्रयोग 'बन्ने' छे. 'दोण्णि' अने 'बिन्नि' बन्ने समानार्थक पदो छे. अहींनुं 'बिहुं' रूप षष्ठीनुं सूचक छे. भाषामां

वपराता षष्ठीदर्शक 'वेडनुं' रूपनुं मूळ ए 'विहुं' मां छे. भाषामां ते रूपने वेवडो प्रत्यय लागेलो छे.

११७ विशेषणो अने अव्ययो बाबत खास लखवा जेवुं हशे त्यां जणावीश, पण तेनी यादी तो आपी दउं छुं:

बारमा सैकानां विशेषणो अने अव्ययो

विशेषण	अव्यय
३ हेमचंद्र—	अभयदेव—
रवण्ण—रमण—सुंदर.	झत्ति—झटिति—झट
जुअंजुअ—युत (?) जुदीजुदी	इअ—इति—ए प्रमाणे
	लहु—लघु—लोकर—शीघ्र
विशेषणो बाबत खास कांई	
लखवा जेवुं नथी; एथी वधारे	वि—अपि—वी, पण
विशेषणोनी नोंध करी नथी. विकारी	य, च—अने
अने अविकारी विशेषणोनी रीत	तह—तथा—तथा
विशे आगळ कहेवाई गयुं छे.	किं—कांइ
हेमचंद्र पोताना पद्यमां 'जुदुंजुदुं'	मा—मा—मा—न
अर्थ माटे 'जुअंजुअ' निपातने	हु—चोक्कस
नोंधे छे— (८–४—४२२)	पुण—पुनः—वळी
अनेकार्थसंग्रह कोशमां तेमणे	निद—नकी
"युतः अन्विते पृथक्"—(कां० २	जइ—यदि—जो
श्लो० १८६) कहीने 'युत' शब्दने	अहह—अहाहा
'पृथक्' अर्थमां वताव्यो छे. 'युतं-	कह—कथं—केवी रीते

युतं' नुं प्राकृत उच्चारण 'जुअंजुअं' थई शके एम छे. हेमचंद्रनो कोश जोतां ते 'जुअंजुअ' शब्द 'युत' उपरथी आव्यो होय एम लागे छे. परंतु फारसी शब्दकोशमां 'जुदा' शब्दने फारसी तरीके नोंधेलो छे. एटले उक्त 'जुअंजुअ' शब्द फारसी 'जुदा' साथे संबंध राखे छे के उक्त 'युत' साथे? हेमचंद्रनी कृतिरूप 'अभिधानचिंतामणि'मां 'पृथक्' अर्थ माटे 'युत' शब्द नथी, तेम अमरकोशमां पण नथी, एथी संदेह थाय छे के 'जुअंजुअ' शब्द 'जुदाजुदा' फारसी शब्दनुं अनुकरण न होय? अभयदेवनी कृतिमां 'लल्लि' शब्द वपरायो छे ते देश्य छे. ("लल्लं सस्पृहम्"—देशी० वर्ग ७ गा० २६. भाषामां 'लल्लोचप्पो—भावापु') अने तेनो अर्थ 'खुशामत' थाय छे. अव्ययोनी नोंध करतां तेमां साथे साथे संस्कृत अने गुजराती

अव्यय

जि— { हि[291] / च } —ज—(निश्चय)

एम—एवम्—एम

२ देवसूरि—

जिम / जिम्व / जिंव / जिव } —जेम

नावइ—उपमादर्शक

इहुं—इह—अहीं

तिम, तेवँइ, तिंव—तेम

ता—तावत्—त्यां सुधी

जा—यावत्—ज्यां सुधी

एत्थु—अत्र—अहीं

जहिं—जहीं—जइं—ज्यां

तहिं—तहीं—तइं—त्यां

किं—शुं

३ हेमचंद्र—

एत्थु—अत्र—अहीं

तोवि—तोय

---

२९१ जुओ टिप्पण २१९ मुं. 'च'नो पण 'निश्चय' अर्थ थाय छे एथी 'च'नी साथे पण प्रस्तुत 'जि'ने अने भाषाना 'ज'ने सरखावी शकाय.

पर्यायो मूक्या छे. 'अइभन' (आश्चर्य) वगैरे केटलांक अव्ययो देश्य छे. एमनां मूळनी माहिती मळी शकी नथी. 'किम्'नुं अवेस्तामां 'चीम्' उच्चारण थाय छे ते विशे विचारणीय जेवुं छे. चीम्[२९२]–(खोरदेह–अवेस्ता–पृ०-८२) चीम्[५९]–(ते ज पुस्तक पृ० १३६) अहीं 'चीम्' उच्चारण नोंधीने 'शुं' नी व्युत्प-

अव्यय

पुणु–पुनः–वळी
जइ–जो
विणु–विना–वना
पच्छइ, पच्छि–पश्चात्–पछी
अह–अथ–जो
एम्व–एवम्–एम
म–मा–म
जाम–यावत्–ज्यां सुधी
पर–परम्–पण

---

२९२ 'शुं' ना मूळ माटे विद्वानोए 'कीदृशकम्–कीइसअं–कीइसउं–कीशुं' पदने आधाररूपे कल्पेलुं छे. परंतु अवेस्तामां 'शुं' अर्थे ज 'चीम्' पद वपरायेलुं छे ए जोतां 'शुं' नी व्युत्पत्ति माटे विशेष गवेषणा करवी जोईए एम मने लागे छे.

वळी, 'शुं' नी पेठे 'कशुं' ना मूळ माटे पण साक्षरोमां ऊपरनी कल्पना प्रवर्ते छे त्यारे 'कशुं' अर्थमां वपरायेलो एक 'किस' शब्द सूत्रकृतांगसूत्र १ श्रु० १ अ० नी प्रथम गाथामां मळे छे: 'परिगिज्झ किसामवि' अर्थात् (किसां–कशुं, अवि–पण, परिगिज्झ–परिग्रहरूपे राखीने बंध तूटतो नथी) ए, ए वाक्यनो भाव छे. मने लागे छे के 'किम्' नी पेठे कोई बीजो एक 'किस' शब्द 'कशा' ना अर्थमां पहेलां वपरातो हतो, ए हकीकत गाथामां वपरायेलुं 'किस' पद सूचवे छे अने वर्तमान आपणुं 'कशुं' अने उक्त 'किस' ए बन्ने वच्चे शब्द तथा अर्थनी दृष्टिए साम्य पण घणुं छे. गाथामां वपरायेला 'किस' शब्दनुं मूळ मने जड्युं नथी परंतु टीकाकार शीलांक तेने माटे सं० 'कृश' शब्द वापरे छे.

वळी, ७० मा टिप्पणमां बतावेलो सुत्तनिपातनी गाथाओमां 'किंसु' शब्द प्रश्न अर्थमां वपरायेलो छे. "किंसु सुचिण्णं"–क्युं सुचीर्ण? "किंसु सादुतरं"–क्युं स्वादिष्ठ? वगेरे. ए 'किंसु' (सं० किंस्वित्) शब्द साथे पण प्रस्तुत 'कशुं' नी सरखामणी थई शके एम छे. गुजरातमां केटलाक लोको 'च्यम् छे' एम बोले छे. ए 'च्यम' अने अवेस्तानुं 'चीम्' तद्दन समान छे ए ध्यानमां राखवा जेवुं छे.

त्तिमां ए ' चीम् ' उच्चारण उपयोगी छे के केम ? ए विचारवा विद्वानोनुं ध्यान खेंचुं छुं.

११८ 'आवइ' क्रियापद 'आपतति' ऊपरथी लाववुं सरळ पडे एम छे. ' आवइ ' ना मूळमां ' आयाति ' नी कल्पना दूर पडे छे अने ' आगच्छति ' तो तेथी पण विशेष दूर जाय छे. माटे ' आपतति ' पद विशेष संगत छे. ए माटे आगळ (पृ० २९३ कंडिका ११३) ' आव्यो ' ना लखाणमां लखी गयो छुं. अथवा ' गति ' अर्थ माटे संस्कृतमां हेमचंद्रे ' अम् ' अने ' अव् ' एम बे धातुओ आप्या छे. ' अम् ' धातु तो मात्र 'गति'ने सूचवे छे त्यारे ' अव् ' ना ' गति ' ऊपरांत बीजा पण अनेक अर्थो छे. आ + अमति—आमति अथवा आ + अवति—आवति ऊपरथी पण ' आवइ ' पद आवी शके छे अने ए रीते बनेला ' आव् ' नुं भूतकृदंत ' आविअ ' थाय अने ते द्वारा उक्त ' आव्यो ' रूप नीपजी शके.

अव्यय

उअ—उत—ओ—पश्य
केम—कथम्—केम
छुडु—जो, शीघ्र
किध—कथम्—केम
सइं—स्वयम्—स्व—पोते
जि[२९३]—हि—ज—नक्की
एत्तहे—आ तरफ
नाहिं—नहि—नहीं
कहिं—कहीं—कइं—क्यां
केम्वइ, किंव—केम
जेत्थु—यत्र—ज्यां
अइभन—आश्चर्य
अवसें—अवश्यम्—अवश्य
तेत्तहे—ते तरफ
जणि—जाण्ये
चिअ—चैव—नक्की
अज्ज—अद्य—आज
ओ—ओ
णं—इवार्थे
जणु—इवार्थे—जाण्ये
कइअहिं—कयें—क्यारे
पच्चलिउ—प्रत्युत—उलटुं

२९३ जुओ टिप्पण २९१.

११९ हेमचंद्र 'ले छे' अर्थमां 'लेइ्' क्रियापद वापरे छे. उक्त 'लेइ्'नी निष्पत्ति माटे केटलाक विद्वानो 'नी' धातुने अने केटलाक 'लभ्-लह्' धातुने कल्पे छे.

'ले'नी व्युत्पत्ति

मारा विचार मुजब बीजा गणना 'ग्रहण' अर्थवाळा 'ला' धातुमांथी आ 'लेइ्' लाववुं वधु सुगम छे. जेम 'दा' नुं 'देइ्' अने 'धा' नुं 'धेइ्' रूप नीपजे छे तेम शब्दविषयक के अर्थविषयक कशी क्लिष्ट कल्पना कर्या विना 'ला' उपरथी 'लेइ्' आवी जाय छे. क्रियारत्नसमुच्चयमां गुणरत्नसूरिए 'लिअइ्' क्रियानो प्रतिशब्द 'लाति' आप्यो छे. 'लीजइ्' क्रियानो प्रतिशब्द 'लायते' जणाव्यो छे, अने 'लइ्' ('ले') नी छाया 'लातु' मूकी छे.

अत्यार सुधीमां में मात्र बारमा सैकानी त्रणे कृतिओमां आवतां नामो, क्रियापदो, विभक्तिओ, अव्ययो, विशेषणो वगेरे विशे विचार कर्यो अने ते संबंधे व्युत्पत्ति विषयक विवेचन पण कर्युं.

हवे पछीना सैकाओनी कृतिओना उतारामां जे नामो वगेरे आवशे ते बाबत विशेष लखवानुं न रहे ए उद्देशथी अहीं में आटलुं लांबुं लखी नाख्युं छे.

हेमचंद्रे जे ऊगती गुजरातीनुं व्याकरण लख्युं छे तेना नियमो साथे उक्त त्रणे कृतिओना प्रयोगोने सरखावतां साधारण उच्चारणभेद सिवाय बीजो एवो खास कोई विशेष भेद जणायो नथी. अने साधारण पण जे भेद जणायो छे ते, ते ते स्थळे आगळ कहेवाई गयो छे.

१२० हवे तेरमा अने त्यार पछी अनुक्रमे अढारमा सैकासुधीना प्रयोगोनी व्याकरण अने व्युत्पत्तिनी दृष्टिए मीमांसा करुं ए प्रसंग प्राप्त छे.

तेरमा सैकाना शब्दो

(१) सोमप्रभ—

अप्पिउ—आप्युं

सवडि—सवड

संचरंत—संचरतुं

गहिर—घेरुं

मोरंति—मोरे छे—मोडे छे—मरडे छे

पसन्निअ—प्रसन्ना

संझाइ—सांजे

आणेवि—आणी

जोवइ } —जुए छे
जोअइ }

घरवत्त—घरवात

पक्खर—पाखर

करिसइ—करशे

जोआवइ—जोवावे छे—जोवरावे छे

गउ—गयो

करहि—करे

महारउ—मारुं

खंडि—खंडे

टक्किय—टांक्युं

जगडइ—जगडे छे

वारु—वार—बारणुं—द्वारप्रवेश

दीणार—दीनार (फारसी)

संवर—सावर

जंत—जंत्र

उच्छलिवि—ऊछळीने

करउं—करुं

खाईसु—खाईश

लिप्पिहिसि—लेपाईश

खद्धु—खाधुं

तक्खणि—टांकणे—वखत सर

हक्कारेवि—हाकरी—साकरी—बोलावी

जलूअ—जळो

सहुं—सउं—साथे

कवडिइं—कोडीए

पिअइ—पीए छे

कूवि—कूवे

तुट्टइ—तुट्ये—त्रुट्ये

(२) धर्मसूरि–जंबूचरिय—

नमेवि–नमी
चउवीसइ–चोवीशे
–सामिहिं तणउं–स्वामितणुं–स्वामीनुं
रयं–रच्युं
वखाणउं–वखाणुं
जु–जे
पूछीइं–पूछाय छे
नारिहि तणइ–नारीतणे
वापह तणइ–बापने
चवेसिइ–चवशे
होसइ } होशे–थशे
होसिइ
ऊठिउ–ऊठ्यो
नाचेई–नाचे छे
आविउ–आव्यो
सुमिण–सोणुं–स्वप्न
माईउ–मायो
जायउ–जायो–थयो
वड्डइ–वाधे–वधे
अठवरीसउ–आठ वरसनो
हूउ–हूयो–थयो
गुरुपासि–गुरुपासे

तासु तणइ–तस तणे–तेने
पहुत्तओ } पहोंत्यो
पहुतु
पहूतु
चालिउ–चाल्यो
वंदणह–वांदवा माटे
वंदिउ–वांदी
सेणीयं–श्रेणिके–श्रेणिकवडे
देजिउं–देजो
तम्हि–तमे
अम्हिं–अमे
इसउं–इस्युं–एवुं
करेशउं–करशुं
परणी–परणी–परणीने
नीछइ–निश्चे
लेसिउं–लेशुं
परिणेवउ–परणवुं
मनीउ–मान्युं
आठइ–आठे
एकवार–एकवार
परिणीय–परणी
घरि–घरे
आवीउ–आव्यो

माइवप्प—मावाप
किम किम—केम केम
मेल्हेसिउ—मेलशो—छोडशो
हणीजइ—हणीजे—हणाय
इण परि—एणि पेरे
तिणि—तेणे
सुह तणी—सुखतणी—सुखनी
हूं—हुं
छांडेसिउ—छांडीशो—छांडशो
करेसिउ—करशो
हउं—हुं
रूयडउं—रूडुं
हत्थि—हाथी
काग—काग—कागडो
निवडउं—निवडुं—पडुं
चींति—चित्तमां
धरेसिउं—धरशो
छंडेसिउं—छांडशो
तृस—त्रश—तरश
छीपइ—छीपे
करेशउ—करशो
उत्तर पडउत्तर—उत्तर पडुत्तर

भइंसु—भेंसो—पाडो
हुउ—हूओ—थयो
पुत्रजन्मि—पुत्रजन्मे
इशउं—ईशुं—एवुं
करेशउं—करशुं
नेमिहिंसिउ—नेमिशुं—नेमि साथे
वूझवीय—वूझवी
वेउ—वेउ—बन्ने
सिउं—शुं—साथे
लेसिउं—लेशुं
मोकलावण—मोकलवा
चालीय—चाल्या
भुइं—भों
ध्रसकइ—ध्रसके—त्रसके—बीए
बोलावीउ—बोलाव्यो
भेटावि—भेटाव
अम्हि—हुं
अछउं—छुं
पुत्त तणउ विझराय—विन्ध्यराय तणो पुत्र
मेल्हावीउ—मेळाव्यो—मेळवाव्यो—मेळाप कराव्यो
द्रेठि—दृष्टि
आवतउ—आवतो

बीजी—बीजी
सुक्क—सूकुं
जाणीइ—जाणीये
चोरतु—चोरतो
जणणी जाइउ—जननी जायो
कोइ—कोइ
नयणे—नयणे
छूटूं—छूट्युं
खमि—खम—क्षमा कर
अम्हे—अमें (तृ०)
संतावीया—संताप्या, सताव्या
कोणी—कोणिक
पनुती—पनोती
माइ—माई—मा
जिणि—जेणे
जाईउ—जायो—पेदा थयो
मोकलावी—मोकलावी
लेइशउं—लेशुं
वइराग—वइराग—वैराग्य
अम्ह—अमने अथवा अमे
बोलीइ—बोलीएं
मेल्ही—मेली—छोडी
अट्ठइ—आठे

साचउ—साचो
भडिवाउ—भटवाद—'हुं भट—शूर—छुं' एवुं बोलवुं
नवाणवइ—नवाणुं—नव्वाणुं
हुउं—हूयुं—थयुं
इणि—एणे
दीठउ—दीठो
मेल्हतउ—मेलतो—छोडतो
तम्हे—तमे
भलइं—भले
अछजिउ—अछजो—छो—रहेजो
झूझ—झूझ—युद्ध
झूझसिउं—झूझीश
वहूयर—वहूवारु
माइबप्पो—माबाप
कहं—कहे
घरहूंतु—घरेथी
नींसरइ—नीसरे
चालीउ—चाल्यो
—साथ—साथ
भाद्रवए—भादरवे
कसकेरी—कोनी
परिहरए—परिहरे
अनइ—अन्य—अने

वहूत—वहुत—घणा
लेवा—लेवा माटे
चालीउ—चाल्यो
पासि—पासे
गयउ—गयो
अंगमइ—आंगमे
हूउं—हूयुं—थयुं
पालतां—पाळतां
पाछिल्उं—पाछ्लो—छेल्लो
प्रभवउ—प्रभवो (नाम)
पढइं—पडे
संभलइं—सांभळे
भणइ—भणे—कहे

चिंतउ—चिंतो—चिंतवो
जे—जे
छासठए—छासठे
विज्जाएवि—विद्यादेवी
वइसारीउ—वेसार्यो—वेसाड्यो
पाटि—पाटे
गणइं—गणे
पामिसिइं—पामशे
धामीउ—धामी[२९४]—धार्मिक
रातिदिवसि—रातदिवस
नीपनूं—नीपन्युं—नीपज्युं
सोलह—सोळ
पणासउ—प्रनाशो—नाश करो

तेरमा सैकाना विजयसेनसूरिना शब्दो (२) विजयसेनसूरि—रेवंतगिरिरास

पणमेवि—प्रणमी
भणिसु—भणिशुं
रेवंतगिरे—रेवंतगिरिनो
रासु—रास
सुमरेवि—समरी

दंसणु—दर्शन माटे
देसदेसंतरु—देशदेशांतरनो, देश-देशांतरथी
आवइ—आवे छे
पोरुयाड—पोरवाड
गुरजरधर—गुजरातनी भूमि

२९४ वर्तमानमां केटलाक लोको पोतानी ओळखाण 'धामी' शब्दद्वारा आपे छे. मने लागे छे के प्रस्तुत 'धामी' अने ओडकवाचक 'धामी' ए बन्ने शब्दो एक छे.

मणहरु—मनहर
सोरठदेसु—सोरठदेस
बंधवि—बांधवे
सूसू—सुषम—सत्ययुग
दूसममाझि—दुष्षमकाळमांहि
धरिउ—धर्यो
बिहु नरपवरे—बन्ने प्रवर नरोए—उत्तम पुरुषोए
भाउ—भाव
कारिउ—कार्व्युं—कराव्युं
गढ—गढ
मढ—मठ—माढ—मेडी
पव } परब
परव }
घरि—घरे—घर वडे
आरामि—आराम वडे
तहि पुरि—ते पुरमां—नगरमां
संठाविओ—संठव्यो—संस्थाप्यो
सुरठ—सोरठ
भरावीय—भरावी
भाउ—भाई—भाउ
जसि—जस वडे
पाग—पगथियां
ऊडइं—ऊडे
ओहट्टए—ओटे छे—ओट थाय छे—ओछुं थाय छे

धवलकि—धोळकामां
बिहु—बेउ
वायइ—वाय छे
वाउ—वायु—वा
तक्खणि—टांकणे
तुट्टइ—तूटे
गुंजारव—गुंजारव
कराविउ—कराव्युं
अहिणवुं—नवुं
नियनाउं—निजनाम
चंदरु—चंदर
लिहाविउ—लखाव्युं
पुत्तलिय—पूतळी
कलस—कलश—कळश्यो
मंडपु—मंडप
तोरण—तोरण
रुणझणि—रणझण
उद्धरिउ—ऊधर्युं
दालिधु (द्दु ?)—दलदर
गलइ—गळे छे
झलहलइ—झळहळे छे
कसमीर—कास्मीर देश

वंध—वंधु
आविय—आव्या
करंतह—करतां
गलियुं—गळ्युं—गळी गयुं
लेवमु—लेपमय
जलधार—जळधारा
संतविउ—संताप पाम्यो
आविउ—आव्युं
इम—एम
नियमु—नियम
लइउ—लियो—लीधो
पभणइ—पभणे—कहे छे
सद्दाविय—साद पाडीने—['जयजय'नो साद पाडीने]
पच्छलु—पाछळ
जोएसि—जोईश
तुं—तुं
वलंतउ—वळतो
देहलिहि—डेलिए—डेलिमां
पुडि—पडियामां
आरोविउ—आरोप्युं
पच्छलु—पाछळ
वीजइ—वीजे
पणमइं—प्रणमे छे

जोइउ—जोयुं
ठिउ—थयो
मिल्हेवि—मेलीने—मूकीने
किउ—कियो—कर्यो
जइजइकारो—जेजेकारो
थप्पिउ—थाप्यो
पच्छिम—पच्छम—पश्चिम
कप्पिउ—काप्युं
विलेव तणीय—विलेपननी—विलेपन करवानी
वंछ—वांछा
नियदेसि—निजदेशे—पोताना देशमां
पराइय—पाछा फर्या
दीठु—दीठुं
वज्जइ—वाजे छे
नच्चइ—नाचे छे
पेखिवि—पेखी—पेखीने
सोहए—सोहे छे—शोभे छे
दावइ—दावे छे—आपे छे—देवरावे छे
पूरइ—पूरे छे
आरोही—आरोही—चडी
पहिलइ—पहिले—पहेले
गहगणए माहि—ग्रहगणमां
जिम—जेम

पामइं—पामे छे	पव्वयमाहि—पर्वतमांही
ठामि ठामि—ठाम ठाम	तेम—तेम
ठविय—ठव्या—स्थाप्या	तित्थंमाही—तीर्थमांही
ते—ते	रमइ—रमे
नर—नर	जो—जे
धन—धन्य	रासु—रास
जे—जे	तूसइ—तूसे—तुष्ट थाय
कलिकालि—कलिकाले	पूरइ—पूरे
मल-मयलिया-मलमेला—मलवडे मेला	रली—रळीयात—इच्छा—होंश—उत्कंठा
पामेइ—पामे छे	कडव—कडपलो—समूह—कडव
समेय—समेतशिखर (पहाडनुं नाम)	

१२१ तेरमा सैकाना सोमप्रभ, धर्मसूरि अने विजयसेनसूरिनी कृतिओमांथी लईने ऊपर जे जे शब्दो आप्या छे ते बधा पोतानी रचनाद्वारा कही आपे छे के अमे बधा गुजराती भाषाना छिए. आ बाबत विशेष चर्चा करतां पहेलां उक्त त्रणे ग्रंथकारोनो थोडो परिचय आपी दउं :—

सोमप्रभ—आ आचार्ये 'कुमारपालप्रतिबोध' नामनो कथाग्रंथ विक्रम संवत् १२४१ मां बनावेलो. अर्थात् कुमारपाळना स्वर्गवास पछी अगीयार वर्षे ज तेमणे उक्त

सोमप्रभनो समय

ग्रंथनी रचना करेली. आ आचार्ये "कल्याणसारसवितानहरेक्षमोह"[२९५]—इत्यादि एक आखा श्लोकना सो अर्थ करी बतावेला तेथी तेमनी ख्याति 'शता-

२९५ ए आखो श्लोक आ प्रमाणे छे :

"कल्याणसारसवितानहरेक्षमोह कान्तारवारणसमानजयाद्यदेव ।
धर्मार्थकामदमहोदयवीरधीर सोमप्रभावपरमागमसिद्धसूरे ॥"

थिक' तरीके थयेली हती. तेमणे तेमनो ए 'कुमारपालप्रतिबोध' नामनो ग्रंथ गुर्जरेन्द्रपुरमां एटले अणहिल्लपुरमां रहीने लखेलो छे, एवुं तेमणे पोते ज जणावेलुं छे. कुमारपालप्रतिबोधमां अंते लखेलुं छे के-

" शशि-जलधि-सूर्यवर्षे शुचिमासे रविदिने सिताष्टम्याम् ।
जिनधर्मप्रतिबोधः क्लृप्तोऽयं गूर्जरेन्द्रपुरे " ॥ पृ० ४७८. तेमनां

जे पद्यो अहीं उधर्या छे ते कुमारपालप्रतिबोधमांथी लीधेलां छे.

धर्मसूरि विशे विशेष वृत्तांत न आपतां संक्षेपमां जणावुं छुं के

धर्मसूरिनो समय

जंबूस्वामी रासमां तेमणे ते कृतिनो १२६६ नो समय जणावेलो[२९६] छे अने पोताना गुरुनुं नाम महेन्द्र-सूरि जणावेलुं छे.

त्रीजी कृति-रेवंतगिरिरास-ना कर्ता श्रीविजयसेनसूरि छे. रासनी शरू-

विजयसेनसूरिनो समय

आतमां तेमणे गुजरातमां आवेला धोळकाना राजा वीरधवलने याद कर्यो छे अने पोरवाड कुलना शणगार-समान-आसराजना पुत्र-वस्तुपाल अने तेजपाल ए बे भाईओनां नामने पण संभार्यां छे. तथा आ विजयसेनसूरि वस्तुपाल तेजपालना धर्माचार्य हता अने तेमणे विक्रम संवत् १२८८ ना फागण सुद १० बुधे गिरनार ऊपर महं० वस्तुपाले करावेला श्री समेतावतार-महातीर्थप्रासादनी प्रतिष्ठा करावेली. (प्राचीन जैनलेखसंग्रह पृ० ६६.) आ रीते उक्त त्रणे आचार्योना समय-तेरमा सैका विशे शंका मटी जाय छे.

बारमा सैकानी अंतिम अपभ्रंश वा जूनी गुजराती भाषानी उक्त कृतिओनी भाषामां संस्कृत प्राकृतनी असर तद्दन मटी नथी, जो के

---

२९६ जुओ टिप्पण २६३-२६४

भाषानुं वलण ऊगती गुजरातीनुं छे. तो पण कर्तानुं संस्कृत अने प्राकृतनुं पांडित्य तेमां डोकिया कर्या विना रहेलुं नथी. आ परिस्थिति अहीं आपेली सोमप्रभनी कृतिमां पण देखाय छे तेम छतां ऊपर आपेला शब्दो तेमनुं गुजराती तरफनुं वलण स्पष्ट कर्या विना रहेता नथी. एटले सोमप्रभनी कृति पण हजी ऊगती गुजराती अवस्थावाळी गुजराती भाषानी कृति छे. तेमणे आपेला केटलाक शब्दोनी व्युत्पत्तिनी विचारणा आ प्रमाणे छे:—

'आप्युं'नी व्युत्पत्ति

१२२ चालु भाषाना 'आप्युं'ने बदले तेमणे 'अप्पिउ' पद मूक्युं छे. 'अप्पिउ' मांथी ज 'आप्युं' आव्युं छे, अने 'अप्पिउ' तथा 'अर्पित' ए बन्ने तद्दन समान शब्दो छे. संस्कृत भाषाना प्राचीनतम वैयाकरणोए 'अर्पयति' रूपने साधवा माटे 'गति' के 'प्रापण—(लई जवुं)' अर्थवाळा 'ऋ' धातुने मूळरूपे राख्यो छे अने तेने प्रेरणासूचक 'णि' प्रत्यय लगाड्या पछी 'प' लगाडी ते 'ऋ' ऊपरथी 'अर्प' अंगने तेओ बनावे छे. आ रीते 'अर्प' अंग थयुं अने ते द्वारा भाषानुं 'आपवुं' क्रियापद पण आव्युं.

परंतु अहीं ते 'अर्प' नो 'आपवुं—देवुं' अर्थ शी रीते आव्यो? ते मुद्दो खास विचारणीय छे.

'दा' एटले 'देवुं' तेनुं प्रेरक अंग 'दाप्' एटले 'देवराववुं' ए रीते 'ऋ' एटले 'जवुं' अथवा 'लई जवुं' तेनुं प्रेरक अंग 'अर्प' एटले जवाववुं—जवराववुं—जनारने प्रेरणा करवी अथवा लई जनारने प्रेरणा करवी—लई जवाडवुं—पहोंचाडवुं.

'गति'—अर्थवाळा 'ऋ' द्वारा आवेला 'अर्प' अंगमां 'देवा' नो अर्थ शीघ्र समाई शकतो नथी. परंतु 'लई जवुं' अर्थवाळा 'ऋ' धातु

ऊपरथी आवेला 'अर्प' अंगमां य सीधी रीते नहीं किंतु लक्षणाद्वारा 'देवुं' नो अर्थ मांडमांड समाई शके छे.

'देवरावे छे' एवुं क्रियापद सांभळतां जेम 'प्रेरणा' नो स्पष्ट भास थाय छे तेम 'आपे छे' क्रिया सांभळतां लेश पण प्रेरणानो भास थतो नथी त्यारे 'अपावे छे' मां ते भास तद्दन स्पष्ट थाय छे.

'अमुकने खांड पहोंचाडी आव्या—आपी आव्या' एवा वाक्यमां 'पहोंचाडी आववुं' अने 'आपी आववुं' बन्ने पर्याय जेवां जणाय छे. एथी 'अर्प' अंगमां गतिने वा प्रापणने अपेक्षीने ते भावने गमे ते रीते घटाववो ज रह्यो. अथवा मने लागे छे के—'देवा'ना—'आपवा'ना अर्थमां 'दा'नी पेठे स्वतंत्र रीते कोई 'अप्प' धातु देश्य·होय के जेना ऊपरथी आपणुं 'आपवुं' पद आवे छे. अने वैयाकरणोए ए 'अप्प'नुं मूळ नक्की करवा 'ऋ' ऊपरथी तेने 'प' लगाडीने एक नवुं 'अप्' नी जेवुं 'अर्प' अंग कल्पी काढ्युं होय. वैयाकरणोए कल्पेला 'अर्प'मां स्पष्टपणे 'आपवा' नो भाव घटमान नथी, माटे ज अहीं देश्य 'अप्प' ने कल्पवानी वात करी छे.

'सवडि'नी व्युत्पत्ति

१२३ सवडि' शब्द ज्यां वपरायो छे ते स्थळनुं अनुसंधान करतां तेनो अर्थ 'सवड—सगवड' ज घटी शके छे. सोमप्रभ, स्पर्श इंद्रियनुं स्वरूप समझावे छे. ते संबंधे लखतां कहे छे के "शिशिर ऋतुमां स्पर्श इंद्रिय इच्छे छे के हवा विनानुं घर होवुं जोइए, अग्निनी सगडी होवी जोइए, तथा केसर, तेल अने घणां वस्त्रोनी सवड—सगवड—होवी जोइए"
"सिसिरम्मि निवायवरं अग्गिसयडि। घणवुसिण तेल्ल वहुवत्थ सवडि॥"

आ रीते जोतां अने विचारतां अहीं 'सवडि'नो सवड—सगवड अर्थ

घटमान छे. 'सवडि'नी व्युत्पत्ति निश्चित थई शकी नथी. परंतु सं० सपर्या—प्रा० सपरिया—सवलिया साथे प्रस्तुत 'सवडि'नी सरखामणी करी शकाय. 'सपर्या'मां मूळ धातु 'सपर' छे. 'पूजा—आदर—मान' ए तेनो अर्थ छे. कोई अतिथि के मित्र अन्यने घेरे जाय अने त्यां तेनी जे वधी अनुकूलता सचवाय ते ज तेनां पूजा—आदर—मान कहेवाय. 'सवड'के 'सगवड'ना आशयमां अनुकूलतानो भाव प्रधानपणे रहेलो छे ए दृष्टिए सपर्या—सवलिया अने 'सवडि' ए बधानुं मूळ एक होय एम लागे छे अथवा 'तत्क्षण' अर्थवाळा 'सपदि' पद साथे 'सवडि'नी तुलना करी शकाय. आवनार अतिथि के मित्रने जे अनुकूलता तत्क्षण अपाय ते 'सवड'ना भावमां आवे छे एटले 'तत्क्षण' अने 'तत्क्षण थनारी अनुकूलता' ए बे वच्चे अभेद कल्पिए तो 'सपदि' अने 'सवडि'नुं साम्य साधी शकाय. आ रीते भाषामां प्रचलित 'सोई' शब्दनी पण 'सपदि' पद साथे तुलना करी शकाय. सपदि—सवदि—सवइ—सउइ—सोई. अथवा अरबी भाषामां 'सगवड' अर्थ माटे 'सहूलत' पद छे. तेने ज घाटघूट—ठीक संस्कार—आपी 'सवडि' शब्दने प्रचारमां आण्यो होय.

'संचरंत' पद भाषाना 'संचरता' पदने मळतुं छे.

'मोरंति' क्रियापदमां 'मोर' धातु छे. भाषामां 'मोरवुं' क्रियापद प्रतीत छे. 'दीवानी शग मोरजो' ए वाक्यमां 'मोर' धातुनो उपयोग काठियावाडमां प्रतीत छे. आचार्य हेमचंद्र 'मोर' धातुने 'भञ्ज' (भांगवुं) धातुनो पर्याय कहे छे. 'मोर' धातु देश्य मालूम पडे छे अथवा 'नगर-मर्दी' 'प्राकारमर्दी' वगेरे प्रयोगोमां वपरायेला 'क्षोद' अर्थवाळा 'मृद्' (नवमो गण) धातु साथे 'मोर' धातुनी सरखामणी थई शके एम छे: मृद्—मुद्—मुड—मोड—मोर्—आवो क्रम कल्पी शकाय.

'जगडइ'—'जगडो करे छे' अर्थवाळुं 'जगड्' क्रियापद पण देश्य छे. देशीनाममाळामां वर्ग ३ गा० ४४ मां हेमचंद्रे 'जगडिअ'[297] शब्द आपेलो छे. देशीनाममाळाना संपादक रामानुजस्वामी 'जगडिअ' शब्दने बराबर मळतो तेलगु शब्द 'जगडमु' आपे छे. संभव छे के आपणी भाषानो 'जगडो' शब्द तेलगु भाषामांथी आपणे त्यां आव्यो होय.

'जगडो'नी व्युत्पत्ति

'वार' शब्द 'बार'ना अर्थमां छे. 'वार—बारणुं—द्वार—दरवाजो' ए बधा समान अर्थना शब्दो छे.

'दीणार' शब्द परदेशी छे. परंतु ते घणा समयथी आपणा संस्कृत-प्राकृत साहित्यमां आवी गयेलो छे. जैनसूत्र कल्प-सूत्रना मूळमां अने अमरकोशमां ते शब्द वपरायेलो छे. "दीनारेऽपि च निष्कोऽस्त्री"—(अमरकोश कां० ३ नानार्थव० श्लो० १४).

'दीणार' परदेशी शब्द

गुजरातीनो 'सावर' अने आ 'संवर' ए बन्ने शब्दो एकसरखा छे.

हेमचंद्र ८-४-१७४ मां 'उच्छल' धातुनो निर्देश करे छे. भाषामां प्रचलित 'उछळवुं' क्रियापदनुं मूळ उक्त 'उच्छल' धातु छे. 'उत्+शल्'के 'उत्+सल्' एवो तेनो पदविभाग छे. 'शल्' अने 'सल्' ए बन्ने धातुओ गतिना सूचक छे. सोमप्रभे वापरेला 'उच्छलिवि'नी व्युत्पत्ति पण उक्त 'उच्छल' उपरथी करवानी छे.

१२४ सोमप्रभ 'जोवुं—देखवुं' अर्थमां 'जोवइ'के 'जोअइ' क्रियापद वापरे छे. 'जोवे छे' अर्थनुं चालु भाषानुं क्रियापद अने उक्त 'जोवइ' के 'जोअइ' ए बन्ने समान छे.

'जोवुं'नी व्युत्पत्ति

---

२९७ "विद्दविअम्मि जगडिओ"—देशी०।

२९८ जुओ 'दीणार' शब्द—पाइअसद्द०।

'जोव्' धातुनुं मूळ अवगत नथी. वर्णसाम्यनी अपेक्षाए 'जोव्'नी साथे मळता आवे एवा 'द्युत्' 'ज्ञुत्' अने 'युत्' ए त्रण धातुओ उपलब्ध छे. 'द्युत्' एटले दीपवुं—द्योतते एटले दीपे छे. 'विद्युत् विद्योतते'—वीजळी दीपे छे—चमके छे. 'ज्ञुत्' अने 'युत्' एटले भासवुं. जोतते—योतते एटले भासे छे. 'द्युत्' वगेरे त्रणे धातुओमां सीधी रीते 'आंखे जोवा'नो भाव देखातो नथी अने 'द्योतते' 'जोतते' 'योतते' नो प्रयोग अकर्मक जणाय छे: 'नरं द्योतते' एटले 'माणसने जुए छे' ए रीते ए धातुनो प्रयोग क्यांय जोयो नथी. भाषामां वर्ततो 'जोव्' धातु सकर्मक छे अने 'आंखे जोवुं' ए तेनो अर्थ छे. आ बधुं जोतां 'जोव्' धातुनुं अक्षरसाम्य 'द्युत्' वगेरे धातुओ साथे होवा छतां ते ('जोव्' धातु) द्युत्, ज्ञुत् के युत् उपरथी आव्यो होय एवी कल्पना थई शकती नथी. श्रीमान नरसिंहरावभाईना लखवा मुजब डॉ० टेसीटोरी 'जोव्' धातुने उक्त 'द्युत्' मांथी नीपजावे छे. अक्षरसाम्य जोतां डॉक्टरसाहेबनी कल्पना असंगत नथी परंतु अर्थ-दृष्टिए जोतां उपर जणावेली गूंच आवे छे. हा, एम मानवामां आवे के 'द्युत्' नुं रूपांतर थया पछी तेनो अर्थ पण फरी जाय छे अने ते अकर्मक धातु रूपान्तर पामी सकर्मक पण थई जाय छे, तो वांधो नथी. परंतु भाषामां जे अर्थ रूढ छे ते अर्थमां 'द्युत्' नो उपयोग शोध्या सिवाय उक्त कल्पना विशेष क्लिष्ट जणाय छे. लक्षणानो उपयोग करवामां आवे अने भाषामां आवेला 'जोव्' नो मूळ स्वभाव बदली नांखवामां आवे तो कदाच बने.

मने लागे छे के आवी क्लिष्ट कल्पना करवा करतां 'जोव्' धातुने देश्य मानीए तो हरकत नथी.

आ० हेमचंद्रे कुमारपाळचरित्रमां बेत्रण स्थळे 'जोअ' धातुनो प्रयोग करेलो छे. "सत्तु वि मित्तु वि दोन्नि वि जोअइ"—(सर्ग ८

श्लो० २६) शत्रु अने मित्र बन्नेने जुओ. " जिण–आगम जोइ "–(सर्ग ८–श्लो० ६१) जिन आगमने जो–जिन आगमनी गवेषणा कर. " जोअंतहे " (सर्ग ८–श्लो० १६) आ बधे स्थळे टीकाकारे 'जोअ' नुं प्रतिबिंब आप्युं छे तो 'धुन्;' परंतु " धातूनामनेकार्थत्वात् " कहीने ते 'धुन्' नो 'जोवुं' अर्थ जणावेल छे.

'पक्खर' ने व्युत्पत्ति

'पक्खर' अने भाषानो 'पाखर' ए बन्ने समान शब्द छे. हेमचंद्र पोताना 'अभिधानचिंतामणि' नामक संस्कृत कोशमां (कां० ४, श्लोक० ३१७) 'तुरगसन्नाह' ना अर्थमां 'प्रक्षर' अने 'पखर' शब्द नोंधे छे तथा देशीनाममालामां (वर्ग ६, गा० १०) ए ज अर्थमां 'पक्खर' शब्द जणावे छे. विशेष विचारतां उक्त 'पक्खर' पदनी तुलना 'पक्ष'–(पडखुं) पद साथे करी शकाय एम छे: घोडानी पीठ उपर बन्ने पडखे जे बख्तर या सुशोभित झूल नखाय छे ते, 'पाखर' शब्दनो अर्थ छे. 'पाखर' घोडानां बन्ने पडखांने शोभावे छे–बन्ने पडखानुं भूषण छे. ए रीते 'पडखां' ना संबंधने लईने ते 'बख्तर' या 'झूल' नुं नाम 'पाखर' पड्युं होय. आ दृष्टिए जोतां पक्ष+र–'पक्खर' अने ते द्वारा 'पाखर' पद वाग्व्यापारनी दृष्टिए निर्दोष रीते आवी शके एम छे. 'पक्खर' नो 'र' 'मधुर' ना 'र' नी पेठे मत्वर्थीय छे अने 'पखाज'–(पक्षवाद्य) पदमांनो 'पख' तथा 'पाखर' नो 'पख' ए बन्ने समानार्थी छे.

'जोआवइ' एटले 'जोवरावे छे.' आ धातुनो संबंध उक्त 'जोव्' धातु साथे छे.

'ढक्किय' एटले 'ढांकेलुं.' उपरउपरथी जोतां 'ढक्क-ढांकवुं' धातु देश्य लागे छे परंतु खरी रीते तेम नथी. संस्कृतमां 'स्थग्–संवरणे' धातु

छे. " संवरणम्–आच्छादनम् "—(धातुपारायण पृ० १३७ धातु अंक १०३०). उक्त आच्छादन—ढांकवुं—

'ढांकवुं' नो व्युत्पत्ति

अर्थवाळा 'स्थग्' धातु उपरथी 'ढक्' धातु आवेलो छे, अने भाषानुं 'ढांकवुं' ए उक्त 'ढक्' द्वारा आवेलुं छे.

'खाइसु' मां प्रथम पुरुषना एकवचननो 'उ' प्रत्यय छे अने तेनुं पूर्वग 'इस्' पद भविष्यकाळने सूचवे छे. प्रथम पुरुषना एकवचन 'उं' उपरथी 'खाइसु' नो 'उ' आव्यो छे अने पाछळथी भाषानां आवतां, भविष्यकाळसूचक ते 'इस्' पद क्यांय 'अस्' रूपे बदली गयुं छेः करशे, करशो वगैरे. त्यारे क्यांय ते 'इस्' कायम पण रह्युं छेः खाईशुं, खाईश, जमीश, पीश वगैरे.

संव० १२४१ पछी १२६६ नी कृति जोईए तो तेमां वपराता प्रयोगोए विशेष गुजरातीपणुं धारण कर्युं छे एम जणाया विना रहेतुं नथी.

संव० १२६६ नी जंबूचरियनी कृतिने उगती गुजराती कहेवा करतां कुमार–गुजराती शब्दथी कहीए तो पण बराबर बंध बेसे एवुं छे. तेमां पहेला पुरुष माटे आवेलो 'हूं' 'उठिउ' 'करशुं' माटे 'करेशउं' (आमां दंत्य 'स' ने बदले तालव्य 'श' वपरायो छे, ते ध्यानमां रहे) 'परणवुं' माटे 'परिणेवउ'; 'मान्युं' माटे 'मन्नीउ' तथा 'लेशो' अर्थे 'लेसिउ' 'पामशे' माटे 'पामिसिइं', अने डगमग, नात्रां, ऊभा, चोरतु, भुइं, नीम, भेटाव, छूटुं, पाल्तां, नीसरइ, पंगुती, वहूयर, नीपनूं वगैरे अनेक प्रयोगो १२६६ नी भाषाने आपणी चालु भाषानी बहु पासे लावे छे.

१२५ 'तण' पद संबंधने सूचवे छे. साधारण रीते 'तण'नो प्रयोग पदनी ल्गोलग राखवानी पद्धति छे. आ कृतिमां ते पद्धतिमां फेरफार थयो छे, 'माय दुल्लंघीय तणइ वयणे' अने 'पुत्त तणउ विझराय' ए वाक्योमां 'तण' नो प्रयोग पूर्वनी रीते थयेलो नथी. प्रथम वाक्य 'माय तणइ दुल्लंघीय वयणे' एम होवुं जोईए अने बीजुं वाक्य 'पुत्त विझराय तणउ' एम होवुं जोईए. 'माताना दुर्लंघ्य वचनने लीधे' ए प्रथम वाक्यनो अर्थ छे अने बीजा वाक्यनो 'विंध्यराजनो पुत्र' एवो अर्थ छे. पहेला वाक्यमां 'माय' अने 'तणइ' नी वच्चे वचनना विशेषणरूप 'दुल्लंघीय' पदनुं व्यवधान छे अने बीजामां 'तणउ' नो प्रयोग 'विझराय'नी पछी जोईए ते पूर्वे थयेलो छे. आ समय पछीना रासाओमां घणे स्थळे 'तण' ना अने षष्ठी विभक्तिओना प्रत्ययोना आवा ऊलटा–सूलटा प्रयोगो थयेला छे.

'तण'नो स्वतंत्र उपयोग

'पहूत' नी व्युत्पत्ति विशे चर्चा आगळ (पृ० २८०) आवी गई छे. आ कृतिमां ते, 'पहूत' अने 'पहुत' एम बन्ने रीते वपरायेलो छे.

१२६ 'वांदवा माटे' अर्थ बताववा 'वंदणह' 'लेवा माटे' 'लेवा' 'मोकलववा माटे' 'मोकलवण' अने 'वूझववा माटे' 'वूझवणइ' शब्दो वपराया छे. ते पदोनी व्युत्पत्ति आ प्रमाणे करवानी छे: वंद + अणह, मोकलव + अण, वुझव + अणइ. 'अणह' 'अण' अने 'अणइ' ए त्रणे तुमर्थने दर्शावनारा वा चतुर्थीना अर्थने दर्शावनारा प्रत्ययो छे. 'अण, अणहं, अणहिं, एवं, एवि, एप्पि, एविणु, अने एप्पिणु' ए आठ प्रत्ययो 'तुम्' ना अर्थने सूचवे छे एम हेमचंद्र कहे छे (८–४–४४१). प्रस्तुतमां 'वंद् + अणहं' उपरथी 'वंदणहं' अने ते द्वारा 'वंदणह' पद आवेलुं छे. 'वंदणह' पदनी बीजी रीते पण निष्पत्ति थई शके एम

'वंदणह' वगेरेनी व्युत्पत्ति

छे : सं० 'वन्दनस्य'. षष्ठी, चतुर्थीना अर्थमां थाय छे माटे 'वन्दनस्य' एटले 'वन्दनाय–' 'वांदवा माटे'. चतुर्थीने बदले वपरायेली षष्ठीना एकवचन 'स्य' 'स्स' 'स्सु' 'हु,' अने ए 'हु' उपरथी 'वंदणह'नो अंत्य 'ह' आवी शके एम छे अथवा षष्ठीना बहुवचन 'हं' उपरथी पण ते 'ह' आवी शके एम छे अने अर्थघटनामां पण कशो वांधो रहेतो नथी. संभव छे के चतुर्थीसूचक प्रत्ययो उपरथी तुमर्थ-सूचक 'अणहं' के 'अणहिं'ना 'हं' के 'हिं' अक्षरो आव्या होय अने 'अण' ते संस्कृतमां वपराता भावसूचक 'अन'नुं प्रतिरूपक होय. तुमर्थे जे एकलो 'अण' आवे छे ते लुप्त चतुर्थ्यंत पण होई शके छे. 'बुझवणइ' मां लागेलो 'अणइ' प्रत्यय उक्त 'अणहिं' उपरथी आवेलो छे अने 'मोकलावण'नो अंतिम 'अण' ते तुमर्थक उक्त 'अण' प्रत्यय पोते छे.

१२७ 'लेवा' मां ला+एवा छे. हेमचंद्र 'तव्य' ने बदले 'एवा' वापरवानी भलामण करे छे. (८–४–४३८) 'लातव्य' ने बदले 'लेवा'. अहीं 'लातव्य'मां 'तव्य' भावसूचक छे तेथी 'लातव्य' एटले 'ग्रहण करवुं–लेवुं' एवो अर्थ 'लेवा'नो थाय अने ए 'लेवा' पदने लुप्त चतुर्थीवाळुं मानीए तो तेनो 'लेवा माटे' अर्थ पण थाय. मने लागे छे के अहीं 'लेवा' ने लुप्त चतुर्थी विभक्तिवाळुं मानीए तो अर्थघटना बरावर थाय अथवा लातव्याय—लाएतव्वाय–लाएअव्वाय—लेअव्वाय–लेव्वाय—लेवा ए रीते पण चतुर्थ्यंत 'लातव्य' उपरथी व्याकरणना नियमानुसार 'लेवा' पद आवी शके छे.

आ 'लेवा' पद पछी 'निमित्ते' पद लगाडीए तो 'लेवा निमित्तें' थाय अने ते उपरथी 'लेवा नेमाटे' पद उद्भवे. वळी, उक्त 'लेवा' पदनी साथे 'बुझवणइ' मां वपरायेलो तुमर्थक 'अणइ' प्रत्यय लगाडीए तो 'लेवा+

अणइ' ऊपरथी 'लेवाणइ' पद नीपजे अने ते द्वारा चालु भाषाप्रचलित 'लेवाने' पदने साधवामां कोई प्रकारनो बाध देखातो नथी. आ रीतनी व्युत्पत्तिमां 'तुमर्थ' नो बेवडो प्रयोग छे ए ध्यानमां रहे. 'बुझवणइ' नी उपपत्ति साथे 'अणइ' नी उपपत्ति बतावी गयो. उक्त 'लेवा' अने 'लेवाने' नी पेठे करवा, रमवा, करवाने, रमवाने, करवाने माटे, रमवाने माटे वगेरे पदोनी योजना घटाववानी छे. भाषामां वपराता 'लेवातणुं' 'बोलवातणुं' वगेरे प्रयोगोनी उपपत्ति आगळ (पृ० २९५–९६) बतावी दीधी छे.

लियइ, लीयंता वगेरे रूपो 'ला' (ग्रहण करवुं–लेवुं) धातु ऊपरथी लाववानां छे. ए बाबतनी चर्चा आगळ (पृ० ३०५) आवी गई छे.

'मग्गावइ' शोधे छे–मागे छे–मागुं करे छे. धातुसंग्रहमां 'मार्ग' धातुनो 'अन्वेषण' अर्थ आपेलो छे परंतु ते, 'मागवा' ना अर्थमां पण वपराय छे. "याच्ञायां भिक्षते मार्गयते याचति, याचते"—(क्रियाकलाप पृ० ५२, श्लो० १९०) उक्त 'मार्ग' धातु ऊपरथी प्रेरणाना अर्थमां 'मार्गयति—मग्गावइ' रूप आवे छे.

'परिणेवउ' एटले 'परणवुं'–'परणवानुं'. 'परिणेवउ' शब्द भावसूचक छे. परि + णी + तव्य–परिणेतव्य–परिणेतव्यक–परिणेअव्वउ–परिणेवउ. हेमचंद्र 'तव्य' ने बदले 'इएव्वउं' 'एव्वउं' अने 'एवा' वापरवानी सूचना करे छे. एमांथी अहीं 'एव्वउं' लगाडीए तो पण परिणी + एव्वउं–परिणेव्वउं–'परिणेवउ' रूप आवे.

१२८ भविष्यकाळनां क्रियापदो—

भविष्यकाळनां क्रियापदो   त्रीजो पुरुष—होसइ, होइसइ, करेसिइ, पामिसिइं.

पहेलो पुरुष—करेशउं, लेसिउं, झूझसिउं.

बीजो पुरुष—करेसो, करेशिउ, लेसो, छांडेसिउ, छंडेसिउ, धरेसिउं, मेल्हेसिउं.

आमां 'उं' प्रत्ययवाळां रूपो प्रथम पुरुषनां छे. 'उ' अने 'ओ' प्रत्ययवाळां रूपो बीजा पुरुषनां छे. बीजा पुरुषनो उक्त 'उ' के 'ओ', बीजा पुरुषना बहुवचन 'हु' उपरथी आवेलो छे अने बीजा पुरुषनो 'उं' ए तो आ 'उ' नुं उच्चारणांतर छे.

तथा 'इ' 'ई' प्रत्ययवाळां रूपो त्रीजा पुरुषनां छे. आ रूपोमां 'स' तालव्य पण छे, अने 'स' दंत्य पण छे. तालव्य 'श' नी शरूआत प्रस्तुत कृतिमां देखाय छे. प्रथम पुरुषना 'उं' वगेरे प्रत्ययोनी चर्चा आगळ (पृ० २६२) आवी गई छे.

'छांडवुं'नी व्युत्पत्ति

'छांडेसिउ' के 'छंडेसिउ' मां मूळ धातु 'छड्ड' छे. हेमाचार्य 'छड्ड' धातुने देश्य गणे छे अने तेने 'मुच्'नो पर्याय कहे छे. संस्कृत धातुसंग्रहमां 'छर्द' धातु दशमा गणमां आवेलो छे. त्यां तेनो अर्थ 'वमन' बतावेलो छे. प्रस्तुतमां तो तेनो अर्थ 'छांडवुं-त्याग करवो-छोडवुं' थाय छे. संस्कृतना 'छर्द' उपरथी प्रस्तुत 'छड्ड'ने लावीए तो ते वाग्व्यापारना नियमने अनुसारे आवी शके एम छे. छर्द-छद्द-छड्ड-छांड के छंड. परंतु आ व्युत्पत्तिने प्रामाणिक बनाववा माटे संस्कृतना 'छर्द' धातुनो अर्थ विस्तारवो पडशे. ए अर्थ न विस्ताराय तो 'छर्द' उपरथी उक्त 'छांड' न आवी शके. आचार्य हेमचंद्र ८-२-३६ सूत्रमां 'छर्द' नुं 'छड्ड' करवानी भलामण करे छे एथी समझाय छे के 'छर्द' उपरथी आवेलो 'छड्ड' पोतानो संकुचित अर्थ 'वमन' मूकी 'त्याग-

छोडवुं—मूकी देवुं'—एवा विशाल अर्थमां आवी गयो छे. कुमारपालचरित्रमां 'छड्डिअ' नो अर्थ आपतां टीकाकार पूर्णकलश कहे छे के "छर्दितम्—वान्तम्—त्यक्तम्" इत्यर्थः (सर्ग ३, श्लो० ९) अर्थात् ए स्थळे 'छड्ड' धातु 'छांडवा'ना अर्थमां वपरायेलो छे, एथी 'छर्द्' ऊपरथी 'छड्ड' नी व्युत्पत्ति करवी विशेष उचित छे.

आ कृतिमां 'मेल्हेसिउ'—मेलशो—क्रियापदमां वपरायेलो 'मेल्ह' धातु पण 'तजवा'ना अर्थनो छे. हेमचंद्रे आ धातुने पण 'मुच्'नो पर्याय कह्यो छे. 'मेल्ह' धातु देश्य छे. संस्कृत धातुसंग्रहमां 'मुच्' धातुनो पर्याय अने प्रस्तुत 'मेल्ह'ने मळतो आवे एवो कोई धातु हयात नथी.

१२९ बत्रीशमी कडीमां 'मेल्हावीउ'—'मेळाव्यो' एवुं पद आवे छे. तेनुं मूळ सं० "मिल—श्लेषणे" (छट्ठो गण) धातुमां छे. मिलन, मेलाप, संमेलन, मळवुं वगेरे शब्दो ए 'मिल' ऊपरथी आपेला छे.

'देजिउं' क्रियापद मूळे 'देज्जिहु' छे अने ते ऊपरथी अहीं 'देजिउं' नोंवेलुं छे. व्याकरणना नियम प्रमाणे दा + अ + ज्ज + हु= दाएज्जेहु—देज्जेहुं—देज्जिहुं—देजिउं—देजिउ—देजो. आ क्रियापदमां बीजा पुरुष बहुवचनना 'हु' ऊपरथी 'हुं' द्वारा 'उं' थयेलो छे.

'देसु'मां व्याकरणोक्त रीते दा + अ + स + हुं दाएसहुं—देसहुं—देसु—देशुं. अहीं प्रथम पुरुष बहुवचनना 'हुं' द्वारा 'उ' आवेलो छे.

'वइसारीउ' एटले 'बेसाड्यो' के 'बेसार्यो'—उपवेशितः—'उप' साथेना

'बेसारवुं'नी व्युत्पत्ति

'विश'ने प्रेरणासूचक 'आर' लगाडी तेनुं भूतकृदंत करीए तो 'उवविसारिओ' थाय. एक साथे बे 'व' आवतां उच्चारण करनारे 'उववि'ने बदले 'वइ' उच्चारण कर्युं. जे पदमां एक करतां वधारे समान स्वरो के व्यंजनो आवे

छे, त्यां वाग्व्यापार आवुं ज विपरिणाम उपजावे छे. हेमचंद्रे प्रेरणासूचक 'आड' प्रत्ययनी नोंध आपी छे: ८–३–१५१. तेनुं उदाहरण–भमाडइ. आ 'आड' प्रत्यय प्राकृतमां सर्वव्यापक नथी; परंतु गुजरातीमां सर्वव्यापक थयेलो छे. ऊंघाड्यो, जमाड्यो, रमाड्यो वगेरे. 'वइसारिउ'मां जे 'आर' छे ते 'भमाड'ना 'आड'मांथी आवेलो छे.

१३० 'नोंत्रां'[२९९] नो अर्थ प्रसिद्ध छे. ते शब्दनी व्युत्पत्ति स्पष्टपणे समझाती नथी तो पण मूळ 'ज्ञाति' शब्द ऊपरथी ए शब्द जन्म्यो जणाय छे.

'भडिवाउ' नी व्युत्पत्ति

'भडिवाउ' शब्द भटवादः–भडवादो–भडवाओ–भडिवाउ–ए रीते आव्यो लागे छे. 'भटवाद' एटले शूरतानी ख्याति करवी–'हुं शूर छुं'–एम बोलवुं. अहीं राजा कहे छे के "आ साचो 'भडिवाउ'–'भटवाद' छे" एटले आ (प्रभव चोर), जे पोतानी शूरतानी ख्याति करे छे ते साची छे–खोटी नथी. (कडी ३२). भाषामां एक 'भडवो' शब्द तृतीय–प्रकृति जेवा के नवळा पण बहुबकवादी माणस माटे वपराय छे. मने लागे छे के तेने उक्त भटवाद–भडिवाउ–भडवो–ए रीते लावी शकाय. 'भटवाद' नो अर्थ मात्र 'शूर छुं एवुं बोलनारो'–'खरो शूर नहीं' एवो थाय छे अने ते अर्थ उक्त 'भडवो' शब्दमां बंध बेसे एम छे.

अहीं 'छुं' अर्थमां 'अछउं' अने 'तमे छो' अर्थमां 'अछिजउं' क्रियापदनो प्रयोग आवेलो छे. तेथी 'छे' क्रियापद 'अस्' ऊपरथी

---

२९९ जेम 'ग्रामान्तरम्' अने 'गामतरुं' ए बन्ने शब्दो वच्चे समानता छे तेम 'ज्ञात्यन्तरम्' अने 'नातरुं' ए बे पदो वच्चे पण समानता छे अथवा ज्ञाति+इतर–ज्ञातीतर–नातीतर–नातीयर–नातरुं एम पण समानता लागे छे. प्रस्तुत 'नात्रां' पदनी व्युत्पत्ति शोधवा जेवी छे.

आव्युं छे. 'आस्' ऊपरथी नथी आव्युं—एवी पूर्वोक्त (पृ० २७२ कं० १०३) हकीकत मजबूत थाय छे.

'रूडुं'नी व्युत्पत्ति

'रूयडउं' अने 'रूडुं' बन्ने समान अर्थवाळा शब्दो छे. ए शब्दोना मूळमां 'रुच' धातु होवानो संभव छे. 'रुचिर' अने 'रूडुं' शब्दोनो अर्थ पण समान छे: रुचिरम्—रुचिरकम्—रुइरयं—रुइरउं—रुइरं—रूडुं एवो क्रम घटमान छे. 'र'नो 'ड' थवामां बाध नथी.

रूपकम्—रूववं—रूवयडं—रूवयडुं—रूअडुं—रूडुं—ए रीते पण 'रूडुं'ने साधी शकाय. परंतु 'रुचिर' ऊपरथी लाववामां विशेष औचित्य छे.

'आंगमे'नी चर्चा

'अंगमइ'[300] क्रियापद 'स्वीकारवा'ना अर्थमां वपरायेलुं छे. 'अङ्गमय' शब्दद्वारा बनता नामधातु 'अङ्गमययति' एटले 'अंगमय करे छे—स्वीकारे छे' एमां उक्त 'अंगमइ—आंगमे'नुं मूळ होय. "मरण आंगमे ते भरे मूठी" ए रीते पोताना भजनमां प्रीतम कवि 'आंगमे' क्रियापदनो उपयोग करे छे. तेना मूळनी स्पष्ट कल्पना नथी आवती; परंतु 'जेओ मरणने स्वीकारवा तैयार होय अथवा मरण ऊपर आक्रमण करी शके एटले मरवाना भय विनाना होय तेओ अथवा जेओ मरणनी प्रतीक्षा करनारा होय—मरणनी वाट जोनारा होय, तेओ पोतानुं काम साधी ले छे—' एवो अर्थ ऊपरना वाक्यनो छे. ए जोतां उक्त 'अंगमय'मां के 'आक्रमति'—(आक्रमण करे छे) ना 'आक्रम्'मां उक्त 'अंगमइ'नुं मूळ होय वा 'आगमयते'—(वाट जूए छे) ना 'आगमय'मां.

---

३०० हिंदीभाषामां 'स्वीकार' अर्थ माटे 'अंगवना' क्रियापद छे. प्रस्तुत 'अंगमइ' अने हिंदी 'अंगवना' ए बन्ने वच्चे अधिक साम्य छे. कदाच उक्त 'अंगमय' ऊपरथी ए क्रियापदो आव्यां होय. 'अंगमइ' ना मूळरूपे अहीं जे 'आक्रम्' अने 'आगमय्' नी सूचना करी छे ते विचारास्पद छे.

अहींनो 'पाछिलउ' शब्द 'पाछला' एटले 'छेल्ला' अर्थने सूचवे छे. वै० पश्चा–पच्छा–स्वार्थिक 'इल्ल'—(८–२–१६४ हे०) पच्छिल्ल+—क–पच्छिल्लओ–पच्छिल्लउ–पाछिलउ–पाछलो.

छासठए–छासठमां, षट्षष्टि—छासट्ठि, अने ते उपरथी सातमी विभक्ति छासट्ठिए–छासठए.

१३१ अहीं 'सांभळवुं' अर्थमां 'संभलइं' क्रियापद वपरायेलुं छे.

'सांभळवुं'नी व्युत्पत्ति

'सांभळवुं'ना मूळ विशे थोडो विवाद छे. केटलाक विद्वानो 'निशामयति'ना 'निशामय' उपरथी 'सांभळवुं' लावे छे त्यारे बीजा केटलाक 'संस्मरति' उपरथी तेने नीपजावे छे. मारी दृष्टिए आ बन्ने कल्पना गौरववाळी छे:

'निशामय' उपरथी 'सांभळवुं' लाववामां 'निशामय' ना 'नि' नो लोप कल्पवो पडे, पछी तेमां 'ळ' लाववा माटे वळी बीजी कल्पना करवी पडे. अर्थनी घटना तो बराबर छे, पण उक्त बे विचित्र कल्पनाओ करवी पडे.

'संस्मरति' उपरथी 'सांभळ' ने लावतां वाग्व्यापारना धोरणे वर्णपरिवर्तननी घटना कदाच बरोबर थाय, परंतु अर्थनुं विशेष ताण पडे एम छे. 'संस्मरति'—'संभारवुं–याद करवुं' एवा अर्थने सूचवे छे. जे मननो व्यापार छे तेने बदलावी 'संस्मरति' ने कानना व्यापाररूप 'सांभळवा' अर्थमां ताणीने लाववो पडे छे.

'श्रावण' एटले श्रवण प्रत्यक्ष–कर्णगम्य. न्यायनी भाषामां 'शब्दः श्रावणः' एवो प्रयोग अनेकवार थयेलो छे. मारी धारणा छे के आ 'श्रावण' शब्दने 'मुण्डं करोति मुण्डयति'नी पेठे नामधातु बनावी ते

ऊपरथी 'श्रावणयति' क्रियापद सुगमरीते निपजावाय. अहीं संवादक प्रमाण पण उपलब्ध छे: शालिभद्रसूरि (राजगच्छीय वज्रसेन सूरिशिष्य—संवत् १२४१) ना 'भरतेश्वरबाहुबलिरास'मां "भाविइं भवीयण सांभणउ" ए वाक्यमां 'सांभळो' अर्थमां 'सांभणउ' क्रियापद वपरायेलुं छे. प्रस्तुत 'श्रावणय' अने आ 'सांभणउ' नुं 'सांभण' ए बन्ने अंगो तद्दन मळतां छे. [रासना मूळ पाठ माटे जुओ—नागरीप्रचारिणी पत्रिका—कार्तिक १९९८ नवीन संस्करण—पृ० १९५, 'वीरगाथाकालका जैन—भाषासाहित्य'] ए 'श्रावणयति' ऊपरथी आपणुं 'सांभळवुं' क्रियापद आवी शके: 'व' ना कारणे 'सां'ना अनुनासिकपणानी घटना थाय, 'व'नो 'भ' थाय, 'व' अने 'भ' बन्ने एकस्थानीय छे एटले ए फेरफारमां बाध नहीं आवे. पछी 'ण' अने 'ल' ए बन्ने पण नासिक्य होवाने लीधे 'ण', 'ल'ना रूपमां आवी जाय. 'लोणी' (नवनीत—माखण), 'निशाळ' (लेखशाला) वगेरे शब्दोमां ए रीते 'न' नो 'ल' अने 'ल' नो 'न' थयो छे, ए सुप्रसिद्ध छे. आ रीते 'सांभळवुं' ने निपजावतां वाग्व्यापारना धोरणे वांधो जणातो नथी, तेम अर्थसंबंधी पण कशी ताण नथी पडती.

१३२ आ कृतिमां 'घरथी—घरमांथी' एम पांचमीना अर्थ माटे 'घरहूंतु' शब्द आव्यो छे.

प्रस्तुत पंचमीसूचक 'हूंतु'नी उपपत्ति आ रीते थई शके एम छे:

पंचमीसूचक 'हूंतु'नी व्युत्पत्ति

हेमचंद्रना कहेवा प्रमाणे 'हु' अने 'हुं' ए बन्ने प्रत्ययो पंचमीने सूचवे छे. 'हु' एकवचन छे अने 'हुं' बहुवचन छे. वच्छहु (वृक्षात्) सिंगहुं (शृङ्गेभ्य:) वगेरे उदाहरणो सुप्रतीत छे: (८—४—३३६, ३३७

हे०) जेम 'हुं' वगेरे पंचमीने सूचवे छे तेम 'तस्' प्रत्यय पण पंचमीनो द्योतक छे एनां पण ग्रामतः, नगरतः, ततः, कुतः वगेरे उदाहरणो जाणीतां छे. आ स्थळे 'हुं + तस्' ए बन्ने पंचमीसूचकोने साथे राखीए तो 'हुंतो' एवो एक अखंड शब्द नीपजे अथवा एकवचन 'हु' अने 'तस्' द्वारा आवतो प्राकृत 'त्तो' ए बन्नेने जोडीए तो पण 'हुत्तो' द्वारा 'हुंतो' पद आवे. आ रीते नीपजता 'हुंतो'ना 'उ'नुं दीर्घीकरण तथा 'ओ'नुं ह्रस्वीकरण करी ते 'हुंतो' द्वारा प्रस्तुत 'हूंतु'ने साधवामां लेश पण दूषण नथी. अर्थघटना बराबर रहे छे अने अक्षर-रचना पण खांडी थती नथी. सरखामणी माटे जणाववुं जरूरी छे के प्राकृतमां पंचमी बहुवचन माटे एक 'सुंतो' प्रत्यय छे एम वररुचि अने हेमचंद्र बन्ने कहे छे. "भ्यसो हिंतो सुंतो" (प्रा० प्र० परि० ५ सू० ७ तथा ८-३-९ हेम०) प्रस्तुत 'सुंतो' अने उक्त रीते साधेलो 'हुंतो' ए बन्ने वच्चे विशेष समानता छे. 'स' अने 'ह'नो जे भेद छे ते नगण्य छे. अहीं एक वात खास ध्यानमां राखवानी छे अने ते ए के सं० 'भू' अने प्रा० 'हू' धातुनुं वर्तमान कृदंत 'हूंत' के 'होंत' बने छे अने ते द्वारा हूंतो, हूंतओ, होंतो के होंतओ वगेरे पदो आवेलां छे. प्रस्तुत पंचमीसूचक 'हुंतो' अने आ वर्तमान कृदंतरूप 'हूंतो' ए बे वच्चे केवळ अक्षरसाम्य छे, अर्थनुं साम्य लेश पण नथी, एथी जेओ वर्तमानकृदंत 'हूंतो' साथे पंचमीद्योतक 'हुंतो'नो संबंध कल्पे छे तेओ केवळ अक्षरसाम्यने अवलंबेला छे. हेमचंद्रे आपेला 'जहां होंतउ आगदो' 'तहां होंतउ आगदो' 'कहां होंतउ आगदो' (८-४-३५५) वगेरे प्रयोगोमां पण 'जहां' 'तहां' अने 'कहां'नो अंतिम 'हां' ज पंचमीनो सूचक छे अने 'होंतउ' वर्तमान कृदंत छे ए ध्यानमां रहे. प्राकृत द्व्याश्रय सर्ग ८, श्लोक २६ मां हेमचंद्रे "जो जहां होतउ सो तहां

होतउ" एवुं वाक्य आपीने पंचमीसूचक 'हां' ने ज समझावेलो छे अने 'होतउ' पद तो वर्तमान कृदंतरूपे मूकेलुं छे. ते वाक्यनी टीका करतां आचार्य पूर्णकलश लखे छे के "होतउ भवन् जायमानः" अर्थात् टीकाकार पण ए 'होतउ' पदने वर्तमान कृदंत ज समझे छे. ए ज प्रमाणे "जहां होंतउ आगदो" वगेरे वाक्योनी समझ आपनार दोधकवृत्तिकार पण 'होंतउ'नो 'भवन्' अर्थ आपे छे अर्थात् 'होतउ' के 'होंतउ' ए बन्ने वर्तमानकृदंत ज छे, तेनो पंचमीना अर्थ साथे लेश पण संबंध नथी, अने तेमने हेमचंद्रे पंचमीना अर्थ माटे वापरेला पण नथी ए ध्यानमां रहे.

१३३ प्रस्तुत कृतिमां आ पद्य छे:

"प्रभव भणइ हो जंबुसामि एक साठि ज कीजइ।
बिहुं विज्जावडइं एक विज्ज थंभणीय ज दीजइ" ॥ २१ ॥ अर्थात्

"प्रभव भणे (कहे): हे जंबुस्वामी ! एक साटुं ज कीजीए।
बे विद्यावडे एक विद्या स्तम्भनीका ज दीजीए" ॥

उक्त कडीनो उक्त अर्थ जोतां एमां वपरायेलां 'साठि' अने 'विज्जावडइं' ए बे पद विशेष ध्यान खेंचे तेवां छे. आजकाल वेपारीओनी भाषामां 'साटुं' शब्द विशेष प्रचलित छे. कोई पण सोदो नक्की करवो होय त्यारे

'साटे' अने 'वडे' नी व्युत्पत्ति

वेपारीओ 'साटुं' शब्द वापरे छे अथवा कोई चीजनी अदलाबदली करवी होय त्यारे पण 'साटुं' शब्दनो व्यवहार जाणीतो छे. 'साटापाटा करवा' ए प्रयोगमां 'साटा' शब्दनो जे अर्थ छे ते 'साटुं' नो पर्याय ज छे.

विक्रमना बारमा सैकामां हयाती धरावनार आचार्य श्रीलक्ष्मणगणिए बनावेला 'सुपासनाहचरिअ'[३०१]मां पृ० २३३ उपर 'सट्ट' शब्द 'बदला'ना अर्थमां वपरायेलो छे, अने पृ० २७५ उपर 'सट्टी' शब्द 'सोदा'ना

---

३०१ आ ग्रंथमां प्राकृत भाषानो प्रधान प्रयोग छे. तेमां एवा अनेक शब्दो उपलब्ध छे, जे हालनी गुजरातीमां पण वपराय छे.

भोलियां–भोळी. पृ० ५१४, गा० ८४.

बलद्दीउ–बळदीयो. पृ० २७५, गा० ७.

लद्देउं–लादीने (आमां मूळ 'लद्द' धातु छे) पृ० २७५, गा० ७.

मइलेसि–तुं मेलुं करे छे ('मइल' नाम धातु छे.) पृ० २३२, गा० ५०.

धुत्तारसि–धूते छे. ('धुत्त' धातु छे) पृ० ११४, गा० १५२.

गड्ड–गाडर–पृ० ११४, गा० १५७.

उज्जमेमि–ऊजमुं छुं–उद्यम करुं छुं. पृ० ११६, गा० १८१.

खेडंति–खेडे छे. पृ० २३७, गा० ५०.

पट्टुया–पाटु. पृ० २३७, गा० ४४.

टलियं–टळ्युं. पृ० २३७, गा० ४८.

चीरी–चीर–(कपडानो चीरो के फळनी चीर) पृ० ५८४, गा० ३१.

डंगा–डांग { पृ० २३८, गा० ५९.
पृ० ३८८, गा० ६४.

टोपिआ–टोपी. पृ० २६३, गा० १२५.

वहियवट्ट–वहीवट– { वहिय–वही–चोपडो
वट्ट–वृत्त } –चोपडानुं नामुं पृ० ५१४, गा. ७६.

छंटिओ–छांट्यो. पृ० ३५५, गा० १७.

पोट्ट–पोटकुं––पोटलुं. पृ० ३५५, गा० २७.

विहरावसु–वहोराव–आप. पृ० ६३१, गा० ३०.

करव–पाणीनो करवो. पृ० ६३१, गा० ३२.

लत्ता–लात. पृ० २३८, गा० ६०.

गड्डय–गाडुं–पृ० २३८, गा० ५८ वगेरे.

अर्थमां वपरायेलो छे. ज्यां ते शब्द वपरायो छे ते पद्यो आ प्रमाणे छे :–

" दायव्वमत्थि अन्नं पि किं पि सो भणइ तुम्ह जं एत्थ ।
तस्स य सट्टे खग्गं गिन्हह एयं ति सो भणिउं ॥" (गा० ५८)

अर्थात् "ते कहे छे के तमोने जे बीजुं कांइ देवानुं छे तेने साटे–तेना साटामां–बदलामां–मारुं आ खड्ग ल्यो."

'सट्टी'नो निर्देश :

" आगच्छामि सदेसं विक्किणिउं किं पि किं पि किणिऊणं ।
घडिय च्चिय मह सट्टी इह वणिएहिं समं जेण " ॥ (गा० १४)

अर्थात्–" कांइ कांइ वेचीने अने खरीदीने स्वदेश तरफ आवुं छुं, कारण के अहीं वाणियाओ साथे मारुं साटुं थयेलुं ज छे."

आ रीते प्रथम पद्यमांनो 'सट्ट' शब्द 'साटे' ना भावने जणावे छे अने बीजा पद्यनो 'सट्टी' शब्द 'साटुं–सोदो' अर्थने सूचवे छे.

अहीं वपरायेला 'सट्ट' अने 'सट्टी' ए बन्ने शब्दो देश्य जणाय छे, अने ते एक ज शब्दनां रूपांतर जेवां भासे छे.

प्रस्तुत कृतिमां वपरायेलो 'साठि' शब्द अने उक्त 'सट्टी' शब्द समान छे.

भाषामां 'तेलने साटे घउं दे' एवा वाक्यमां जे अर्थमां 'साटे' शब्द वपरायो छे ते अर्थमां अथवा 'साटा'ना अर्थमां आ 'साठि' शब्द अहीं वपरायो छे, 'तैलस्यार्थे गोधूमं देहि' वाक्यना 'तैलस्यार्थे' पदनुं प्राकृत उच्चारण 'तेलस्सट्ठे' थाय, तेनुं जूनी गुजरातीमां 'तेलस्सट्ठि' थाय. 'तेलस्सट्ठि' पदमां 'तेल' प्रकृति छे. अने 'स्सट्ठि'मांनो 'स्स' षष्ठीनो छे, तथा 'अट्ठि' पद प्रयोजनवाचक 'अर्थ' उपरथी आवेलुं सप्तमी विभक्तिवाळुं रूप छे. 'प्रयोजन' अर्थवाळा 'अर्थ'नुं 'अट्ठ' उच्चारण थाय छे अने 'धन' अर्थवाळा 'अर्थ'नुं 'अत्थ' उच्चारण थाय छे ए ध्यानमां रहे. "अट्ठो

प्रयोजनम्, अत्थो धनम्" (८–२–३३–हेमचंद्र) अहीं 'स्वार्थे' ऊपरथी साधेला 'स्सट्टि'पद साथे प्रस्तुत कृतिमां वपरायेला 'साठि'नी तुलना करी शकाय एम छे. अने संभव छे के वखत जतां ते, 'वद-ला'ना अर्थमां रूढ थई गयो होय.

केटलांक वाक्योमां जे 'साटे' शब्द चतुर्थीना अर्थने बतावे छे ते 'साटे'नुं मूळ उक्त 'स्सट्टि'मां भासे छे.

१३४ 'बिहुं विज्जावडइं' एटले 'बे विद्याने बदले–बे विद्याओने लईने—एक थंभणी विद्या आप.'

'बिहुं' 'विज्जा' 'वडइं' एम त्रण जुदां जुदां पद छे. 'बिहुं' शब्द पांचमीनुं बहुवचन छे, 'विज्जा' शब्दने पण पांचमीनुं बहुवचन लागेलुं छे; परंतु ते अहीं लुप्त छे. 'बिहुं' मां जे विभक्तिवचन छे ते ज विभक्ति-वचन विशेषणविशेष्य भावने लीधे 'विज्जा'मां पण होय, ए स्वाभाविक छे. "तिलेभ्यः प्रति माषान् अस्मै प्रयच्छति" एटले 'तिलान् गृहीत्वा माषान् ददाति' इत्यर्थः" अर्थात् 'तलने लईने तेने बदले अडद आपे छे.' जे वस्तु बदलामां लेवानी होय छे ते पांचमी विभक्तिमां आवे छे अने 'बदलो' अर्थ बतावबा बदलामां लेवानी वस्तुनी साथे एटले ते वस्तुवाचक पद साथे 'प्रति' अर्थपूरक तरीके लागे छे. "यतः प्रतिनिधि–प्रतिदाने प्रतिना"–(२–२–७२ हेमचंद्र तथा २–३–११ पाणिनि). जेम उपर्युक्त वाक्यमां बदलामां लेवाना 'तल' पांचमी विभक्तिमां छे अने तेने 'प्रति' लागेलो छे तेम अहीं बदलामां लेवानी 'बे विद्या'ने पांचमी विभक्ति लागेली छे अने साथे ए ज न्याये 'प्रति'नो उपयोग थयेलो छेः प्रति–पडि–वडि–ए रीते अहीं 'विज्जा' साथे 'प्रति' नुं प्रतिरूप 'वडि' शब्द वपरायो छे. आदिभूत 'प' नुं पण 'व' मां

परिवर्तन थाय छे (८-१-२३३ हेम०-प्रभृतन्-बहुत्तं). 'बिहुं' मां लागेलो 'हुं' पांचमीना बहुवचननो सूचक छे. अहीं वपरायेलो 'बडइं' ते उक्त 'प्रति' ना 'वडि' नुं रूपांतर छे. अथवा 'वडि'ने त्रीजीना एक-वचननो 'एं' द्वारा थयेलो 'इं' लागीने ते 'वडिइं'-'वडइं' नीपजेलुं छे. भाषामां अव्ययोने पण विभक्ति लागे छे. ऊपरथी, नीचेथी, ऊपरलुं, नीचेनुं वगेरे. तेम अहीं अव्ययरूप 'प्रति' ना 'वडि' ने विभक्ति लागी तेनुं 'वडिइं' थयुं छे अने ते ऊपरथी 'वडइं' आव्युं छे.

चालु भाषामां तृतीयाना अर्थ माटे जे 'वडे' पूरक के नामयोगी पद वपराय छे तेनुं मूळ उक्त 'प्रति'मां छे ए संशय विनानी वात छे. पंचमी अने तृतीयाना अर्थमां खास अंतर नथी. एटले पंचमीवाळा पद साथे वपरातो 'प्रति' तृतीयाना अर्थनो पण द्योतक थई शके छे. 'तलवडे वढं छुं' 'तलवडे थी वडं छुं' वगेरे प्रयोगोमां स्थिर व्यवहारवाळो 'वडे' शब्द 'हाथवडे खाउं छुं,' 'आंखवडे जोउं छुं' इत्यादि प्रयोगोमां 'बदला' ने बदले मात्र 'हेतु'नो भाव बतावे छे अने ए रीते ते तृतीयाना अर्थनो द्योतक छे. 'पेटवडिए' 'पैसावडिए' वगेरे प्रयोगोमां मळतुं 'वडिए' पद प्रस्तुत 'विज्जावडइं'ना 'वडइं' पदना अर्थ साथे बराबर मळतुं आवे छे. अने तेनुं मूळ पण उक्त 'प्रति'मां छे. ए ज रीते 'हाथवति लखुं छुं' 'कानवति सांभळुं छुं' वगेरे वाक्योमां वपरायेलो अने हेतुना भावनो सूचक 'वति' शब्द पण 'प्रति'मांथी आवेलो छे: प्रति-पति-वति.

अहीं जणावेली बारमा सैकानी कृतिओमां त्रीजी वगेरे विभक्तिना केवळ प्रत्ययो वपरायेला हता त्यारे आ तेरमा सैकानी कृतिमां विभक्ति उपरांत विभक्तिना अर्थनो द्योतक उपसर्ग पण नामनी साथे लागेलो छे

ए फेरफार ध्यानमां राखवा जेवो छे अने आजनी भाषामां पण ए फेरफार चालु छे.

बारमा अने तेरमा सैकामां हयाती धरावता श्रीजिनदत्तसूरिए रचेला उपदेशरसायनमां गा० २९ मां—प्रस्तुत 'विज्जावडइं' जेवो 'लहणा-वट्टइं' (लहणावट्टइ—पाठांतर) प्रयोग आवे छे. चालु भाषामां 'लेणा पेटे' 'हिसाब पेटे' 'रकम पेटे' वगेरे प्रयोगोमां 'पेटे' पदनो जे अर्थ छे ते ज अर्थ अहीं 'लहणावट्टइं'ना 'वट्टइं' शब्दनो छे.

त्यांनो प्रसंग आ प्रमाणे छे: "जो मंदिरनो कोई देवादार, मरतां मरतां घर अने हाट वगेरे दे तो ते, 'लेणा पेटे' लेवामां आवे छे."

मूळ पद्य आ प्रमाणे छे:

"जइ किर कु वि मरंतु घर—हट्टइ देइ त लिज्जहि लहणावट्टइं."

आ पद्यना विवरणमां जणावेलुं छे के—"यदि किल कश्चिद् देवद्र-व्याधमर्णः ऋणमोक्षाय, म्रियमाणः सन् वस्त्वन्तराभावेन गृहं हट्टं वा जिनाय ददाति तदा गृह्यते लभ्यद्रव्यानुसारेण"—

विवरणकारे 'लहणावट्टइं' शब्दनो अर्थ 'लभ्यद्रव्यानुसारेण' कर्यो छे, ते पूर्वोक्त 'लेणा पेटे'नी साथे तद्दन मळतो छे.

अहींनो 'वट्टइं' शब्द अने पूर्वोक्त 'वडइं' ए बन्ने पदो समानमूलक भासे छे. 'लेणा पेटे' कहो के 'लेणा बदले' कहो ए बन्नेनो एक ज भाव छे. 'प्रति'नुं 'पटि' रूपांतर पण थाय छे. अने ए 'पटि' उपरथी उक्त 'वट्टइं'ने लाववुं सुगम लागे छे.

प्रसंगवशात् 'प्रति'ना अन्य अर्थ अने रूपांतर विशे पण चर्चा करवी अस्थाने नथी. जेम 'प्रतिदान'मां लागेलो 'प्रति' 'बदला'ना अर्थने बतावे छे, तेम 'प्रतिनिधि'मां लागेलो 'प्रति'

'सुरुषनी समान' एवा भावने सूचवे छे. "प्रद्युम्नो वासुदेवात् प्रति" एटले प्रद्युम्न वासुदेवनो प्रतिनिधि छे—वासुदेवनी जग्याए छे—वासुदेवने स्थाने छे—वासुदेवनी पेठे छे अर्थात् अहींनो प्रति समानताना भावनो द्योतक छे. ए रीते मुख्य—सादृश्यना भावमां 'पेठे' शब्द आवे छे. 'आ राजा कर्णनी पेठे दान दे छे' 'आ शूर, वीर अर्जुननी पेठे लडे छे' 'युधिष्ठिरनी पेठे आ राजा धार्मिक छे.' वगेरे प्रयोगोमां जे 'पेठे' शब्द आवेलो छे ते, मुख्य पुरुष कर्ण, अर्जुन अने युधिष्ठिरनुं सादृश्य राजामां छे, ए हकीकतने दर्शावे छे. एटले 'प्रद्युम्नो वासुदेवात् प्रति' वाक्यमां जे भाव 'प्रति'नो छे ते ज भाव उक्त वाक्योमां वपरायेला 'पेठे' नो छे. ए जोतां 'प्रति अने पेठे' मां अर्थनुं साम्य छे एमां संशय नथी. अक्षर घटना जोतां ए बेनी वर्णानुपूर्वी पण समान ज छे. पण 'प्रति' उपरथी 'पेठे' आवे शी रीते?

आ प्रश्नो उकेल आ रीते छे: आवेस्तिक भाषामां अनेक स्थळे 'प्रति'ने स्थाने 'पइति' पद वपरायेलुं छे अने 'परि' ने स्थाने 'पइरि' पद वपरायेलुं छे. पैइतिस्तांम्—(प्रतिष्ठाम् पृ० ३५ खोरदेह अ०) पइतिस्तातेए ८, १०, १३—(प्रतिष्ठातवै पृ० ३६ खो० अ०) पैइति—(प्रति-सामे) (पृ० ४६ खो० अ०) पइरि—(परि पृ० ६ खो०अ०) पैइरि—(परि पृ० २४ खो०अ०) प्राकृत भाषामां 'पर्यंत' शब्दने बदले 'पेरंत' शब्द प्रवर्ते छे. (८–१–५८–हे०) 'पेरंत' मां 'परि + अन्त' एवां बे पदो छे. पालिमां केटलाक प्रयोगोमां 'परि' ने बदले 'पयिर' एवुं उच्चारण प्रवर्ते छे: पर्यस्त—पयिरस्त, पर्युपास्ते—पयिरुपासति, पर्युदाहार्षुः—पयिरुदाहंसु[302]. वाख्या-

---

३०२ जुओ पालिप्रकाश पृ० १६ टिप्पण*

पारनो नियम जोतां 'परि' ऊपरथी 'पयिर'–पइर–थतां 'पेर'थवुं शक्य छे. 'पर्यन्त' ऊपरथी 'पेरंत' ध्वनि पण ए रीते आवेलो छे. आ रीते 'प्रति' नुं 'पइति' अने 'प्रति' ना ज 'परि' नुं 'पइरि' परिवर्तन घणुं जूनुं छे. उक्त 'पेठे' पदमां पण जे 'प्रति' छे ते, 'पइति' के 'पइटि' थया पछी तेना अव्यवहित स्वरो एक बीजामां मळी जतां 'पेठे' पदरूपे ऊपज्यो छे.

'प्रकार' दर्शक 'पेरे'नी उपपत्ति तो प्रकारेण–पयारेण–पयरेण–'पयरे–पइरे–पेरे' ए रीते समझवानी छे; परंतु समानतावाचक 'पेरे' शब्दना मूळ माटे समानतादर्शक प्रति–पडि–पइडि–पइरि–पेरे–आ रीते ते 'पेरे'नो उत्पत्तिक्रम योजाय तो विशेष संगत लागे छे. प्राकृतमां 'प्रति'नुं 'परि' उच्चारण सुप्रतीत छे. परिट्ठा (प्रतिष्ठा), परिट्ठिअं (प्रतिष्ठितम्) –(८–१–३८ हे०)

'तमारा प्रत्ये' 'राजा प्रत्ये' एवा अर्थमां भाषामां 'पे' शब्द वपराय छे. ते सीधुं ज 'प्रति' नुं रूपांतर छे. प्रति–पइ–पे. आ 'पे' द्वितीयाना वा षष्ठीना अर्थनो द्योतक छे. आ रीते 'पेठे' 'पेटे' 'पे' ए बधां 'प्रति'नां परिवर्तनो छे.

'प्रति' अने 'परि' ना अर्थो पण अनेक बतावेला छे:

प्रति—

"प्रति–इत्थंभूत–भागयोः ।। ३३ ।।

प्रतिदाने प्रतिनिधौ वीप्सा–लक्षणयोरपि" ।–(अनेकार्थसंग्रह–हे०)

प्रति–प्रत्ये, भाग, प्रतिदान, प्रतिनिधि, वीप्सा अने लक्षण.

परि—

"परि व्याप्तौ उपरमे वर्जने लक्षणादिषु ।
आलिङ्गने च शोके च पूजायां दोषकीर्तने ॥ ४४ ॥
भूषणे सर्वतोभावे व्याप्तौ निवसनेऽपि च" ॥–(अनेकार्थसंग्रह–४०)

परि—व्याप्ति, उपरम, वर्जन. प्रत्ये, लक्षण, इत्थंभाव, आलिंगन, शोक, पूजा, दोषकीर्तन, भूषण, सर्वतोभाव—चारे बाजु. व्याप्ति अने निवसन—रहेवुं.

१३५ अहीं 'रेवंतगिरि' रासमां 'थया' ना अर्थमां 'ठिउ'—'थयो' पदनो प्रयोग करेलो छे. 'हुउ' शब्दनो प्रयोग 'थया' ना अर्थमां थतो आव्यो छे. अने अहीं 'ठिउ' नो प्रयोग पण ए ज अर्थने सूचवे छे.

सोरठदेसु—सोरठदेश. 'सोरठ' माटे 'सुरठ' शब्द पण वपरायेलो छे.

सुषम एटले सारो वखत. सुषम—सुसम अने 'सुलम' उपरथी 'सूल' अथवा सुखमय—सुखमयु—सुहमउ—सुहमु—सूम. प्रस्तुत कृतिमां 'लेपमय' ने बदले 'लेवमु' शब्द वपरायेलो छे. 'लेपमय'ना 'मय'नो 'मु' थतां 'लेवमु' शब्द बने छे तेम 'सुखमय'ना 'मय'नो 'मु' थतां 'सुहमु' शब्द आवे अने ते उपरथी 'सूमू' नीपजे.

दूसममाझि, पव्वयमाहि, तित्थमाहि—ए बधा प्रयोगो सातमी विभक्तिना छे. आगळी कृतिओमां अने प्रस्तुत कृतिमां पण सातमी विभक्तिने सूचववा माटे ए, इ, हिं वा हि वपरायेला छे, त्यारे आ प्रयोगोमां सप्तमी विभक्ति माटे 'माझि' के 'माहि' पूरकनो उपयोग थयो छे, ए फेरफार ध्यानमां राखवा जेवो छे. मूळ 'मध्ये' उपरथी 'मज्झे' अने ते उपरथी

'माझि' तथा 'मध्ये' उपरथी 'माधि' अने ते उपरथी 'माहि' (पृ० २५७).

'सद्दाविय' 'भराविय' 'आरोही' ए बधां संबंधक भूतकृदंतो छे अने एनी घटना विषे आगळ (पृ०२८८, १११) कहेवाई गयुं छे.

अहींनो 'पच्छलु' शब्द 'पाछळ' अर्थनो सूचक छे. जंबूस्वामिरासमां वपरायेलो 'पाछलिउ' अने आ 'पच्छलु' ए बन्नेनुं मूळ एक ज छे.

रासु, देसदेसंतरु, धरिउ, कप्पिउ, कारिउ, वायइ, ऊडइं, मंडपु, उद्धरिउ, गलइ, झलहलइ, पुत्तलिय, कराविउ, कसमीर, गलियु, आविउ, वलंतउ, करंतह, दीठु, आविय, जोएसि, ठामिठामि, पामेइ, सोहए, आवइ, जइजइकार, देहलिहि (सप्तमी विभक्ति) वगेरे. ए बधा शब्दो सर्वथा स्पष्ट छे. अने तेना अर्थो पण तेवा ज छे.

'ठामिठामि' सप्तमी विभक्तिनुं रूप छे. 'ठाम'नुं मूळ 'स्था' धातुमां छे.

'घरि' 'आरामि' 'जसि' वगेरे तृतीया विभक्तिवाळां रूपो छे. 'विलेव-तणीय' एटले विलेपन संबंधी (इच्छा) विलेप—'विलेव'ने 'तण' लाग्या पछी 'रामतणी कहा'नी पेठे 'विलेवतणीय' ए 'विलेवतण'नुं स्त्रीलिंगी रूप छे अथवा 'मदीय'नी पेठे संबंधसूचक 'ईय', 'तण'ने फरी वार लागेलो छे.

'पहिलाइ' एटले 'पहेले' अने 'बीजइ' एटले 'बीजे'—ए बन्नेमां लागेलो अन्त्य 'इ' सप्तमी सूचक जे.

अहीं 'तुं' सर्वनाम 'तुं'ना अर्थे वपरायेलुं छे. आगली कृतिओमां आ रीते स्पष्टपणे 'तुं'नो प्रयोग न हतो.

'रेवंतगिरे' रूप षष्ठी विभक्तिवाळुं छे. ए, संस्कृत 'गिरेः'नुं प्रतिरूप छे. अथवा 'गिरि'नुं 'गिर' बनावी ते ऊपरथी 'गिरे' ए सप्तमी विभक्तिवाळुं पण थाय. एनो 'गिरिनिमित्ते' एटले 'गिरिसंबंधी' एवो षष्ठी जेवो ज अर्थ थाय.

'पहेला'नी व्युत्पत्ति

१३६ 'प्रथम' अने 'पहिलुं' ए बन्ने समान अर्थवाळा शब्दो छे. 'प्रख्याति' अर्थवाळा 'प्रथ' धातुने 'अम' प्रत्यय लागतां 'प्रथम' शब्द बने छे. (उणादि० ३४७) 'प्रथम'नुं प्राकृत पढम, पुढम, पढुम के पुढुम थाय छे. (८-१-५५). स्वार्थिक 'इल्ल' लागतां 'पढमिल्ल' पण थाय छे. 'पहिलुं' शब्दना मूळमां पण उक्त 'प्रथ' धातु छे. प्राकृतमां नाथ—नाह, कथा—कहा वगेरेनी पेठे 'थ' नुं 'ह' उच्चारण व्यापक छे. छतां हेमचंद्रे 'प्रथम' माटे 'थ'ना 'ढ'नुं विधान कर्युं छे. आ विधान प्रमाणे साहित्यिक प्राकृतमां भले 'पढम' रूप थाय परंतु लौकिकमां 'पृथिवी' ना 'पुढवी' अने 'पुहवी' एवां बे रूपोनी पेठे 'प्रथम' नां 'पहम' अने 'पढम' एवां बे रूपो स्वीकारिए तो 'पहम'नुं "पहमिल्ल' थई ते द्वारा प्रस्तुत 'पहिला' के चालु 'पहेलो' पद साधी शकाय. अथवा उक्त 'प्रथ' धातुनुं भूतकृदंत 'प्रथित' ते द्वारा 'पहिअ' अने तेने 'इल्ल' प्रत्यय लागतां 'पहिइल्ल' पद आवे. चालु 'करेलुं' 'गयेलुं' वगेरेनी जेवुं ज 'पहिइल्ल' पद छे. ए ऊपरथी 'पहिला' 'पहिलो' वगेरे पदो नीपजी शके. उक्त बन्ने पद्धतिमां मूळ 'प्रथ' धातु छे ए ध्यानमां रहे. प्रथते प्रसिद्धिं याति असौ प्रथमः—जे प्रसिद्धि पामे ते प्रथम. आवी ज व्युत्पत्ति उक्त 'पहिल्ल' नी छे. हेमचंद्रे तो शीघ्रवाची 'वहिल्ल' ने देश्य कह्यो छे अने अव्युत्पन्न गणी निपातरूपे जणाव्यो छे. (८-४-४२२ हे०). प्रस्तुत 'पहिइल्ल'—पहिल्ल ऊपरथी 'वहिल्ल' ने

नीपजावी शकाय एम छे अने अर्थमां पण वांधो आवे तेम नथी. निरुक्तकार 'प्रथम'-नुं पृथक्करण करतां 'प्रतम' शब्द आपे छे अने 'प्रतम' नो अर्थ 'प्रकृष्टतम' जणावे छे. "प्रथम इति मुख्यनाम प्रतमो भवति"-वृत्ति-"प्रथमाः प्रतमाः प्रकृष्टतमाः[३०३] मुख्या इत्यर्थः" -(निरुक्त-पृ० १५५. मेघनाम प्रकरण) निरुक्तकारे दर्शावेल पृथक्करण अने वैयाकरणोए जणावेल पृथक्करण ए बेमां कशो अर्थभेद नथी.

'कडवा' नी व्युत्पत्ति

१३७ 'गिरनाररास 'कडवा'मां छे. 'कडवुं' एक प्रकारना पद्यसमूहनुं नाम छे. भाषामां कडपलो, कडब, खडकलो, वगेरे शब्दो समूहना अर्थने सूचवे छे. तेम प्रस्तुत 'कडवुं' शब्द अमुक प्रकारना पद्यसमूहनो द्योतक छे. संस्कृतमां आने माटे 'कटप्र' शब्द छे अने प्राकृतमां 'कडप्प' शब्द छे. आ शब्द विशे लखतां आचार्य हेमचंद्र लखे छे के "कडप्पो कटप्र-शब्दभवोऽप्यस्ति स च कवीनां नातिप्रसिद्ध इति निबद्धः"-(देशी० व० २, गा० १३) हेमचंद्रनुं आ कथन 'कटप्र' शब्दने संस्कृत ठरावे छे परंतु ते शब्द अतिप्रसिद्ध न होवाथी तेने तेमणे देश्य गण्यो छे. विचार करतां जणाय छे के समूहवाचक 'कलाप' शब्द अने 'कदम्ब' वा 'कदम्बक' शब्द ए प्रस्तुत 'कटप्र' नां परिणामो होय. कटप्र-कडप्प-कडाप-कलाप. कटप्र-कडप्प-कडंप-

---

३०३ 'प्रथम' अर्थ माटे प्राकृतमां 'पढम' शब्द छे. 'प्रथम' अने 'पढम' ए बन्ने परस्पर सरखावी शकाय तेवां पदो छे. निरुक्तकारे 'प्रथम' ना अर्थ माटे 'प्रकृष्टतम' शब्द वापरेलो छे. ते ऊपरथी नीचेनी कल्पनाने अवकाश मळ्यो छे: प्राकृतभाषामां 'प्रकृष्ट' माटे 'पकड्ड' पदनी वपराश सुप्रतीत छे, एथी 'प्रकृष्टतम' नुं प्राकृत उच्चारण 'पकड्डतम' थाय अने ए 'पकड्डतम' द्वारा पकड्डतम-पयड्डतम पयड्डम-पड्डम-पढम ए रीते आ 'पढम' शब्द न आवी शके ?

कडंब—कदम्ब. अस्तु. प्रस्तुत 'कडवुं' शब्दनुं मूळ उक्त 'कटप्र' मां छे, ए ज अहीं जणाववानुं छे.

'रळी' नी व्युत्पत्ति

'रळी' शब्द 'मनोरथ—मननी होंश—मननी रुचि'—अर्थने बतावे छे. 'रुचि' ने स्वार्थिक 'ल' लागतां ते उपरथी बनता स्त्रीलिंगी 'रुल्ली' उपरथी 'रळी' शब्दने लाववानी कल्पना करी शकाय. कल्पना असंगत होय तो 'रळी' शब्दने देश्य मानवो रह्यो. आ रीते तेरमा सैकानी उक्त त्रणे कृतिओना नामो वगेरेनो परिचय थयो.

नामा अने नेमा सैकडूं पद

अभयदेवसूरि—बारमो सैको

थंभणयपास-स्तोत्र

(पंचप्रतिक्रमण पं० सुखलालजीसंपादित १९२१)

जय तिहुअणवरकप्परुक्ख ! जय जिण ! धन्नंतरि !
जय तिहुअणकल्लाणकोस ! दुरिअक्करिकेसरि !
तिहुअणजणअविलंघिआण ! भुवणत्तयसामिअ ! ।
कुणसु सुहाइ ! जिणेस ! पास ! थंभणपुरट्ठिअ ॥ १ ॥

तइ समरंत लहंति झत्ति वरपुत्त-कलत्तइ
धण्ण-सुवण्ण-हिरण्णपुण्ण जण भुंजइ रज्जइ ।
पिक्खइ मुक्ख असंखसुक्ख तुह पास ! पसाइण
इअ तिहुअणवरकप्परुक्ख सुक्खइ कुण मह जिण ! ॥ २ ॥

जरजज्जर परिजुण्णकण्ण नट्ठुट्ठ सुकुट्ठिण
चक्खुक्खीण खएण खुण्ण नर सल्लिय सूलिण ।
तुह जिण ! सरणरसायणेण लहु हुंति पुण—ण्णव
जय धन्नंतरि ! पास ! मह वि तुह रोगहरो भव ॥ ३ ॥

विज्जा—जोइस—मंत—तंतसिद्धिउ अपयत्तिण
भुवणब्भुउ अट्ठविह सिद्धि सिज्झहि तुह नामिण ।
तुह नामिण अपवित्तओ वि जण होइ पवित्तउ
तं तिहुअणकल्लाणकोस तुह पास ! निरुत्तउ ॥ ४ ॥

खुद्दपउत्तइ मंत–तंत–जंताइ विसुत्तइ
चरथिरगरल–गहु–ग्गखग्गरिउवग्ग विगंजइ ।
दुत्थियसत्थ अणत्थतत्थ नित्थारइ दय करि
दुरियइ हरउ स पासदेउ दुरियक्करिकेसरि ॥ ५ ॥
तुह आणा थंभेइ भीमदप्पुद्धुर सुरवर
रक्खस–जक्ख–फणिंदविंद चोरा–ऽनल–जलहर ।
जल–थरचारि रउद्दखुद्द पसु–जोइणि–जोइय
इय तिहुअणअविलंघिआण जय पास ! सुसामिय ! ॥ ६ ॥
पत्थियअत्थ अणत्थतत्थ भत्तिब्भरनिब्भर
रोमंचंचिय चारुकाय किन्नर–नर–सुरवर ।
जसु सेवहि कमकमलजुयल पक्खालियकलिमलु
सो भुवणत्तयसामि पास मह मद्दउ रिउबलु ॥ ७ ॥
बहुविहुवन्नु अवन्नु सुन्नु वन्निउ छप्पन्निहिं ।
मुक्ख–धम्म–कामत्थकाम नर नियनियसत्थिहिं ।
जं झायहि बहुदरिसणत्थ बहुनामपसिद्धउ
सो जोइयमणकमलभसल सुहु पास पवद्धउ ॥ ८ ॥

× × ×

मह मणु तरलु पमाणु नेय वाया वि विसंठुलु
न य तणुरवि अविणयसहावु आलसविहलंघलु ।
तुह माहप्पु पमाणु देव ! कारुणपवित्तउ
इय मइ मा अवहीरि पास ! पालिहि विलवंतउ ॥ १८ ॥
किं किं कप्पिउ न य कलुणु किं किं व न जंपिउ
किं व न चिट्ठिउ किट्ठु देव ! दीणयमवलंबिउ ।

कासु न किय निप्फल्ल लल्लि अम्हेहि दुहत्तिहि .
तह वि न पत्तउ ताणु किं पि पइ पहु ! परिच्चत्तिहि ॥ १९ ॥
तुहु सामिउ तुहु माय बप्पु तुहु मित्त पियंकरु
तुहुँ गइ तुहु मइ तुहु जि ताणु तुहु गुरु खेमंकरु ।
हउँ दुहभरभारिउ वराउ राउ निब्भग्गह
लीणउ तुह कमकमलसरणु जिण पालहि चंगह ॥ २० ॥
पइ कि वि कय नीरोय लोय कि वि पावियसुहसय
कि वि मइमंत महंत के वि कि वि साहियसिवपय ।
कि वि गंजियरिउवग्ग के वि जसधवलियभूयल
मइ अवहीरहि केण पास ! सरणागयवच्छल ! ॥ २१ ॥
हउँ बहुविहदुहतत्तगत्तु तुह दुहनासणपरु
हउँ सुयणह करुणिक्कठाणु तुह निरु करुणायरु ।
हउँ जिण ! पास ! असामिसाल्लु तुहु तिहुअणसामिय
जं अवहीरहि मइ झंखंत इय पास ! न सोहिय ॥ २३ ॥
जुग्गाऽजुग्गविभाग नाह न हु जोयहि तुह सम
भुवणुवयारसहावभाव करुणारससत्तम ।
सम-विसमइं किं घणु नियइ भुविदाह समंतउ ,
इय दुहिबंधव ! पासनाह ! मइ पाल थुणंतउ ॥ २४ ॥
न य दीणह दीणयु मुयवि अन्नु वि कि वि जुग्गय
जं जोइवि उवयारु करहि उवयारसमुज्जय ।
दीणह दीणु निहीणु जेण तइ नाहिण चत्तउ
तो जुग्गउ अहमेव पास ! पालहि मइ चंगउ ॥ २५ ॥
अह अन्नु वि जुग्गयविसेसु कि वि मन्नहि दीणह
जं पासिवि उवयारु करइ तुह नाह समग्गह ।

सु च्चिय किल कल्लाणु जेण जिण ! तुम्ह पसीयह
किं अन्निण तं चेव देव ! मा मइ अवहीरह ॥ २६ ॥
तुह पत्थण न हु होइ विहलु जिण ! जाणउ किं पुण
हउँ दुक्खिय निरु सत्तचत्त दुक्कहु उस्सुयमण ।
तं मन्नउ निमिसेण एउ एउ वि जइ लब्भइ
सच्चं जं भुक्खियवसेण किं उंबरु पच्चइ ॥ २७ ॥
तिहुअणसामिय ! पासनाह ! मइ अप्पु पयासिउ
किज्जउ जं नियरूवसरिसु न मुणउ बहु जंपिउ ।
अन्न न जिण ! जग तुह समो वि दक्खिन्नदयासउ
जइ अवगन्नसि तुह जि अहह कह होसु हयासउ ॥ २८ ॥
एह महारिय जत्त देव ! इहु न्हवणमहूसउ
जं अणलिय गुणगहण तुम्ह मुणिजणअणिसिद्धउ ।
एम पसीहसु पासनाह ! थंभणयपुरट्ठिय !
इय मुणिवरु सिरिअभयदेवु विन्नवइ अणिंदिय ! ॥ ३० ॥

---

(२)

वादिदेवसूरि-बारमो सैको

गुरुश्रीमुनिचन्द्रस्तवन

नाणु चरणु संमत्तु जसु रयणत्तउ सुपहाणु ।
जयओ सु मुणिसुरि इत्थु जगि मोडिअवम्महखाणु ॥ १ ॥
उवसमरयणसमुद्दसमु विहलियजलसाहारु (—व्यासारु)
वंदओ मुणिसुरि भवियजण जिम छं (छिं) दउ संसारु ॥ २ ॥

अमियमहुरदेसणरसिण भवियण–रुंखडुलाइं
जिंव सिंचइ मुणिचंदसुरि तिअं तु वि कुविकाइं (?) ॥ ३ ॥
वक्खाणंतओ जिणवयणु सिरिमुणिचंद मुणिंद ।
चउदिसि मुणिपरिवारियओ नावइ पुन्निमचंदु ॥ ४ ॥
जिणि छट्ठट्ठमिमाइतवि सोसीउ इंहु नियदेहु ।
वरकरुणाजल–णीरुनिहि सो गुरु मुणिसुरि लेहु ॥ ५ ॥
जो विहिपक्खसमुद्धरणु पंचमहव्वयधारु ।
सो नंदउ मुणिचंदसुरि जिणि वूहउ तवभारु ॥ ६ ॥
मेरुहु जिंव थिर मज्झ गुरु सायरु जिम्व गंभीरु ।
सिरिमुणिसुरि तवनाणनिहि जच्चसुवन्नसरीरु ॥ ७ ॥
जं संसारमहाडविहिं निवडिय–जण–सत्थाहु ।
सो गुरु मुणिसुरि सुमरियइं सरणविहीणहं नाहु ॥ ८ ॥
जिंव तारयहं पयनु ससि सेलहं मेरु पहाणु ।
तिंव सूरिहिं मुणिचंद सुणि (सूरि ?) गरुयउ निज्जियमाणु ॥ ९ ॥
मोहमहाचलि कुलिससमु सुयजलपूरियपारु ।
सुविहिय मुणिसुरिसेहरउ मुणिसुरि बालकुमारु ॥ १० ॥
ता मज्जहिं परतित्थिय मा (जा) न वि कोइ कहेइ ।
जिणसासणि उज्जोयकरु मुणिसुरि एत्थु वसेइ ॥ ११ ॥
ते धन्ना परि गावडां जहिं विहरइ मुणिसूरि ।
हरइ मोहु फेडइ दुरिउ संसओ प्पहुइ दूरि ॥ १२ ॥
कुंददलुज्जलजसपसर धवलिय सयल तिलोय ।
कम्मपयडिपयडणपवणु मुणिसुरि नमहु असोओ ॥ १३ ॥
जिण कुग्गह फेडिय नरहं पयडिवि निम्मलनाणु ।
सो मुणिसुरि महु–माइगुरु अइमणहरसंठाणु ॥ १४ ॥

मुणिसूरिहि जे तणा गुणा तहिं को संख मुणेइ ? ।
किं रयणायरु कु वि मुणिवि रयणह संख कहेइ ? ॥ १५ ॥
दुद्धरदप्पगइंदहरि कोइलकोमलवाणि ।
सो मुणिचंदु नमेहु परसंजमरयणह खाणि ॥ १६ ॥
हरिभद्दसूरिकयगंथ जिणि वक्खाणिय नियबुद्धि ।
सो मुणिचंदु नमेह पर जिव पावहु वरसुद्धि ॥ १७ ॥
जिम बोलइ तिम्व जो करइ सीलु अखंडु धरेइ ।
मुणिसुरि पंडियत्तोसयरु पन्हुत्तरइ दलेइ ॥ १८ ॥
जिंव महुयर आवइं कमलि गंधाइढीय सत्त ।
तिंम मुणिसूरिहि सीसगण सुयमइरंदासत्त ॥ १९ ॥
जहिं विहरइ मुणिचंदसुरि तहिं नासइ मिच्छत्त ।
चरइ नउलु जहिं ठावडइ सप्पु किं हिंडइ तेथु ? ॥ २० ॥
जिम्व मेहागम तोसियहि मोरहतणा निकाय ।
तिम्व मुणिसूरिहिं आगमणि भवियाणं समुदाय ॥ २१ ॥
सरयागमि जिव हंसुला हरिसिज्जंति न-भंति (नभंमि) ।
तिम्व मुणिसुरि पडिषंडिया जण तुह आगम निब्भंति ॥ २२ ॥
तह मणुयहं गउ विहल जमु जेहि न मुणिसुरि दिट्ठु ।
किं व जच्चंधिहि लोयणिहि जेहिं न ससिहरु दिट्ठु ॥ २३ ॥
जाहे पसन्ना तुह नयण तह मणुयह सयकाल ।
हियइच्छिय सुहं संपडहिं अनु छिंदहिं दुहजाल ॥ २४ ॥
दूसमरयणिहिं सूर जिम्व तुह उड्डिउ मुणिनाह ।
सिरिमुणिचंद मुणिंद परमहु फेडइ कुग्गाह ॥ २५ ॥

(मारी हाथप्रत)

(३)

हेमचंद्रनां अवतरणो—बारमो सैको

(आठमो अध्याय पाद चोथो—अपभ्रंश प्रकरण)

एइ ति घोडा एह थलि एइ ति निसिआ खग्ग ।
एत्थु मुणिसिम जाणीअइ जो न वि वाल्इ वग्ग ॥ १ ॥
सायरु उप्परि तणु धरइ तलि घल्लइ रयणाइं ।
सामि सुभिच्चु वि परिहरइ सम्माणेइ खलाइं ॥ २ ॥
गुणहिं न संपइ, कित्ति पर, फल लिहिआ भुंजंति ।
केसरि न लहइ वोड्डिअ—(कोड्डिअ)—वि गय लक्खेहिं घेप्पंति ॥३॥
वच्छहे गृण्हइ फलइं जणु कडु पल्लव वज्जेइ ।
तो वि महद्दुमु सुअणु जिवँ ते उच्छंगि धरेइ ॥ ४ ॥
जो गुण गोवइ अप्पणा पयडा करइ परस्सु ।
तसु हउं कलिजुगि दुल्लहहो वलि किज्जउं सुअणस्सु ॥ ५ ॥
अग्गिएं उण्हउ होइ जगु वाएं सीअलु तेवँ ।
जो पुणु अग्गिं सीअला तसु उण्हत्तणु केवँ ॥ ६ ॥
विप्पिअ—आरउ जइ वि पिउ तो वि तं आणहि अज्जु ॥
अग्गिण दड्ढा जइ वि घरु तो तें अग्गिं कज्जु ॥ ७ ॥
संगरसएहिं जु वण्णिअइ देक्खु अम्हारा कंतु ।
अइमत्तहं चत्तंकुसहं गय कुंभइं दारंतु ॥ ८ ॥
वायसु उड्डावंतिअए पिउ दिट्ठउ सहस—त्ति ।
अद्धा वलया महिहि गय अद्धा फुट्ट तड त्ति ॥ ९ ॥
भग्गउं देक्खिवि निअय वलु वलु पसरिअउं परस्सु ।
उम्मिल्लइ ससिरेह जिवँ करि करवालु पियस्सु ॥ १० ॥

जहिं कप्पिज्जइ सरिण सरु छिज्जइ खग्गिण खग्गु ।
तहिं तेहइ भडघडनिवहि कन्तु पयासइ मग्गु ॥ ११ ॥

एक्कहिं अक्खिहिं सावणु अन्नहिं भद्दवउ ।
माहउ महिअलसत्थरि गंडत्थले सरउ ॥ १२ ॥

अंगिहिं गिम्ह सुहच्छीतिलवणि मग्गसिरु
तहे मुद्धहे मुहपंकइ आवासिउ सिसिरु ॥ १३ ॥

हिअडा ! फुट्टि तड त्ति करि कालक्खेवें काइं ।
देक्खउं हयविहि कहिं ठवइ पइं विणु दुक्खसयाइं ॥ १४ ॥

जीविउ कासु न वल्लहउं धणु पुणु कासु न इट्ठु ।
दोण्णि वि अवसर-निवडिआइं तिण-सम गणइ विसिट्ठु ॥ १५ ॥

एह कुमारी एहो नरु एहु मणोरह-ठाणु ।
एहउं वढ ! चिन्तन्ताहं पच्छइ होइ विहाणु ॥ १६ ॥

जइ पुच्छह घर वड्डाइं तो वड्डा घर ओइ ।
विहलिअ-जण-अब्भुद्धरणु कंतु कुडीरइ जोइ ॥ १७ ॥

आयइं लोयहो लोअणइं जाई सरइं न भंति ।
अप्पिए दिट्ठइ मउलिअहिं पिए दिट्ठइ विहसंति ॥ १८ ॥

आयहो दड्ढकलेवरहो जं वाहिउं तं सारु ।
जइ उट्ठब्भइ तो कुहइ अह डज्झइ तो छारु ॥ १९ ॥

साहु वि लोउ तडप्फडइ वड्डत्तणहोतणेण ।
वड्डप्पणु परिपाविअइ हत्थि मोक्कलडेण ॥ २० ॥

जइ न सु आवइ दूइ ! घरु काइं अहोमुहु तुज्झु ।
वयणु जु खंडइ तउ सहि ! एसो पिउ होइ न मज्झु ॥ २१ ॥

सुपुरिस कंगुहे अणुहरहिं भण कज्जें कवणेण ।
जिवँ जिवँ वड्डतणु लहहिं तिवँ तिवँ नवहिं-सिरेण ॥ २२ ॥

जइ स सणेही तो मुइअ अह जीवइ निन्नेह ।
बिहिं वि पयारेहिं गइअ धण किं गज्जहि खल मेह ! ॥ २३ ॥

मह हिअउं तइं, ताए तुहुं स वि अन्नें वि नडिज्जइ ।
पिअ ! काइं करउं हउं, काइं तुहुं, मच्छें मच्छु गिलिज्जइ ॥ २४ ॥

तुम्हेहिं अम्हेहिं जं किअउं दिट्ठउं बहुअजणेण ।
तं तेवडउं समर-भरु निज्जिउ एक्कखणेण ॥ २५ ॥

अम्हे थोवा रिउ बहुअ कायर एम्व भणंति ।
मुद्धि ! निहालहि गयणतलु कइ जण जोण्ह करंति ॥ २६ ॥

बप्पीहा ! पिउ पिउ भणवि कित्तिउ रुअहि हयास ! ।
तुह जलि मह पुणु वल्लहइ बिहुं वि न पूरिअ आस ॥ २७ ॥

बप्पीहा ! काइं बोल्लिएण निग्घिण ! वारइवार ।
सायरि भरिअइ विमलजलि लहहि न एक्क इ धार ॥ २८ ॥

बलि अब्भत्थणि महुमहणु लहुईहूआ सो इ ।
जइ इच्छह वड्डत्तणउं, देहु, म मग्गहु को इ ॥ २९ ॥

भमरा एत्थु वि लिंबडइ के वि दियहडा विलंबु ।
घणपत्तलु छायाबहुलु फुल्लइ जाम कयंबु ॥ ३० ॥

दिअहा जंति झडप्पडहिं पडहिं मणोरह पच्छि ।
जं अच्छइ तं माणिअइ होसइ करतु म अच्छि ॥ ३१ ॥

संता भोग जु परिहरइ तसु कंतहो बलि कीसु ।
तसु दइवेण वि मुंडियउं जसु खल्लिहडउं सीसु ॥ ३२ ॥

चूडुल्लउ चुण्णीहोइसइ मुद्धि ! कवोलि निहित्तउ ।
सासानलजालझलक्किअउ बाहसलिलसंसित्तउ ॥ ३३ ॥

हिअइ खुडुक्कइ गोरडी गयणि घुडुक्कइ मेहु ।
वासारत्ति पवासुअहं विसमा संकडु एहु ॥ ३४ ॥

पुत्ते जाएं कवणु गुणु अवगुणु कवणु मुएण ।
जा बप्पीकी भुंहडी चंपिज्जइ अवरेण ॥ ३५ ॥

तं तेत्तिउ जलु सायरहो सो तेवडु वित्थारु ।
तिसहे निवारणु पलु वि न वि पर धुट्ठुअइ असारु ॥ ३६ ॥

जं दिट्ठउं सोमग्गहणु असइहिं हसिउ निसंकु ।
पिअमाणुसविच्छोहगरु गिलि गिलि राहु ! मयंकु ॥ ३७ ॥

सवधु करेप्पिणु कधिदु मइं तसु पर सभलउं जम्मु ।
जासु न चाउ न चारहडि न य पम्हट्ठउ धम्मु ॥ ३८ ॥

जइ केवँइ पावीसुं पिऊ अकिआ कुड्ड करीसुं ।
पाणीउ नवइ सरावि जिवँ सव्वंगे पइसीसु ॥ ३९ ॥

उअ कणिआरु पफुल्लिअउ कञ्चणकांतिपयासु ।
गोरीवयणविणिज्जिअउं नं सेवइ वणवासु ॥ ४० ॥

व्रासु महारिसि एउ भणइ जइ सुइसत्थु पमाणु ।
मायहं चलण नवंताहं दिवि दिवि गङ्गाण्हाणु ॥ ४१ ॥

केम समप्पउ दुट्ठु दिणु किध रयणी छुडु होइ ।
नववहुदंसणलालसउ वहइ मणोरह सोइ ॥ ४२ ॥

ओ गोरीमुहनिज्जिअउ वद्दलि लुक्कु मियंकु ।
अन्नु वि जो परिहवियतणु सो किवँ भवँइ निसंकु ॥ ४३ ॥

मइं भणिअउ बलिराय ! तुहुं, केहउ मग्गण एहु ।
जेहु तेहु नवि होइ वढ ! सइं नारायणु एहु ॥ ४४ ॥

तिलहं तिलत्तणु ताउं पर जाउं न नेह गलंति ।
नेहि पणट्ठइ ते ज्जि तिल तिल फिट्टवि खल होंति ॥ ४५ ॥

जेवडु अंतरु रावण—रामहं
तेवडु अंतरु पट्टण—गामहं ॥ ४६ ॥

वंभ ! ते विरला के वि नर जे सव्वंग छइल्ल ।
जे वंका ते वंचयर जे उज्जुअ ते वइल्ल ॥ ४७ ॥

महु कंतहो गुट्ठट्ठिअहो कउ झुंपडा वलंति ।
अह रिउरुहिरें उल्हवइ अह अप्पणें न भंति ॥ ४८ ॥

पियसंगमि कउ निद्दडी पिअहो परोक्खहो केम्व ।
मइं विन्नि वि विन्नासिआ निद्द न एम्व न तेम्व ॥ ४९ ॥

कंतु जु सीहहो उवमिअइ तं महु खंडिउ माणु ।
सीहु निरक्खय गय हणइ पिउ पयरक्ख—समाणु ॥ ५० ॥

चंचलु जीविउ ध्रुवु मरणु पिअ ! रूसिज्जइ काइं ।
होसइ दिअहा रूसणा दिव्वइं वरिससयाइं ॥ ५१ ॥

माणि पणट्ठइ जइ न तणु तो देसडा चइज्ज ।
मा दुज्जणकरपल्लवेहिं दंसिज्जंतु भमिज्ज ॥ ५२ ॥

किर खाइ न पिअइ न वि द्दवइ धम्मि न वेच्चइ रूअडउ ।
इह किवणु न जाणइ जह जमहो खणेण पहुच्चइ दूअडउ ॥५३॥

एत्तहे मेह पिअंति जलु एत्तहे वडवानल आवट्टइ ।
पेक्खु गहीरिम सायरहो एक्क वि कणिअ नाहिं ओहट्टइ ॥ ५४ ॥

जिवँ सुपुरिस तिवँ घंघलइं जिवँ नइ तिवँ वलणाइं ।
जिवँ डोंगर तिवँ कोट्टरइं हिआ ! विसूरहि काइं ॥ ५५ ॥
दिवेहिं विढत्तउं खाहि वढ ! संचि म एक्कु वि द्रम्मु ।
को वि द्रवक्कउ सो पडइ जेण समप्पइ जम्मु ॥ ५६ ॥
विहवे कस्सु थिरत्तणउं जोव्वणि कस्सु मरट्टु ।
सो लेखडउ पठाविअइ जो लग्गइ निच्चट्टु ॥ ५७ ॥
कहिं ससहरु कहिं मयरहरु कहिं वरिहिणु कहिं मेहु ।
दूरठिआहं वि सज्जणहं होइ असड्ढलु नेहु ॥ ५८ ॥
सरिहिं न सरेहिं न सरवरेहिं न वि उज्जाण-वणेहिं ।
देस रवण्णा होंति वढ ! निवसंतेहिं सुअणेहिं ॥ ५९ ॥
एक्क कुडुल्ली पंचहिं रुद्धी तहं पञ्चहं वि जुअंजुअ बुद्धी ।
वहिणुए ! तं घरु कहिं किंव नंदउ जेत्थु कुडुंवउं अप्पण-
छंदउं ॥ ६० ॥

गयउ सु केसरि पिअहु जलु निच्चिंतइं हरिणाइं ।
जसु केरएं हुंकारडएं मुहहुं पडंति तृणाइं ॥ ६१ ॥
जइ रच्चसि जाइट्ठिअए हिअडा ! मुद्धसहाव ! ।
लोहें फुट्टणएण जिवँ घणा सहेसइ ताव ॥ ६२ ॥
सिरि जरखंडी लोअडी गलि मणिअडा न वीस ।
तो वि गोट्ठडा कराविआ मुद्धए उट्ठवईस ॥ ६३ ॥
अम्मडि ! पच्छायावडा पिउ कलहिअउ विआलि ।
घइं विवरीरी बुद्धडी होइ विणासहो कालि ॥ ६४ ॥
ढोल्ला ! एह परिहासडी अइभन कवणहिं देसि ।
हउं झिज्जउं तउकेहिं पिअ ! तुहुं पुणु अन्नहिरेसि ॥ ६५ ॥

जिब्भिंदिउ नायगु वसि करहु जसु अधिन्नइं अन्नइं ।
मूलि विणट्ठइ तुंबिणिहे अवसें सुक्कइं पण्णइं ॥ ६६ ॥
एक्कसि सील-कलंकिअहं देज्जहिं पच्छित्ताइं
जो पुणु खण्डइ अणुदिअहु तसु पच्छित्तें काइं ॥ ६७ ॥
पहिआ ! दिट्ठी गोरडी दिट्ठी मग्गु नीअंत ।
अंसूसासेहिं कंचुआ तितुव्वाण करंत ॥ ६८ ॥
पिउ आइउ सुअ वत्तडी झुणि कन्नडइ पइट्ठ ।
तहो विरहहो नासंतअहो धूलडिआ वि न दिट्ठ ॥ ६९ ॥
संदेसें काइं तुहारेण जं संगहो न मिलिज्जइ ।
सुइणंतरि पिएं पाणिएण पिअ ! पिआस किं छिज्जइ ॥ ७० ॥
एत्तहे तेत्तहे वारि घरि लच्छि विसंठुल धाइ ।
पिअपब्भट्ठ व गोरडी निश्चल कहिं वि न ठाइ ॥ ७१ ॥
देसुच्चाडणु सिहिकढणु घणकुट्टणु जं लोइ ।
मंजिट्ठए अइरत्तिए सव्वु सहेव्वउं होइ ॥ ७२ ॥
सोएवा पर वारिआ पुप्फवईहिं समाणु ।
जग्गेवा पुणु को धरइ जइ सो वेउ पमाणु ॥ ७३ ॥
हिअडा ! जइ वेरिअ घणा तो किं अब्भि चडाहुं ।
अम्हाहिं बे हत्थडा जइ पुणु मारि मराहुं ॥ ७४ ॥
बाह विछोडवि जाहि तुहुं हउं तेवँइ को दोसु ।
हिअयट्ठिउ जइ नीसरहि जाणउं मुंज ! सरोसु ॥ ७५ ॥
जेप्पि असेसु कसायवलु देप्पिणु अभउ जयस्सु ।
लेवि महव्वय सिवु लहहिं झाएविणु तत्तस्सु ॥ ७६ ॥
गंप्पिणु वाणारसिहिं नर अह उज्जेणिहिं गंप्पि ।
मुआ परावहिं परमपउ दिव्वंतरइं म जंपि ॥ ७७ ॥

गंग गमेप्पिणु जो मुअइ जो सिवतित्थ गमेप्पि ।
कीलदि तिदसावास गउ सो जमलोउ जिणेप्पि ॥ ७८ ॥

वलयावलिनिवडणभएण धण उद्धब्भुअ जाइ ।
वल्लहविरहमहादहहो थाह गवेसइ नाइ ॥ ७९ ॥

पेक्खेविणु मुहु जिणवरहो दीहर–नयण सलोणु ।
नावइ गुरुमच्छरभरिउ जलणि पविसइ लोणु ॥ ८० ॥

चंपयकुसुमहो मज्झि सहि ! भसलु पइट्ठउ ।
सोहइ इन्दनीलु जणि कणइ बइट्ठउ ॥ ८१ ॥

पाइ विलग्गी अंत्रडी सिरु ल्हसिउं खंधस्सु ।
तो वि कटारइ हत्थडउ बलि किज्जउं कंतस्सु ॥ ८२ ॥

सिरि चडिआ खंति प्फलइं पुणु डालइं मोडंति ।
तो वि महद्दुम सउणाहं अवराहिउ न करंति ॥ ८३ ॥

हैम–छन्दोनुशासन—(पृ० ३५ थी ४६)

सायरु रयणायरु बोल्लहिं जं बुहसत्थ, तं सच्चु जि जाय निसायर–
कुच्छुह जत्थ ।

जइ एक्कु हूओ सिरिकंठसिरे अवयंसु, अवरु सिरिनाहउरे भूसणु
उल्लसिअंसु ॥ ४ ॥ (छंद–अवतंसक)

रेहहि अरुणकंति धरणीअलि इंदगोवया, पाउससिरि नाइ पय
जावयबिंदु लगया ।

एह वि विज्जुलेह झलकंति अ वहलकंतिआ, लक्खिज्जइ जायरूव-
निम्मविअ व्व कंठिआ ॥ ७ ॥ (छंद–इन्द्रगोप)

णवरङ्गविब्भमं तरंगिणिहिँ णिवड्डवम्महं जिआवंतिहिँ ।
प्रेमिं प्रियाहिँ जे पुलोइज्जइ ता मत्तलोइ सग्गु पाविज्जइ ॥ १३ ॥
(छंद—विभ्रम)

निच्छिउ करिवि चंदु दोण्णि खंड तहि निम्मिय गयनयणाइ गंड ।
वरकुसुम घडेविणुं गंधचंगु कोमलु तह विरइओ एहु अंगु ॥१४॥
(छंद—कुसुम)

सुणिवि वसंति पुरपोढपुरंधिहिं रासु ।
सुमरिवि लडह हूओ तक्खणि पहिउ निरासु ॥ १५ ॥
(छंद—रास)

ते ज्ज्रि पंडिअ, ते ज्ज्रि गुणवंत, ते तिहुअणसिर उवरि,
ताहं चिअ जम्मु जाणहु, जे मत्तविलासिणिहिँ नवि खोइअ
सुद्धझाणओ ॥ २६ ॥ (छंद—मत्तविलासिनी)

गाम्मि पट्टणि हट्टि चउहट्टि राउलि देउलि पुरि जं दीसइ ।
लडहअंगिअ विरहिंदजालएण तं सा एक्क वि कय बहुरूवकडिआ
॥ ३० ॥ (छंद—बहुरूपा)

मायाविअहं विरुद्धवायवससंचिअलोअहं परतित्थिअहं असारसत्थसं-
पाइअमोहहं ।
को पत्तिज्जइ सम्मदिट्ठि जहवत्थुअवयणहं जिणहं मग्गि निश्चलनिहि-
त्तमणु करुणाभवणहं ॥ २ ॥ (छंद—वस्तुवदनक)
अज्ज वि नयण न गेण्हइ तरलिम अज्ज वि वयणु न मेल्लइ
भोलिम ।
अज्ज वि थणहरु भरु न पडिच्छइ तु वि मुद्धाहं दंसणि जगु
मुज्झइ ॥ ६ ॥ (छंद—वदनक)

कद्दमभग्गा मग्गुलया वहुपिहुला दुत्तरजलल्लया ।
तिम्व भरु वहसु गुणधवलया ! जिम्व केम्वइ न हसंति पिसुणया ॥
॥ १५ ॥ (छंद–गुणधवल)

(राजा) कित्ति तहारी वण्णविणु कइ अन्नु न वण्णाहिं ।
मालइ माणिवि किं भमर धत्तुरइ लगाहिं ॥ १६ ॥
(छंद–भ्रमरधवल)

(राजा) पहु ! तुह वेरि अरण्णि गय, निच्चु वि निवसहिं जिम्व ससय ।
घणकंटयदुसंचरणि, तहिं झंबडइ करीरवणि ॥ १९ ॥
(छंद–झंवटक)

पइं विणु तहिं सुहय ! विलासु कवणु ।
विणुं चंदइं मुहु जामिणिहिं कवणु ॥ ७ ॥ (छंद–सुभगविलास)

सहि ! वट्टुलओ चंदुल्लओ पडिहाइ ।
रयणिवहूए कीलणगंडुओ नाइ ॥ १७ ॥ (छंद–क्रीडनक)

मन्नावि प्रिओ जइ वि कयदुन्नओ ।
जं महमहइ दुसहउ वउलामोअउ ॥ १८ ॥ (छंद–वकुलामोद)

देक्खिवि वेल्लडी मलयमारुअधूआ ।
सुमरिवि गोरडी पंथिअसत्य मुआ ॥ २३ ॥ (छंद–मलयमारुत)

प्रियमहु संगमि ओअ मंगलिअइं करइं ।
किंसुअल्लविण वणसिरि घट्टइं धरइ ॥ २५ ॥ (छंद–मांगलिका)

तारावलि भणि मा, भणि मुत्ताहलमाली ।
रइकलहिण त्रुट्टी ससि–रयणिहुं सुविसालि ॥ ३२ ॥
(छंद–मुक्ताफलमाला)

कुइ धन्नु जुआणउ विअसिअदीहरनयणिए ।
माणिज्जइ तरुणिए विब्भमविलसियवयणिए ॥ ३९ ॥
(छंद—विभ्रमविलसितवदन)

एत्थु करिमि भणि काइं प्रिउ ! न गणइ लगी पाइ ।
छड्डेविणु हउं मुकी अवदोहय जिम्व किर गावि ॥ ५८ ॥
(छंद—अपदोहक)

कित्तिओ वण्णउं मयणु किअउ जिण सो वि नारायणु ।
तहु गोवालीअणहु वणपिम्मविलासपरायणु ॥ ५६ ॥
(छंद—प्रेमविलास)

जलइ जइ वि कुसुमलयाहरु तवइ चंदु जह गिम्हि दिवायरु ।
तु वि ईसाभरपरितरलिअ पिअसहि ! वयणु न मन्नइ बालिअ
॥ ५७ ॥ (छंद—कुसुमलतागृह)

परनरमुहपेच्छणविरयए पयनहमणिपडिबिंबिअ जि परि ।
दहमुहमुहपंति पलोइआ सीअए भय-विम्हयहासकरि ॥ ५८ ॥
(छंद—मुखपङ्क्ति)

(राजा) करवालपहारिण उच्छलिअ करिसिरमुत्ताहलरयणमाला ।
रेहइ समरंगणि जयसिरिए उक्खिविअ नाइ सयंवरमाला ॥ ५८ ॥
(छंद-रत्नमाला)

निअवि वयणु तहिं विब्भमपओ । नं विहिण खित्तु द्रहि पंकओ
॥ ६० ॥ (छंद—पंकज)

गज्जइ वणमाला घण घडहड । नं मयणनिवइणो कुंजरघड ॥ ६१ ॥
(छंद—कुंजर)

खलिअक्खरउं वयणु मुहु पंडरु तुह अक्खइ सहि ! मणु मयणाउरु
॥ ६२ ॥ (छंद—मदनातुर)

ओ रणझणंत भमइ भमरावलि । मयणधणुह गुणवल्लि णं सामलि
॥ ६३ ॥ (छंद—भ्रमरावलि)

गोरडिअहिं उवमिअइ न पर अच्चब्भुअ ।
जइ किर हवइ फुल्लिअफलिअ कुंकुमलय ॥ ६६ ॥
(छंद—कुंकुमलता)

(राजा) लंघइ सायर गिरि आरुहइ तुह अहंग ।
ससिसेहरहसिउज्जल नउक्खी कित्तिगंग ॥६७॥ (छंद—शशिशेखर)

जं सहि ! कोइल कलु पुक्कारइ फुल्लु तिलओ ।
तं पत्तु वसंतु मासु कामहु लीलालओ ॥६८॥ (छंद—लीलालय)

(राजा) रेहइ तुह करि चंदहासओ ! नं रिउसिरीए केसपासओ ॥ ६९ ॥
(छंद—चंद्रहास)

जसु लोहचक्किण वि न दलिओ झाणु । तहिं वीरि किं करउ
स कुसुमबाणु ॥ ७१ ॥ (छंद—कुसुमबाण)

मालइकुसुमु न लेइ चंदणु चयइ ।
तुह दंसणउम्माही मग्गु जि निअइ ॥७२॥ (छंद—मालतीकुसुम)

मलयानिलु मलयजरसु ससहरु कुसुमत्थरणु ।
विरहानलजलिअहि तसु सवु वि तणुसंतवणु ॥ ७७ ॥
(छंद—कुसुमास्तरण)

निसुणिअ माइंदइ महुअरिसंलावु ।
ओ पवसिअतरुणि ! तिं पत्थुअओ पलावु ॥ ७८ ॥
(छंद—मधुकरिसंलाप)

(राजा) सिंदुरिअ गुरुकुंभत्थल गयवड तुहु वलि अग्गलि ।
नराहिव ! उत्थरिअ किर संथावलि ॥ ८३ ॥ (छंद—संध्यावलि)

विज्जुलय मेहमज्झि अंधारइ गोरी ।
कवण स हत्थमल्लि कुसुमाउह ! तोरी ॥ ८६॥ (छंद—विद्युल्लता)

संतट्ठहं मयगलहं चिक्कारिहिं कलिअ ।
रण्णाइं वि वज्जरहिं पंचाणण ललिअ ॥ ८७ ॥

(छंद—पंचाननललित)

कर असोअदल मुहु कमलु हसिउ नवमल्लिअ ।
अभिणव वसंतसिरि एह मोहणठइल्लिअ ॥ ८९ ॥

(छंद—अभिनववसंतश्री)

हिंडइ सा धण जाम्व गहिल्लि विरहिण आखित्ती ।
देक्खिवि वल्लहु ता आणंदी जणु अमइण सिंती ॥ ९१ ॥

(छंद—क्षितिका)

पत्तउ एहु वसंतउ कुसुमाउलमहुअरु ।
माणिणि माणु मलंतउ कुसुमाउहसहयरु ॥ ९४ ॥

(छंद—कुसुमाकुलमधुकर)

अलि मालइपरिमललुद्धु न अन्निहिं रइ करइ ।
सा भमरविलासविअड्ढ न अन्नहिं मणु धरइ ॥ ९५ ॥

(छंद—भ्रमरविलास)

तुह विरहिं सा अइदुब्बली धण आवंडुर देह ।
अहिमयरकिरणिहिं विक्खिविअ चंदलेह जिम्व एह ॥ १०२ ॥

(छंद—चंद्रलेखिका)

(राजा) तुह चंडिण भुअदंडिण निवइ धरमाणिण महिवलओ।
जलहिसुआलिंगणपहवसुह देउ जणद्दणु कलउ ॥ १०३ ॥
(छंद—सुतालिंगन)

जइ गंगाजलि धवलि कालइ जउणाजलि जइ खित्तओ।
रायहंसि नहु वुड्ड न तुट्ट सुज्झत्तणु तु वि तेत्तउ ॥ १०७ ॥
(छंद—राजहंस)

सल्लइपल्लवकवलप्पणु रेवानइजलि मज्जणु ।
तं कुंजरविलसिउ सुमरइ गयविरहिओ करेणुगणु ॥ १०६ ॥
(छंद—कुंजरविलसित)

पलिअ केस चल दसणावलि जर जज्जरइ सरीरवलु ।
सव्वि वि गलिहिं अणंगललिअ किज्जउ धम्मु महंतफलु ॥१०९॥
(छंद—अनंगललिता)

गोरी गोट्ठि दरफुरिओट्ठि।
कलहंसीगइ कलहे लग्गइ ॥ ११५ ॥ (छंद—चंपककुसुम)
जे निअहिं न परदोस गुणिहिं जि पयडिअ तोस।
ते जगि महाणुभावा विरला सरलसहावा ॥ १२४ ॥
(छंद—महानुभावा)

कइअहिं होएसइ तं दिवसु आणंदसुहारसपावणउ ।
होही प्रियमुहससिचंदिमइं जहिं नयणचउरह पारणओ ॥ १२७ ॥
(छंद—पारणक)

परगुणगहणु सदोसपयासणु महुमहुरक्खरहि अमिअभासणु ।
उवयारिण पडिकिओ वेरिअणहं इअ पद्धडी मणोहर सुअणहं
॥ १२८ ॥ (छंद—पद्धडी)

(राजा) हणिअ दुजीहप्पसरणु पिअपुरिसोत्तमु विणयाणंदणु ।
उअ गरुडपयम्मि निवद्धरइ नरवइ हरइ न कासु मणु ? ॥ ७ ॥
(छंद—गरुडपद)

तुह दंसणतुरंतिए सुंदर ! मुद्धिए सुणि जं किउ पच्चल्लिउ ।
हारु निअंबि निवेसिउ रसणादामु वि थणसिहरोवरि घल्लिउ ॥२४॥
(छंद—रसनादाम)

पिउ आइउ निवडिउ पइहिं सपणयवयणिहिं अणुणिवि माणु मुआविअ ।
इअ सिविणयभरि आलिंगिमि जाम्वहिं ताम्वहिं सहि ! हय
कुक्कडि रडिअ ॥ २७ ॥ (छंद—रचमक)

(राजा) तुह रणि नट्ठ रसायलि गय अरि कारणि इण किर भुअंगविक्कंतय ! ।
ताहं विलासभवणि पुरि लीलावणि परिअंचहिं निवसहिं चिरु
गयभय ॥ २८ ॥ (छंद—भुजंगविक्रान्त)

किं झाइउ तिण अविचलचित्तिण किं निम्मलु तवु किउ समरिउ-
मित्तिण ।
जं तुह मुहविब्भमहरु कंदोट्टविसट्ट तरुणि ! चुंविज्जइ भमरिण
॥ ३६ ॥ (छंद—कंदोट्ट)

गयघड तुरयघट्ट रहवूह महाभडनिवह रयणभंडार समिद्धु वि ।
उवगंधव्वनयरसमु पुहइवइत्तणु तिणु जिम्व चयहिं विवेअवंत कि
वि ॥ ४२ ॥ (छंद—उपगन्धर्व)

सइ विज्जुलअविउत्तउ तुहुं जलहर करि गुंदलु निद्द न जाणसि
विरहिअहं ।
इअ भणि चिंतवि किंपि अमंगलु दइअहुं अंसुपवाहु पलुट्टउ
पंथिअहं ॥ ४५ ॥ (छंद—गोंदल)

एह ललिअदेह बाल ।
नाइ जाइफुल्लमाल ॥ ७२ ॥ (छंद—पुप्पमाला)
(बारमो सैको पूरो)

---

(१)

सोमप्रभसूरि—तेरमो सैको

जीव—मनः—करणसंलाप (कुमारपालप्रतिबोध पृ० ४२५—)

जे उण पइं फरिसिण—पमुह पंच पहाण निउत्त ।
मत्त निरंकुस हत्थि जिम्व कारिहिंति कज्ज अजुत्त ॥ ९ ॥

तहं मज्झिम फेडिवि कु वि पहाणु
मइ अन्नह अप्पिउ तस्स ठाणु ।
एयाइं पलोयउ सामिसालु
पयडंतइं निच्चु अणत्थ—जालु ॥ १० ॥

फरिसिंदिउ पभणइ हउं जि एक्क
रुंधेवि सरीरु समग्गु थक्कु ।
इह अप्पु मणु व न हि अत्थि कोइ
अवरिंदिय अणु वर मज्झ जोइ ॥ ११ ॥

न हु गम्मु अगम्मु व किं पि गणइ
अव्वंभ कलुस अहिलास कुणइ ।
सकलत्ति वि हुंतइ महइ वेस
पररमणि गमणि पयडइ किलेस ॥ १२ ॥

सिसिरम्मि निवाय घर—ऽग्गिसयडि
घणघुसिणनेट्ट वहुवत्थ सघडि।
चंदणरस कुसुमजलावगाह
धारागिहि गिंभि महेइ नाह! ॥ १३ ॥
पाउसि पयपंकपसंग तट्टु (तड्डु?)
वंछइ अच्छिद्द भवणयलु लट्टु।
जइ कुणइ विविह विसयाणुवित्ति
तेह वि हु न एहु पावेइ तित्ति ॥ १४ ॥
एक्क वि फासिंदिउ बुहयण निंदिउ
करइ किंपि दुच्चरिउ तिहि।
नाणाविहु जम्मिहि पीडिओ कम्मिहि
सहसि विडंवण सामि जिह ॥ १५ ॥
तह भक्खाभक्खविवेयमूढु
रसविसयगिद्धिदोलाधिरूढु।
अविभाविय पेयापेयवत्थु
रसणु वि कुणेइ बहुविहु अणत्थु ॥ १६ ॥
जं हरिण-ससय-संबर-वराह
वणि संचरंत अकयावराह।
तण-सलिलमित्त संतुट्ट चित्त
मम्मररवसवणुब्भंतनेत्त ॥ १७ ॥
हिंसंति के वि मिगयापयट्ट
पसरंतनिरंतरतुरयघट्ट।
करकलियकुंतकोदंडवाण
संसयतुलरोवियनियपाण ॥ १८ ॥

जं गहिरि सलिलि वियरंत मीण
निक्करुण के वि निहणहिं निहीण ।
जं लावय-तित्तिरि-दहिय-मोर
मोरंति अदोस वि के वि घोर ॥ १९ ॥

तं रसणह विलसिउ, दुक्कयकलुसिउ, तुम्हहं किंत्तिउ कित्तियइ ।
जं वरिससएण वि अइनिउणेण वि, कह वि न जंपिउ सक्कियइ ॥ २० ॥

घाणिंदिउ जं किर सुरहि दव्वु ।
वियलियविवेउ तं महइ सव्वु ।
जं असुरहि तिहिं पुण करेइ रोसु
ता एउ वि जाण अणप्पदोसु ॥ २१ ॥

तह जइ वि दिट्ठि वन्निअ अवला
तह वि हु दुरप्प अच्चंत चवला ।
सुइ असुइ वि किंपि न परिहरेइ
जं जुत्तु अजुत्तु वि तं निएइ ॥ २२ ॥

परदारपवत्तणि फरिसणस्स
दूइत्तु एह पयडइ अवस्स ।
लोलत्तकरणि रसणह सहाय
इय न कुणइ कित्तिय पट्ठु अवाय ॥ २३ ॥

जिव सवणु सुणइ विडवग्गवयण
तिव मुणिउवएसु न रुद्ध नयणु ।
तह गेय-वेस-कलिसवणहेउ
उत्तम्मइ निच्चु वि निव्विवेउ ॥ २४ ॥

इय विसयपलक्कओ, इहु एक्केकु,
इंदिउ जगडइ जग्गु सयलु ।

जेसु पंच वि एयइं, कयबहुखेयइं,
खिट्टहिं पहु ! तसु काउ कुसलु ॥ २५ ॥

स्थूलिभद्रकथा

तो विचिंतइ मंति सगडालु
निवकोसु निट्ठिउ सयलु
अन्नदिअहि विन्नवइ नरवरु
एयस्स किं देह पहु ।
दिवसि दिवसि इत्तिउ धणुक्करु
सो जंपइ तइ वन्नियो तिणि एयह धणु देमि ।
मंति भणइ परकव्वचरण पढइ तेण सल्हेमि ॥ ३१ ॥

नंदु जंपइ पढइ परकव्व
कह एस वररुइ सुकइ
कहइ मंति मह धूय सत्त वि
एयाइं कव्वाइं पहु ! पढइं बालाउ हुंत वि
तत्थ तुम्ह नरनाह जइ मणि वट्टइ संदेहु ।
ताउ पढंति य कोउगिण ता तुम्हे निसुणेहु ॥ ३२ ॥

× × ×

जवणियंतरि ताउ ठवियाउ
तो वररुइ आगइउ
थुणइ नंदु तं ताउ निसुणहि
चक्कम्मि तम्मि य कमिण
कव्व सव्व सव्वाउ पभणहिं

तो नरनाहिण वररुइण कुविऊण वारु निसिद्धु ।
वररुइ ताव विलक्खमण उलग्गइ सुरसिंधु ॥ २४ ॥

खिविवि संझिहिं सलिल दीणार
गोसग्गि सुरसरि थुणइ
हणइ जंत सुचारु पाइण
उच्छलिवि ते वि वररुइहिं
चडहिं हत्थि तेण घाइण
लोउ पइंपइ वररुइह गंग पसन्निय देइ ।
मुणिवि नंदु वुत्तंतु इहु सयडालस्स कहेइ ॥ २५ ॥

सो पयंपइ गंग जइ देइ
दीणार पेच्छयंतह
मह इमस्स तो देइ निच्छिउ
संझाइ तो सिक्खवि
वि पुरिसु तत्थ मंतिण विसज्जिउ
सो वच्चिवि पच्छवु ठिओ जा अच्छइ पेच्छंतु ।
दिट्ठओ वररुइ तेण तओ तहिं दीणार ठवंतु ॥ २६ ॥

ते वि अप्पिय तेण आणेवि
मंतिस्स गोसग्गि गओ
सपरिवारु तहिं नंदु नरवइ
तो गंग वररुइ थुणइ
जंतु हत्थ–पाएहिं जोवइ
तत्थ न किंचि वि सो लहइ होइ विसण्णु मणेण ।
ते नंदह दीणार तओ दंसिय सयडालेण ॥ २७ ॥

कहिउ सयलु वि संडवुत्तंतु
तो जाओ वररुइ विमणु
पुण वि मंतिच्छिद्दाइं मग्गइ
ओलग्गइ मंतिवर–दासी सा वि घरवत्त जंपइ
तहिं किज्जइ भोअणु–निवह सिरियय परिणयत्थु ।
तह पक्खर–सन्नाह–गुड–असिपमुहाउहसत्थु ॥ ३८ ॥

× × ×

दवि लद्धुअ डिंभरुवाण
सो पाढइ को वि नहु
मुणइ एउ जं मंति करिसइ
मारिविणु नंदु निवु
नंदरज्जि सिरियओ ठवेसइ
तिग–चच्चर–चउहट्टइहि एउ पढंतइं ताइं ।
नंदिण चाहिं निग्गयण अन्नहिं दिअहिं सुआइं ॥ ४० ॥

पुरिसु पेसिवि निवइ सवियक्कु
जोआवइ मंतिवरु
कहिउ तेण किज्जंत आउहु
ता मंतीहि पणमिअह
कुविओ नंदु जोअइ न सम्मुहु
घरि गउ मंति भणेइ तउ सिरिया ! जइ मह पुत्तु ।
तुहुं नंदह पडिहारु तउ करहि महारउं वुत्तु ॥ ४१ ॥

नंदु कुद्धउ तेण मह सीसु,
तुहु खंडि पणमंतयह

तासु पुरओ असिदंडघाइण,
रक्खेसु ती सेसु कुल
मज्झ दोसि हम्मंतु राइण,
इय सुणि सिरियउ पिउवयणु करयलढक्कियकन्न ।
कंपइ हा हा केम्व हउं पिउवहु करउं अहन्नु ॥ ४२ ॥

मंति साहइ वच्छ ! मा झूर,
इउ नीइसत्थिहिं कहिउ
कुलहि कज्जि जं एकु मुच्चइ
कुलरक्खिण कारणिण
तेण मज्झ मरणं पि रुच्चइ
हउं खाइसु विसु तालउडु नंद पणामु करंतु ।
पिउवहपावि न लिप्पिहिसि मइं गयजीवु हणंतु ॥ ४३ ॥

तेण मन्निउ कह वि पिउवयणु
तो मंतिण तालउडु,
खद्धु नंदरायह नमंतिण
सिरिएण तक्खणि खंडिउं
तासु सीसु खग्गिण पुरंतिण,
हा हा करिवि भणेइ निवु सिरिअय ! किउ किं अकज्जु ।
सो जंपइ जो पहु–अहिउ तिण पिउणा वि न कज्जु ॥ ४४ ॥

ताव चिंतइ मंतिमयकिच्चि
राएण सिरिअउ भणिउ
देमि तुज्झ मंतित्तु तुट्ठउ
सो जंपइ पयह उचिउ

थूलभद्दु भद्दु अत्थि जेट्ठउ
सो नंदिण कोसाघरह भणिअउ हक्कारेवि ।
गिन्हहु पिउपउ तिण भणिउ गिन्हउं पहु ! चिंतेवि ॥ ४५ ॥

× × × ×

एवं ति भणिय तो थूलभद्दु चिंतेइ तत्थ परमत्थ भद्दु ।
मणुयत्तह सारु तिवग्गसिद्धि तिहि विग्घहेउ अहिगारसिद्धि ॥ ४७॥

जं तत्थ रायचित्ताणुकूल
आरंभ कुणंतह पावमूल ।
कउ मंतिहि जायइ विमलधम्मु
जिणि लब्भइ सासउ सिद्धिसम्मु ॥ ४८ ॥

परपीड करेविणु जं पभूअ
गिन्हहिं निउगि रुहिरु व्व जलूअ ।
नरनाहिण चिप्पइ नं पि दव्वु
निप्पीलिवि सहुं पाणेहिं सव्वु ॥ ४९ ॥

परवसहं सव्वु भयभिंभलाहं
अन्नन्नपओअणवाउलाहं ।
अहिगारिजणहं कामभोअ
संभवहिं वियंभिअ गुरु पमोय ॥ ५० ॥

कोसाघर वारस वच्छरेहिं
विसइहिं न तित्तु लोउत्तरेहिं ।
वहु रज्जकज्ज वक्खित्तचित्तु
किं संपइ होहिसि मूढचित्तु ॥ ५१ ॥

पइ जम्ममरणु कल्लोलमत्तु
भवजलहि भमिवि मणुअत्तु पत्तु ।
परिहरिवि विसयफलु तासु लेहि
किं कोडि कवडिइं हारवेहि ॥ ५२ ॥
वज्जेवि धम्मु जो विसयसुक्खु
परिणामविरसु सेवइ सुर रक्खु
सो पिअइ दुद्ध जरगहिउ सुद्धु
सो भक्खइ मंसु गलंतु कुट्ठु ॥ ५३ ॥
दिण पंच करिवि नरवइनिओगु
संपाइवि अप्पह पावजोगु ।
दुव्वारदुसह दुहलक्खरूवि
गंतव्वु जीव ! नरयंधकूवि ॥ ५४ ॥
महु महुरु चएवि निवाहिगारु
पेरंत विडंबण दुक्खसारु ।
करि जीव ! धम्मु वज्जिवि पमाउ
जिम्व नरइ न पावइ पच्चवाउ ॥ ५५ ॥
परिहरिवि सव्व सावज्जकम्मु
जो जीवु न जुव्वणि कुणइ धम्मु ।
सो मरणयालि परिमलइ हत्थु
गुणि तुट्टइ जिम्व धाणुक्कु एत्थ ॥ ५६ ॥
इय विसयविरत्तउ पसमपसत्तउ
थूलभद्दु संविग्गमणु ।
सिव सुक्ख कयायरु भवभयकायरु
महइ चित्ति दुच्चर चरणु ॥ ५७ ॥

पंच मुट्ठिहिं केस लुंचेवि
पाउरिअ कंबल रयणु
छिंदिज्जग रयहरणु निम्मिवि निवह पासि गंतूण
तुह धम्मलाहु होउ त्ति जंपिवि
नरवर ! चिंतिउं एउ मइं थूलभद्द पभणेइ ।
राइण वुत्तु सुचिंतिअउं अह सो पुरह चलेहि ॥ ५८ ॥

---

(२)

महेन्द्रसूरिशिष्य-धर्मसूरि-जंबूसामिचरिय-तेरमो सैको

(प्राचीनगुर्जरकाव्यसंग्रह—वडोदरा)

जिण चउवीसइ पय नमेवि गुरुचलण नमेवी ।
जंबूसामिहिं—तणउ चरिय भविउ निसुणेवी ।
करि सानिध सरसत्ति देवि जिम रयं कहाणउं ।
जंबूसामिहिं गुणगहण संखेवि वखाणउं ॥ १ ॥

जंबूदीपह भरहखित्ति तिहिं नयरपहाणउं ।
राजगृह नामेण नयर पहुवि वक्खाणउं ।
राज करइ सेणियनरिंद नरवरहं जु सारो ।
तासु—तणइ पुत्त बुद्धिमंत मंति अभयकुमारो ॥ २ ॥

अन्नदिणंतरि वद्धमाण विहरंत पहूतओ
सेणिउ चालिउ वंदणह वहुभत्ति तुरंतु

× × ×

सामिय वंदिउ वद्धमाण सेणीयं पूछीइं ।
कवणह नारिहि—तणइ उयरि एह जीव चवेसिइ ।
कवणह बापह—तणइ कुलि एउ मंडण होसइ ।
उसभदत्तसेठिहिं घरणि धारणिउरि नंदण ।
होसिइ नामिइं जंबुसामि तिहुयणि आणंदण ॥ १६ ॥

ऊठिउ देव अणाढिउ हरपिइं नाचेई ।
धनु धनु अम्हतणउं कुल एसु पुत्त होसिइ ।
चविउ विमाणह बंभलोय धारणिउरि आविउ ।
सुमिणप्रभाविइं उसभदत्त अंगेहि न माईउ ॥ १७ ॥

जायउ पुत्रु पहाण जाम दस दिसि उदयंतउ ।
वड्ढइ नामिहिं जंबुसामि गुणगहण करंतु ।
अठवरीसउ हूउ जाम गुरुपासि पहूतु ।
ब्रह्मचारि सो लियइ नीम भववासविरत्तउ ॥ १८ ॥

जोयणवेसह पहुतु जाम कन्ना मग्गावइ ।
बीजा धूया पाठवए तस वि वारावय ।
मन देजिउं तम्हि, अम्ह देसु, अम्हि इसउं करेशउं ।
सांझहं परणी प्रहह जाम नीछइं व्रत लेसिउं ॥ १९ ॥

माय दुलंभीय तणइ वयणि परिणेवउ मन्नीउ ।
आठइ कन्या एकवार परिणीय घरि आवीउ ।
आठइ परणी मृगनयणी बुझवणइ बइठउ ।
पंचसए चोरेहं सिउं प्रभवउ घरि पइठउ ॥ २० ॥

नीद्र अणावीय सोयणीय आभरण लीयंता ।
ते सवि अछइं थंभीया टगमग जोयंता ।

प्रभवउ भणइ हो जंबुसामि एक साटि न कीजइ ।
बिहुं विमासइं एक विन थंभणीय न दीजइ ॥ २१ ॥
हिव हूं कहि न विन (?) केवि पुण विलसइ केतसो ।
आठइ परिणी ससिवयणी नाठइ वन जेसो ।
रूपवंत अणुरत्त रमणि एउ एम चणसिइ ।
अणहूंता सुहतणी य आस तुम जीव करेसिइ ॥ २२ ॥
एवहु अंतर नरहं होइ प्रभवउ चिंतेइ ।
संवेगरसि जउ रमतउं मन प्रभवउ पूछेइ ।
सिद्धिरमणि उमाहीआ हूं तम्हि मंजन केलिउ ।
करणइं विकवइं माझवन विम विम मेल्हेसिउ ॥ २३ ॥
इंद्रियाउ न वि जाणीइर को विस होइसिइ ।
अठार नात्रां एकलावि जंबूस्वामि कहेइ ।
पितर तम्हारा जंबुसामि ! किम तुमति छंडेवाइं ।
तिउ पडइ लोभहंतणइ ए अमा जोसिइं ॥ २४ ॥
वार भवि महुं हुक पुत्रनाभि दर्गानइ ।
इग परि प्रभव ! पितरभूति तिगि वंचर कीजइ ।
अणहूंता सुहतणी य आस हूं तउं छंडेसिउ ।
तिग कारणि जिन धरम भणइ अवतरता करेसिउ ॥ २५ ॥
तम्ह बीपिहिं हुउं लोभ करउं देषि भगइ रूपडउं ।
हथिकडेवर कग जिम भवसायर निवडउं ।
बीजो कलत्र कहेवि नाह ! जउ अम्ह छंडेसिउं ।
तिगि वनारि जिम पछुताव बहु चीति करेसिउं ॥ २६ ॥
विद्धुमनगउं विद्रुमकुरु आदर जिम कीजइ ।
इंगालदहग जेम तुम्हि तुम विम न कीजइ ।

त्रीजी कलत्र भणइ वि नाह! जउ अम्ह छांडेसिउ।
तिणि जंबुकि जिम साणहार वहुखेद करेशउ ॥ २७ ॥
ऊतर पडऊतर वहू य संखेवि कहीजइं।
विलखी हुई ते सव्वि वाल जंबूसामि न बूझइं।
आसा—तरुवर सुक जाम अम्हि इशउं करेशउं।
नेमिहिं सिउ राइमइ जिम वयगहण करेशउं ॥ २८ ॥
आठइ कलत्रह बूझवीय पंचसय सिउं प्रभवउ।
माइ बाप वेउ भणइं ताम अम्ह साधु सरीसउ।
ठवणि——प्रह विहसइ सुविहाण प्रभवु विनवइ जंबुसामि।
सजनलोक मोकलावि तम्हि सिउं संजम लेसिउं ॥ २९ ॥
खण एक पडषाएवि राय मोकलावण चालीय।
तु सुहडसमूह करेवि भुइं कंपइं भडभडवइं ॥ ३० ॥
जस भय धसकइ राउ जस भय नींद्र न वयरीयहं।
एसउ प्रभवउ जाइ नरनारी जोयण मिलीय।
पहुतु रायदुवारि पडिहारिइं वोलावीउ।
वेगिइं राउ मेटावि अम्हि अछउं उत्सुकमणा ए ॥ ३१ ॥
पुत्त तणउ विझराय तुम्ह दरिसणि ऊमाहीउ ओ।
कारण जाणीउ राय वेगिहिं सो मेल्हावीउ ओ।
द्रेठि न खंडइ राउ प्रभवउ देषी आवतउ।
साचउ ए भडिवाउ पुरुषह आकृति जाणीइ ए ॥ ३२ ॥
रूपगुणे संपन्न रायरमणिमन चोरतु ओ।
सोहइ पूनिमचंद जइ द्रव कोणी प्रणमीउ।
नुतउ अद्भुसीय शरीर जइ कोइ जणणीजाइउ।

नयणे छूटुं नीर संवेगजलहरि वरिसिउ ।
सामी खमि अपराध अम्हे लोक संतावीया ए ॥ ३३ ॥
पडिवज बोलइ राउ कोणी मनि आणंदियउ ।
धन्न पनुती माइ इसिउ पुत्र जिणि जाईउ ओ ।
तो मोकलावी राउ चोरपल्लीसा संचरए ।
सजनह कहीइं एउ अम्हे संजम लेइशउं ॥ ३४ ॥
किण कारणि वइराग तं कारण अम्ह बोलीइ ए ।
मेल्ही अछइ बाल कणयकोडि नवाणवइ ए ।
अनइ रिद्धि बहूत तिहिं पुण पार न जाणीय ए ।
जंबूसामिचरित्त महिमंडलि हूउं अच्छरीय ॥ ३५ ॥
इणि कारणि वयराग तृण जिम दीठउ मेल्हतउ ओ ।
अम्ह सोइ जि सामि तम्हे भलइं अछजिउ ओ ।
मोहनरिंद-शउं झूझ संजमकित्तिइं झूझसिउं ओ ॥ ३६ ॥
ठवणि—प्रभवउ पंचसएण अछइ बहूयर माइ-बप्पो ।
सवि कहं ए रूठउ जाइ नीयघरहूंतु नीसरइ ए ।
चालीउ ए सिवपुरिसाथ सारथवय तिहिं जंबुसामि ।
कंचण ए रयणिहिं दाण जिम घण वरसइ भाद्रवए ।
सयतऊ (?) ए ईह गोलोक भवियजणसंवेगकरो ॥ ३७ ॥
ठवणि—कस केरी पिइ माइ पुत्र कलत्र धन्न धण ।
देसी कुडिसारिच्छ जिण जिम जंबू परिहरए ।
अनइ लोक बहूत व्रत लेवा तिहिं चालीउ ।
वंदिय जिणभवणाइं सोहम्मसामिपासि गयउ ॥ ३८ ॥
भवसायर उतारि जम्मण—मरणह वीहतउ ओ ।

पंचमहव्वयभार मेरुसमाणउ अंगमइ ए।
अनु तेतउ परिवार सोहमसामिहिं दिक्खीउ ओ।
हूउं केवलनाण संजमराजह पालतां ए॥ ३९॥
वीर जिणिंदह तीथि केवलि हूउ पाछिलउ।
प्रभवउ वइसारीउ पाटि सिद्धि पहुतु जंवुस्वामि।
जंवुसामिचरित पढइं गुणइं जे संभलइं।
सिद्धिसुक्ख अणंत ते नर लीलाहिं पामिसिइं॥ ४०॥
महिंदसूरिगुरुसीस धम्म भणइ हो धामीउ ह।
चिंतउ रातिदिवसि जे सिद्धिहि ऊमाहीया ह।
वारहवरससएहिं कवितु नीपनूं छासठ ए।
सोलह विज्जाएवि दुरिय पणासउ सयलसंघ॥ ४१॥

---

(३)

रेवंतगिरिरासु—तेरमो सैको

(प्राचीनगुर्जरकाव्यसंग्रह—वडोदरा)

परमेसर तित्थेसरह पयपंकय पणमेवि।
भणिसु रासु रेवंतगिरे अंविकदेवि सुमेरवि॥ १॥
गामा—ऽऽगर—पुर—वण—गहण—सरि—सरवरि सुपएसु।
देवभूमि दिसि पच्छिमह मणहरु सोरठदेसु॥ २॥
जिणु तहिं मंडलमंडणउ मरगयमउड महंतु
निम्मल सामल सिहरभरे रेहइ गिरि रेवंतु॥ ३॥
तसु सिरि सामिउ सामलउ सोहग सुंदरसारु।
जाइव निम्मलकुलतिलउ निवसइ नेमि कुमारु॥ ४

तसु मुहदंसणु दस दिसि वि देस देसंतरु संघ ।
आवइ भावरसालमणउ हलि रंगतरंग ॥ ५ ॥
पोल्याडकुलमंडणउ नंदणु आसाराय ।
वस्तुपाल वरमंति तहिं तेजपाल दुइ भाय ॥ ६ ॥
गुरजरधर–धुरि धवलकि वीरधवलदेवराजि ।
बिहु बंधवि अवयारियउ सूमू दूसममाझि ॥ ७ ॥
नायलगच्छह मंडणउ विजयसेण सूरिराउ ।
उवएसिहि बिहु नरपवरे धम्मि धरिउ दिढु भाउ ॥ ८ ॥
तेजपालि गिरनारतले तेजलपुरु नियनामि ।
कारिउ गढ-मढ-पवपवरु मणहरु घरि आरामि ॥ ९ ॥
तहि पुरि सोहिउ पासजिणु आसारायविहारु ।
निम्मिउ नामिहि निजजणणि कुमरसरोवरु सारु ॥ १० ॥
तहि नयरह पूरवदिसिहि उग्रसेण गढदुग्गु ।
आदिजिणेसर पमुह जिणमंदिरि भरिउ समग्गु ॥ ११ ॥

(प्रथम कडव)

दुविहि गुज्जरदेसे रिउरायविहंडणु ।
कुमरपालु भूपालु जिणसासणमंडणु ।
तेण संठाविओ सुरठदंडाहिवो ।
अंबओ सिरे–सिरिमालकुलसंभवो ।
पाज सुविसाल तिणि नठिय ।
अंतरे धवल पुणु परव भराविय ॥ १ ॥
धनु सु धवलह भाउ जिणि पाग पयासिय ।
बारविसोत्तरवरसे जसु जसि दिसि वासिय ।

जिम जिम चडइं तडि कडणि गिरनारह ।
तिम तिम ऊडइं जण भवणसंसारह ।
जिम जिम से उजलु अगि पालटए (?) ।
तिम तिम कलिमलु सयलु ओहट्टए ॥ २ ॥
जिम जिम वायइ वाउ तहि निज्झरसीयलु ।
तिम तिम भवदुहदाहो तक्खणि तुट्टइ ।
निच्चलु कोइलकलयलो मोरकेकारवो ।
सुम्मए महुयर महुरु गुंजारवो ।
पाज चडंतह सावया लोयणी ।
लाषारामु दिसि दीसए दाहिणी ॥ ३ ॥

× × ×

जम्मणु जोव जीविय तसु तहिं कयत्थू ।
जे नर उज्जितसिहरु पेक्खइ वरतित्थू ।
आसि गुरजरधरय जणि अमरेसरु ।
सिरिजयसिंघदेउ पवरु पुहवीसरु ।
हणवि सोरठु तिणि राउ पंगारउ ।
ठविउ साजणु दंडाहिवं सारउ ॥ ८ ॥

× × ×

अहिणवु नेमिजिणिंद तिणि भवणु कराविउ ।
निम्मलु चंदरु विंबे नियनाउं लिहाविउ ।
थोरविक्खंभवायंभरमाउलं ।
ललियपुत्तलियकलसकुलसंकुलं ।
मंडपु दंडघणु तुंगतरतोरणं ।
धवलिय वज्झि रणझणिरिकिंकिणिवणं ।

इक्कारसयसहीउ पंचासीय वच्छरि ।
नेमिभुयणु उद्धरिउ साजणि नरसेहरि ॥ १० ॥

मालवमंडलगुहमुहमंडणु ।
भावडसाहु दालिधुखंडणु ।
आमलसार सोवन्न तिणि कारिउ ।
किरि गयणंगण सूरु अवयारिउ ।
अवर सिहर वरकलस झलहलइ मणोहर ।
नेमिभुयणि तिणि दिट्ठइ दुह गलइ निरंतर ॥ ११ ॥

(द्वितीय कडव)

दिसि उत्तरं कसमीरदेसु नेमिहि उम्माहिय ।
अजिउ रतन दुइ बंध गरुय संघाहिव आविय ॥ १ ॥
हरसवसिण घण कलस भरिवि ति न्हवणु करंतह ।
गलिउ लेवमु नेमिबिंबु जलधार पडंतह ॥ २ ॥
संघाहिवु संवेण सहिउ नियमणि संतविउ ।
हा हा धिगु धिगु मह विमलकुलगंजणु आविउ ॥ ३ ॥
सामिय सामल धीरचरण मह सरणि भवंतरि ।
इम परिहरि आहार नियमु लइउ संघधुरंधरि ॥ ४ ॥
एकवीसि उपवासि तामु अंबिकदिवि आविय ।
पभणइ स पसन्न देवि जय जय सद्दाविय ॥ ५ ॥
उट्ठेविणु सिरिनेमिबिंबु तुलिउ तुरंतउ ।
पच्छलु मन जोएसि वच्छ ! तुं भवणि वलंतउ ॥ ६ ॥

× × ×

पढम भवणि देहलिहि देउ छुडि पुडि आरोविउ ।
संघाहिवि हरिसेण तम दिसि पच्छलु जोइउ ॥ ८ ॥
ठिउ निच्चलु देहलिहि देवु सिरिनेमिकुमारो ।
कुसुमवुट्ठि मिल्हेवि देवि किउ जइजइकारो ॥ ९ ॥
वइसाही पुन्निमह पुन्नवंतिण जिणु थप्पिउ ।
पच्छिमदिसि निम्मविउ भवणु भवदुहतरु कप्पिउ ॥ १० ॥
न्हवणविलेवतणीय वंछ भवियण जण पूरिय ।
संघाहिव सिरि अजितु रतनु नियदेसि पराइय ॥ ११ ॥

(तृतीय कडव)

गिरि गरुयासिहरि चडेवि अंवजंबाहिं वंबालिउं ए ।
संमिणी ए अंबिकदेवि देउलु दीठु रम्माउलं ए ॥ १ ॥
वज्जइ ए ताल कंसाल वज्जइ मदल गुहिरसर ।
रंगिहिं नच्चइ वाल पेखिवि अंबिक मुहकमलु ॥ २ ॥
सुभकरु ए ठविउ उच्छंगि विभकरो नंदणु पासिक ए ।
सोहइ ए ऊजिलसिंगि सामिणि सीहसिंघासणी ए ॥ ३ ॥
दावइ ए दुक्खहं भंगु पूरइ ए वंछिउ भवियजण ।
रक्खइ ए चउविहु संघु सामिणि सीहसिंघासणी ए ॥ ४ ॥
दस दिसि ए नेमिकुमारि आरोही अवलोइउं ए ।
दीजई ए तहि गिरनारि गयणंगणु अवलोणसिहरो ॥ ५ ॥
पहिलइ ए सांबकुमारु वीजइ सिहरि पज्जून पुण ।
पणमइं ए पामइं पारु भवियण भीसण भवभमण ॥ ६ ॥
ठामि ठामि रयणसोवन्न बिंब जिणेसर तहिं ठविय ।
पणमइ ए ते नर धन जे न कलिकालि मलमयलिया ए ॥ ७ ॥

जं फलु ए सिहरसमेय–अट्ठावय–नंदीसरिहिं ।
तं फलु ए भवि पामेइ पेखेविणु रेवंतसिहरो ॥ ८ ॥

गहगण ए माहि जिम भाणु पव्वयमाहि जिम मेरुगिरि ।
त्रिहु भुयणे तेम पहाणु तित्थंमाहि रेवंतगिरि ॥ ९ ॥

× × ×

रंगिहि ए रमइ जो रासु सिरिविजयसेणि सूरि निम्मविउ ए ।
नेमिजिणु तूसइ तासु अंबिक पूरइ मणि रली ए ॥

(चतुर्थ कडवक)

[तेरमो सैको पूरो]

व्याख्यान त्रीजुं

चौदमो अने पन्दरमो सैको

१३८ हवे चौदमा सैकानी कृतिओनां नामो वगैरेनो परिचय आपवा शरूआतमां तेमांथी अहीं उपयोगी एवी शब्दसूची आपी दउं:—

चौदमा सैकाना पद्यगत शब्दो

(१) विनयचंद्र—नेमिनाथचतुष्पदिका (चौदमो सैको)

सोहग—सौभाग्य	गयउ—गयो
चडिउत्तरिय—चडऊतर प्रमाणे	विणठ्ठ—विनठ्युं—वणस्युं—वगड्युं
बारमास—बारमास	काइ—कांइ—शुं
वज्जरिय—उच्चरित—ऊचार्या प्रमाणे—कह्या प्रमाणे	अछइ—छे
श्रावणि—श्रावणे—श्रावण महिने	नत्थी—नथी
सरवणि—सरवडांमां	तेजु—तेज
विरहिरि—विरहिनो	गयणि—गगनमां
झिज्झइ—झीझे—क्षीण थाय	भाद्रवि—भादरवे
झबक्कइ—झबके छे	रोअइ—रोवे छे
सहियइ—सहेवाय	निरधार—निराधार
झूरि—झूर—खेद कर	रोइ—रुए
वंछित—वांछित	अप्पणु—आपणुं—पोतानुं

भिज्जंति—भींजे छे
कडुयं—कडवुं
पति—पतिना
रक्खसि—राक्षसी
मन—नहीं
दुज्जणतणा—दुर्जनना
पूरि—पूर
तउ—तो
अनेरा—अनेरा—बीजा
वरह—सयाइं—वरोना सैंकडा—
सैंकडो वरो
बोलइ—बोले छे
नेमिसमं—नेमिशुं—नेमि सरखुं—साथे
सवि—सर्व—सब—बधुं
उग्गइ—ऊगे
भरिया—भर्या
एकलडी—एकलडी—एकली
ऊवेषिसि—उपेक्षा करे छे—बेदरकारी
राखे छे
नीठुरु—नठोर
कडडेरा—करडा—कठण
भिज्जइ—भींजे छे
सायरु—सायर—सागर

आसो—आसो मास
हिमसीउ—हिमशीत—हिम जेवुं ठंडुं
नेमिहिरेसि—नेमिने माटे
आपणपउं—आपणुं
खय—खय—क्षय
दिक्खाडिउ—देखाड्यो
छेहु—छेह—छेद—दगो
दयालु—दयालु
कीजइ—कीजे
भराविउ—भराव्यो
वाडु—वाडो
कत्तिग—कृत्तिका—कार्तिक
संझ—सांज
रातिदिवसु—रातदिवस
विलवंत—विलपती—विलाप करती
दयकारि / दयकारि }—दया करीने
मूकि—मूकी
ओहडु—ओट—अपसरण
मिल्हइ—मेले छे
सउ—सउ—बधुं
विवरीउ—विपरीत

तउं—तुं
नेसि—छूट जाय छे—दोरी जाय छे
पहिल्लउं—पहेलो
गणिउ—गण्यो
निरदोसु—निर्दोष
ऊपरि—ऊपर
मूकउ—मूक्यो
मुझु—मुज
क्षित्तिग—क्षितिज
हुइ—होय
अछइ—वेसी रहे छे
वलि वलि—वळ वळ—पाछो वळ पाछो वळ
नेमितणी—नेमिनी
भगगउ—भागो—भाग्यो
घरवास—घरवासथी
जाइ—जाय
छंडिवि—छंडीने
किम—केम
जित्तउ—जित्यो
सासु—सास—श्वास
नास—नासा—नाक
मगसिरि—मागशरमां

कदाग्रहु—कदाग्रह
कारिसि—करे छे
मंडि—मांड—पराणे
मालि—माळा ऊपर—मांचडा ऊपर
टोहणकालि—टोवाने वखते
लग्गी अछिसु—लागी रहीश
राखि राखि—राख राख
पडिउ—पड्युं
रयणि—रेण—रात्री
करती—करती
जाइ—जाय छे

इइसी—ऐसी—एवी
कोइ—कोइ
कायर—कायर
रिणि—रणे
लक्खु—लाखो
अगलि—आगळनी
मिल्हउं—मेलुं—छोडुं

एहु—ए—एह
मिल्हि—मेल—मूक
हिल्लि—हेळ—हेला—हेडो—हेत
रत्तउ—रक्त—आसक्त

चडाविउ –चडाव्यो–चडावेलो
हे हे कु–'हे हे कु' एवो अवाज
अवगन्नेसइ–अवगणशे
पोसि–पोस महिने
पाह–पाशमांथी–पाशना भयथी
सीउ–सी–शीत
तू–तुं
जुव्वणु–जोबन
भरियउ–भर्यो
परणि–परण
कुइ–कोइ
भोली–भोळी
गमारी–गमार–मूरख
अप्पणु–पोतानी जाते
गइवरु–गजवर–उत्तम हाथी
कु–कोण
चडइ–चडे
माचइ–माचे–मत्त थाय
रोइसि–रुए छे
पतीजसि–विश्वास करे छे
धीय–धी–दीकरी–छोकरी
अछइ–छे
मोदक–मोदक
सुहाली–सुंवाळी (खावानी)

वीह–बीक
अजिउ–हजी
नेमिहियास–नेम करतां
छुहिय–क्षुधित–भुख्याने
रुचंति–रुचे छे
चातकु–चातक
वणसइ–वनस्पति
अनेरउ–अनेरो–बीजो
भत्तारु–भरतार
खरी–खरी
अच्छंतइ–छते–रहेते छते
नडइ–सेवे
लहिउ–लईने–प्राप्त करीने
रासमि–गवेडे
माह मासि–महा–मा–महिने
प्रिय लइ पासि –प्रियनी पासे लई जा
अरन्नि–अरण्यमां
माहरी–मारी
हियडामाहि–हैयामां
मुंड निलाडि–मुंडा ललाट–कपाळ वाळी–मुंडा नसीबवाळी
तप्पइ–तपे
नेहगहिल्ली–स्नेहघेली

वरउं—वरुं—परणुं
चैत्र मासि—चैत्रमासे
पंगुरइ—पांगरे—प्रांकुरित थाय
वणि वणि—वने वने
टहका—टौका
करि—करमां—हाथमां
मांडी—मांड—बलात्कारे—पराणे
खिल्लिजइ—खीले—विकसे
सिणगारु—शणगार
ऊवरि—ऊपर
बंधववयणु—भाईना वचनथी
वइसाहइ—वैशाखे
रि—रे
संभलि—सांभळ
रुणझुणइ—रणझणे छे
खाउ पियउ—खाओ पीओ
सहु कोइ—सौ कोइ
धाउं—दोडुं
पडियउ—पड्यो
जेवडु—जेवडो
हरिय—हरी—दूर करी
विरती संसार—संसारथी विरक्ति पामी
संभारि—संभारी
गज्जुविज्जु—गाजवीज

राणी—राणी
घाउ—घा—घाव
कोयल—कोयल
करइ—करे
वेझइ—वींधे छे
मातउ—मातो
रमियइ—रमीए
लिज्जइ—लीजे—लईए
थिउ—थयो
चुक्कइ—चूके
फुट्टि—फूट—फूटिजा
वीसरिवा—वीसरवा—भूलवा
भमरउ—भमरो
दीस—दी—दिवस
विलसउ—विलसो
मुहाडि—एम ज करवुं
जिट्ठ—जेठ
मूछी—मूर्छित थई
पडिखि—प्रतीक्षी—वाट जोइने
हियउं—हैयुं
जाय—जाया—पुत्री
सेविसु—सेवीश
चिणय—चणा
खजंति—खवाय छे

करिसु—करीश
मिलिउ—मळीने—भेगी थईने
मिरिय—मरी—मरीयां—तीखां
अउगी—ऊगी नथी—हजी नानी छे
आल—अनर्थ—नकासुं—अलीक—प्रपंच
दोहिल्लउ—दुःखवाळुं—दोयलुं—दुर्लभ
किमइ—केमे
धराइ—धराय
फिरइ—फरे
अणुहरइ—अनुसरे
उत्राहुलि—उद्दाहक
गई—गई
परमेसर पासि—परमेश्वर पासे
भणिया—भण्या—कह्या

झखि—झंख
तपु—तप
तउं—तुं
सुख—सुखवडे—सुखथी
हिव—हवे

रितुकेरा—ऋतुना
मिलिवा—मळवा
हूय—थई
दिक्ख—दीक्षा
वारइ—वारे (संख्या)
भाय—भाई !

(२) **जिनपद्मसूरि**—श्रीस्थूलिभद्रनो फाग (चौदमो सैको)

मुणिवइ—मुनिपतिना
फागुबंधि—फागबंधवडे
झलकंत—झळकतुं—चळकतुं
वरीसालइ—वरिसाले—वर्षाकाळे—चोमासाने समये
गहगहिया—गहगह्या—गेंक्या—होंशवाळा थया

पाडलियमाहि—पाटलिपुत्रमांही
चउमासमाहि—चोमासामांही
भंडारो—भंडार
लियइ—ले छे
वय—वै—निश्चय सूचक अव्यय
कोसवेसाघरि—कोशा नामनी वेश्याने घरे

गुरह—गुरुनी
मोकलावइ—मोकलावे

आवइ—आवे छे
आवियउ—आव्यो
दासडिय—दासीए
अतिहि—अतिशय
ऊतावलि—उतावळी
—रायपासि—मुनिराजनी पासे
धर्मलाभु—धर्मलाभनो आशीर्वाद
रहियउ—रह्यो
हियवि—हैये
झिरिमिरि—झरमर
वाहला—वहेळा—पाणीना वहेळा
भणिसु—भणीश—कहीश
केवी—केई
माणमडप्फर—अभिमानथी मरडाती
नाचंते—नाचे छे
मेहारवभरऊलटि—मेघनी गर्जनाना शब्दसमूहने—अवाजोने—लीधे ऊलटेला—उत्साहमां आवेला
खलभलइ—खळभळे छे
अतिआछउ—अतिआछुं—घणुं ज पातळुं

चमकिय—चमकी
वधावी—वधावी—वेश्याने वधामणी आपी
लहकंती—लेंका करती
आविय—आवी
जोडंती—जोडती
मंगेवी—मांगी—मागी
धीरिम—धीरता
धरेवी—धरी
खलहल—खळखळ
झबझब—झबक झबक
वीजुलिय—वीजळी
थरहर—थरथर
साजंते—सज्ज थाय छे—तैयार थाय छे
मनावइ—मनावे छे
पहिरणि—पहेरवामां
लहलह—चंचल—हल्या करतो

झगमग—झगमग

थापणि—थापणमां
थवक्का—थोकडा—स्तवक
सिरि—शिरमां—माथे

पहिरेइ—पहेरे छे
मोतियहारो—मोतीनो हार
कानिहि—कानमां
मुक्का—मूक्या
काजलि—काजल वडे
संथउ—सेंथो
बोरीयावडि—बोरनी भातवाळी के जेमां सोनानां बोर टांकेलां छे एवी
झबकइ—झबके छे
गाजंते—गाजे छे
चरणलगि—चरणमां लागी—पगे लागी
वायंते—वाय छे
झल्हलिया—झळांझळां थयां
नाचइ—नाचे छे
मोटइ—मोटे
ऊगटि—ऊगटावडे
भीजइ—भींजे छे
छंडियु—छंडयो—तज्यो
लोहिहि—लोढावडे
हियउ—हैयुं
पावसु—प्रावृष—चोमासुं
माणीजइ—माणीजे—माणीए—अनुभवीए

फाडेई—फाडे—बे भाग करे
कांचुलिय—कांचळी
उरमंडलि—छातीना विस्तार ऊपर
ताडेइ—ताणे छे
कचोला—कचोळा
गालि-मसूरा—गालमसूरियां
कूवडिय—कूई
खंभ—खंभा—स्तंभो
रिमिझिमि—रुमझुम—रमझम
सुवाजइ—सारी रीते वागे छे
पहिल्ली—पहेली
जव—जव—ज्यारे
कउतिगि—कौतुके
आकासि—आकाशे
वांकउ—वांकुं
घडियउ—घड्यो—घडेलो
धरीजइ—धरीजे
मू—सिउ—मारी साथे
परिणेवा—परणवा
सिरीहिसुं—श्रीसाथे
साचउ—साचुं
नवलइ—नवले—नवलमां
लोउ—लोक
कवणु—कोण

रमेवा—रमवा माटे
मयण हिंडोला—मदनना हिंडोळा
जणु—जाण्ये—इव—अर्थे
संखतूरा—शंख अने तूर्य—वाजां
नाहि—नाभि
ऊरू—साथळ
घाघरिं—घाघरी
मयमयंत—महेकती
परवाल—परवाळुं
जोएवा—जोवा
मिलिय—मळ्या
आहणए—आघात करे छे
जोवंती—जोती
वोलावइ—वोलावे छे
बारह वरिसहं तणउ—बार वरसनो
राचइ—राचे
मूं—मने
पत्थरु—पत्थर
हिवडा—हमणां
मइ लियउ—में लीधुं
तं लियउ—तें लीधुं
ज होइ—ज थाय
पाडिउ—पाड्यो

पहिलउं—पहेलुं
तयणंतरि—तदनंतरे—त्यार पछी-तरत
अच्छइ—छे
अवगणिय—अवगणी
खडगिण—खड्गे
हुउ—थयो—हुयो
धनु धनु—धन्य धन्य
मल्यिउ—मळ्यो—मसळी नाख्यो
फागु—फाग
रमेवउ—रमवो
गावेवउ—गावो
कियउ—कर्युं—कह्युं
जयजयकारो—जेजेकार
जीतउ—जीत्यो
मल्लसल्ल—मल्लरूप शल्य
किय—कियो—करेलो
खेला—रमनारा
चैत्रमासि—चैत्रमासे

चौदमा सैकाना गद्यगत शब्दो

१३९ (१) अतिचार

अनेरीकन्हइ } अनेरानी कने	कमळी—कम्लिका
अनेराकण्हइ } अनेरानी पासे	सांपडा, सांपुडं—चापडो
आगलउ—आगलो—वधारो	सांपडी, सांपुडी—चापडी
ओछउ—ओछो	हुंती सत्ति—छती शक्ति
कानइ—काने	सारसंभाल-याद राखीने संभाळ लेवी स्मरण राखीने ध्यान राख
मात्र, मात्रि—मात्राए	तेह—तेनुं
देवंदण—देववंदन	करतां—करतां
सझाइ—सझाय—सज्झाय—स्वाध्याय	पढतां—भणतां
हुउ—थयो	गुणतां—गणतां
हुयइ—होय	पगु—पग
कह्यां—कह्यां	लागउ—लाग्यो
हुइ—होय	थुकु, थुंकु—थूंक
पाटी—पाटी	लगाउ—लाग्युं
पोथी—पोथी	हुइं—होय
अंतराइउ—अंतराय—विघ्न	दिवसमांहि—दिवसमां
हउं—थयो	सवहि—बधानुं
कीधउं—कीधो	

(२) नवकारव्याख्यांन (चौदमो सैको)

महारउ—माहरो	यउ—आ
हउ—हो—थाओ	पनर—पन्नर—पंदर
जि—जे	करतइ—करते

वयरी—वैरी
अरिहइ—योग्य छे
अरिहंत—अरिहंतोने
किसा—केवा
रागद्वेषरूपीआ—रागद्वेषरूप
चउत्रीश—चोत्रीश
नमस्कारु—नमस्कार
करिउ—करीने
पंचत्तालीस—पीस्तालीश
जिसउं—जैसुं—जेवुं
तिसइ—तैसे—तेवे
संबंधियइ—संबंधना
विभागि—विभागे
आंग—अंग
सर्वेहीं—सर्वेने
उपायी—उत्पादी—पेदा करी
सर्वेही मांहि—सर्वेनी अंदर—बधांनी अंदर
ध्यातव्युं—ध्यावा योग्य
गुणेवउ—गणवा योग्य

हुंतइ—छते
मंगलीक—मंगळीक
हिवडातणइ—हमणा तणे—हमणाने
पहिलउं—पहेलुं
सुमरेवउं—स्मरवुं—समरवुं—याद करवुं
पढेवउ—पढवा योग्य
भारी—भारे—दीर्घ
ग्या } ग्या—गया
ग्या }
उत्ताणु—चत्तुं
ऊपरि—ऊपर
चउवीसमह—चोवीशमाना
बार—बार
अछइ—छे
किसउ—कैसो—केवो
यउ—आ
चउवीसी—चोवीश
स्मरतां—स्मरतां
माहात्म्यु—माहात्म्य

(३) अतिचार—(संवत्—१३६९)

तुम्हि—तमे
आलोउ—आलोओ—आलोचना करो
पढिउं, पढिउ—पढ्युं—भण्युं

विराया—पिराया—पराया—बीजाना
सिउणइ—सोणे—सोणामां
सिउणांतरि—स्वप्नांतरे

भवसगलाहइ मांहि—भवसघलानी मांय
कुडउ—कूडो—खोटो
थापणिमोसउ—थापणनी मां चोरी—थापणने खोटी करवी
विढाविढि—वढवाड
छानउं—छानुं
वावरिउं—वावर्युं
पाडइ—पाडे—महोल्लामां—शेरीमां
नवउं—नवुं
मेलिउ—मेळव्युं—भेळव्युं
तूल—तोले
सवहइ—सर्वेनुं—बधानुं
आपणा—आपणा
कूडी—खोटे
मापि—मापे
लुहुडपणि—लघुपणमां—नानपणमां
सील—शील
खंड्या—खंड्या
नीम—नीम—नियम
हियामांहि—हैयामां
धरउ—धरो
ऊंचरउ—ऊचरो—बोलो
सर्वू—सर्व
निंदउ—निंदो
हव—हवे
गुणिउ—गण्युं
पति—प्रति
लिखिउ—लिख्यो—लख्यो
साखि—साख—साक्ष्य
कुणहइ उस—कोणनी साथे—कोईनी साथे
राडिभेडि—राडभेड
विराइउं—छेतरेलुं—छेतरीने मेळवेलुं
लीधउं—लीधुं
खलइ—खळे
पाडोसि—पाडोशे—पाडोशमां
पुराणउ—पुराणुं—जूनुं
वाछल्य—वात्सल्य
विषइ—विशे
अम्हारउ—अमारो
वोसिरावउ—वोसरावो—त्याग करो
विघन—विघन
पच्चक्खउ—पचखो—पच्चक्खाण करो
खमिउं—खम्युं—क्षमा करी
नइ—ने—अने
पावु—पाप
हिवु, हिव } हवे
प्रवर्ताविउं—प्रवर्ताव्युं

संवरू—संवरो—अटकावो
खमाविउं—खमाव्युं—क्षमा आपी
वइरु—वेर
करउं—करुं
संस्थापिउ—संस्थाप्युं
अवलपिउ—ओळव्यो
घरट—घरट—दळवाना मोटा घंट
खांडा—खड्ग—खांडुं
अरहट्ट—रेंट
द्रवि—द्रव्य
प्ररूपिउ—प्ररूप्युं—प्ररूप्यो
ऊखल—ऊखल
घरटी—घंटी
कटारी—कटार
पावटा—पावडा
वेचि—खरची—व्यय करी
सज्याइ—सजाय—सज्झाय
ऊजम—ऊजम—उद्यम
हुओ—हुयो—थयो

पूर्वोक्त शब्दो विशे विवेचन करतां पहेलां उक्त ते ते कृतिओना कर्ता विनयचंद्र अने जिनपद्मसूरिना समयविशेनां प्रमाणो आपुं:

१४० विनयचंद्रे प्रस्तुत कृतिमां पोतानो समय नथी जणाव्यो, तेमां

विनयचंद्रनो समय

फक्त रत्नसिंह (रयणसिंह) सूरिने पोताना गुरु तरीके जणावेला छे, परंतु विनयचंद्रे करेला कल्पसूत्रटिप्पने[३०४] उपरथी तेमनो समय विक्रम संवत १३२५ नो छे ए चोक्कस छे.

बीजी कृतिना कर्ता जिनपद्मसूरि पोताने खरतरगच्छना जणावे छे अने

जिनपद्मसूरिनो समय

तेओने विक्रम संवते[३०५] १३९० मां आचार्यपदे मळ्युं हतुं.

उक्त बन्ने हकीकत उपरथी श्रीविनयचंद्र अने जिनपद्मसूरिनो समय चौदमो सैको सुनिश्चित छे.

---

३०४ जुओ जैनगुर्जरकविओ–विक्रमनी चौदमी सदी भाग १, पृ० ५ टिप्पण.
३०५ जुओ जैनगुर्जरकविओ–विक्रमनी चौदमी सदी भाग १, पृ० ११.

त्रीजी कृतिमां अतिचारना अने नवकारव्याख्यानना उतारा आपेला छे; ते बन्ने गद्यमां छे. एमां 'अतिचार' नी भाषा तो तद्दन लौकिक छे ए ख्यालमां रहे. ए उतारानो विषय सांप्रदायिक छे छतां ते उपरथी पण भाषा अने तेना वलणनी कल्पना आवी शके छे. ए बधा उतारा संवत् १३४० अने संवत् १३६९ ना अरसामां लखायेला ताडपत्र उपरथी लई स्व० विद्यावल्लभ साक्षरश्री चिमनलालभाई दलाले 'प्राचीनगुर्जरकाव्यसंग्रह'[३०६]मां मूकेला छे अने ते उपरथी तेमने अहीं उतारेला छे. एटले ए उतारा पण चौदमा सैकाना छे.

१४१ तेरमा सैकानी कृतिओमां जे जातनी भाषापद्धति छे लगभग ते ज जातनी भाषापद्धति उक्त चौदमा सैकानी कृतिओमां पण छे. जे उच्चारणभेद छे ते तद्दन साधारण छे.

चौदमा सैकानी भाषामीमांसा

तादर्थ्यनुं सूचक पूर्वोक्त (पृ० २४६) 'रेसि' पद 'नेमिहिरेसि' प्रयोगमां वपरायुं छे.

ए सिवाय 'नेमितणी' 'दुज्जणतणा' 'बारह वरिसहं तणउ' वगेरे षष्ठीसूचक प्रयोगो पण पूर्वनी जेवा वपराया छे.

'घरवासथी' एवो अर्थ सूचववा 'घरवास' शब्द ज वपरायो छे, एटले ते लुप्तविभक्तिवाळो प्रयोग छे एम कहेवाय. ए ज रीते 'संसारथी' ने बदले 'संसार' 'राजुलना पतिना' अर्थमां 'पति राजुल' 'प्रियनी पासे ले' एवुं सूचववा 'प्रिय लइ पासि' 'पाशमांथी' एवुं बताववा फक्त 'पाह' 'मुनिपतिना' अर्थे 'मुणिवइ' अने 'चरणमां लागी' अर्थ बताववा 'चरण लग्गी' आवा प्रकारना लुप्त विभक्तिवाळा के व्यवहित विभक्तिवाळा प्रयोगो ए कृतिओमां आवेला छे. कवितामां आ जातना प्रयोगो

३०६ जुओ प्राचीनगुर्जरकाव्यसंग्रह पृ० ८७ तथा ९१.

सुलभ छे अने आ जातनी कविताओमां आजे पण एवां पदो वापरवानी प्रथा चालु छे.

संस्कृत कविताओमां आवा प्रयोगो नहीं मळे अने प्राकृतमां पण घणा विरल. लोकभाषामां ज आवा प्रयोगो अवतरे छे अने छूटथी वपराय पण छे.

संस्कृतमां प्रथमांत 'शत' संख्यासाथे वपरातुं संख्येय षष्ठीमां पण आवे छे: 'करस्य शतानि–हाथना सैंकडा–सैंकडो हाथो' एनी ज पेठे अहीं 'वरह सयाइ' प्रयोग वपरायेलो छे. वरस्य शतानि–वरना सैंकडा-सैंकडो वरो. चालु भाषामां आ जातनी प्रयोगपद्धति नथी चालती. आ तो संस्कृत–प्राकृतनुं प्रतिबिंब छे.

गर्ज–गज्ज–ते ऊपरथी गाजंते, नृत्य–नच्च–नाचंते, सज्ज–सज–साजंते, वक्रक–वंकय–वांकउ, ए पदोमां स्वरभारनी सुरक्षितता माटे संयुक्त अक्षरनी पूर्वनो स्वर भारे थाय छे. त्यारे सौभाग्य–सोभग्ग–सोहाग–सोहग, झवक्कइ–झवकइ, विनष्टक–विनट्ठय–विणठ्ठउ–ए पदोमां संयुक्त अक्षरनी पूर्वनो स्वर, भारे थया विना पण स्वरभार जळवाई रह्यो छे, तेनुं कारण ते ते पदोमां 'ह' 'झ' अने 'ठ' महाप्राण छे, ए जणाय छे. उच्चारणनी रीतोमां स्वरभार जाळववानी अनेक पद्धतिओ छे. उच्चारण-कर्तानुं मुख पोताने ज्यां जे रीत अनुकूळ जणाय त्यां तेनो आश्रय आपोआप लई ले छे ए ध्यानमां राखवानुं छे.

'चडऊत्तर' नी व्युत्पत्ति

१४२ 'चडिउत्तरिय' नो अर्थ प्रसिद्ध छे. पाछलुं पद 'उत्तरिय' 'उत्' साथेना 'तृ' ना 'तरिय' ऊपरथी आवेलुं छे. आगलुं 'चडि' 'चडिय' ऊपरथी. ८–४–२०६ मां हेमचंद्र 'आरोह' नो पर्याय 'चड' धातु छे एम जणावे छे. आ 'चड' धातु देश्य होय एम लागे छे.

'वज्जरिय' पद 'वज्जर्' धातु ऊपरथी आव्युं छे. 'कथ्' धातुना पर्याय रूपे 'वज्जर्' ने ८-४-२ मां सूचवेलो छे: उच्चरित—उच्चरिअ—वुच्चरिअ के प्रोच्चरित—पुच्चरिअ—वुच्चरिअ—वज्जरिअ—ए रीते संभव छे के—वुच्चरिअ—वज्जरिअ—द्वारा 'वज्जर्' धातु अने पुच्चरिअ—पज्जरिअ द्वारा 'पज्जर' धातु नीपज्यो होय. अन्यथा 'वज्जर्' अने 'पज्जर्' ए बन्ने धातुओ देश्य छे, एम मानवुं जोईए.

'वज्जर्' नी चर्चा

'सरवणि' शब्दनुं मूळ 'स्रु' धातुमां छे. 'कुण्डिकातो जलं स्रवति—कुंडीमांथी पाणी स्रवे छे—टपके छे—झरे छे.' ए प्रयोगमां जे अर्थ 'स्रु' धातुनो छे, ते ज अर्थ 'सरवणि' मां वपरायेला 'स्रु' धातुनो छे. 'स्रु' ऊपरथी आवेलो 'प्रस्रवण' शब्द संस्कृतमां प्रसिद्ध छे. 'स्रवण' ऊपरथी 'सरवण' शब्दने लाववानो छे. 'श्रावणनां सरवडां' प्रयोगमां जे भाव 'सरवडां' पदनो छे, ते ज भाव अहीं 'सरवणि' नो छे.

'सरवणि'

'झिज्जइ' एटले 'क्षीण थाय छे.' प्राकृतमां केटलेक स्थळे 'क्ष' नुं 'झ' उच्चारण थाय छे. (८-२-३) एम हेमचंद्र कहे छे अने 'झिज्जइ' 'झीणं' एवां उदाहरणो आपे छे. ए ऊपरथी एम कही शकाय एम छे के 'क्षीयते' अने आ 'झिज्जइ' बन्ने एकसरखां क्रियापदो छे.

झिज्जइ

'झबक्कइ' के 'झबकइ' ए वीजळीना झबकाराना अनुकरण ऊपरथी आवेलुं क्रियापद छे. ए ज रीते 'खलभल' 'झलहल' 'थरहर' 'रिमिझिमि' 'झिरिमिरि' वगेरे ए बधां पदो अनुकरण ऊपरथी आवेलां छे. क्षोभ सूचववा खलभल, आंखमांथी चमकारावाळुं पाणी पडतुं जणाववा के तेजनी चमक सूचववा झलहल, कंपनने दर्शाववा थरहर—थरथर, घूघरानो अवाज

झबक वगेरे अनुकरणो

पोते' एवो अर्थ थाय. अहीं एवो अर्थ घटे पण छे. परंतु जेमां एक साथे 'आत्मा + आत्मा' एम बे आत्मा लाग्या होय तेवो प्रयोग संस्कृत प्राकृतमां भाग्ये ज मळे छे. मात्र भाषामां मळे छे.

१४३ 'भिज्जंति–भिज्जइ' अने 'भीजइ' ए त्रणे क्रियापदो 'भींजावुं पीगळवुं–नरम थवुं'ना भावने सूचवे छे.

विनयचंद्रनी कृतिमां 'भिज्ज' पद छे अने त्यार पछीनी कृतिमां

भींजवुं

'भीज्' पद छे. वर्तमानमां ए ऊपरथी आवेलुं 'भींजवुं' पद छे. 'भिद्यते'–भिज्जति–भिज्जइ–भीजइ–ए रीते ए क्रियापदनो उगम छे. 'भिद्' धातु 'विदारण' अर्थने सूचवे छे अने 'मिद्' तथा 'मिद्य' धातु 'स्नेह' अर्थने जणावे छे. 'विदारण' एटले 'फाडवुं–चीरो करवो'. आ क्रिया जेम बाह्य पदार्थने लागु पडे छे तेम आंतरिक मन, बुद्धि अने आत्माने पण लागु पडे छे. एक ज प्रकारना संकल्पवाळां मन, बुद्धि अने आत्मा ज्यारे पोते स्वीकारेला संकल्पथी चळतां नथी त्यारे तेओ 'भेदातां नथी' एवी क्रियाना व्यवहारने योग्य बने छे. अहीं पण जे 'भिज्ज' के 'भीज्' क्रिया वपराणी छे ते, एक ज प्रकारनां संकल्पने वरेलो आत्मा 'एकनो बे नथी थतो–भेदातो नथी–भींजातो नथी' ए अर्थने बतावे छे. ए जोतां अर्थ अने वर्णविकार ए बन्ने दृष्टिए उक्त 'भिद्यते' क्रियापदमां प्रस्तुत 'भिज्ज' 'भीज्' के 'भींजवुं'नुं मूळ रहेलुं छे. अथवा 'स्निग्ध थवुं–कोमळ थवुं–आर्द्र थवुं' ए अर्थमां 'मिद्' अने 'मिद्य' धातुओ वर्ते छे, तेमांना 'द्य'वाळा 'मिद्य' धातु ऊपरथी मिद्यति–मिज्जति–म्हिज्जति–भिज्जति–भीजति अने ए ऊपरथी 'भींजवुं' ए रीते उक्त 'भिज्' अने 'भीज्' ए बन्ने पदो आवी शके एम छे. आ पक्षे 'मिद्य' मां 'ह' ने प्रक्षिप्त समझी ते ऊपरथी 'भ' लाववानी कल्पना करवानी छे. अर्थमां तो कशी ताणखेंच नथी रहेती. 'मिद्यति'

एटले 'स्निग्ध थाय छे.' अने ते ऊपरथी आवेला 'भिज्जति' एटले पण 'स्निध थाय छे—नरम थाय छे—पोतानो आग्रह मूकी सामाने अनुसरे छे.' उक्त बे कल्पनाओमां जे प्रामाणिक अने संगत लागे तेने अहीं लेवानी छे. विशेष तपासतां जणायुं के पोताना अनेकार्थसंग्रहमां 'भेद' शब्दना अर्थो बतावतां आचार्य हेमचंद्र कहे छे के,

"भेदो विदारणे द्वैधे उपजाप–विशेषयोः"—(कां० २, श्लो० २२७)

अर्थात् भेद—विदारवुं—फाडवुं, भेद—द्वैध—द्विधा थवुं—बे प्रकारे थवुं—चलित थवुं, भेद—उपजाप—एक प्रकारनो जाप, भेद—विशेषता—जुदाई. आ जोतां तो उक्त 'भिद्' धातु ऊपरथी 'भिज्ज' के 'भीज्' 'भींजावुं' पद आवे तो अयुक्त नथी ने 'मिद्'नी कल्पनानी जरूर नथी.

१४४ 'अनेरी कन्हइ' 'अनेरा कण्हइ' पदमांनुं 'अनेरी' के 'अनेरा' पद 'अन्यतर—अन्नयर—अन्नइर—अनइर—अनेर' ए रीते लाववानुं छे.

अनेरा

अहीं पण 'अइ'नो 'ए' स्वरभारने साचवी ले छे. तेथी 'अन्न'नुं 'आन' थतुं अटके छे. संबंधसूचक 'ईय' प्रत्ययवाळा 'अन्यतरीय' ऊपरथी 'अनेरी' अने संबंधसूचक षष्ठीविभक्तिवाळा 'अन्यतरस्य—अन्नतरस्य—अन्नतराह—अन्नतरा' ऊपरथी 'अनेरा' लावी प्रस्तुतमां 'अनेरी' अने 'अनेरा'ना अंत्य 'ई' अने 'आ'नी उपपत्ति समझवानी छे.

'नेमिसमं' साथेनो 'सम' शब्द 'सरखा'ना अर्थनो द्योतक छे. 'नेमिसमं' एटले 'नेमिसमान—नेमि जेवुं.'

'दिक्खाडिउ'—देखाडयो. हेमचंद्र कहे छे के 'दृश' धातुनो

देखाडवुं

समानार्थक बीजो एक 'देक्ख्' धातु छे (८–४–१८१). तेनुं प्रेरक देक्ख्+आड—देक्खाड अने तेनुं भूतकृदंत 'देक्खाडिओ' ऊपरथी 'दिक्खाडिओ'. संस्कृतमां

'दृश्' धातुना 'द्रक्ष्यति' 'दृक्षीष्ट' वगैरे रूपोमां जे 'द्रक्ष' वा 'दृक्ष्' अंग जळवायुं छे ते उक्त 'देक्ख' वा 'दिक्ख'ना मूळमां छे ए ध्यानमां रहे.

'छेहु' आ० हेमचंद्र 'अंत' अर्थवाळा 'छेअ' शब्दने देश्य कहे छे (देशीश० वर्ग–३, गा० ३८) अहींनो 'छेहु' 'विश्वासना अंतने –विश्वासघातने' सूचवे छे. एटले प्रस्तुत 'छेहु' अने उक्त देश्य 'छेअ' ए बे वच्चे वधारे पडती समानता छे. संस्कृत 'छेद' अने प्राकृत 'छेअ' तथा उक्त देश्य 'छेअ' ए त्रणे शब्दो परस्पर मळता आवे छे.

वाडो

अहीं 'वाडु' शब्दनो अर्थ 'वाडो' छे. हेमचंद्र "पाटकस्तु तदर्धे स्यात्" (अभिधान० कां ४, श्लो० २८) कहीने गामना अडधा भागने 'पाटक' कहे छे. अत्यारनी भाषामां वपरातो 'पाडो' के 'वाडो' नुं मूळ ए 'पाटक' छे. नगरनी पासेना 'परा'ने हेमचंद्र 'शाखापुर' कहे छे (अभिधान० कां ४, श्लो० ३७) आजनुं 'शापुर' ए शुं ए 'शाखापुर' उपरथी आव्युं छे के तेनो संबंध कोई शाह–पादशाह साथे छे?

ऊपरि

१४५ 'ऊपरि'मां 'ऊ' दीर्घ शा माटे छे? आ अने आगली कृतिओमां ज्यां ज्यां 'ऊपरि' शब्द आव्यो छे त्यां बधे ते आदिमां दीर्घ 'ऊ' वाळो छे. जैन आगमोमां 'उपरि'ना अर्थमां अनेक स्थळे 'उप्पिं' शब्द आवे छे. आ उपरथी मालूम पडे छे के 'ऊपरि'ना आद्य 'ऊप'नुं मूळ ए 'उप्प'मां होवुं जोईए. एम होय तो 'ऊपरि'ना आद्य दीर्घनी संगति थई शके छे. वैयाकरणो 'ऊर्ध्व'ने 'रि' प्रत्यय कल्पी 'उपरि' शब्दनी कल्पना

करे छे (७–२–११४) 'ऊर्ध्व + रि–उब्भरि–ऊपरि' ए जोतां पण 'ऊपरि'नो आद्य 'ऊ' दीर्घ छे, ते बराबर छे. संस्कृत वैयाकरणोए 'उपरि'मां मूळ 'ऊर्ध्व' शब्द तो कल्प्यो परंतु साथे 'ऊर्ध्व'नो 'उप' आदेश पण कल्प्यो छे. आ कल्पनाथी 'उपरि' शब्दनी निष्पत्ति तो थई परंतु तेनुं मूळ 'ऊर्ध्व'मां छे तेनी निशानी भुंसाई गई त्यारे भाषानां 'ऊपरि'मां तेनी निशानी जळवाई रही छे. गुजराती जोडणीमां 'उपरि'नी जोडणी आदिमां ह्रस्वरूपे स्वीकारी छे. मने लागे छे के तेमां उक्त संस्कृत कल्पनानुं अनुकरण छे; परंतु शब्दना मूळने वीसारी देवामां आव्युं छे. 'ऊर्ध्व'ने 'रि' प्रत्यय लाग्या[२०७] पछी ते द्वारा ऊपर जणाव्या प्रमाणे 'ऊपरि' पद बराबर आवी शके एम छे. 'ऊर्ध्व'नो 'उप' कल्पवानी जरूर नथी. अवेस्तानी भाषामां 'ऊपर' अर्थमां अनेक स्थळे 'उपइरि' शब्द आवेलो छे. (खोरदेह अ० पृ० ४५) ए ज प्रमाणे 'नीचे' ना अर्थमां 'अधइरि' शब्द अवेस्तामां वपरायेलो छे. (पृ० ४५) 'उपइरि', 'अधइरि' नो 'इरि' जोतां एम भासे छे के ए 'इरि'नुं मूळ 'ऊर्ध्वतरे' 'अधस्तरे' मां रहेला सप्तमीविभक्तिवाळा 'तरे' पदमां होय. आ रीते तो वैयाकरणोए कल्पेलो 'रि' प्रत्यय पण संगत लागतो नथी. अवेस्तामां 'उपइरि' ए चतुरक्षर पद होई विलंबित उच्चारणवाळुं छे माटे ज तेमां आद्य 'उ' लघु छे त्यारे भाषामां तो ए

---

२०७ आद्य वैयाकरण पाणिनिए कह्युं छे के 'ऊर्ध्व' शब्दनो 'उप' आदेश करवो अने तेने 'रि' प्रत्यय लगाडवो.—(७–२–११४) खरी रीते ऊर्ध्व+र (स्वार्थिक) ते द्वारा प्राकृत उब्भर, तेनुं सप्तमी एकव० उब्भरे, अने ए 'उब्भरे' द्वारा 'उप्परि' 'ऊपरि' वगेरे पदो आवेलां छे. अने केवल 'उप्पिं' पद तो ऊर्ध्वे–उब्भे–उप्पे–उप्पिं ए रीते आवेलुं छे. गूजरातीना प्राचीन नमूनाओमां अनेक स्थले उप्परि, ऊपरि, ओपरि एवां पदो उपलब्ध छे. आम, संस्कृत कहेवातुं 'उपरि', खरी रीते तो प्राकृत छे.

पद, त्र्यक्षर होवाथी द्रुत उच्चारणवाळुं बने छे तेथी ज त्यां तेनो आद्य 'उ' गुरु रहेवो जोईए. पूर्वोक्त 'उप्पि' तो 'ऊर्ध्वे'—'उप्पहिं' ऊपरथी सीधुं ज आव्युं छे. तेने 'रि' प्रत्यय नथी लाग्यो.

१४६ धातुसंग्रहमां पहेला गणमां 'अवरोध' अर्थमां 'वल' धातु जणावेलो छे, ते ऊपरथी 'वलि—वलि' क्रियापद आवी शके छे. 'वलि वलि' ए बीजा पुरुषना एकवचननुं क्रियापद छे. तेनो अर्थ—'वळवळ—पाछो वळ—रोकाई जा' छे.

'जित्तउ' अने 'जीतउ' ए बन्ने एक ज अर्थमां छे. 'जित्यो' तेनो अर्थ छे. ते ज अर्थमां 'जि' धातुनुं 'जिप्पिअ' रूप पण थाय छे. मने लागे छे के 'जिप्पिअ' ना अनुकरण द्वारा 'जित्तउ' मां बेवडो 'त्त' अने जीतउ'नो 'जी' दीर्घ थयो जणाय छे.

'टोहणकालि' एटले 'टोवाने वखते'. 'टोवुं' एटले 'खेतरमां पक्षी वगेरेने आवतां रोकी राखवा जे अवाजो करवा पडे ते क्रिया.' संस्कृत धातुसंग्रहमां 'स्तुभ्' धातु 'क्रियानिरोध'ना अर्थने सूचवे छे. थोभवुं, थोभो, थोभनारो वगेरे पदो उक्त 'स्तुभ्' ऊपरथी आवेलां छे. ए प्रमाणे 'स्तोभन'—'थोभण—थोहण—टोहण' ए रीते 'स्तुभ्' ऊपरथी 'टोहण' शब्द आवे छे अने अर्थनी सुघटना पण रहे छे. भाषानो 'टोयो' शब्द पण 'स्तुभ्' ना 'स्तोभकः—थोभओ—थोहओ—टोयो'—ए रीते आवेलो छे.

टोवुं

'हिल्लि' शब्द क्रीडावाचक 'हेला' नुं रूपांतर छे. 'हेला' एटले विलास. अथवा 'हेलि' एटले 'आलिंगन'. ए ऊपरथी पण 'हिल्लि' पद आव्युं होय. परंपराए अहीं बन्ने अर्थ घटमान छे. अहीं 'हिल्लि' नो सीधो अर्थ 'हेळ'—साहचर्य छे.

हिल्ली

गधेडे चडे छे." आ अर्थ अहीं बराबर घटमान छे. माटे अहींना 'नडइ' पदनुं मूळ 'लड—उपसेवायाम्' धातुमां समझवुं. (धातुपारायण पृ० २४९, धातु—५५)

'दुहिता' ऊपरथी 'धूआ' (८—२—१२६) 'धूआ'मां स्वर परिवर्तन थवाथी 'धीय' पद आवे छे. काठियावाडीलोककथामां[३०८] 'दीकरी'ना अर्थमां जे 'धी' शब्द आवे छे ते पण आ रीते आवेलो छे.

प्रस्तुत कृतिमां 'धूय' अने 'धीय' ए बन्ने शब्दो वपराया छे. भाषामां वपरातो सुंवाळी (पूरी) अने प्रस्तुत 'सुहाली' बन्ने समान अर्थना छे. 'सुहाली' शब्द देश्य जणाय छे अथवा सुखवाचक देश्य सुहल्लि (देशी० व० ८, गा० ३६) साथे पण तेनो संबंध होय.

प्र + अङ्कुर = 'प्राङ्कुर' ते ऊपरथी नाम धातु 'प्राङ्कुरयति' प्रस्तुत 'पंगुरइ'नुं मूळ आ 'प्राङ्कुरयति'मां छे. भाषानुं 'पांगरे' क्रियापद पण आ रीते आवेलुं छे.

पांगरवुं

देश्यसंग्रहमां 'बलात्कार' अर्थे 'मड्डा' शब्दनो उल्लेख छे. ते ऊपरथी अहींनो 'मांडी' शब्द आव्यो छे अथवा 'मांडवुं' ज अर्थ लईए तो 'मण्ड' धातु ऊपरथी ते पदने लाववुं. भाषानो 'मांडमांड' शब्द उक्त 'मड्डा' ऊपरथी आव्यो छे.

'गहिल्ली एटले घेली—मूरखी. 'ग्रहिल' पद उपरथी 'गहिल्ली' पद आव्युं छे.

'विध्यति'—'विज्झइ' ऊपरथी वेझइ—वींझे—वींधे—आव्युं छे.

'मत्तक:'—मत्तओ—मातउ—मातो.

थिउ—थयो. स्थित:—थितो—थिओ—थिउ—थयो.

---

३०८ सौराष्ट्रनी रसधारमां 'दीकरी' अर्थ माटे 'धी' शब्द वपरायेलो छे.

'प्रवते' एटले वर्ते छे—प्रवृत्त थाय छे. 'प्रवते'मां समायेला 'प्रवु'
उपरथी 'धुनक.' ने उपरथी 'धुनकर्ता' अने

चूक

ने द्वारा चुकाट–चुकर–चूके. अथवा 'च्यवति'
ने बदले तेम 'च्यवति' पण बने छे (७–३–२९) तेम 'च्यवते'
अने ते उपरथी च्यवते–चउते–चुअते–चुअइ–चुके–चूके अथवा
'नाशी जवुं—नष्ट थवुं' अर्थवाळा 'च्युत' धातु द्वारा चोतति–चोतकति–
चोअकति–चोअकइ–चुकइ–चुके–चूके एम पण थई शकाय. हेमचंद्र
आ 'चुक' ने 'भ्रंश' धातुनो पर्याय करी देश्यकोटिनो गणे छे.
(८–४–१७७).

'दिसन' उपरथी दीन.

'मुलाटि' शब्द देश्य लागे छे. 'एम ज करवुं' एवा अर्थे हेमचंद्र
'मुहिअ' अने बीजा देश्य संग्राहको 'मुहिआ' शब्द आपे छे.
(देशी० वर्ग ६, गा० १३४). संभव छे के उक्त 'मुलाटि' नो संबंध
देश्य 'मुहिआ' के 'मुहिअ' साथे होय.

शुंडसियाडि–शुंट–सुंढ. 'निलाट'–ल्लाट. 'ल्लाट' ने बदले
'णिडाल' के 'णिलाट' शब्द हेमचंद्रने संमत छे. (८–१–४७ तथा
८–२–१२३) 'शुंट' नी व्युत्पत्ति अस्पष्ट छे.

'माल' शब्द देश्य छे. ते उपरथी सप्तमी 'मालि–मांचडा उपर'—
माळा उपर (देशी० व० ६, गा० १४६).

'चणक' उपरथी 'चिणय–चणो.' "चणको हरिमन्थकः"
(अभिधान० कां० ४, श्लो० २३७).

मरिचि–मिरिय (८–१–४६) मरी–तीखां.

'अजगी' एटले अ + जगी—'हजु तुं जगी नथी एवी छो' एटले
'मुग्धा छो' एम जणाय छे.

'आल' शब्द अनर्थने सूचवे छे. 'आळपंपाळ' मां रहेलो 'आळ' जे भावने जणावे छे, ते ज भाव अहींना 'आल' नो छे. "आलं स्यात्–अनर्थ–हरितालयोः" (अनेकार्थसं० कां० २, श्लो० ४६३ है०).

'झख' धातु देश्य छे. 'नीसासो मेलवो' 'विलाप करवो' 'पोतानी जातने ओळंभो देवो' ए तेना त्रण अर्थ छे. अहीं त्रणे अर्थो घटे एम छे. 'झख' ना मूळनी खबर नथी. तत्समान 'झंख' माटे जुओ (८–४–२०१, ८–४–१४८, ८–४–१५६ है०). उक्त 'झख' बीजा पुरुषनुं एकवचन छे अने 'झंख' धातु उपरथी आवेलुं होय.

'दोहिल्लउ' भाषामां 'दोयलुं'–अहीं सखी, राजुलने कहे छे के

दोयलुं

"तुं सुंवाळी छे अने तप 'दोहिलुं' अर्थात् 'कठोर' छे–दुःखकारक छे." आ अर्थ जोतां दुःख–दुक्ख–दुह–तेने 'इल्ल' प्रत्यय लागी अने ते द्वारा 'दोहिल्लउ' शब्द आवे. भाषामां प्रचलित 'दुहववुं' क्रियापदनुं मूळ 'दुःख' धातुमां छे, अथवा 'दुर्लभ' 'दुल्लह' 'दुल्लहउ' मां वर्णव्यत्यय अने स्वरपरिवर्तन थवाथी पण 'दोहिल्लउ' नीपजे. अहीं 'दुःख करवा' नो भाव बराबर संगत छे.

'तृप्ति' अर्थवाळा 'ध्रा' धातु उपरथी 'ध्राइ' क्रियापद आव्युं छे. भाषानुं 'धरावुं' पद पण 'ध्रा' मांथी आव्युं छे.

'फिरइ' एटले फर्या करे छे. 'चालवुं–फर्या करवुं' अर्थनां 'स्फर' धातु छे (धातुपारायण पृ० २१६, धातु ८४)

फरवुं

ते उपरथी स्फरति–फरति–फरइ–फिरइ–ए रीते 'फिरइ' पद लाववानुं छे.

ऊबाहुलि—ऊंचा हाथ करेला छे एवी—उत्साहवाळी—उतावळी. उद् + बाहु—उब्बाहु, स्वार्थिक 'ल' लाग्या पछी 'उब्बाहुली' ते ऊपरथी 'ऊबाहुलि.' संभव छे के 'ऊमाहवुं'

ऊबाहुलि

'उत्साह थवो'—क्रियापदनुं मूळ, प्रस्तुत 'उब्बाहु' पदमां होय. अथवा 'औत्सुक्य' अर्थमां आ० हेमचंद्र 'उब्बाहुलि' शब्दने (देशी० वर्ग १, गा० १२६) देश्यरूपे नोंधे छे. ते 'उब्बाहुल' शब्द ऊपरथी अहींनुं 'ऊबाहुलि' स्त्रीलिंगी रूप आव्युं होय.

फागुबंधि—फागबंधवडे.—फागुबंध एटले विशेष प्रकारनी पद्यरचनानो प्रकार. हेमचंद्र, 'वसंतनो उत्सव' अर्थमां 'फग्गु' शब्दने देश्यरूपे जणावे छे. (देशी० व० ६, गा० ८२)

फाग

'फाग' नो संबंध 'फागण' महिना साथे छे ए जाणीतुं छे.

वर्षा + काल'—वर्षाकाल—'वरिसाल' तेनुं सप्तमी एकवचन वरिसालइ—वरसादने समये—चोमासामां.

'ऊतावलि' शब्दनुं मूळ 'उत्' साथेना 'त्वरा' अर्थवाळा 'त्वर' धातुमां छे. 'त्वर' ना 'त्व' मां 'त्' अने 'व' वच्चे 'आ' उमेरवाथी 'तावर' थतां ते द्वारा उक्त 'ऊतावलि'—'ऊतावळो'—'ऊतावळ' वगेरे शब्दो आवे छे.

'रहेवा' अर्थवाळा देश्य 'रह' धातु ऊपरथी 'रहियउ'—रह्यो—पद आव्युं छे.

'पाणीनो वहेळो' अर्थमां 'वहेळा' शब्द भाषामां प्रसिद्ध छे. देश्य संग्रहमां 'वाहली' 'विरओ' अने 'वहोलो' ए त्रण शब्दो नोंधेला छे. (देशी० वर्ग ७, गा० ३९—

वहेळो

"वहोलो वाहली विरओ त्रयोऽपि एते लघु जलप्रवाहवाचकाः"). प्रस्तुत

'वाहला' बहुवचन छे, तेनुं मूळ 'वाहल' पद 'वाहली' शब्द साथे संबंध धरावे छे. संभव छे के मूळ 'वह्–वहेवुं' धातु साथे वाहली, वहोलो के वहेळा पदनो संबंध होय.

चमत्कृत–चमक्किय–चमकिय–चमकी ए क्रम 'चमकिय' नी निष्पत्तिनो छे.

'वधावी' ना मूळमां प्रेरणासूचक प्रत्यय साथेनो 'वृध्–वधवुं' धातु छे. वृध्–प्रेरणा अर्थे–वर्ध–प्रा० वद्धाव. ते ऊपरथी भूतकृदंत 'वद्धाविया' अने ते द्वारा 'वधावी.'

भाषामां 'लेंको' शब्द स्त्रीओनी विशेष प्रकारनी चेष्टानो सूचक छे.

लेंको

प्रस्तुत 'लहकंती' पद 'लेंका करती'ना भावने दर्शावे छे. एना मूळमां 'लस्' धातु द्वारा बनेलो 'लसक' शब्द छे. 'लसकं करोति लसकयति' ए रीते नामधातुरूप 'लसक' ऊपरथी वर्तमान कृदंत 'लसकयन्ती' अने ते द्वारा 'लहकंती' नीपजे छे. अथवा विशिष्ट प्रकारना नृत्य माटे वपराता 'लास्य' शब्दने 'क' लगाडीए तो 'लास्यक' थाय. 'लास्यक'नुं नामधातु तरीकेनुं 'लास्यकयति' आनुं वर्तमानकृदंत 'लास्यकयन्ती' ते ऊपरथी पण 'लहकंती' पद आवे. मूळ बन्नेमां 'लस्' धातु समझवानो छे.

जोडंती–जोडती 'युक्त' ऊपरथी जुत्त–जुट्ट–जुड्ड–जोड–जोडंती. ए

जोडंती

रीते 'युक्त' मांथी 'जोड' धातु नीपजावी तेनुं वर्तमानकृदंत 'जोडंती.' हिंदीमां 'जोडवा' अर्थ माटे 'जुट' शब्द प्रचलित छे. आ कल्पना क्लिष्ट जणाती होय तो संबंधवाची ("यौड़ संबन्धे"–धातुसंग्रह भ्वादि०) 'यौड्' धातु ऊपरथी प्रा० 'जोड' अने तेनुं वर्तमान कृदंत 'जोडंती.' एम बन्ने रीते 'जोडंती' ने नीपजावी शकाय एम छे.

मने लागे छे के ''यौड्' धातु मौलिक नथी. ते पण 'युक्त' ऊपरथी आव्यो जणाय छे. धातुसंग्रहमां एवा वीजा घणा धातुओ छे जेओ भूतकृदंत ऊपरथी आवेला छे. सं० भृत–प्रा० भट, ते ऊपरथी 'भट–भृतौ' धातु. सं० पिष्ट–प्रा० पिट्ठ–ते ऊपरथी 'पीड' धातु. सं० ऋद्ध–प्रा० इद्ध. ते ऊपरथी 'एध्–वृद्धौ' धातु वगेरे. प्रसिद्ध भाषाशास्त्री महामहोपाध्याय श्रीमान विधुशेखर शास्त्रीजी 'केटलाक धातुओ भूतकृदंत ऊपरथी आवेला छे' एवो अभिप्राय धरावे छे अने तेमणे पोतानो ए अभिप्राय 'द्विवेदीस्मारक' लेखसंग्रहवाळा पुस्तकमां व्यक्त पण कर्यो छे. आ ऊपरथी भूतकृदंत द्वारा धातुओ बनाववानी पद्धति विशेष प्राचीन छे ते स्पष्टपणे मालूम पडे छे. आ पद्धति गुजराती वगेरे चालु भाषामां ज छे एम नथी परंतु संस्कारपूर्ण मनाती संस्कृत भाषामां पण ते, तरत ख्यालमां न आवे ए रीते ऊतरेली छे.

धीरिम

'धीरिम' पदमां अंत्यनो 'इम' भाववाचक प्रत्यय छे. धीरिम एटले धीरपणुं, मुणिस + इम–मुणिसिम–मनुष्यपणुं. आ 'इम' प्रत्यय घणो ज प्राचीन छे. अवेस्तामां मित्रता–दोस्ती–ना अर्थमां 'हखेमा' शब्द आवे छे. ते 'सखि + इमा' ऊपरथी आवेलो छे. (खोर० अ० पृ० १८४, शब्द अं० २९) ८–२–१५४ सूत्रमां हेमचंद्रे भाववाचक प्रत्ययोनी गणनामां आ 'इमा'ने पण नोंधेलो छे. संस्कृतमां ते 'इमन्' रूपे प्रसिद्ध छे.

मनावइ–मनावे छे. 'मन्' धातुनुं प्रेरक 'मानय' प्रा० 'मनाव.' ते ऊपरथी मनावइ. 'मन' एटले जाणवुं–मनाव–जणाववुं–समझाववुं. 'मनाव'नो प्रयोग 'मनाववा' अर्थमां रूढ थवाथी संकुचितार्थक छे, तेथी 'जणाववुं' एवा विशाळ अर्थमां ते न वपराय.

'मडप्फर' शब्द देश्य छे. तेनो अर्थ छे: अभिमान. (देशी० व० ६ गा० १२०) 'मडप्फर' लोकभाषानो शब्द छे एम हेमचंद्र कहे छे. (८-२-१७४)

'अच्छ' ऊपरथी 'आछ' एटले निर्मळ—अतिआछउ—अतिनिर्मळ.

आछुं

भाषामां बहु बारीक कपडा माटे 'आछुं' शब्द वपराय छे. संभव छे के ए 'आछुं' शब्द पण पूर्वोक्त निर्मळ अर्थवाळा 'अच्छ' ऊपरथी आव्यो होय अने ए पक्षे लक्षणाद्वारा अर्थसंगति घटमान छे. अथवा 'आ' साथेना 'छाद' अर्थात् ('आच्छाद'—ढांकवुं) 'आच्छाद' धातु साथे वस्त्रवाची 'आछुं' शब्दनो संबंध होय. अन्यथा बारीक कपडा माटेना 'आछा' शब्दनी व्युत्पत्ति शोधनीय रही.

सं० परिदधाति—प्रा० परिधाति—परिहाइ—पहिरेइ—ए रीते 'पहिरेइ'नी निष्पत्ति छे. 'परिधान' ऊपरथी 'परिहाण' अने व्यत्यय थतां पहिराण—पहिरण—ए रीते 'पहिरण' शब्द आवे, तेनुं सप्तमीमां—पहिरणि.

संथउ—सीमन्तकः ऊपरथी सीमंतओ—सीअंतउ—सींतउ—संथउ—सिथउ—सेंथो.

'बोरीयावडि'—एक प्रकारना वस्त्रनी जात छे. सं० 'बदर' नुं 'बोर'

बोरीयावडि

ए प्रा० उच्चारण छे. अने 'वडि' नुं मूळ 'पट' शब्दमां छे. आ जोतां जे कपडामां 'बोर'नी भात होय वा जे कपडामां सोनेरी कसबवाळां बोर—बोरियां—टांकेलां होय. ते कपडुं 'बोरियावडि' कहेवाय. प्रस्तुतमां 'बोरियावडि' शब्द 'कांचळी' माटे वपरायेलुं विशेषण छे: बदरिकापटी—बोरियांवडी. 'बदर' ना 'बोर' माटे जुओ (८-१-१७०). हंसनी भातवाळुं वस्त्र 'हंसवडि' अने गज—हाथी—नी भातवाळुं वस्त्र 'गजवडि' ने नामे ख्यात छे

(जुओ पृथ्वीचंद्रचरित्र पृ० १०३ प्रा० गु० का० सं०) भाषानुं 'बोरियुं' पद उक्त रीते 'बदर' ऊपरथी लाववानुं छे ते ख्यालमां रहे. बोर–बोरियुं के 'बदर' मां कदनुं साम्य छे माटे ज ते बे वच्चे संबंध साधी शकाय छे.

'वा' ऊपरथी प्रा० वाअंते–वायंते. 'वा'–वावुं.

'स्थापना' ऊपरथी 'थापणा' अने ते ऊपरथी 'थापण'. 'स्थापना' एटले स्थापित करवुं. ते अर्थ संकुचित थईने 'थापण' एटले मात्र धनमाल वगेरेनुं पोताने के बीजाने त्यां स्थापित करवुं.

'स्तबक' एटले गुच्छो. ते ऊपरथी 'थबक' भाषानो 'थोक' 'थोकडो' वगेरेनुं मूळ 'थबक'मां छे.

फाडेइ–मूळ सं० पाटयति, प्रा० फाडेइ. 'वच्चे बराबर बे भाग करे छे' एवो अर्थ अहीं 'फाडेइ' नो छे. 'सेंथो पाडवो' प्रयोग भाषामां प्रचलित छे. तेमां पण 'पाडवो' मां 'पत्' धातु न समझतां उक्त 'पाट' धातु समझवानो छे.

'कञ्चुक' ऊपरथी कञ्चुकिका. अंदरना 'क' ने बदले स्वार्थिक 'ल' लागतां कञ्चुलिका–कञ्चुलिआ–कांचली–कांचळी.

'तन्' एटले ताणवुं–विस्तारवुं. सं० तानयति. प्रा० ताणेइ. ते ऊपरथी 'ताडेइ'–ताणे छे.

'कंचोला' नुं मूळ देश्य 'कच्चोलय' मां छे. आ शब्द घणो प्राचीन छे. आठमा सैकामां रचायेली कुवलयमालाना आरंभमां जेनी नोंध छे एवा 'पउमचरिय'[२०९] जेवा प्राचीन ग्रंथमां पण ए शब्दनो उल्लेख छे. भाषामां तेने माटे 'कचोळुं' शब्द प्रसिद्ध छे. अर्थ जोतां एवो संभव छे के काच+पुटक–काचपुटक–

कचोळुं

२०९ जुओ 'कच्चोलय' शब्द–पाइअसद्द० ।

काचपुडय—काचपुलय—काचउलय—काचोलय—कचोलय. ए रीते ते शब्द आव्यो होय. बारमा सैकाना सुपासनाहचरियमां पण ते शब्द वपरायेलो छे. "कच्चोलयमुहमेत्तं" (सुपास० च० पृ० २०१—गा० ६५) आ जोतां आपणे त्यां काचनां पात्रोनी उत्पत्तिनो इतिहास विशेष प्राचीन जणाय छे.

गालमसूरियुं

'गालिमसूरा'नुं मूळ, देश्य 'गल्लमसूरिका' शब्दमां छे. 'गल्लमसूरिया' शब्द जैनसूत्र—जीतकल्पमां[३१०] वपरायो छे. प्रस्तुत 'गालिमसूरा'नुं मूळ 'गल्लमसूरिया' शब्द छे. अथवा 'गाल' माटे 'गल्ल' अने 'मसूरिका' माटे 'मसृणिका' ने योजी शकाय. 'मसृण' एटले 'कोमळ.' गाल माटे जे कोमळ होय ते 'गालमसूरियुं' ए रीते तेनी व्युत्पत्ति साधी शकाय. 'गल्ल' अने 'मसृण' ए बन्ने शब्दोने उपर्युक्त अर्थमां हेमचंद्रे पोताना कोशमां नोंधेला छे. (अभिधान० कां० ३, श्लो २४६ तथा कां० ३, श्लो० ७७). चालु भाषामां ते माटे 'गालमसूरियुं' शब्द सुप्रसिद्ध छे.

कूवडिय मूळ कूप स्त्री—कूपिका. प्रा० कूविया, 'ड' लागतां 'कूवडिया' ते ऊपरथी 'कूवडिय' एटले कूई.

माणवुं

'माणीजइ' एटले माणवुं—भोगववुं—अनुभववुं. देशीशब्दसंग्रहमां (वर्ग ६, गा० १३०) 'अनुभूत' अर्थमां 'माणिअ' शब्द नोंधेलो छे. एथी एम मालूम पडे छे के 'अनुभव' अर्थवाळो 'माण्' धातु देश्य छे. प्रस्तुत 'माणीजइ' क्रियापद आ 'माण' ऊपरथी लाववानुं छे अने भाषामां प्रचलित 'माणवुं' पद पण ए 'माण' मूलक छे.

'स्तंभ' ऊपरथी 'खंभ' (८—२—८) खंभ एटले खांभी—थांभलो.

---

३१० जुओ 'गल्लमसूरिया' शब्द—पाइअसद्द० ।

'हिंडोला'नुं मूळ देश्यपद 'हिण्डोलक' छे. "प्रेङ्खा हिण्डोलकाख्यः" (अभिधान कां० ३, श्लो० ४२२) कहीने आचार्य हेमचंद्र 'हिण्डोलक'ने 'प्रेङ्खा' नो पर्याय कहे छे. 'हिण्डोलक'नो अर्थ भाषाप्रसिद्ध 'हिंडोळो' छे.

'घाघरिं' नुं मूळपद देश्य 'घग्घर' छे. 'घग्घर' एटले घाघरो. "घग्घरं जघनस्थवस्त्रभेदः" (देशी० व० २, गा० १०७)

'मयमयंत' के 'मघमघंत' ए बन्ने पर्याय शब्दो छे. 'सुगंधना प्रसरण' अर्थमां ए पद वपराय छे. 'गंधनो प्रसार' ए अर्थे वपराता 'प्रसर्' धातुना पर्याय तरीके 'महमह' धातुने हेमचंद्रे आपेलो छे. (८–४–७८) "महमहइ मालइ." भाषामां प्रचलित 'मघमघवुं'नुं मूळ उक्त 'महमह' छे.

सं०—आहन्ति प्रा०—आहणए—आघात करे छे. सीधुं प्राकृत जेवुं पद पण भाषामां आवी गयुं छे.

'खड्ग' उपरथी 'खडग्ग' ते उपरथी तृतीयांत खडग्गिण—खड्गवडे.

मूं (मज्झ—मुज—मूं) + सिउ—मारी साथे.

'मलियउ'—मसळी नाख्यो. सं० 'मृद'ना पर्याय तरीके हेमचंद्र 'मल' धातुने नोंधे छे (८–४–१२६). ए 'मल' उपरथी 'मलिय' अने 'क' लगाडवाथी 'मलियउ.'

'अनेराकण्हइ' एटले बीजानी कने—पासे. आमांना 'कण्हइ' शब्दने

कने

केटलाक 'कर्ण' उपरथी लावे छे. परंतु 'कर्ण'नो 'पासे' अर्थ प्रतीत नथी, त्यारे 'कण्ठ' शब्द 'पासे'ना अर्थने स्पष्टपणे बतावे छे. "कण्ठो ध्वनौ संनिधाने ग्रीवायाम्" अनेकार्थ० कां० २, श्लो० १०१) ए जोतां 'पासे' अर्थवाळा

'कण्ठे' ऊपरथी 'कण्णे' थईने 'कण्हइ' आवी शके एम छे. 'कूवाने कांठे' वगेरे वाक्योमां तो सीधो 'कंठ' शब्द 'पासे' अर्थमां वपराय पण छे.

ओछो

'ओछउ' एटले ओछो. तुच्छ—उच्छ. अने ए ऊपरथी 'ओछउ' शब्द आव्यो होय अथवा ए कोई देश्य शब्द होय. 'न्यूनता'ना अर्थमां प्रश्नव्याकरण[३११] सूत्रमां 'उच्छत्त' (तुच्छत्व) शब्दने वापरेलो छे एटले 'तुच्छक' ऊपरथी 'ओछउ' लाववानी कल्पना बंध बेसे एवी छे.

'कने कानो का' मां जे अर्थमां 'कानो' शब्द छे ते अर्थमां प्रस्तुत 'कानइ' पद वपरायुं छे अने तेनुं मूळ 'कर्ण' छे. 'कर्ण' नो अहीं लाक्षणिक अर्थ लेवानो छे.

मात्रा

'मात्रा' नो अर्थ 'कानो मात्रा' प्रयोगमांना 'मात्रा' प्रमाणे समझवानो छे. मात्र, मात्रिं बन्नेनुं मूळ 'मात्रा' शब्द छे. 'मात्रा' नो प्रस्तुत अर्थ हेमचंद्र पोताना कोशमां पण आपे छे. "मात्रा परिच्छदे—अक्षरावयवे" (अनेकार्थ० कां० २ श्लो० ४३७) अर्थात् मात्रा एटले अक्षरनो अवयव—भाग.

'देवत्रन्दन, मां बे 'व' साथे आववाथी एक 'व' लोप पाम्यो छे एथी 'चैत्यवन्दन—चेइअवंदण—चीवंदण' नी पेठे 'देवंदण' पद नीपज्युं छे. देवकुल—देवउल—देउल वगेरेमां आ जातनो लोप छे अने तेने हेमचंद्रे बतावेलो पण छे:—(८—१—२६८—२७१)

संव० १३४० नुं उच्चारण 'मात्रिं' छे अने ए ज अर्थमां १३६९ नुं उच्चारण 'मात्र' छे. ए ज रीते १३४० नुं उच्चारण (संपुटकम्) 'सांपुडं, (संपुटिका) 'सांपुडी' छे, तेने बदले १३६९ नुं उच्चारण 'सांपडासांपडी' छे. जे चालु उच्चारणनी निकटनुं छे.

---

३११ जुओ 'उच्छ' पुं० [दे०]—पाइअसद्द०।

कमळी–पुस्तकना रक्षण माटे वपराय छे. ए दररोज वांचवाना पुस्तकने लपेटवाना खपमां आवे छे. कमळी के कवळी–

कवळी

कवळी बन्ने पर्याय छे. कमळी, वांसनी पातळी सळीओ अथवा पातळी चीपोने एक पछी एक गूंथवाथी बने छे. श्रीमान पुण्यविजयजीना कथन मुजब 'कम्बिकावली' के 'कम्ब्याली' (कम्बी+आली) ऊपरथी 'कमली' शब्द आव्यो छे. मारी समज्ञ प्रमाणे मूळ '[३१२]कम्बिका' छे. 'क' ने बदले स्वार्थिक 'ल' लागतां कम्बिका–कम्बकी–कम्वली ऊपरथी 'कमली' पद आवेलुं छे. 'कमली'मां 'ल' लाववा माटे 'आवली' के 'आली'नी कल्पना करवा करतां 'वीजळी' नी जेम स्वार्थिक 'ल'नी कल्पनामां विशेष लाघव छे.

अहीं जे 'अतिचार'ना ऊतारा आप्या छे ते खास कोई विशिष्ट ग्रंथ नथी, परंतु जैन परम्परामां नियत पाक्षिक सांध्यकर्म माटे स्वदोषालोचमनी जे क्रियाओ योजायेली छे, ते क्रियाओ करतां श्रावक–श्राविकाओए ए पाठोने बोलवाना होय छे. एथी ए अतिचारोनी भाषा तत्कालीन उच्चारण पद्धतिने पण समझावी शके एम छे. जेमके 'अंग'ने बदले 'आंग' 'गया'ने बदले 'ग्या' 'सज्झाय'ने बदले 'सज्याइ' 'पठितम्' ऊपरथी 'पढियं' अने तेने बदले 'पढ्यं' चालु 'पढ्युं'. 'विघ्न'ने बदले 'विघन.' 'वैरी'ने स्थाने 'वयरी.' 'पराया' (परकीय)ने बदले 'पिराया' इत्यादि.

जे प्रयोगो तळपदा छे तेमने तळपदी भाषामां लखनारा पुरातन कविओए पोतानी कवितामां एवा ज मूक्या छे अने वर्तमान कविओ पण एवां पदोने प्रयोजे छे.

---

३१२ "रिट्ठामईयो कंबिआओ"–"रिष्टरत्नमय्यौ कम्बिके पृष्ठके इति भावः"–रायपसेण० (गू० ग्रं०) पृ० २३७ पं० १।

'सारसंभाल' शब्द 'वारंवार स्मरण'ना भावने सूचवे छे. तेमां

सारसंभाळ

आवेलां 'सार' अने 'संभाल' ए बन्ने पदो 'स्मरण'ना अर्थने बतावे छे. 'स्मृ' उपरथी 'स्मार' अने ते द्वारा 'सार' तथा 'संस्मृ' उपरथी 'संस्मार' अने ते द्वारा 'संम्हार—संभाल' ए रीते 'सारसंभाल' पदनी उपपत्ति छे.

'पंचत्तालीस' एटले 'पीस्तालीश.' मूळपद 'पञ्च+चत्वारिंशत्' छे. ते उपरथी 'पंच+चत्तालीसा'. बे 'च' एक साथे आववाथी बोलवामां अगवड आवे छे माटे उच्चारण करतां एक 'च' आपोआप चाल्यो गयो, एटले प्रस्तुत 'पंचत्तालीस' पद आव्युं. ए ज रीते पञ्च+दश—प्रा० पण्णदह—पण्णरह अने ए उपरथी 'पन्नर' के 'पंदर'

'आ' एवा अर्थमां 'यउ' शब्दनो प्रयोग छे. हेमचंद्र 'आ' अर्थे 'आय' शब्दनो निर्देश करे छे (८—४—३६५) प्रस्तुत 'यउ' अने उक्त 'आय' ए बन्ने समान भासे छे: आय—आयउ—यउ.

'हमणाने' एवा अर्थमां 'हिवडातणइ' पद वपरायुं छे. 'हिवडा'ना मूळमां 'अधुना' पद छे. तेने संबंधसूचक 'तण' अने त्यार बाद 'सप्तमी'नो 'इ' लागवाथी 'हिवडा—तणइ' पद आवेलुं छे.

'दीर्घ'ना अर्थमां 'भारी' शब्दनो प्रयोग छे. चालु भाषामां पण 'दीर्घ'ने माटे 'भारे' प्रयोग प्रचलित छे. 'भृ' एटले 'धारण करवुं'. जेने धारण करवो पडे ते 'भार' अर्थात् बोझो. दीर्घ उच्चारण करतां उच्चारण करनार भार—बोझो अनुभवे छे, माटे 'दीर्घ' उच्चारणवाळा वर्णो 'भारी' के 'भारे' कहेवाय छे.

'उत्तान'—चत्तुं. ते उपरथी उत्ताणु. 'उत्तान'मां 'तन्' धातु

उत्ताणु

अने 'उत्' उपसर्ग छे. 'तन्' एटले प्रसरवुं—विस्तरवुं. जेनो विस्तार उपर तरफ होय ते उत्तान.

'थापणिमोसु' एटले आवेली थापणने चोरी लेवी अर्थात् कोई घरे आवीने थापण मूकी गयुं होय ते ज्यारे पाछुं थापण लेवा आवे त्यारे नामुकर जवुं तेनुं नाम 'थापणिमोसु'. 'थापणि' पदनी व्युत्पत्ति चर्चाई गई छे. 'मोसु' ना मूळमां 'मुष्' 'चोरवुं' धातु छे. 'मुष्' उपरथी भाववाचक नाम 'मोष' अने ते उपरथी 'मोसु'.

कूडो

कुडउ एटले कूडो–खोटो. कुडी एटले खोटी. मूळ शब्द 'कूट'[313] छे. ते उपरथी कूटक–कूडय–कूडउ अने स्त्रीलिंगे कुडी. 'कूट' शब्दना अर्थो आपतां हेमचंद्र लखे छे के "माया, दम्भ, अनृत अने तुच्छ वगेरे" (अनेकार्थसं० कां० २, श्लो० ८३) प्रस्तुतमां 'कूट' शब्दने 'अनृत'–जूठुं–असत्य–अर्थनो समझवानो छे.

वढवाड

विढाविढि एटले वढवाड के वढवेड. चालु 'वढवाड' के 'वढवेड' नुं मूळ 'विढाविढि' छे. संस्कृत धातुसंग्रहमां 'व्यधंच्–ताडने' (धातुपारा० पृ० १७२) अने वर्धण्–छेदन–पूरणयोः (धातुपारा० पृ० २५६) एवा बे धातुओ छे. 'व्यध्' उपरथी 'विध्'+आविध्–'विधाविध' ए उपरथी के 'वर्ध्' उपरथी वड्ढ+आवड्ढ–'वड्ढावड्ढ' ए उपरथी 'विढाविढि' के आजनुं 'वढवेड' वा 'वढवाड' पद आवेलुं छे. उपरनी व्युत्पत्तिमां अर्थ-संदर्भ अने वर्णपरिवर्तन ए बन्ने दृष्टि समुचितपणे रहेली छे अथवा 'विढाविढि' शब्द देश्य होय.

छानउ–छानुं–कोई न जाणे तेवुं. छन्नम्–छन्नकम्–छन्नयं–छन्नउं–छानउ–छानुं ए रीते ए पद आवेलुं छे. 'छन्न' नो धात्वर्थ 'ढांकेलुं' छे, परंतु अहीं तेनो ते अर्थ संकुचित करी तेने मात्र 'गुप्त' अर्थमां समझवानुं छे.

---

३१३ 'उवासगदसाओ' सूत्रमां 'कूडलेहकरणे' एवो प्रयोग मळे छे, तेमांनो 'कूड' शब्द 'खोटा' अर्थनो छे.

पाडइ–पाडे–पाडामां–महोल्लामां. मूळ शब्द 'पाटक' छे. तेनी चर्चा आगळ (पृ० ४१०) आवी गई छे.

'तूल' एटले तोलां. 'तुलण्–उन्माने' धातु ऊपरथी जे वडे तोल कराय तेवा अर्थमां 'तुला' शब्द आवे छे. प्रस्तुत 'तूल' नुं मूळ पण ए 'तुला' छे.

स्वप्नके–सिविणए–सिउणइ–एटले सोणे–स्वप्नमां. ए रीते 'सिउणइ' पद आवे छे.

'प्रति' ऊपरथी 'पति' एटले प्रत्ये–तरफ.

राडिभेडि–राडभेड–वढवाड. 'राडि'ना मूळमां 'राटि' शब्द छे.

राडभेड

'रट परिभाषणे' धातु ऊपरथी 'राटि' शब्द आव्यो छे. परिभाषण एटले कलह. 'राटि' शब्दने हेमचंद्र 'युद्ध' अर्थमां जणावे छे. (अभिधान० कां० ३, श्लो० ४६२–"राटिः समिति-संगरौ) देशीशब्दसंग्रहमां (व० ७ गा० ४) पण ए ज अर्थमां 'राडि' शब्दने नोंधेलो छे. 'भेडि' शब्द उक्त रीते 'व्यध्' ऊपरथी 'विढि' नीपजावी ते ऊपरथी लाववो जोईए अथवा 'भिद्' धातु ऊपरथी निष्पन्न थता 'भिदि' ऊपरथी 'भेडि' शब्द लाववो जोईए. चालु भाषामां 'गाळभेळ' मां जे 'भेळ' पद छे तेनो संबंध प्रस्तुत 'भेडि' साथे छे ए ध्यानमां रहे.

विराइउं–ठग्युं. विप्रतारितकम्–विप्पतारिअयं–विपतारिअयं–विआरिअयं (व्यत्यय) विराइअं–विराइउं ए रीते 'विराइउं' पदने लाववानुं छे.

पाडोसि–पाडोशमां. 'प्रति + वस्' धातुमां प्रस्तुत 'पाडोसि'

पाडोश

शब्दनुं मूळ छे. प्रतिवासे–प्रतिवासके–पडिवासए–पाडिवसए–पाडिउसए–पाडोसए–पाडोसि. 'प्रवचनम्'नुं प्राकृत 'पावयणं' 'प्ररोहः'नुं 'पारोहो' वगेरे (८–१–४४)

नीपजे छे, अने "घञ्वृद्धेर्वा" (८–१–६८) प्रमाणे 'वास'नुं 'वस' पण बने छे. तेनी पेठे अहीं 'प्रतिवास'नुं 'पाडिवस' समझवानुं छे.

'मापि' शब्द त्रीजीनुं एकवचन छे. मापि–माप वडे. 'मापित' शब्दने हेमचंद्र नोंधे छे. (देशी० वर्ग ८ गा० ४८) "'मा' माने" धातुने प्रेरणासूचक 'प' लगाडी ते द्वारा भाववाचक के करणवाचक 'माप' पद आवे छे. ते ऊपरथी मापेन–मापि. अहीं 'प'नो प्रेरणासूचक मूळ अर्थ तिरोहित थयेलो छे. 'माप' एटले 'माप करवुं' अथवा जे वडे माप कराय ते. अहीं 'माप'ने करणार्थक समझवानुं छे.

वोसिरावउ–'व्युत्सृज्' ऊपरथी प्रा० वोसिर (८–४–२२९) तेनुं प्रेरक 'वोसिराविओ' ते ऊपरथी 'वोसिरावउ'

ऊखल–सं० उदूखल–प्रा० उऊखल–ओक्खल–(–८–१–१७१ हे०)–ऊखल. "उदूखलम्–कण्डनभाण्डम्"–(अभिधान० कां० ४, श्लो० ८२) कण्डनभाण्ड एटले खांडवानुं साधन, आ 'उदूखल' शब्द देश्य जणाय छे.

वेचवुं

'वेचि' एटले खर्च करी. 'खर्च करवा' अर्थमां हेमचन्द्र 'वेच्चइ' (८–४–४१९) पद आपे छे. प्रस्तुत 'वेचि' ए 'वेच्चइ'मां वपरायेला 'वेच्च' धातुनुं संबंधक भूतकृदंत छे. 'वेच्चइ' नो अर्थ करतां दोधकवृत्तिमां 'व्ययति' पद मूक्युं छे. 'वि' साथेना 'क्री' धातुना 'विक्री' प्रा० 'विक्की' ऊपरथी 'क'नो 'च' थई 'वेच्चइ' पदनी निष्पत्ति छे. भाषामां 'वि + क्री'थी नीपजेलो 'विक्रय[३१४]–वकरो–वेचाण' शब्द सुप्रतीत छे. प्रस्तुतमां 'वापरवुं'–'खर्च करवो' अर्थ माटे लक्षणानो आश्रय लेवो पडशे.

---

३१४ भाषामां 'वेचवुं'ने बदले 'वेकवुं' क्रियापद पण प्रचलित छे.

चौदमा शतकना संग्रामसिंहनी बालशिक्षाना केटलाक प्रयोगो

१४७ चौदमी सदीना उक्त शब्दोनो परिचय आप्या पछी चौदमी सदीना 'संग्रामसिंह' नामना एक विद्वाने बनावेला 'बालशिक्षा' नामना ग्रंथ विशे थोडुं जणाववुं प्रस्तुत छे. संग्रामसिंह जाते श्रीमाल्वंशनो छे. तेमना पितानुं नाम ठक्कुर कूरसी अने पितामहनुं नाम साढाक. ग्रंथनी[३१५] प्रशस्तिमां रच्या साल १३३६ जणावेली छे एटले संग्रामसिंहनो चौदमो सैको अफर छे. ए ग्रंथकारे पोताना समयना संस्कृत भणनाराओ माटे ए ग्रंथ लख्यो छे, तेमां साथे साथे ग्रंथनी समझुती माटे ते समयनी भाषा पण वापरी छे. अने संस्कृत प्रयोगोने समझाववा तुलनात्मक रीते तत्कालीन शब्दप्रयोगोने योजेला छे एटले ते ग्रंथमांना केटलाक प्रयोगो चौदमी सदीनी भाषा विशे विशेष स्पष्ट प्रकाश नाखे एवा छे माटे ज हवे ते ग्रंथना प्रयोगोनो विचार करीश.

वर्तमानकाळ—कर्तरिप्रयोगने समझाववा ग्रंथकार, नीचेनां उदाहरणो आपे छे—करई, लियई, दियई. चालु भाषा—करे छे, ले छे, दे छे.

कर्मणि प्रयोग—

कीजई (कराय छे), दीजई (देवाय छे), लीजई (लेवाय छे).

कर्मणिप्रयोगने ग्रंथकार वक्रोक्ति कहे छे. (पृ० २६६)

विध्यर्थ—करिजे (करजे), लेजे, देजे.

आज्ञार्थ—करि (कर्य—कर), लई (ले), दई (दे).

---

३१५ "सतां प्रसादः स हि यद् मयाऽपि श्रीमालवंश्येन कृतिः कृतेयम् ।
साढाकभूठक्करकूरसिंहपुत्रेण षट्-त्रि-त्रियुतैकवर्षे" ॥
—(पुरातत्त्व पु० ३, अंक १, पृ० ४१)

आज्ञार्थ-विध्यर्थ-कर्मणि-कीजउ (कराओ), दीजउ (देवाओ), लीजउ (लेवाओ).

भूतकाळ-कीधउं (कीधुं-कर्युं), दीधउं (दीधुं), लीधउं (लीधुं) कालि कीधउं (काले कीधुं-ह्यस्तन भूत) आजु कीधउं (आजे कीधुं-अद्यतन भूत).

क्रियातिपत्ति-जई करत-(जो करत), जई लेत (जो लेत), जई देत (जो देत).

क्रियाति० कर्मणि-जई कीजत (जो करात), लीजत (लेवात), दीजत (देवात).

भविष्यकाळ-करिसिई (करशे), लेसिई (लेशे), देसिई (देशे), नही करई (नहीं करे), नही लियई (नहीं ल्ये), नही दियई (नहीं द्ये).

कर्मणि भविष्यकाळ-कीजिसिई (कराशे), लीजिसिई (लेवाशे), दिजिसिई (देवाशे), नही कीजई (नहीं कराय), नही लीजई (नहीं लेवाय).

श्वस्तन भविष्य-कालि करिसई (काले करशे).

आशीर्वाद-शत्रु जिणिसई (शत्रुने जीतशे), वर्ष शयु (सउ) जीविसई (वर्ष सो जीवशे).

केटलांक कृदंतो

कर्तरि-वर्तमान कृदंत-करतउ (करतो), लेतउ (लेतो), देतउ (देतो).

कर्मणि-,, ,,-कीजतउ (करातो), लीजतउ (लेवातो), दीजतउ (देवातो.)

कर्तासूचक—करणाहरु (करणहार—करनार), लेणाहरु (लेवणहार—लेनार), देणाहरु (देवणहार—देनार),

भूतकृदंत—कीधउं (कीधुं—कर्युं), दीधउं (दीधुं), लीधउं (लीधुं.)

संबंधकभूतकृदंत—करीउ (करी—करीने), लेउ (लई—लईने). देउ (दई—दईने).

हेत्वर्थकृदंत—करिवा (करवा—करवा माटे), लेवा (लेवा), देवा (देवा), करी जाणुं (करवा माटे जाणुं).

भाषामां ' लखी जाणुं ' ' बोली जाणुं ' वगेरे प्रयोगो सुप्रतीत छे. पढी सकउ (भणवा माटे शकुं—शक्तिवाळो छुं—भणी शकुं छुं).

विध्यर्थ कृदंत—करिवउ (करवुं—करवा जेवुं), लेवउ (लेवुं—लेवा जेवुं), देवउ (देवुं—देवा जेवुं).

ऊपर जणावेलां उदाहरणोमां ते काळना कर्तरिप्रयोगो अने चालु कर्तरिप्रयोगोमां नहीं जेवुं अंतर छे. फक्त कर्मणिप्रयोगोमां विशेष भेद छे. ते समये पण भूतकाळ माटे कर्मणिप्रयोगनो उपयोग थतो, आजे पण तेम ज छे. तेथी भूतकाळना कर्मणिप्रयोग साथे भेद नथी ए ध्यानमां रहे. ऊपर जणावेलां ' करई ' वगेरे प्रयोगोमां अंत्य ' ई ' दीर्घ छे. तेनुं कारण अंत्यनुं उच्चारण दीर्घ थतुं होय एम लागे छे परंतु हवे पछी आवनारां क्रियापदोनां पदो जोतां अंते दीर्घ उच्चारणनी पण अनियतता जणाय छे.

संव० १३३० अने १३६९ मां लखवामां आवेला अतिचारना ऊतारामां ' सर्वू मृषावादु ', ' सर्वू लोभु 'वगेरे प्रयोगोमां ' सर्वू ' नो ' ऊ ' दीर्घ छे अने—वादु, लोभु वगेरेनो अंत्य ' उ ' ह्रस्व छे एटले जोडणीनी नियतता कळाती नथी. ऊपर जणावेला संबंधक, हेत्वर्थ अने विध्यर्थ कृदंतने लागेला प्रत्ययोनी चर्चा आगळ आवी गई छे.

१४८ हवे संग्रामसिंहे ते समयनी भापानां जे केटलांक नामो, अव्ययो, क्रियापदो वगेरे आप्यां छे तेमांथी अमुक पदोनी अहीं वर्तमान चालु शब्दो साथे तुलना करी आ चौदमा सैकानी भापा विशेनुं विवेचन पूरुं करीश.

आजु (आज)	वळीउ (वळीने)
परम (परम—परमदिवस)	एतलुं (एटलुं)
अजूणउं (आजनुं)	जेतलुं (जेटलुं)
काल्हणउं (काल्हनुं—कालनुं)	तेतलुं (तेटलुं)
हिवडां (हमणां)	केतलुं (केटलुं)
नही त (नहीं तो)	धुरिलुं (धुरनुं—पहेलुं)
लिगई (लगी—कालथी लईने अथवा अहींथी—अहीं लगी)	अहुणउ (ओणनुं)
	जानावासउ (जानीवासो)
यिम (जेम)	अउडक (ओडक—'शाह' वगेरे)
तिम (तेम)	चांद्रिणु (चांदरणुं)
एकवार (एकवार)	वादलुं (वादळुं)
सवईवार (सवेवार-सर्ववार—वर्वीवार)	फुईहाईउ (फईनुं)
जहिंयं (जइ—ज्यारे)	कऊसीउं (कोशीशुं—गढनुं कांगरुं)
तहिंयं (तइ—त्यारे)	छेतारिउ (छेतर्यो)
कीहां (क्यां—कहीं—कइ)	भोगला (भोगळ)
जीहां (ज्यां—जहीं—जइ)	झटकइ (झटके—झट)
तीहां (त्यां—तहीं—तइ)	जूउ (जुदुं)
सगलइ (सघळे—सर्वत्र)	ताहरुं (तारुं)
अम्हारउं (अमारुं)	माहरउं (मारुं)
सरीपउ (सरखो)	तुम्हारुं (तमारुं)

अम्ह सरीषउ (अम सरखो)
तू सरीषउ (तुं सरखो)
मू सरीषउ (हुं सरखो–मुं सरखो)
बाहिरि (बाहिर–बहार)
छहिलउं (छेल्लुं)
पुरु (पोर–गयुं वर्ष)
उसीआलुं (ओशीयाळुं)
भूराइ (भूराइ–भडकती)
द्रडबडाहिउ (दबडाव्यो)

आहरजाहर (आवजाव–अवरजवर)
मेराइउ (मेरायुं)
उपवासीउ (उपवासीयो–उपवासी)
मसिहाईउ (मसियाइ–माशीतुं)
वलवलीउ (वळवळीयो–हल हल करनार–बोलबोल करनार)
कांकसी (कांचकी)
षाणउ (खाणियो)
ओलाणि (ओलवाण)

आरंभई (आरंभे छे)
बोलइ (बोले छे)
बूझइ (बूझे छे)
खाअइ (खाय छे)
थोभई (थोभे छे)
सीषई (शीखे छे)
विचारइ (विचारे छे)
कहइ (कहे छे)
सोहइ (सोहे छे)
आवइ (आवे छे)
ऊगइ (ऊगे छे)
त्रासइ (त्रासे छे)
त्रुटइ (त्रुटे छे)
आपइ (आपे छे)
राषइ (राखे छे)
सांभरइ (सांभरे छे)

ऊपजइ (ऊपजे छे)
नीपजइ (नीपजे छे)
बालइ (बाळे छे)
पीअइ (पीए छे)
मुलइ (मोळे छे–शाक मोळे छे)
सुहाइ (सुहाय छे)
करडइ (करडे छे)
काटइ (काटे छे)
वींछलइ (वींछळे छे)
संधूषइ (संधूके छे)
चिणइ (चणे छे)
ऊजालइ (ऊजाळे छे)
चूयइ (चूवे छे)
भेटइ (भेटे छे)
सेवइ (सेवे छे)

नासइ (नासे छे)
जिमइ (जमे छे)
भीषई (भीखे छे)
जाणई (जाणे छे)
विणसइ (वणसे छे)
अच्छइ (छे, ऊभो छे, विद्यमान छे, वेठो छे)
जाइ–(जाय छे)
निकलइ (नीकळे छे)
आथमइ (आथमे छे)
हालइ } (हाले छे)
चालइ } (चाले छे)
पूजइ (पूगे छे–पूरे छे)
वरसइ (वरसे छे)
घासइ (घासे छे –घसारो खमे छे)
वीनवइ (वीनवे छे)
नाहइ (नहाय छे)
वीषरइ (वीखरे छे)
वापरइ (वावरे छे–वापरे छे)
वांधइ (वांधे छे)
सूंघइं (सूंघे छे)
बलइ–(वळे छे)
समारइ (समारे छे)
विढइ (वढे छे)

भावइ–(भावे छे–फावे छे–गमे छे)
परिणइ–(परणे छे)
खण्डु [खंजु] हालइ (खंजवाळे छे)
फिरइ–(फरे छे)
निरषइ (निरखे छे–नरखे छे)
परषइ (परखे छे)
वुहारइ (वोरे छे–वाळे छे)
ताणइ (ताणे छे)
वींटइ (वींटे छे)
धूणइ (धूणे छे)
कलकलइ (ककळे छे)
दिअइ (दे छे)
ऊडइ (ऊडे छे)
मरदइ (मरडे छे)
वघारइ (वघारे छे)
ऊकलइ (ऊकळे छे)
लुहइ (लुए छे–साफ करे छे)
उ [ओ] ढइ (ओढे छे)
मनावइ (मनावे छे)
लहइ (लभते–पामे छे)
ढीलइ (ढीलं–शिथिल–थाय छे)
ढांकइ (ढांके छे)
छणइ (छणे छे–छिणे छे)
आंजइ (आंजे छे)

सांभळइ (सांभळे छे)
लांपइ—(नांखे छे)
धोअइ (धोवे छे)
पुढइ (पोढे छे)
चूंटइ (चूंटे छे)
हुअइ (होय छे)
थीजइ (थीजे छे)
भींजइ (भींजे छे)
वाधइ (वधे छे)
सूअइ (सूए छे)
वलइ (वळे छे)
द्रउडइ (दोडे छे)
मींचइ (मींचे छे)
कुरमाइ (करमाय छे)
ऊंजइ (ऊंजे छे—ऊंगे छे)
ऊघडइ (ऊघडे छे)
षूंदइ (खूंदे छे)
धूजइ (ध्रूजे छे)
काढइ (काढे छे)
चडइ (चडे छे)
मोकळइ (मोकळे छे)
मांजइ (मांजे छे)
लिअइ (गृह्णाति—ले छे)
खिरइ (खरे छे)
ताच्छइ (तासे छे)
च्छोलइ (छोले छे)
चाटइ (चाटे छे)
पालटइ (पालटे छे)
फटइ (फटाय छे—फाटे छे)
ऊपेलइ—(ऊखेळे छे)
पल्हालइ—(पलाळे छे)
लेअइ (नयति—लई जाय छे)
जोअइ (जोवे छे)
पोत्रइ (खोतरे छे)
चोपडइ (चोपडे छे)
गूंथइ (गूंथे छे)
वइसइ (वेसे छे)
संझोरइ (संझेरो करे छे—दुकान वधावे छे)
सूजइ (सूजे छे—सोजो आवे छे)
चूकइ (चूके छे)
वाजइ (वजाडाय छे—वाजे छे)
खाजइ (खवाय छे—खाय छे)
जणाइ (जणाय छे—जाणे छे)
कराइ (कराय छे—करे छे)
त्रूटइ (त्रूटे छे)
वषाणइ (वखाणे छे)

छ्विवइ (छ्वे छे)	नीमटइ (नीमटे छे—निवर्ते छे)
परवारइ—(परवारे छे—पार करे छे—पूरुं करे छे—भूत० परवार्या—पार पाम्या—पूरुं करीने ऊठ्या)	चांपइ—चांपे छे
	ऊळपइ—(ओळखे छे)
	गंधाअइ—(गंधाय छे)
	छेकइ (छेदे छे—छेके छे—चेके छे)
फडफडइ (फडफड थाय छे)	राचइ (राचे छे—रचाय छे)
नाथइ (नाथे छे)	दाझइ (दझाय छे—दाझे छे)
ऊपडइ (ऊपडे छे)	वगेरे

१४९ संग्रामसिंहे जणावेला ऊपरना शब्दोथी जोई शकाय एम छे के चौदमा सैकाना पूर्वार्धनी गुजराती भाषा अने चालु गुजराती भाषा वच्चे शाब्दिक अंतर घणुं ओछुं छे. भलु, भली, भलुं ए त्रण उदाहरण संग्रामसिंह त्रण जातिने समझवा माटे आपे छे. स्त्रीजातिनुं अने नान्यतरजातिनुं रूप तो ते भाषामां अने वीसमा सैकानी भाषामां तद्दन सरखुं छे. नरजातिनुं रूप वर्तमानमां 'भलो' प्रचलित छे. ए उपरांत ते भाषामां क्रियापदो साथे 'छे' उमेरवानी पद्धति नथी जणाती. वळी, ते समयनी भाषानां शब्दो अने क्रियापदोमां ज्यां 'ल' छे, त्यां चालु भाषामां 'ळ' प्रचलित छे.

अत्यार सुधीमां तेरमा अने चौदमा सैकानी कृतिओना शब्दो विशे जे विवेचन कर्युं छे अने तेमनी जे यादी ऊपर आपी छे ते ऊपरथी ते शब्दोनुं वलण आपणा तरफनुं स्पष्टपणे मालुम पडे छे, संग्रामसिंहना शब्दोनी सामे में जे काउंसमां हालनुं गुजराती रूप आप्युं छे ते ज तेनो प्रत्यक्ष पुरावो छे.

१५० आशरे चौदमा सैकाना अंतनी वा पंदरमा सैकाना आरंभनी के त्यार पछीनी जणाती एक इस्लामी कविनी कृतिनो परिचय आपी हवे पन्दरमा सैकानी कृतिओ तरफ आपनुं ध्यान खेंचुं छुं.

संदेशक रासना शब्दो

संदेशक रास———कर्ता–अद्दहमाण [मुसलमान–अब्दल रहमान–अब्दुल रहेमान]

सिरिया–सरज्यां	कुलि–कुले–कुळमां
काया–कायला–कागडा	रासउ–रास
करकरायंतु–'का का' करे	भासीअइ–भाषाय छे–कहेवाय छे
गंगा–गंगा नदी	सुदवच्छ–सदयवत्सनी कथा
वाडि–वाड	नलचरिउ–नलचरित
विलग्गा–वळगेली	रामायण–रामायण
तुंबिणी–तुंबडी	कयवर–कविवर
गामगहिल्ली–गामनी घेली–गामडानी घेली स्त्री	करंतिय–करती–करंती
ताली–ताळी	वाडइहिं–वाडे–वाडामां
दुद्ध–दूध	मूलत्थाणु–मूलतान (?)
खीरी–खीर	तिह हुंतउ–त्यांथी
कुक्कस–कुशका	हउं–हुं
रब्बडिया–राबडी	लेहउ–लेख
मुक्खु–मूरख	खंभाइत्तिहिं–खंभातमां–खंभात तरफ
अंगुट्ठि–अंगुठे	आएसियउ–आदेशित–आदेश पामेलो
बोलाविअउ–बोलाव्यो	एय–ए
जाइसि–जाय छे	वयण–वेण

तुह—तुं
आइयउ—आव्यो
हिव—हवे
चउवेइहि—चतुर्वेदिओ वडे—चोवा-
ओए—चोवाओ वडे
वेउ—वेद
पुसवि—पूंछीने—साफ करीने—
भूंसीने—लुईने
नयण—नेण
वज्जरिउ—कह्युं
पहिय—पै—पथिक
तणु—तन
णामि—नामे
जज्जरिउ—जर्जरित
अच्छइ—छे
महु—मारो
णाहु—नाथ
उल्हाव—ओलववुं—शांत करवुं
गम्मियउ—गमियो—गयो
आयउ—आव्यो
संनेहडउ—संदेश
हउ—हुं
कहणह—कथन माटे—कहेवा माटे
एकतु } एक
वलियडइ } वलोयामां

सासु—श्वास
दीहुन्हउ—दीर्घ अने उष्ण
गग्गिर—गळगळी
थरहरीअ—थरहरी
रुइवि—रोईने
बाहडी—बांह
समाइ—समाय
जं किं पि—जे कांई
जंपिव्वउ—जंपवुं—कहेवुं
जाइव्वउ—जावुं—जवुं
जिण—जेणे
घल्लिआ—घाली—नाखी
अत्थलोहि—अर्थना लोमे
इक्कली—एकली
मिल्हीआ—मेली
संदेसडउ—संदेशडो
तुह—तुं
उत्तावलउ—उतावळो
झूरंति—झूरंती—झूरती—खेद करती
भणो—भणो—कहेवुं
हरि गउ—हरि गयो—लई गयो
तक्खरु—तस्कर—चोर
वेवि—बेई
हत्थ—हाथ
कहणुं—कह्युं

जाइ—जाय	कसु—कोना
जाउ—जाउं	भणो—कहो
सरणि—शरणे	पिक्खइ—पेखे—जुए

[भाई मधुसूदन मोदीनी पासे 'संदेशकरास'ना आरंभना थोडा भागनी नकल हती, आ शब्दो में तेमांथी उतारेला छे. भारतीय विद्याभवननी मुद्रित प्रत अने उक्त नकलमां क्यांय क्यांय पाठफेर छे.]

१५१ उक्त 'संदेशकरास' के 'संनेहयरास'[३१६]नी पूर्ण पोथी हजु सुधी 'संदेशक-रास'नी हुं मेळवी शक्यो नथी. ए रासनी गाथाओ अपभ्रंश भाषा एटले ऊगती गुजरातीमां लखायेली छे, ए हकीकत रासनी गाथाओ ज कही आपे छे. रासमांनी ऊगती गुजरातीनो

---

३१६ प्रस्तुत रासने आचार्यश्री जिनविजयजी भारतीय विद्याभवन (मुंबई) द्वारा प्रकाशित करवाना छे. एना बधा फरमा तेमणे मने वांचवा आप्या छे. ए फरमाओमां मूलरास उपरांत तेनी ऊपरनुं टिप्पण तथा अवचूरिका पण सामेल छे. आखो रास वांच्या पछी ते विशे अहीं जे जणाव्युं छे ते करतां थोडुं विशेष निवेदन करवानुं छे अने ते संक्षेपमां आ प्रमाणे छे:

कर्ता—रासकारे रासमां पोतानुं नाम 'अद्दहमाण' ("तह तणओ कुलकमलो + + + अद्दहमाणपसिद्धो"–गा० ४, पृ० २) जणावेलुं छे. टिप्पणकारे अने अवचूरिकाकारे ते माटे 'अब्दल रहमान' शब्द वापर्यो छे. ("अब्दल रहमान नामा"–टि० "अब्दल रहमानः अभूत्"–अवचू० पृ० २)

कुल—रासकारे पोताना कुल-वंश-माटे 'कोलिय–कौलिक' शब्द वापर्यो छे. भाषामां जे जातने 'कोळी' कहेवामां आवे छे ते जातसूचक 'कोळी' शब्द अने प्रस्तुत 'कोलिय' ए बन्ने आम तो मळता शब्दो छे; परंतु अर्थदृष्टिए ए बन्ने

शब्दो एक छे के केम ? ए विचारणीय खरुं. रासना टिप्पणमां 'कोलिय' शब्द ऊपर कशी नोंध ज नथी त्यारे अवचूरिकामां ("कौलिकेन तन्तुवायुना"–पृ० ८) 'कौलिक'नो अर्थ 'तन्तुवाय' कर्यो छे. 'तन्तुवाय' एटले वणकर–कुळाहो. भारतवर्षना प्रखर क्रान्तिकार भक्तराज श्रीकबीर, उच्चप्रतिभावाळा कवि हता अने धंधे वणकर हता तेम प्रस्तुत रासकार, विशिष्ट प्रतिभावाळो कवि होई धंधे वणकर हतो; ए परिस्थिति भारतवर्षमां नवाई पमाडनारी नथी. अहीं सोनी अखो पण कवि थई गया छे अने प्रायः गमे ते धंधो करवा छतां अहींनुं मानस, प्रतिभारहित रह्युं नथी. आ रास वांचतां कविनी प्रतिभा विशे शंका पण रहेती नथी.

देश—रासकार पोताना देश विशे कोई स्पष्ट वात करता नथी; परंतु ("पच्चाएसि पहूओ पुव्वपसिद्धो य मिच्छदेसो त्थि"–गा० ३, पृ० २) एम कहीने मोघम रीते 'म्लेच्छदेश'ने पोतानो देश जणावे छे अने साथे उमेरे छे के ए 'म्लेच्छ देश' पश्चिम दिशामां आवेलो छे अने प्रधान छे तथा पूर्वकाळथी सुप्रसिद्ध छे. टिप्पनकार तथा अवचूरिकाकार पण आ बाबत आथी वधारे कशुं ज बोलता नथी. प्रस्तुतमां 'म्लेच्छ देश' एवा अस्पष्ट शब्दथी रासकारना देश विशे कशी खास माहिती सांपडती नथी. संभव छे के रासकारना समये 'म्लेच्छ देश' शब्द, कोई विशेष देशनुं नाम होय; परंतु वर्तमानमां तो ए पद, कोई विशेष देशने सूचवतुं नथी.

पिता—रासकार, पोताना पितानुं नाम 'मीरसेन' जणावे छे. ("आरद्दो मीरसेणस्स तह तणओ"–गा० ३–४, पृ० २–३) 'आरद्दो' ए मीरसेननुं विशेषण छे. अने ए 'आरद्दो' पद–मीरसेनना जाति–वंशनुं द्योतक छे. टिप्पनकार अने अवचूरिकाकार बन्ने 'आरद्दो' नो अर्थ 'तन्तुवाय–वणकर' करे छे. ("आरद्दो देशीत्वा[त्] तन्तुवायो मीरसेनाख्यः तस्य मीरस्य "मीरसेनस्य" तनयः"–पृ० २–३) रासकार, वंशपरंपराथी 'वणकर' होय, एम आ ऊपरथी लागे छे. 'मीरसेन' नाम ऊपरथी एवी पण कल्पना ऊठे छे के 'रासकार' अने वर्तमानमां काठियावाडमां वसती शूरवीर जात 'मेर' ए बे वच्चे कांईक संबंध होय, आ बाबत जरूर शोधनीय छे.

समय—रासकारे पोताना समय विशे कशी माहिती आपी नथी; परंतु टिप्पनकारे पोतानो समय विक्रम संवत् १४५६ एटले पंदरमा सैकानो मध्यकाल

स्पष्टपणे जणावेलो छेः ("श्रीमद्-देवेन्द्रशिष्यः शर-रस-युग-भू-वत्सरे वृत्तिमेताम्। लक्ष्मीचन्द्रः चकार अखिलगुणनिचयः सूरयः सो (शो) धयन्तु"-पृ० ९०) अर्थात् "देवेन्द्रना शिष्य लक्ष्मीचन्द्रे १४५६ ना विक्रम वर्षमां आ वृत्ति बनावी छे. मूळ रास बन्या पछी आ टिप्पन, पचास वर्ष पछी बन्युं होय एवी संभावना करीए तो रासकारनो समय मोडामां मोडो चौदमा शतकनो प्रांतभाग वा पन्दरमा शतकनो प्रारंभ कल्पी शकाय अने बीजुं कोई बाधक वा साधक प्रमाण न मळे त्यांसुधी प्रस्तुतमां रासकारना समय विशे करेली अटकळ असंगत जणाती नथी. अथवा एम पण बनवाजोग छे के रासकार अने टिप्पनकार, ए बन्ने समसमयी पण होय.

भाषा—संदेशकरासनी भाषा, चौदमा अने पंदरमा सैकानी अहीं आपेली बीजी कृतिओनी भाषा जेवी ज विशुद्ध अने सरळ ऊगती गुजराती छे. तेमां केटलांक एवां विलक्षण उच्चारणो छे जेने लीधे ज ते, नवा वांचनारने अपरिचित जेवी लागे एवी छे. व्याकरणनी दृष्टीए पण रासनी भाषा अने चौदमा-पंदरमा सैकानी कृतिओनी भाषा-ए बे वच्चे खास अंतर जणातुं नथी, फक्त रासनी भाषा खास लौकिक अने प्रांतिक होई तेमां व्याकरणनुं तंत्र विशेष ढीलुं जणाय छे अने ए ढीलाश ज रासना केटलाक प्रयोगोमां प्रतिबिम्बी रही छे. रासकारे, आ पोतानी कृतिमां केटलाक शब्दो पोताना प्रांतना वापरेला छे, जेमने टिप्पनकारे तथा वृत्तिकारे 'देश्य' तरीके जणावेला छे. तेमांना कोई कोई शब्द फारसी जेवा पण जणाय छे. रासकारे वापरेला विलक्षणध्वनिवाळामांनां अने प्रांतिक शब्दोमांनां केटलांक, उदाहरणरूपे आ नीचे आपुं छुंः

प्रचलित उच्चारण:	रासकारनुं उच्चारण:
'( )' आ निशानमां मूकेला शब्दो अर्थसूचक छे	
धाम	पृ० ७७ ह्राम-(तेज)
पल्लंक	पृ० ७६ पल्लंघ-(पलंग)
सामी	पृ० ३८ साइअ-(सांइ-स्वामी)
धूमिण	पृ० ७८ धूइण-(धूमाडा वडे)
धूविज्जइ	पृ० ७७ धूइज्जइ-(धूपाय छे)
पउत्त / पजुत्त	पृ० ८८ पउक्क-(प्रयुक्त)

निवेसिय	पृ० ७७ निवेहिय–(निवेशित)
वरिसणेण	पृ० ३३ वरिहणेण–(वर्षणवडे)
जिम, जिवँ	पृ० ६५ यव –(जेम)
वण्णीहिय	पृ० ५८ वव्वीहिय–(वर्षैयाओ वडे)
तामिस्स, तामीस	पृ० २० तामिच्छ–(अंधकार–काजळ)
मम्मह, वम्मह	पृ० ३२ मणमत्थ–(मन्मथ–कामदेव)
पचल्लिर	पृ० ५५ पहल्लिर–(हल्या करतुं–हलहल करतुं–चंचळ)
कण्णियइ	पृ० ५१ करण्यियइ–(खरपाय छे–कळपाय छे–कपाय छे–घसाय छे)
आउल, आकुल	पृ० ३६ — आ रूपो 'व' श्रुतिवाळां छे — आवल–(आकुल)
केयइ, केतइ, केतगि	पृ० ७६ — आ रूपो 'व' श्रुतिवाळां छे — केवइ–(केतकि)
चायियिहि, चायइहि	पृ० ५५ — आ रूपो 'व' श्रुतिवाळां छे — चावइहि–(चातकोवडे)

नीचेना रूपोमां रासकार 'ए' नो 'अ' अने 'ऐ' नो 'अय' उच्चार करे छे:

(रासकारनां आ उच्चारणो खास ध्यान आपवा जेवां छे अने तेनां आवां उच्चारणोनुं कारण पण शोधवा जेवुं छे. फारसी: 'झहर' 'गैर' 'पैगंवर' शब्दोनां आपणां चालु 'झेर' 'गेर'–(गेरसमझ) 'पयगंवर' उच्चारणो अने रासकारनां आ उच्चारणो सरखाववां जेवां छे)

रुन्नयेण	पृ० २८ रुन्नयण–(रुदितकेन–रोवावडे)
कहिययेण	पृ० ३६ कहियअण–(कथितकेन–कहेवावडे)
–रहिययेण	पृ० ३६ –रहियअण–(रहितकेन–रहितवडे)
शैलजा–सेलजा, सइलजा	पृ० १७ सयलज्ज–(शैलनी जाई–पुत्री–पार्वती)

नीचेना भाषा-शब्दो पण भाषाना इतिहासनी दृष्टिए समझवा जेवा छे:

पृ० ८१ पच्छुत्ताणिय–(पत्ताणी)

पृ० ८२ साव
पृ० ८५ सवि } –(सर्व–सव)
पृ० ४३ सिव

पृ० ८९ वट्टाउ–(वटेमार्गु)

पृ० ७८ इम–(एम)

पृ० ७१ दीवालिय–(दीवाओनी ओळ –दीवाळी

नामधातु { पृ० ६८ तिलक्किवि–(टीलीने–टीलुं करीने) पृ० १२ सरलाइवि–(सरळ थईने-सरळ करीने) }

पृ० ५८ मावइ–(मावे छे–माय छे)

पृ० ४४ सुन्नारह–(सोनारनी-सोनीनी)

पृ० ७६ विच्छाइया–(वीछाया–विछावेला

पृ० ३१ वलियडइ–(वलोयां)

पृ० २९ मन्नाइ–(मनाव)

पृ० ९० अचिंतिउ–(ओचिंतु)

पृ० ७६ फोफल–(पूगफल–सोपारी)

पृ० ७१ कुंडवाल–(कुंडाळुं वळीने)

पृ० ६६ जलरेल्ल–(जलनो रेलो–प्रवाह)

पृ० ५८ पउदंडउ–(पगदंड–केडी)

पृ० ५७ उल्हवइ–(ओलवे छे)

पृ० ४० वोलियंतो–(वोळातो)

पृ० ७६ उयारइ–(अपवरके–ओरडे)

पृ० ३१ वाहडी–(वाहु–वांय)

पृ० १२ उत्तावलि–(उतावळ)

रासकारे वापरेलां केटलांक अव्ययो :—

पृ० ३८ किहु–(कशुं)

पृ० ३६ कि–(के)

पृ० ११ अरु–(ओर)

पृ० ५१ कइयलग्गि–(क्यां लगी)

रासकारे वापरेला केटलाक प्रांतिक शब्दो :

पृ० २३ पिंग–(पान खाईने 'थूंकेला रस' अर्थे आ शब्द वपरायो छे. 'थूंक नाखवा'ना पात्रनुं नाम 'पीकदान' प्रतीत छे. ए 'पीकदान' नो 'पीक' अने प्रस्तुत 'पिंग' ए बन्ने सरखां जणाय छे. मारी स्मृति प्रमाणे 'थूंक' माटे वपरातो 'पीक' शब्द फारसी छे.)

पृ० २३ चंवा–(चंपल–जोडा. सं० चर्म–प्रा०–चम्म. प्रस्तुत 'चंवा' नो संबंध 'चम्म' शब्द साथे होई शके. अमारी शेठ लालभाई दलपतभाई आर्ट्स् कॉलेजना पठाणे कहेलुं के पंजाबमां

केटलेक ठेकाणे 'जोडा' अर्थ माटे 'चंचा' शब्द वपराय छे.)

पृ० ११ लक्क-(लंक-कटी-कड-केउ. स्त्रीने 'सिंहलंकी' कहेवामां आवे छे. 'सिंहलंकी' एटले सिंह जेवी पातळी कडवाळी. आ माटे नीचेना संवादो मळ्या छे:—

" सीहलालंकीनो घर ऊतर्यो वाडीए रे
हुं तो शेने रे मसे जोवा जाउं रे "! (मुखगीत सौ० अजवाळी पंडित)
" लोलागळ लांकाळ गूंज छ तुं मोदळने गढे,
(त्यां तो) सिंगळदीप सोंडाळ कंपवा लागे कवटाउत ! "—
(रा० मेघाणीजी-सोरठी बहारवटीआ भाग २, आ० ४, पृ० २०६)

" जोर इतनो कीयो के लंक लचकी गई "—(रा० लोगाभाई गीगाभाई)

रा० मेघाणीजीनी 'रढीआळी रात' भा० २, पृ० १२५ आ० ४, गीत ९७, तथा 'सोरठी गीतकथाओ' पृ० १२, दुहो २९, समस्या १ ली-ए बन्ने स्थळे पण 'लंक' शब्द 'कटी' अर्थमां वपरायेलो छे.

मारा मित्र पं० हसराजजी पंजाबी जैन, एम. ए. (अध्यापक गुजरात विद्यापीठ) कहे छे के पंजाबी भाषामां 'कटी' अर्थ माटे 'लक' शब्दनो व्यवहार छे.)

पृ० २३ झसुर-(तांबूल-तंबोल-नागरवेलनुं पान. आ शब्दने देशी शब्दसंग्रहमां आचार्य हेमचंद्रे नोंधिलो छे:—" झसुरं तंबोल-ऽत्थेसु " गा० ६१, वर्ग ३ " झसुरम् ताम्बूलम् अर्थश्च " अर्थात् 'झसुर' एटले तंबोल अने धन "

पृ० ५५ झंखह }
पृ० ७८ झखड } -('डुडुंयालक' अथवा 'डुंडयालक' नामनो एक खास प्रकारनो पवन छे, जे वाय छे त्यारे विरहिणी स्त्रीओने त्रास थाय छे.-अवचूरिका तथा टिप्पनक) आ

'डुडुंयालक' वा 'डुंडयालक' पवन विशे बीजी कशी माहिती नथी.

पृ० २ आरद्द-(तन्तुवाय-वणकर)

पृ० ३५ पडिल्ली-(अधिक)

पृ० ८१ उवाडयणि-(गर्दभी-गधेडी)

पृ० ७९ ढंखर–(झांखरुं–सूकुं के वळी गयेलुं झाड–ठुंठुं. देशीसंग्रहमां हेमचंद्रे 'सूका झाड' अर्थनो 'झंखर' शब्द आपेलो छे: वर्ग ३, गाथा ५४)

पृ० ६८ सोरंड–(क्रीडाभाजन)

पृ० ६५ अरमणि–(करवत)

पृ० ३९ वरक्किय–(पटी–कपडुं–बूरखो ? "लइवि वरक्किय ससिसउन्नु फंसहि वयणु" गा० ९८, पृ० ३९ अर्थात्" "'वरक्किय' ने लईने–दूर करीने–चंद्र जेवा संपूर्ण मुखने साफ कर" आ अर्थ जोतां 'वरक्किय' शब्दनो संबंध 'बूरखा' साथे कदाच होय. टिप्पनकारे "वरकीं पटिं (टीं)" अने अवचूरिकाकारे 'वरकीं' ने बदले "वराकीं–पटीं" एम कहेलुं छे.

रासकारे 'छे' अर्थनो द्योतक धातु, आ प्रमाणे वापर्यो छे:

पृ० ६८ अच्छिहि–(छे)

पृ० १५ आहि–(छे, हे के है अथवा आहे)

पृ० ३१ अच्छउं–(छुं)

तादर्थ्य अर्थ माटे–चतुर्थीना अर्थ माटे रासकारे ("नहु रहइ बुहा कुकवित्तरेसि"–गा० २१, पृ० ९) 'रेसि' निपातने पण वापरेलो छे. जे विशे आगळ कहेवाई गयुं छे.

आ प्रमाणे रासनी भाषानो संक्षिप्त परिचय कराववा प्रस्तुत आ थोडुं निवेदन कर्युं छे.

रासनी वस्तु—आ विशे भाषणमां जणावेलुं छे. विशेषमां जणाववानुं के रासनी नायिका 'विजयनगर–विक्रमपुर–बीकानेर' नी छे. संदेशवाहक 'सामोरु' के 'सामोर' जेनुं बीजुं नाम 'मूलत्थाण' छे त्यांथी पोताना मालिकनो लेख लई खंभात तरफ जाय छे. नायिकानो पति खंभातमां कमावा गयो छे, आ संदेशवाहकने खंभात जतो जाणी नायिका तेने पोताना पतिने आपवानो संदेशो पहोंचाडवा कहे छे. 'खंभात' माटे मूळमां 'खंभाइत्त' शब्द वपरायेलो छे. मूळकारे पोते 'मूलत्थाण' नो परिचय आपतां कह्युं छे के ("तवणतित्थु चाउद्दिसि सिय्च्छि! वक्खाणियइ" –गा०६५, पृ० २६) अर्थात् "ज्यां सूर्यनो कुंड–सूर्यनुं प्रसिद्ध तीर्थ–छे ते

परिचय माटे मांडे तेमांनी केटलीक गाथाओ अहीं नोंधी छे. अने तेमांथी कोरियां नामो, विभागो वगेरेनी सूची पण ऊपर आपेली छे. चौदमा सैकाना पांच के नमूना अहीं आप्या छे, तेनी साथे आ 'रासकर्तानी भाषानो मुकेल छे', अने रासकर्तां वपरायेल्यां नामो वगेरे जोतां तेनुं वतन रासकर्तानी अपेक्षाए गुजराती तरफ छे, एम जणाव्या विना रहेतुं नथी.

रासकर्तानी बीजी खास विशेषता तो ए छे के तेनो कर्ता एक मुसलमान पंडित छे. कर्तानुं नाम 'अद्दहमाण' छे. तेना पितानुं नाम 'मीरसेन' छे. पोताना देशनुं विशेष नाम तेणे जणाव्युं नथी. 'उदाहरणरूप एवो पूर्वप्रसिद्ध 'म्लेच्छ देश' रासकर्तानी निवासभूमि छे' एम तेणे मोघम जणाव्युं छे.

'संदेशकरास' ना कर्तानो परिचय

रासनी वस्तु 'मेघदूत'नी वस्तु जेवी छे. एक पथिक मूलथाण—मूलतान ? थी खंभात सुधी प्रवास करे छे. वचे तेने एक विरहिणी

'मूलस्थान' नगर जगतमां चारेकोर सुप्रसिद्ध छे." 'सांबपुर'नुं बीजुं नाम 'मूलस्थान' छे. आमां जणावेलुं 'सांबपुर' क्यां आव्युं ? ए कहेवुं मारा जाणवामां नथी; परंतु मूलथाण-मूलस्थान अने मूलतान ए बधां सरखां पदो, कोई एक ज नगरनां सूचक छे के भिन्न भिन्न नगरनां ? ए प्रश्ननुं तत्काल तो समाधान थई शके नहीं; परंतु शब्दसाम्य जोतां कोई एने 'मूलतान' जरूर कल्पी शके.

रास विशे विशेष—रासमां रासकारे गाथाओ उपरांत विविध छंदो वापरेला छे जेनो परिचय टिप्पनक अने अवचूरिकामां आपेलो छे.

टिप्पनकार पोते प्रान्ते आपेली प्रशस्तिमां जणावे छे के "आ रास तेणे 'गाहट' नामना क्षत्रियना मुखथी सांभळ्यो छे तेथी रासना टिप्पनमां असल मूळ रास करतां कांई फेरफार वा भूल रही गई होय तो ते 'गाहट' जाणे, हुं कशुं जाणुं नहीं."

टिप्पनकार पोरवाड वंशनो छे. तेना पितानुं नाम 'हालिग' छे, मातानुं नाम 'तिल्याः' लखेलुं छे पण ते अस्पष्ट छे. कदाच 'तिलाद्या' एटले 'तलकवाई' होय. टिप्पनकार, रुद्रपल्लीय गच्छना जैनसाधु छे.

स्त्री मळे छे. ते स्त्री, पोतानो अर्थलोभी पति खंभातथी हजु सुधी कमाईने आव्यो नथी माटे झूरे छे, ते पथिक पासे पोताना विरहदुःखनी वराळ काढे छे, अने पोतानो पति शीघ्र पाछो फरे माटे तेनी साथे संदेशो मोकले छे. रासनी आ, प्रधान वस्तु छे. रासकारे रासमाटे 'संदेसय' अने 'संनेहय' एम बन्ने शब्दो वापरेला छे. पोते ज्यांथी प्रवास आरंभ्यो छे ते 'मूलत्थाण'नुं वर्णन रासकारे विशेष प्रकारे कर्युं छे. तेमां खास करीने तेणे जणाव्युं छे के जे नगरमां रहेनारा चतुर्वेदी लोको वेदोने प्रकाशे छे, ज्यां सुदवच्छ एटले 'सदयवत्स' अने नलनुं चरित्र वंचाय छे, क्यांय क्यांय भारतनी कथा कहेवाय छे अने रामायणनी पारायणो चाले छे, क्यांक संगीत, नाटक, रास अने नाचनो प्रचार छे, वगेरे वगेरे.

१५२ रासकार एक मुसलमान छतां रासमां जे भाषा तेणे वापरी छे ते शुद्ध छे अने तेमां फारसी शब्द घणा विरल छे तथा रासकारनां

आ रासनुं टिप्पन, हिसारदुर्ग–हिसारगढ–मां अषाड शु० दि० आठम ने बुधवारे लखेलुं छे. आ हिसारगढ ते पंजाबमां आवेलुं वर्तमान 'हिसार' छे.

अवचूरिका पं० नयसमुद्रे लखेली छे. आ संबंधे कोई विशेष वृत्तांत मळतो नथी. नयसमुद्र, अवचूरिकानो कर्ता छे? के तेनी नकल करनारो? ए विशे पण कोई हकीकत जडती नथी.

रासनी जुदी जुदी प्रतोमां अनेक पाठांतरो छे. जेमांना आवश्यक एवां क्यां प्रस्तुत रासमां आपवामां आवेलां छे. प्रस्तुत रासनी अनेक प्रतो उपलब्ध छे. में जाते आ रासनी प्रति पाटण, पूना अने जोधपुरना राजभंडरमां जोयेली छे, ए रीते बीजे पण आ रासनी प्रतो होवानो संभव खरो.

रासनुं नाम 'संदेशकरास' वा 'संनेहयरास, ए बन्ने रीते ग्रंथकारे आपेलुं छे. ए बेमांथी 'संदेशक-रास' नाम विशेष उचित छे.

अहीं जे पृष्टांक के गाथांक आपेला छे ते मारी सामेना फरमाओ प्रमाणे छे.

आ फरमाओ वांचवा आपवा माटे आचार्य श्रीजिनविजयजीनो अने भारतीय विद्याभवननो हुं ऋणी छुं.

केटलांक उच्चारणो विशेष विलक्षण छे. वळी, केटलाक तळपदा देश्य शब्दोने पण रासकारे वापर्या छे. रासनी शरूआतमां ते, सृष्टिकर्ता परमेश्वरने याद करे छे अने पछीनी गाथामां पोतानो देश, पिता तथा पोतानुं नाम ए बधांने नोंधी बतावे छे.

प्रस्तुत रासकार, अहीं जणावेली बीजी कृतिओना प्रणेताओनी पेठे तळ गुजरातनो नथी तेथी तेनी भाषाने ऊगती गुजराती कहेवा करतां रासकारना समयनी तेना प्रांतमां चालती 'देशी भाषा' कहेवी वधारे उचित छे. रासकार पोताना देश तरीके पश्चिममां आवेलो कोई 'म्लेच्छ-देश' कहे छे, वळी, ते मूलतान या सामोरू (शाम्बपुर-श्रीजिन०) थी नीकळे छे अने विजयनगर (विक्रमपुर—बीकानेर नहीं परंतु बीकानेरनी आसपासनुं विक्रमपुर—श्रीजिन०) नी विरहिणी साथे वातचीत करे छे अने ते गुजरातमां ठेठ 'खंभात' सुधी आवे छे. एथी एम जणाय छे के रासकारे वापरेली भाषा ऊगती गुजराती जेवी छे अने ते वर्तमानमां सर्वत्र व्यापेली हिंदी भाषा जेवी 'देशी भाषा' लागे छे. तेम छतां प्रस्तुत रास-कारनी भाषा अहीं जणावेली गुजरातना लेखकोनी चौदमा—पंदरमा सैकाओनी बीजी कृतिओनी भाषा जेवी पण छे एटले ए अर्थमां ज में तेनी भाषाने ऊगती गुजराती कहेली छे; अर्थात् रासनी भाषामाटे अहीं वपरायेला 'ऊगती गुजराती' शब्दनो अर्थ 'ऊगती गुजराती जेवी' समजवानो छे.

चौदमा अने पंदरमा सैकानी गुजराती कृतिओना अहीं जे नमूना आपेला छे ते पूरता छे. आ रासनी कृतिना नमूनाथी तेमां भाषासंबंधी के बीजी कशी विशेषता नथी जणाती छतां प्रस्तुत कृति एक इस्लामी कविनी छे ते एनी एक खास विशेषता छे अने जे जमानामां सांप्रदायिक वृत्तिना उछाळावाळो जनसमाज हतो ते जमानानो प्रस्तुत इस्लामी कवि ते संकु-चित भावथी तद्दन पर रहेलो जणाय छे. अने रासमां कवि, नगरना वर्णन

प्रसंगे वेदो, रामायण, महाभारत, नलचरित, सुदवच्छकथा वगेरे हिंदु-कथाओने आदरपूर्वक याद करे छे, ए प्रस्तुत कृतिनी बीजी विशेषता छे.

१५३ वर्तमान समयना बन्ने परम्पराना बंधुओने, तेमां य साहित्य-सर्जकोने प्रस्तुत कविद्वारा एकतानी—उदारभावनी अने शुद्ध मानवतानी प्रेरणा मळे ए पण एक उद्देश आ रासकनो नमूनो आपवानो छे. मने लागे छे के भाषानो, इतिहासनो, भूगोळनो, तत्त्वज्ञाननो के एवा बीजा कोई पण विषयनो विचार, उदार भावनो के उच्च मानवतानो पोषक होवो ज जोईए, एम न होय अने विपरीत परिणाम लावनारो होय तो मारे मन ए विचार, विकाररूप छे एथी ज अहीं सहेज विषयांतर करीने पण मारे आ उदार इस्लामी कविनी कृतिनो नमूनो सादर आपी ते बाबत लखवी पडी छे.

पन्दरमा सैकानी कृतिओ

अत्यार सुधी मारे विशेषे करीने जैनकृतिओने ज आधारे चलाववुं पड्युं; पण पन्दरमा सैकाथी जैन अने वैदिक एम बन्ने प्रकारना कविओनी कृतिओ मळवी शरू थाय छे एटले हवे ते बन्ने प्रकारना महानु-भाव कविओनी कृतिओनो उपयोग करवानो छुं अने तेमां य वैदिक कविओनी कृतिओनो उपयोग वधारे करीश.

पन्दरमा सैकानी केटलीक जैन गद्यकृतिओ पण उपलब्ध छे, एटले पद्यनी साथे गद्यनो पण उपयोग थशे. पद्य करतां गद्य, भाषाना चोक्स स्वरूपने समझवामां वधारे सहायरूप छे. पद्यमां कवि कविताने वहाने अनियत रूपो पण वापरे छे त्यारे गद्यमां तेम चालतुं नथी.

१५४ प्रारंभमां उक्त 'बालशिक्षा' जेवा एक औक्तिक ग्रंथनां अव-तरणो जणावीश.

हकीकत गुणरत्ने पोते क्रियारत्नसमुच्चयनी विस्तीर्ण प्रशस्तिमां नोंधेली छे अने प्रशस्तिना बावनमा श्लोकमां 'श्रीचंद्रशेखर'ने पोताना प्रगुरु तरीके अने 'देवसुंदर'ने पोताना गुरु तरीके तेमणे याद पण कर्या छे (श्लो० ५४).

कुलमंडने पोताना औक्तिकमां गुरुरूपे चंद्रशेखरसूरिनुं अने देवसुंदरसूरिनुं एम बे नाम लखेलां छे, एथी जेओ कुलमंडननी गुरुपरंपराथी अपरिचित छे तेमने, एमना बे गुरु होवानो संदेह थवो स्वाभाविक छे; परंतु ऊपर कह्या प्रमाणे 'चंद्रशेखर' एमना दादागुरु हता अने साक्षात् गुरु 'देवसुंदर' हता, एथी तेमणे ए बन्नेने पोताना ग्रंथमां संभार्या[३१७] छे, एटले कुलमंडनसंबंधी बेगुरुवाळा संदेहने अवकाश ज नथी.

एमना समय पन्नरमा सैका विशे पण उपर्युक्त उल्लेखो स्पष्ट हकीकत आपे छे, एथी ए बाबत पण अशंक छे.

कुलमंडनना नामविभक्तिना प्रयोगो

१५५ उक्त औक्तिकमां आवेला विभक्तिविचारना प्रकरणमां साते विभक्तिओनो परिचय आ प्रमाणे आपेलो छे:—

१—चन्द्र ऊगइ. वीतराग वांछित दिइ. उ. सु. कउण ऊगइ ?

३१७ कुलमंडने पोताना मुग्धावबोध–औक्तिकमां आरंभमां पोताना प्रगुरु चंद्रशेखरने संभार्या छे अने अंतमां पोताना दीक्षागुरु देवसुंदरने याद कर्या छे. ते श्लोको आ प्रमाणे छे:

"श्रीचन्द्रशेखरगुरून् वन्दे यैरुक्तियुक्तिभिः ।
मादृशस्यापि बालस्य चक्षुरुद्घाटितं हृदः"

—(आरंभ)

"लक्षणासवचनाम्बुधिबिन्दु बिन्दु–बाण–कृत–भू–मित १४५० वर्षे।
औक्तिकं व्यधित मुग्धकृते श्रीदेवसुन्दरगुरुक्रमरेणुः ॥

(अंत)

ए वाक्योमां चंद्र, वीतराग, जु, सु अने कउण ए प्रथमा विभक्तिवाळां छे.

२–चैत्रु कटु करइ. किसउं करइ ?

एमां ' कटु ' अने ' किसउं ' पद बीजी विभक्तिवाळां छे.

३–जीव धर्मिइं संसार तरइ. चैत्रु लोक सिउं वात करइ. जीणइं करी करइ. किसिइं तरइ ? धर्मि. कीणइं सिउं ?

एमां धर्मिइं, जीणइं, किसिइं, कीणइं, धर्मि; अने लोक ए बधां पद तृतीया विभक्तिनां छे. कुलमंडन कहे छे के ' इं ' प्रत्यय तृतीयानो सूचक छे.

४–विवेकिउ मोक्षनइं कारणि खपइ. धर्मु सुखनइं कारणि हुइ. कउण-नइं कारणि ? मोक्षनइं. किसानइं कारणि धर्मु हुइ ? सुखनइं. साधु मोक्ष–नइं कारणि तपु करइ.

अहीं मोक्षनइं, सुखनइं, कउणनइं अने किसानइं; ए बधां पद चोथी विभक्तिवाळां छे.

५–वृक्षतउ पान पडइ, कउणतउ पडइ ? वृक्षतउ.

अहीं वृक्षतउ अने कउणतउ पद पांचमी विभक्तिवाळां छे. औक्तिककार कहे छे के, तउ, हूंतउ, थउ, थकउ, ए बधा पांचमी विभक्तिना प्रत्ययो छे.

६–चैत्रतणउं धनु गामि हुइ. गुरुतणउं वचन हउं सांभळउं.

एमां चैत्रतणउं, गुरुतणउं पदो षष्ठी विभक्तिवाळां छे. तणउ, रहइं, किहिं ए बधां पदो षष्ठीनां सूचक छे.

७–चैत्रु गामि वसइ.

अहीं ' गामि ' पद सप्तमीनुं छे. ' इ ' प्रत्यय सप्तमी विभक्तिनो दर्शक छे.

ऊपरनां उदाहरणो द्वारा एम जणाय छे के पन्नरमा सैकानी गुजरातीमां प्रथमामां अने द्वितीयामां कोई प्रत्यय न हतो, मूळ नाम ज वपरातुं, अथवा 'उ' प्रत्यय वपरातो. त्रीजी विभक्तिमां 'इं' प्रत्यय हतो अथवा त्रीजी विभक्तिमां मूळ नाम एम ने एम प्रत्यय विना पण वपरातुं. चोथीमां, चालु 'ने' ने बदले 'नइं' प्रत्यय वपरातो. पांचमीमां तउ, हूंतउ, थउ, थकउ प्रत्ययो हता. छट्ठीमां तणउ. रहइं, किहिं अने सातमीमां 'इ' प्रत्यय प्रचलित हतो.

आ सिवाय ते समयनुं बीजुं गद्य-पद्य साहित्य अवलोकतां बीजा पण केटलाक प्रत्ययोनी माहिती मळे छे.

वि० सं० १४११ ना तरुणप्रभ, १४५७ ना सोमसुंदर, १४७१ ना लक्ष्मीधर वैराम अने १५०० ना हेमहंसनां गद्यो ऊपरथी अने १४१७ ना असाइत तथा १४८८ ना भीमकविना पद्य-प्रबंधद्वारा नामने लगता प्रत्ययो विशे जे हकीकत मळे छे ते आ प्रमाणे छे :—

१५६—तरुणप्रभ—(सं० १४११)

तरुणप्रभना प्रयोगो १—कथानकु, जनपदु, विजयवर्ती, हरिदत्तु, संतुष्ट, सौधर्मेन्द्र, दुक्खपूर्वक, सरीरदुक्ख.

२—चैत्य, संशयु, वांछितु, धर्मदेशना, जीव.

३—तिणि, नामि, प्रभावि, कर्मिहिं, राजेन्द्रि, अनेरइं, किणिहिं, शिष्यहं, वांछकहं, ईहंवडइ, मूल्यवडइं.

५—दूषितत्व—इतउ, भाव—इतउ, पुरु—हूंतउ, मुख—हूंतउं, जोग—इतउ, दीप—हूंती, दहन—हूंता.

४—६—गुण-रहइं, महाराज, हारनउ, महात्मातणा, स्नेहतणउ, तीहं-रहइं, तेहरहइ, तेहनउं, घरतणी, भुंइनइ, लोकहंतणा, धर्मनंदनी, सिद्धांत-नउं, बिहुं, श्रेष्ठिहिंतणउ, मूहीं जि रहइं, तिहीं जि रहइं.

७–जंबूद्वीप–माहि, भरतक्षेत्रमाहि, अनेरइ, दिवसि, धर्मविचार विषइ, द्वारदेसि, माहि, लेसाल, तीहंमाहि, लोकि, किणिहिं, खणीत–इ.

१५७–सोमसुंदर— (सं० १४५७)

सोमसुंदरना प्रयोगो

१–प्रसन्नचंद्र, रहिउ, भरयेश्वर, प्रामिउं, करिवउ, पहिरियां (व.) सोनार, आविउ, स्त्री, मूंओ, वेला, साप, ढूकडओ, माहरु, हलाविउ.

२–रूप, शोभा, असारता, क्लेश, दुःख, राज्य, आरिसा, मूंहूइं, एहनइं.

३–तीणइं, नामिइं, अनंतवीर्यइ, वापनइं, वइरिइं, परशुरामि, तेणिं, राय–सिउं, भाईए, बहिने, स्त्रीए (व.) तेहे, बीजीए, वीहतीए, एकिं, पेलइं, महासतीइ, गुरे, देवताए, कुपीए.

५–भावथी, विस्मयथिकइं, हायिथिकु.

४–६–तेहनी, तेहनउ, अनंतवीर्यनु, अनंतवीर्यनउं, क्षत्रीनी, राजर्षिनु, शरीरनी, वेटीनु, दुर्मुखनां, लोकनुं, आपणउ, केहनइं, एकिनइं, ब्राह्मणनां, रूपनी, जातमात्रनां.

७–तापसनइ, उडवलइ, भूंइहरइ, वेलाइं, करतइ, काउसग्गि, गृहस्थवेषि, अंतःपुरमाहि, –भवनि, अनेरे, सभा–माहि, पालिइं, चोरे, गए, तेहे, अंधारइ, नीमाहमाहि.

१५८–श्री लक्ष्मीधर वेराम (पारसी लेखक सं० १४७१)

पारसी लेखक लक्ष्मीधरना प्रयोगो

१–एकु, भर्तार, नमस्कार, घर, बहइन, द्रउग्रंध, वइहइनि, स्तंभ, कोपु, व्याघ्र, तह्मो, अह्मइ, दुःख.

२—वचन, खाद्य, आत्मा, सुंपणउं,—स्थानक, नइग्रहउ, सउखउ, स्थानइकु.

३—तेहे, स्त्री, स्त्रीए, पुरुषइ, राजां, पुरुषइं, आपणइ, तीणइ, कलत्रि, सुहए.

५—शरीरतु, वस्त्र उपर थकु, सुखनिद्रा थकु, स्वामीतउ, सउषतउ.

४—६—पुरुषतणी, तींह, स्त्रीरहइं, तस्करहइं, राजारहइ, स्त्रीरहइ, पुरुषरहइं, लोकतणी, मुक्तात्मारहइं, पुरुषतणउं, तउझरहइं, देवतणा, तुझरहइं.

७—विचालइ, वस्त्रि, सातमइ, दिवसइ, मांचि, सरीरमांहि, पृथ्वीमांहि, पात्रि.

१५९—हेमहंस—(सं० १५००)

हेमहंसना प्रयोगो

१—वइठा, अरिहंत, वीसामउ, सिद्ध, हणिया, विहरमाण, ऋषीश्वर, छट्ठउं, सातमउं, बि, पद, हूआं, छट्ठी, सातमी, पहिलउं, उत्कष्टउं, श्रीनउकार, पांखुडीइ.

२—श्रीमतीहूइं, ते, घडउ, भरतारहूइं, अवसर, मर्म, घणउं, मान, महत्व, राजाहूइ.

३—जेतलइ, वाणीगुणे, जेहे, आपणपें, घणे, भेद, पदि, मध्यस्थपणइं विधिइं.

४—६—तेहंहूइं, चंद्रमंडलनी, समासिनउ, ऊगता सूर्यनी, रायना, लोकनां, मनुक्षनां, सिद्धहूइं, आचार्यहूइ, शिष्यनइं, द्वादशांगीनउ, कहिनी (कोनी), राजारहइं, सिद्धसिला ऊपरि, अनेराहूइं, द्वादशांगीनउं, नदीनइ, एहनूं, श्रावकरहइ, शिष्यहूइं, मरकतमणिनी, श्रावकनी, कर्म जि हूइं, फूलनी.

५—धर्मथकी, ईहांथकउ, संकटइथिकु, वाडियिकुं, किहांथिकु, नगरथकु.

७—समवसरणि, मनुष्यलोकमांहि, आपणइ, धरि, पगिपगि, वडा-मांहि, घरमांहि, शिष्याइं, अमुकइं, स्थानकि, मांहि, मनइमांहिं.

१६०—असाइत—(सं० १४१७)

असाइतना प्रयोगो

१ नरवाहन, राइ, झूझार, भाई, वहुडु, शकतिकुमार, पुर, ब्राह्मण चारि, वरणांतरि, जिन, थापीआ, व्यवहारीया, पुढिउ, प्रभात, ऊगिउ, सूर, नरवि.

२—कवित, वीरकथा, वंश, राज, वेदशास्त्र, अपराध, कणयापुर, राजन, शवद, वीनती, पुरुष, चरण.

३—प्रसादि, प्रधानि, तेणीइ, भरतारि, कारणि, कारिणइ.

५—.........................

४—६—तास, एहनु, यादवतणु, तेहतणि, राइचा, तेहतणां, कुयरि-तणा, वडनी, साविजनु.

७—आदिहि, मनि, वीरमाहि, गोदावरीइ, चउहट्टे, पुरि, पाटणि, तेणि, निस, वाडीइ, कणयापुरि, वनि, वपारि, सरि, डालि.

१६१—भीम—(सं० १४८८)

भीमना प्रयोगो

१—विप्प, जयवंती, ज्योतिपकला, वत्तारउ, कुंजर, कंदर्पू, वलीउ, नगर, दोसी, पींडी, एकि, इकि, को, छयहु, खित्तीय नरवीरो, सुदयवच्छो, माहेसो.

२—गुण, पसाउ, गजराउ, कलोल, विसमा, पोलि, प्रसाद, नाद, पुत्त, नीर, सुदयवत्स.

३—कुलक्कम्मि, गजि, मइगलि, नेहिइं, सुदयवत्ससिउ, रंगि, सुदयवच्छिसिउ, दोरी, अरथिइं.

५—निजमंदिरथिकूं, संकलह.

४—६—तसु, तास, संवच्छरह, अंगतणउं, एकाउलिनउ, चेटकनउं, चउसठिनूं, पानतणां, फूलतणा, सुगंधीतणी, पारिषिनइ, आपापणी, केवीतणां, पारिषितणां, वंसह, करिण, —वत्सतणूउ, —वच्छतणउ.

७—सुरपुरि, नरभुवणि, पायालि, कालि, कल्हि, चउहटइ, माथि, तीणइ, पगि, हाटमांहि, अंतरिषि, कन्हि, —लक्षणे, नयणंमि, ति—वारिहिं, मसाहाणि.

१६२ तरुणप्रभ—(सं० १४११) क्रियापदो, सर्वनामो अने

तरुणप्रभना बीजा शब्दो
बीजा शब्दो

क्रियापदो

लिखियइ—लखाय छे	देखी करी—देखी करी—जोई करी	बइसाली—बेसारी	जाइसिइ—जाशे—जशे
छइ—छे	नहीं—नथी	वढइ—वढे छे	थाहरावी—ठेरावी
हूंतइ—हतो	वीनवइ-वीनवे छे	मारि—मार	मारि मारि—मार मार
हूंती—हती	पढइं—पढे छे	कीजउ—कीजो—करजो	साही करी—धरी करी
करउं—करुं	थाइं—थाय—थाय छे	चीतवइ-चीतवे छे	आपिसिइ-आपशे
नीपनउ-नीपन्यो-नीपज्यो	थाई—थई—थईने	छता—छता	काढियइं—कढाय छे (बहार काढवुं)
हुयइ—होय	गयउ—गयो	परीछइ—प्रीछे—परीक्षे-जाणे	भागा—भाग्या
छइ—छे	ले करी-लई करी	मागि—माग	हुउतउ—होत
नथी—नथी	गंधाइ—गंधाय छे	नीगमइ-नीगमे छे —नीतावे छे	जायतइ—जात
चींतवइ / चीतवइ — चींतवे छे	आपि—आप	देखीसिइं—देखशे	विहराविउ—वहोराव्युं—आप्युं
छइं—छे	पाउ धारावउं—प—धरावुं	वोलइ—बोले छे	
होइ—होय	मारिवा—मारवा	देखइ—देखे छे	
		वावइ—वावे छे	

सर्वनामो

एकि—एक	तुम्हे—तमे	मइं—में
तिहां—त्यां	अम्हे—अमे	किणहिं—केणे—कोईथी
सु—ते	अम्हरहइं—अमने	माहरइ—मारे
तुम्हारउ—तमारो	ज—जे	तुम्हारइ—तमारे
कुणरहइं—कोईने	माहरउं—मारो—मारुं	हउं—हुं
सु—जे	स—तेणी	

बीजा शब्दो

आवउ—आवो
सगट—सघळो
पाछउ—पाछो
उतावला—उतावळा
असवारु—असवार—अस्वार
जदपिहिं—जदपि—यद्यपि
तुम्ह पाखइ—तमारा विना
परिवार कहनां—परिवार—कनेथी—परिवार पासेथी
तेह कन्हइ—तेनी कने
एक गमा-एक गम—एक तरफ
बीजा गमा—बीजी गम-बीजी तरफ
धननाशु—धननाश
विसाहणउं—वसाणुं—खावानुं वसाणुं
मांहिलउ—मांहलो—मांयलो
वाणउत्रि—वाणोतरे
दुहेलउं—दोहिलुं—दुःखदुं

सामुही—सामी
घेरे—घेरे
पेट—पेट
ओरहा—ओरा—नजीक
दीकिरी—दीकरी
वहिलइ—वहेलामां
वी—थी
रेडायां—रेडायां—ढोळायां
जूवनु—जोवन
पहुतउ-पहोंत्यो-पहोंच्यो
काजु—काज—कार्य
बिहुंगमा—बन्ने—गमा—बन्ने—तरफ
टलिउ-टळ्यो-टळी पड्यो
दीकिरउ—दीकरो
डोकरी—डोकरी—डोशी
दीकिरा कन्हइ—दीकरा कने—दीकरा पासे

सोमसुंदरना
बीजा शब्दो

१६३ सोमसुंदर—(संवत्–१४१५)

क्रि०

प्रामी—पामी—प्राप्त करी
हूउ—हूवो—थयो
मारी—मारी
मारीउ—मार्यो
लीधउं—लीधुं
जायु—जायो—जण्यो
पूछिउ—पूछ्यो
जाणिवु—जाणवो
प्रामिउ—पाम्युं
देपाडी—देखाडी—बतावी
ऊतरि—ऊतर
अहियासिया—सह्या
हवुं—थयुं
मूंई—मूई—मरी
रोती रहइ नहीं—रोती रहे नहीं
हवी—हुई—थई
आणी—आणी—लावी
पाउ—धरिया—प—धार्या
तेडउ—तेड्यो
करउं छउं—करुं छुं
देषउं—देखुं छुं
देषइ—देखे छे
धराइ—धराय (कर्मणि)
परिणं—परण
नांषउं—नांखो

वी० श०

ठाकुर—ठाकुर—ठाकोर—मालिक
त्रिणि—त्रण
परस्परइं—परस्पर
आषउ—आखो
क्षाति—ख्याति
गाढेरी—गाढ—घणी
बोकडा—बोकडा
पिरीआ—परिया—वंशज
केडइं—केडे—पाछळ
भीषारी—भीखारी
केडां—केडे—पाछळ
सम—सम
पोटलउ—पोटलो—पोटलुं
परहुणाना—परोणाना
अन्यात—अज्ञात
परहणउ—परोणो
ठुंठउ—ठुंठुं
तूनारानउं—तूणारानुं—तूणनारनुं
जमहर—जौहर—यमगृह

धाडि—धाड
थूंकिं—थूंकवडे
आफणी—आफरडुं—आपोआप—एनी मेळे
जु—जो
तु—तो
वेटउ—वेटो
मूलगु—मूल—मुख्य-वडो
पगरणि—पगरण—प्रसंग ऊपर
सोनीया—सोनैया
कडाहि—कडाई
विछूटी—वछूटी
भइंसा—भेंसा—पाडा
षाटकी—खाटकी
छींक—छींक
रूडां—रूडां
विरूआं—विरूप—वरवां—कद्रूपां
पणि—पण
परही—परी—परे—दूर

१६४ अर्दागवीरा (पारसी साक्षरनी कृति लक्ष्मीधरना वीजा शब्दो सं० १४७१)

क्रि०	क्रि०	वी० श०	वी० श०
हुंई—हुइ—थइ	दीधउ—दीधो	पछइ—पछी	पण—खंड (?)
अछइ—छे	करइ—करे	सातइ—साते	स्त्री प्रति
सांभल्यउं-सांभळ्युं	दीधी	वइहइनि—वेहेन—वेन	हाड
सांभल्या पछी	खाधउं—खाधुं	भार्या	तह्मारां—तमारां
थई	कीधी	एतलउ—एतलुं—एटलुं	लुंडी—लोंडी
पामिउं—पाम्युं	गिउ—गयो	जइसु, जिम, यम, जइम } जेम	हाथ
कीधउ—कीधो	गेई—गई	महाभारतर—महाभारे	वेहू—वेऊ
रही	घाली	स्त्री	जोडइया—जोड्या
बोलिउं—बोल्युं	वइसइ—वेसे छे	बीजा	स्तुति
करु—करो	सुआरिउ-सूवाड्यो	ऊमी	घणी
थाउं—थईए	राषइ—राखे छे	आगलि, आगलइ } आगळ	ऊषधी—औषधी
अछउं-छुं-छीए	फिरीनइ—फरीने	वहइन—वहेन	आदेश
हुइ—होय—छे	बइठी—बेठी	कलत्र	इसुं—एवुं
काढीइ—काढे	उच्चरइ, अछइ } उच्चरे छे	भर्त्तार	आत्मा
लिउ—ल्यो—लई जाओ	पहुतु—पहोंत्यो	स्तंभ	हेठ—हेठे
खाउं—खाओ	आव्यु, आव्य: } आव्यो		जणाविवउं-जणाववानुं
ताणउ—ताणो	करइं—करे छे		ऊपरि—ऊपर
बोलिउ—बोल्यो	हुऊअ-हुओ-थयो		सइरु—शरीर
दीठउ—दीठो	देषाडउं—देखाडुं		पुहरि—पहोर
पडइ—पडे	कहइ—कहे छे		पाषलि—आजुबाजु
	आव		

वी० श०		वी० श०	
वली—वळी	सखाइआ—सहायो	सउगंधपणउं-सुगंधपणुं	नइग्रहउ—निग्रह
जोइउ—जोयो	भउवन—भुवन	विभन्न—विभिन्न	स्थानइकु-स्थानक
किरि—किल	वइनोद—विनोद	विहच्यउ } वचे वच्च	सउंदर—सुंदर
जीवती	सउखउ—सुख	विहच्यउ	तऊं—तूं
प्रचउर—प्रचुर	द्रउर्गंध—दुर्गंध	अनइ—अने	हउइ—होय

१६५—हेमहंस—(संवत् १५००)

हेमहंसना वीजा शब्दो

क्रि०	क्रि०	वी० श०	वी० श०
आपवउं—आपवुं	ग्या—गया	कुटुंव	भारे-भारे-दीर्घ-गुरु
आलइ—आले छे	छई-छे (वहु०)	चीठी	भारी-भारी-दीर्घ-गुरु
दिइ—दे छे	हओ—हो	पाशइ—पासे	काजकाम-कामकाज
हींडइ—हींडे छे	हुइ—होय	वन भणी—वन-तरफ	किमइ-केमे
परिणेवा—परणवा	थ्याईई—थ्याईए		सासू—सासू
घाती-घाली-नाखी	कहइ छइ—कहे छे	सादिं—सादे	सिउं—शुं
ढांकी	छै	थिउ—थयो	नणंद—नणंद
मूंकिउ—मूक्यो	मिलशइ	दीहाडउ—दहाडो	ढांकणूं—ढांकणुं
मूकां छइ-मूक्यां छे	छइ-छे	पगि-पगे-पगमां	महामर्जादी—महा-मर्जादी
आप्या	मेलशइ	गुर—गुरु	
घाल्यो	कहि छइ	सहू को-सऊ कोई	श्रावक—श्रावक
फीटी—मटी	सीझइं	घणु—घणो	मसाण—मसाण
फेडी-फेडी-मटाडी	करइं	आण्यो	हवडां—हमणां
ऊघाडी	कीधउं	तावडइं—तावडे—तापने लीधे	त्यारेक—त्यारेक
कीधी	वांछइ		तकताक—तक-लाग

क्रि०	क्रि०	वी० श०	वी० श०
चीतचउं	परणिवा	ढूकडु—पासे	ठाली—ठाली—खाली
खमावइ	चूकइ	नींकलवइ—नीकळवे—नीकळवाथी	ना—ना
पुहुतउ	मगावइ		सघलु—सघळो
सळसलीनइ—सळवळीने	गिउ	थाकु—थाक्यो	नइ—ने
		आंवानी	कोठो—कोठो—पेट
चमकिउ	करइ	मउडइ } मोडे मोडे	घणीक लगइ ग्या—घणे सुधी गया
थिउ—थयो	खीजइं	मउडइ } —विलंबे	

१६६—असाइत—(संवत् १४१७)

असाइतना वीजा शब्दो

क्रि०	क्रि०	वी० श०	वी० श०
भणि—भणे—कहे	धरी	नरवि—नरपति	साध—साधु—शाह
मारिस—मारीश	गाइ	करि-करमां-हाथमां	कोइ
होइ	कुपी	छुरी—छरी	वाट
मारि—मारे	कहि	खडी—खडी	वागि-वागे-चोकडे
कीया	अवधारु	कूअरी—कुंवरी	सावज
गया	हती	नरमली—निर्मळी	अनोपम
कहीइ—कहेवाय	मेहला—मेल्यां	वावनवीर	गढ
चरणव्योस—वरण—वीश	कीउ	त्रिपनमु	मढ—मठ
	वलतउ	पणि—पण	मंदिर
वरणवुं	आवीउ	मढि—मठमां	पोलि—पोळ
करि	ऊडी गयुं—ऊडी गयो	वारि—वारणामां	पगार—प्राकार
धरुं		पंचसि—पांचसें	सकति—शक्ति
करु	संभारु	वीनती	रपि—ऋपि

क्रि०	क्रि०	वी० श०	वी० श०
मिल्या	मारु	पंषिणी—पंखणी	कासमीर
ऊठाडु—ऊठाड्यो	मेल्हुं—मूकुं—छोडुं	ईडा—ईडां	सरसति
ऊठिउ	ग्यु—गयुं	नि—ने	विघन
थयु	चडु—चड्यो	भरतारि—भरतारे	उदभूत—अद्भुत
वसीउ	दीजि	लगुनि—लगण—	परमेसु—परमेश
वणास्युं	धरसि	सुधी	कोइ—कोई

१६७ भीम—(संवत् १४८८)

भीमना बीजा शब्दो

क्रियापदो

जंपइ	करइ	सुझइ	पूरइ
निसुणि	हउं—हवुं—थयुं	मंडाइ	उतारइ
झलि-झाली	अछइ	ढोइइं	पडिउ
मरइ	ल्हसइ	जोइइ	साहए—साधयति
धडहडइ	दडवड्यां	विधंसइ	आणयू
गडअडइ	आवरइ	कहइ	वपाणिउ
धाइ	भंजइ	संभलि—सांभळ	ढलइ
धसइ	चडावइ	किद्ध	सोहइ
आपूं	तोलइं	मंति—माय छे	थिउ
जइ—जईने	लंटी लिइं—लंटी ल्ये	ठवइ—स्थापे	संचरइ
मंडिउ—मांड्यो	जीवइ	दुलंति	आआ—आव्या
पूर्या	थिउ	पापरिउ	विन्नवइ
पुहतउ	धमधमइं	पंपावरिउ	मिली
लांपइ—नांखे	गमइ	पामीइ	कंपावइ
वहान्यां			

वी० शा०

मालि—माळे	गयगामिणि } गजगामिनी
पाधरि—पादरे—पादर तरफ	गयगमणि
किरियाणा	
सागिळि (देश्य[318])—समूह	पयपंकय
आणणि—आनने	पतिभत्ति
सोह	जूअळ—युगल
जुवाणतणइ	जस—जेनी
कि—शुं ?	रंभथंभ—रंभास्तंभ
नितंव	सौवन्नवन्न
प्रलंवित वेणि	रोक—रोचिस्—कांति
नित्त—नेत्र	शशिहर
तारुणि—तरुणी	केवीतणां-कोईनां
आरुणि—अरुण	घाउ—घा
मयमत्त—मदमत्त	गइंद—गजेंद्र
पंचायण—पंचानन	अहिणवउ—अभिनव
परचंड	लोयण—लोचन
दंतूसल	वावन—बावन
गयंदु	अग्गइ—आगे
नरनाह	हाराउलि-हारावलि
वत्तारउ—वर्तारो	नेउर—नूपुर
जोणां—जोणुं	अनइ
भाइ	वाथि—बाथमां
भणी—तरफ	नातरू

318 "सत्थर-संगोली-संगेल्ला णिअरम्मि"—[देशीश० वर्ग ८ गा० ४]

चीं० श०

नवूं	हाट
पायक—पायग	हालकुलोल—हालकलोल
आज	छडचोक-छडेचोक
जोह—योध	अपुव्व
भाट	षेवि—क्षिप्रं—जलदी
शिला	वेउधुनि—वेदध्वनि
रहतां	नीसाणडे
आघउ—आघो	परिगर—परिकर
लाज	उरथल
निलवटि—ललाट पट्टे	रगत्त—रक्त
षडि—खडी	पिथल—पृथुल
ति—ते	तिलय—तिलक
कल्हि—काले	सरिस—सदृश
शृंगारु	अवहि—अवधि
हार	माहेसो
अनइ—अने	रिणतूर—रणतूर्य
पगर—पगारा	मयमत्ता
कपूर	कडयडइं—कडकडीने—कड दईने
केसर	करोडि—करोडमां
तेल	पेहा—धूळ उडवी
वास्यां—सुगंधी	विगति—वीगत
पींडी	

१६८ पन्दरमा सैकाना विशिष्ट प्रयोगो—कुलमंडन

कुलमंडनना विशिष्ट प्रयोगो

संबंधक भूतकृदंतनो 'ई' प्रत्यय छे: करी, लेई, देई (संबंधक भूतकृदंत)

शिष्य शास्त्र पढी अर्थ पूछइ.

हेत्वर्थ कृदंतनो 'इवा' प्रत्यय छे: करिवा, लेवा, देवा.

कुंभकार घडा घडिवा माटी आणइ.

हेत्वर्थ कृदंतनो 'ई' प्रत्यय पण छे: करी जाणइ, करी सकइ, लई जाणइ, लई सकइ, देई जाणइ, देइ सकइ.

वर्तमान कृदंतनो 'अतउ' के 'तउ' प्रत्यय छे: शिष्य शास्त्र पढतउ हउं सांभलउं, करतउ, लेतउ–(नरजाति) करती, लेती (नारीजाति) करतउं, लेतउं (नान्यतरजाति)

करसणी हल खेडतउ बीज वावइ.

साधारण कर्तृसूचक कृदंतनो 'णहार' प्रत्यय छे: करणहार, लेणहार, देणहार, धर्म करणहार जीव सुख प्रामइ.

कर्मणि वर्तमान कृदंतनो 'ईजतउ' प्रत्यय छे: शिष्यिइं शास्त्र पढी-जतउं हउं सांभलउं.

कीजतउ, लीजतउ, पढीजतउ, (नरजाति), कीजती (नारीजाति), कीजतउं (नान्यतरजाति).

सूत्रधारइ कीजतउ प्रासाद अथवा कीजती वावी अथवा कीजतउं देहरउं लोक देखइ.

कुलमंडन कहे छे के कर्तरिप्रयोग ए 'पाधरी' उक्ति छे अने कर्मणि तथा भावे प्रयोग 'वांकुडी' उक्ति छे. (पृ० २६६) आ बे

उपरांत एक त्रीजी ' कर्मकर्ता ' उक्तिनुं उदाहरण देखाडतां कुलमंडन कहे छे के—" ' ए ग्रंथ सुखिं पढायइ '. ' इहां सोनउं सहुंगउं वीकाइ ' ".

सकर्मक क्रियापद संबंधी भूतकाळनी उक्तिने समझावतां कुलमंडन जणावे छे के लोकभाषामां भूतकाळमां कर्मणि प्रयोग ज थाय छे. "प्राकृत उक्ति सकर्मक अतीत कालि कर्मि जि बोलीयइ"—जेमके—

' श्रावकिइं देवु पूजिउ ' वळी ते कहे छे के—" अनइ जेह उक्ति माहि गत्यर्थ अथवा अकर्मक क्रिया हुइ, तिहां प्राकृतवार्ता अतीतकालि कर्ता बोलायइ " अर्थात् जे वाक्यमां भूतकाळ सूचक क्रियापद गत्यर्थक होय अथवा अकर्मक होय त्यां भूतकाळनो प्रयोग लोकभाषामां कर्तरि पण थाय छे. जेमके—

चैत्रु गामि गिउ, तारउ ऊगिउ, लोग ऊठिउ, सूतउ, जागिउ.

' सति ' सप्तमीनो प्रयोग—

कुलमंडने आपेला केटलाक प्रयोगो अने विभक्तिओ वापरवाना नियमो

मेघि वरिसतइ मोर नाचइ ('मेघि' सति स०) गुरि अर्थु कहतइ प्रमादीउ ऊंघइ (' गुरि ' सति स०) गोपालिइं गाए दोहीतीए चैत्रु आविउ (' गाए ' सति स०) चैत्रिइं गाईतइ मैत्रु नाचइ (' गाईतइ ' सति स०)

ऊपरि—ऊपर हेठि—हेठे कन्हइ—कने तउ—तो	आनो योग थतां नाम पष्ठीमां आवे छे

परारु—परार—गये वर्षे ने अगाउने वर्षे
गिइ कालि—गइ काले
अनेरइ दीसि—अन्य दीवसे
पाछलि—पाछळ

जं—जे

तं—ते

जइ—जो

जां—यावत् } आनो योग थतां
तां—तावत् } नाम द्वितीया ले छे

पाषलि—पाखे } आना योगमां
विना } द्वितीया अने षष्ठी

पाखइ—पाखे } आना योगमां
विना } द्वितीया

ईहं—अहीं

तिहां—त्यां

हवडां—हमणां

किवारइं—केवारे—क्यारे

अनेरीवार—अन्यवारे—बीजे वखते

किम—केम

तिम—तेम

अहुण—ओण—आ वर्षे

आगलि—आगळ

डावा गमा—डावी गम—डावी तरफ

बिहुं गमा—बन्ने गम—बन्ने तरफ

बाहिरि—बहार

हेठिलुं—हेठलुं

बाहिरलुं—बहारलुं—बारखलुं

जिमण गमा—जमणी गमा—जमणी तरफ

सविहुं गमां—सर्वंगम—बधी बाजु

ऊपिलु—ऊपलुं

आगिलु—आगलुं

ताहरउं—तारुं

जिहां—ज्यां

किहां—क्यां

तिवारइं—तेवारे—त्यारे

जिवारइं—जेवारे—ज्यारे

सदैवइ—सदैव

एकवार—एकवार

जिम—जेम

इम—एम

पउर—पोर—गये वर्षे

आजु—आज

कालि—काल

आवतइ कालि—आवती काले

कांई—कांई

अनइ कांई-अन्य शुं—बीजुं शुं-बीजुं कांई

तउ किसउ—तो शुं—तेथी शुं अथवा तेथी केवुं

तम्हारउं—तमारुं

माहरउं—मारुं
अम्हारउ—अमारुं
तेहतणउं—तेहनुं—तेनुं
अनेरातणउं—अन्यनुं
किहतणउं—केहनुं—केनुं
जिसउं—जेवुं
अनेसउं—अन्यनी जेवुं
सरीषउं—सरखुं
तेतलउं—तेटलुं
केतलउं—केटलुं
तेवडउं—तेवडुं
कियद्—वृद्धम्—केवडउं-केवडुं-केटलुं वडुं—केटलुं मोटुं
तेतला—तेटला
तईय लगइ / तहींय लगइ — त्यांलगी—ते समयथी मांडीने—त्यारथी मांडीने
हउ—हो
आथ (घ?)उ—आघो
हेठउं—हेठुं
पइलउ—पेलो
पाछिलउ—पाछलुं
छेहिलउं—छेल्लुं
पूर्विलउं—पूर्वलुं—पूर्वनुं
जेहतणउं—जेहनुं—जेनुं
एहतणउं—एहनुं—एनुं
किसउं—केवुं
तिसउं—तेवुं
इसउं—एवुं
जेतलउ—जेटलुं
एतलउ—एटलुं
जेवडउं—जेवडुं
एवडउं—एवडुं
जेतला—जेटला
केतला—केटला
जईय लगइ / जहींइ लगइ — ज्यां लगी— जे समयथी मांडीने——ज्यारथी मांडीने
अजी—हजी—आज सुधी
अईय—आ
कु जि कांइ—कोण जाणे शुं (?)
किसउं—किम्—कशुं—शुं
ओल्यिउ—ओल्यो
पहिलउं—पहेलुं—पेलुं
आगिलउं—आगलुं
मांहिलउं—मांयलुं—वचेनुं
वेगलुं—वेगळुं
इहांतणउ—अहींनुं

ग्रामतणउ—गामनुं	आजूनउ—आजनुं
केही गमातणउं-कई गमनुं-कई बाजुनुं	परायुं—परायुं
अहुणोकउं—ओणुकुं	परोकउं—पोरकुं
काह्लणउं—काह्लनुं—कालनुं	वहिलउं—वहेलुं
मउडउं—मोडुं	गाढ—घणुं—गाढुं
ऑरहउं—ओरुं	

१६९ पन्दरमा सैकानी गुजरातीनो स्पष्ट ख्याल आवे ते माटे अहीं में तेने लगता विशेष प्रयोगो जणाव्या छे. अने १४११ थी १४८८ सुधीनी पांच कृतिओना उतारा पण आप्या छे.

आ गुजराती अने आपणी गुजराती वच्चे हवे तो नहीं जेवो ज भेद छे. 'अइ' अने 'अउ' वाळां पदोनो उच्चार आपणे तेमनो गुण करीने एटले 'अइ' नो 'ए' अने 'अउ'नो 'ओ' करीने करिए छिए त्यारे

पन्दरमा सैकानी भाषामीमांसा

पन्दरमा सैकानी गुजरातीमां तेमनो गुण थया विना ज एम ने एम उच्चारण थाय छे. वीजुं, अत्यारसुधीनी गुजरातीमां प्रथमानुं एकवचन 'ओ' कारवाळुं नहोतुं जणातुं ते, आ कृतिओमां उपलब्ध थाय छे. जो के 'ओ'कारवाळा पदनो उपयोग विशेष नथी थयो देखातो; पण छे तो खरो अने साथे चंद्र, सोनार, वीतराग, जीव, एवां प्रथमामां आजे य वपरातां पदो पण ए कृतिओमां वपरायां छे. अने प्राचीन परंपरानो 'उ' एटले जनपदु, हरिदत्तु वगैरे 'उ' वाळा पण प्रथमांत प्रयोगो देखाय छे.

तात्पर्य ए के प्राचीन अने अर्वाचीन बन्ने प्रकारना प्रयोगोनी वपराश आ कृतिओमां छे.

ए ज प्रमाणे अत्यार सुधीनी कृतिओमां त्रीजी विभक्तिमां 'इं' के

'इ' प्रत्यय वपरातो, ते नामने छेडे जुदो रहेतो के नामना अंत्यस्वर साथे मळीने रहेतो. प्रस्तुत कृतिओमां तेवा प्रयोगो उपरांत नामना अंत्य स्वर साथे मळीने के जुदो रहेतो 'ए' पण वपरायेलो छे; जेहे, घणे, वीजीए, देवताए. आपणी चालु गुजरातीमां तृतीयाना 'ए'नो उपयोग पण ए रीते ज प्रवर्ते छे.

पन्दरमा सैकानी कृतिओमां वपरायेली षष्ठीना प्रत्ययोमां—रहइं, रहइ, हूइं, तणउं, तणी, नी, तणा, नां, नउं, नुं, नउ, नु, ह अने चा एटलानो समावेश छे. आमांनां केटलांक तो परंपराथी चाल्यां आवे छे; परंतु रहइ, रहइं, हूइं, नां, नुं, नु, नी अने 'चा' एटला प्रत्ययो आ सदीमां नवा आव्या छे. नवा एटले अभूतपूर्व एम नहीं पण अगाउ नहीं वपरायेला एवा. 'तणउ' नो 'नु' 'तणई' नो 'नी' अने 'तणउं' नो 'नुं' ए रीते 'नु' 'नी' अने 'नुं' नी उपपत्ति छे. चालु भाषामां आ प्रत्ययो छूटथी वपराय छे. त्यारे उक्त कृतिओमां ए प्रत्ययो उपरांत 'तणउ' वगेरे प्रत्ययो पण वपरायेला छे. चालु भाषामां य कवितामां 'तणो'नो उपयोग चालु छे, ए ध्यानमां रहे. चोथी, छठ्ठी अने वीजीना प्रत्ययोमां विशेष भेद नथी. एथी चोथी अने वीजीना प्रत्ययोनी चर्चा जुदी नथी करतो.

पन्दरमी सदीमां वपरायेला 'रहइ' 'रहइं' के 'हूइं' ना मूळनो ख्याल स्पष्ट नथी आवतो छतां हेमाचार्ये सूचवेला तादर्थ्यसूचक 'रेसि' के 'रेसिं'मां तेमनुं मूळ संभवित छे अथवा तादर्थ्यसूचक 'रेसि' + 'केहिं' ए रीते बे निपातना जोटा द्वारा आवेला 'रेसिकेहिं' ए जातना पदमां पण तेमना मूळनो संभव छे. चतुर्थी अने षष्ठीमां भेद नथी एथी ज तादर्थ्यसूचक उक्त निपातो, षष्ठीसूचक 'रहइ' वगेरे

प्रस्तुत प्रत्ययोना मूळमां होवानी कल्पना थाय छे. केटलाक विद्वानो 'अर्थके'–अरथके–अरहए–रहए–रहइं के हूइं करीने 'रहइ' के 'हूइं' नी उपपत्ति कल्पे छे. 'चा'नुं मूळ हेमचंद्रे बतावेला संबंधसूचक 'एच्चय' प्रत्ययमां छे. ८–२–१४९ सूत्रमां 'तुम्हेच्चयं' 'अम्हेच्चयं' नुं उदाहरण आपीने हेमचंद्र 'एच्चय' प्रत्ययनी साबीती आपे छे. प्राकृतमां तो 'एच्चय'नो उपयोग मात्र 'युष्मद्' अने 'अस्मद्' पूरतो छे, त्यारे लोकभाषामां ते व्यापक बनेलो छे. एथी ज कवि असाइत 'राइचा' एवुं 'एच्चय' प्रत्ययवाळुं पद वापरे छे.

चालु भाषामां वपराता 'शिला ऊपर' जेवा प्रयोगो पण पन्नरमी सदीनी कृतिओमां मळे छे. 'सिद्धसिला ऊपरि' वगेरे.

अत्यार सुधीमां सातमी विभक्ति माटे 'माहि' के 'माहिं' पूरकनो उपयोग थतो आव्यो छे. तथा नामना अंत्य स्वर साथे मळेलो के जुदो 'इ' प्रत्यय वपरातो आव्यो छे त्यारे पन्नरमा सैकानी कृतिओमां नामना अंत्य स्वर साथे मळेलो 'ए' प्रत्यय पण वपरायेलो छे. चोरे, अनेरे, गए, लक्षणे इत्यादि. अहीं जणावेली पन्नरमी सदी पहेलांनी गुजराती कृतिओमां ए रीते सप्तमीसूचक 'ए' प्रत्ययनो उपयोग थयो जाण्यो नथी.

चालु गुजरातीमां आ 'ए' प्रत्यय अने 'मां' पूरक विशेषे करीने प्रचलित छे.

पांचमीना प्रत्ययोनी चर्चा

१७० पांचमीना प्रत्ययो तउ, इतउ, हूंतउ, थउ, थकउ, थिकु, थिकुं, थिकइं, थकी. एमांना आदिना त्रण, परंपराथी चाल्या आवे छे अने 'थउ' वगेरे पन्दरमी सदीनी कृतिओमां वपरायेलां पंचमीनो अर्थ बताव-

नारां पूरक पदो छे. एने प्रत्ययो कहो तो पण चाले. मूळ 'स्थित' के 'स्थितक' मांथी उक्त 'थउ' वगेरेनी उपपत्ति छे एम केटलाक विद्वानो कहे छे. 'वृक्ष थकउ पान पडइ' एटले 'वृक्षमां स्थित रहेलुं पांदडुं पडे छे' आमां 'थकउ' ए प्रथमांत छे अने 'पान' नुं विशेषण छे, एटले 'थकउ' वगेरेमांथी पांचमीनो अर्थ नीकळतो जणातो नथी. जेम षष्ठी-सूचक 'तण' प्रत्ययवाळां पदो विशेषणरूप छे तेम 'थकउ' वगेरे पदो जेने लागेलां छे ते पदो पण विशेषणरूप छे अने ते पण विकारी. अहीं ए याद राखवुं घटे के 'तण' तो संबंधसूचक प्रत्यय छे; त्यारे प्रस्तुत 'स्थित' शब्द कोई प्रकारना विभक्त्यर्थने स्वतंत्रपणे जणावतो नथी; परंतु कुलमंडने ए 'थकउ' वगेरेने पंचमीना प्रत्ययो तरीके जणावेला छे, एटले ए पंचमीना प्रत्ययो छे एमां शक नथी; छतां तेनी उपपत्ति माटे बतावायेलो 'स्थित' के 'स्थितक' शब्द बराबर छे के केम ? ए विचारणीय छे. सप्तमीना 'माहि'ना मूळरूपे सूचवायेलो 'मध्ये' शब्द पोते ज सातमीनो भाव सूचवे छे तेम 'स्थित' शब्दद्वारा कोई रीते पांचमीनो भाव द्योतित थतो नथी. 'वाघथी बीउं छुं' 'वळाथी भावनगर बार गाउ छे' 'माराथी ते मोटो छे' ए पदोमां रहेला 'थी'नुं मूळ 'स्थित' कल्पीएं तो अर्थ केम घटाववो ?

'वृक्षइतउ' मां 'इ' तृतीयानो सूचक छे अने 'तउ' नुं मूळ पंचमीसूचक 'तस्' मां छे; ए जोतां 'इतउ' ए, 'इ+तउ' एम बे प्रत्ययो मळीने एक प्रत्यय बनेलो छे. तृतीया अने पंचमीना अर्थमां सादृश्य पण ठीक ठीक छे, एटले 'इ' अने 'तउ' ना मेळमां कशो बाध भासतो नथी. अथवा जेम 'मध्ये' पद सप्तमीने सूचवे छे तेम 'इतस्' अव्यय पंचमीनुं द्योतक छे. तेने स्वार्थिक 'अक' लागतां 'इतकस्'. ते

द्वारा इतकओ–इतअओ–इतअउ–इतउ ए रीते पण 'इतउ'ने समझावी शकाय.

'इतउ'नी पेठे एक 'तउ' प्रत्यय पण पंचमीने सूचवे छे. ते 'तउ' अने संस्कृतमां पंचमीना अर्थे वपरातो 'तस्' ए बे वच्चे विशेष समानता छे. एथी तस्–(७–२–३१ है०) तकस्–तअओ–तअउ–तउ ए रीते 'तउ'ने साधी शकाय अने ते 'तउ' द्वारा 'थउ'ने पण लावी शकाय. 'तकस्' ना 'क' नो लोप न करीए तो तकओ–तकउ–थकउ ए रीते 'थकउ'ने पण लावी शकाय. अने हेमचंद्रे सूचवेला (८–४–३४१) पंचमीना 'हुं'ने फरी वार पंचमीसूचक 'तो' (तस्–तो) लगाडवाथी 'हुंतो'ने साधी शकाय अथवा प्राकृतमां पंचम्यर्थे वपरातो 'सुंतो' 'हुंतो' अने प्रस्तुत 'हूंतो' ए बधा एक ज केम न होय? स्वरोनुं परिवर्तन भाषामां साधारण रीते प्रचलित छे एटले छेडे के वच्चे भिन्नभिन्न स्वरवाळा ए प्रत्ययोनी उपपत्ति उक्त रीते संगत थई शकशे. आ माटे विशेष स्पष्ट करवा भाषाविदोने मारी नम्र विनंती छे.

१७१ पन्दरमा शतक पहेलांनी गुजरातीमां 'छे' नो उपयोग कोई बीजा क्रियापदनी साथे थतो जाण्यो नथी त्यारे पन्दरमा शतकना अंतनी गुजरातीमां 'कहइ छइ' 'कहि छइ'–एवा प्रयोगो मळे छे, तेनो अर्थ 'कहे छे' ए स्पष्ट छे. ए ऊपरथी मालूम पडे छे के चालु गुजरातीमां जे रीते 'छे' नो प्रयोग सहायक–क्रियापद तरीके थाय छे, ते ज रीते पन्दरमा शतकना अंतनी गुजरातीमां पण 'छे' नो उपयोग थयेलो छे. आ प्रकारे प्रत्ययो, क्रियापदो अने आगळ जणावेला शब्दो जोतां पन्नरमा शतकनी गुजराती, अत्यारनी गुजरातीनी विशेष निकट छे.

१७२ पन्दरमा शतकनी गुजरातीना नमूनाओमां एक नमूनो लक्ष्मी-

धर नामना पारसी पंडित गृहस्थे लखेला गुजराती–गद्यनो छे. ते

पारसी लेखक अने जैन लेखक ए बन्नेनी समान गुजराती

लेखके लखेली गुजराती अने बीजा तरुणप्रभ वगेरे जैन लेखकोए लखेली गुजराती, भाषा तरीके एक ज छे.

पारसी पंडिते वापरेलां नामरूपो अने क्रियापदोनी सूची अहीं आपेली छे; तथा नमूनामांथी विभक्तिवार साते विभक्तिओनां उदाहरणो पण जणावेलां छे. ए ऊपरथी उक्त पारसी लेखके वापरेली भाषाना स्वरूपनो स्पष्ट ख्याल आवी शके एम छे अने ए भाषा, पन्नरमा शतकना बीजा लेखकोए वापरेली भाषा करतां लेश पण भिन्न नथी, ए पण ए उदाहरणो द्वारा समझी शकाय एम छे.

ए पारसी लेखकनी भाषा सांप्रदायिक वृत्तांतनी साथे संकळायेली छे अने तेथी तेमां केटलाक शब्दो एवा छे के जेनो आपणने परिचय न होय, पण एम होवाथी कांई भाषाना देहमां भेद थतो नथी. आ नमूनाथी एम चोक्कस सिद्ध थाय छे के गुजरातना रहीश तरीके गुजराती लखनारा जैन, वैदिक, पारसी वा अन्य लेखकोनी भाषा जुदी जुदी नथी होती. जे कोई, जैन अने ब्राह्मण वा तदितर एवा गुजराती लेखकोनी भाषामां भेद कल्पे छे ते भ्रममां छे.

उक्त पारसी लेखकनी भाषामां वपरायेला केटलाक शब्दो ऊपर पवित्र अवेस्तावाणीनां उच्चारणोनी असर माल्म पडे छे. अवेस्तावाणीमां 'एपाम्' ने बदले 'अएषाम्' 'श्रेष्ठ' ने स्थाने 'स्रएस्त' 'देव'नुं 'दएव' 'एतेषाम्'नुं 'अएतेषाम्' 'अन्येषाम्'नुं 'अन्यएषाम्' 'प्रति'नुं 'पइति' 'दीर्घायु'नुं 'दरेगायु' 'उभय'नुं 'उबोयो' 'भूरि'नुं 'वूइरि' 'भरति'नुं 'वरइती' 'नारी'नुं 'नाइरी' अने 'भेषज'नुं 'वएषज' एवां उच्चारणो

विशेषपणे प्रचलित छे. तेम उक्त पारसी लेखकनी गुजरातीमां 'भुवन'नुं 'भउवन' 'विनोद'नुं 'वइनोद' 'सुख'नुं 'सउख' 'दुर्गंधि'नुं 'दउर्गंधि' 'सुगंधपणुं'नुं 'सउगंधपणुं' 'निग्रह'नुं 'नइग्रह' अने 'सुंदर'नुं 'सउंदर' एवां स्वरविश्लेष अने स्वरवृद्धिवाळां पण रूपो वपरायेलां छे.

जे लेखकनो गाढ परिचय प्राकृत साथे होय तेनी कृतिमां केटलांक प्राकृत उच्चारणो आवी जवानां, जेनो गाढ परिचय संस्कृत साथे होय तेनी कृतिमां संस्कृतनी असर थवानी ज, तेम पारसी लेखकनी भाषामां एमनी साथे विशेष परिचयवाळी अवेस्तावाणीनां उच्चारणो आवे ए स्वाभाविक छे. 'अर्दाग्वीरा'ना मुद्रित पुस्तकमां 'स्था'ने बदले अनेक स्थळे 'स्छा' छपायेलुं छे, तथा 'स्वर्ग'ने बदले 'स्वर्ग्र' छपायेलुं छे. लखेली प्रतिओमां 'थ' अने 'छ' एक सरखा जेवा जणाय छे. तथा बेवडा 'ग'ने बदले लिपि लखनारा 'ग्र' जेवो वर्ण लखे छे, एथी 'थ' अने 'छ'नो तथा 'ग' अने 'ग्र'नो विश्लेष न समझायाथी 'स्था'ने स्थाने 'स्छा' तथा 'स्वर्ग'ने स्थाने 'स्वर्ग्र' छपायेलुं जणाय छे, एवो मारो नम्र अभिप्राय छे.

ए पुस्तकनी भाषा पन्नरमा सैकानी छे एम तेनी अंतिम पुष्पिका उपरथी ज मालूम पडे छे. पुष्पिका आ प्रमाणे छेः—

"संवत्सरेषु चतुर्दशशतेषु संवत्सर ७१ वर्षे" इत्यादि "अध्यारू चहिरामश्रुत अध्यारू लक्ष्मीधर लक्षतं" संवत १५०७ वर्षे मार्गसर सितात द्वादिशी तिथौ सोम दिने अश्विनी नक्षत्रे वरीआन जोग्य (वरि-यान्—वरीयसि—योगे) प्रवर्तमाने श्रीःनागसारकायां शुभं भवति"

आ बन्ने प्रांत लेखो द्वारा पन्नरमा शतकना उत्तरार्धे तथा सोळमा शतकना आरंभे जे जातनी गुजराती प्रवर्तती हती तेनो स्पष्ट ख्याल आवे एम छे.

बारमा शतकनी गुजराती ते ऊगती गुजराती के प्राचीन गुजराती, तेरमा अने चौदमा शतकनी गुजराती विशेष खीलेली के किशोर गुजराती अने पन्नरमा शतकनी गुजराती ते मध्यम वयनी गुजराती के आपणी तद्दन पासेनी गुजराती छे.

उक्त कृतिओमां क्यांय क्यांय 'सागिल्लि' जेवा देश्य शब्दो वपरायेला छे अने बीजी भाषाना 'गमार' जेवा शब्दो पण उपयोगमां आवेला छे; परंतु ते घणा ज विरल छे.

वैदिक लेखकनी अने जैन लेखकनी समान गुजराती

१७३ अहीं आपेली पन्नरमा शतकनी कृतिओमां बे कृतिओ वैदिक परंपराना कवि असाइत अने कवि भीमनी छे. कवि असाइतनी 'हंसाउली' मां 'जातीसमरण' 'थापणिमोसु' 'मिथ्याती' 'आठ कर्म' 'वीरवचन' वगेरे जैन पारिभाषिक शब्दो वपराया छे तेथी एम जणाय छे के कवि (असाइत) जैन धर्मना पारिभाषिक शब्दोनो विशेष परिचय धरावे छे अर्थात् जैन संप्रदाय साथे तेनो संसर्ग ठीक प्रमाणमां हशे. ते बन्ने कविओनी भाषा तरफ विद्वानोनुं लक्ष्य खेंचाय ए माटे आ स्थळे थोडुंक वधारे जणाववुं जरूरी छे. साक्षरोमां एक एवो जूनो मत प्रचलित छे के जैन कविओनी भाषा अने वैदिक कविओनी भाषा वच्चे अंतर छे. जैन कविओनी भाषा प्राकृतमूलक छे अने वैदिक कविओनी भाषा संस्कृतमूलक छे. बन्नेनी भाषा छे तो गुजराती परंतु तेना मूळ प्रवाहो जुदा जुदा छे. आ मत, हुं मानुं छुं ते प्रमाणे तद्दन भ्रांतिमूलक छे अने अद्यतन विद्वानो पण आ मतने मिथ्या माने छे. अहीं आपेली असाइतनी अने भीमनी कृति ऊपरथी आपणे स्पष्टपणे जाणी शकीए छिए के

वैदिक हो के जैन हो वा अन्य कोई हो परंतु जे कोई गुजराती छे तेनी भाषामां भेदभाव नथी. विषयने लीधे भाषामां जे विशेषता आवे ते समझी शकाय एम छे. परंतु एकनी भाषा संस्कृतमूलक छे अने बीजानी भाषा प्राकृतमूलक छे एवो भेद तो तेमनी भाषा वच्चे नथी ज. अहीं मैं कवि असाइतनी अने कवि भीमनी कृतिना जे शब्दो अने क्रियापदो आप्यां छे ते उपरथी स्पष्ट माळूम पडे छे के जैन कवि अने वैदिक कविनी गुजराती भाषा वच्चे कशो ज भेद नथी. आ संबंधे सद्गत साक्षरवर भाई चिमनलाल दलाले वसंतमां (व० पु० १५ अं० ३–७–१९७२) नीचे प्रमाणे जणावेलुं छे:—

"प्रस्तुत काव्यनी भाषा कोई पण प्रसिद्ध थयेला जैनेतर गूजराती ग्रंथ करतां घणी जूनी छे. प्राकृत तथा अपभ्रंश शब्दो तथा प्रयोगोथी आ काव्य एटलुं बधुं भरपूर छे के जो तेना कर्ताए मंगलमां गणपतिनुं नाम ना लीधुं होत तो ते जैन काव्य तरीके गणीने उपेक्षवामां आवे." "कविए संस्कृत शब्दोने बदले प्राकृत तथा अपभ्रंश शब्दो ज वापरेला छे. जे जूनी गूजराती ने जैन गुजरातीमां भेद समझनाराओए विचारवा जेवुं छे. आ काव्यनी जूदी जूदी प्रतोमां भाषाना घणा फेरफारो छे; परंतु जे प्रतोमांथी अवतरणो आपेलां छे, तेमांनी एक सं० १४८८ मां लखेली होवाथी तेमां मूळ भाषा घणे मोटे भागे असल स्वरूपमां सचवायेली छे."

श्री दलालनो अभिप्राय

भाई श्रीदलालनुं उक्त कथन अक्षरशः खरुं छे. पुनरुक्तिदोष स्वीकारीने पण अहीं असाईत अने भीमना केटलाक प्रयोगो फरी वार नोंधी बतावुं छुं:—

असाइत	भीम	
मढ—(मठ)	नरनाह—(नरनाथ)	अहिणवड—(अभिनवक)
पगार—(प्राकार)	कल्हि—(कल्ये)	सौवन्न—(सौवर्ण)
सकति—(शक्ति)	पगर—(प्रकर)	वन्न—(वर्ण)
रषि—(ऋषि)	अपुव्व—(अपूर्व)	तिलय—(तिलक)
कासमीर—(काश्मीर)	आणणि—(आनने)	नेउर—(नूपुर)
सरसति—(सरस्वती)	करियाणा—(क्रयाणक)	लोयण—(लोचन)
विघन	मयमत्त—(मदमत्त)	पायक-(पाइक्क—पदाति)
परमेसु	गयंदु—(गजेन्द्र)	सरिस—(सदृश)
भरतारि	वेड—(वेद)	भत्ति—(भक्ति)
वागि	धुनि—(ध्वनि)	गय—(गज)
वीनती	घाउ—(घात)	पयपंकय—(पदपङ्कज)
त्रिपनमु		
नरवि		

असाइत क्रि०		भीम क्रि०	
भणि	कहीइ	विन्नवइ	कहइ
होई	ऊठाडु	भंजइ	तोलइ
कीया	ऊठिउ	सूझइ	मंडाइ
गया	वणास्युं	जोइइ	आदरइ
मारिस		विधंसइ	

१७४ कवि असाइते अने कवि भीमे वापरेला उपर जणावेला शब्दो पोते ज कही आपे छे के ए कविओनी भाषा संस्कृतमूलक छे के प्राकृतमूलक छे ? में आगळ कह्युं छे तेम गुजराती भाषा के कोई पण

१७६ पन्नरमा सैकाना श्रीगुणरत्नसूरिए विक्रमसंवत् १४६६ 'मां रचेला पोताना 'क्रियारत्नसमुच्चय'[320]मां ते समयनी प्राकृतवार्ता—लोकवार्ता—लोकभाषा—मां चालतां केटलांक क्रियापदो अने वाक्यो आपेलां छे. जेने जाणवाथी ते समयनी चालु भाषानो विशेष स्पष्ट ख्याल आवशे माटे ते बधांने आ नीचे जणावी दउं छुं: उक्त कुलमंडन अने प्रस्तुत गुणरत्न बन्ने गुरु-भाई हता, ए वात आगळ (पृ० ४५०) जणावाई गई छे.

गुणरत्नना प्रयोगो

तृतीय पुरुष —

वर्तमान—एउ करइ (ए करे छे) लियइ (ले छे—"लाति"—गुणरत्न) दिअइ (दे छे) जायइ (जाय छे) 'आवइ' (आवे छे—"आपतति" गुण०) जागइ (जागे छे) सुअइ (सूए छे).

बहु०—ए घणां करइं (एओ घणा करे छे)
ए घणां लिइं (एओ घणां ले छे)

द्वितीय पुरुष —

तूं करँ (तुं करे छे)
तूं लिअँ (,, ले छे)
तूं दिअँ (,, दे छे)
बहु०—तुम्हे करउ (तमे करो छो)
,, लिअउ (,, ल्यो छो)
,, दिअउ (,, द्यो छो)

---

३२० क्रियारत्नसमुच्चय—बनारस यशोविजय जैन पाठशाळाए यशोविजय जैन ग्रंथमाळाना दशमा पुस्तकरूपे प्रसिद्ध करेलो छे.

प्रथम पुरुष अथवा अस्मद्–पुरुष
हूं करउं (हुं करुं छुं)
,, लिउं (,, लउं छुं)
,, दिउं (,, दउं छुं)
बहु०—अम्हे करउ–(अमे करिए छिए)

भावेप्रयोग—देवदत्तइं हुईअइ (देवदत्तवडे होवाय छे–थवाय छे)

तइं सुईअइ (तारा वडे सुवाय छे) मइं बइसीअइ (मारा वडे बेसाय छे)

कर्मणि प्रयोग—कीजइ (कराय छे) लीजइ (लेवाय छे) दीजइ (देवाय छे)

बहु०—कीजइं (घडा कराय छे) लीजइं (घडा लेवाय छे) दीजइं (घडा देवाय छे).

तूं कीजं (तुं कराय छे) हूं कीजउं (हुं कराउं छुं) सेहि आवश्यकु पढिउं (शैक्षे आवश्यक पढ्युं)

बहु०—तुम्हे कीजउ (तमे कराओ छो)

देवदत्त वहिलउं जिमि पाछइ गाम जाइसि–(देवदत्त वहेलुं जमी पछी गाम जाय छे–जशे)

विध्यादि अर्थ—करेवउं (करवुं) लेवउं (लेवुं) देवउं (देवुं)

तृतीय पुरुष बहु०—करिजो (तेओ करे के करज्यो) लेजो (तेओ ल्ये के लेज्यो) देजो (तेओ दे के देज्यो)

द्वितीय पुरुष तूं करिजे (–तुं करजे) लेजे (लेज्ये) देजे (देज्ये)
बहु० तुम्हे करिजो (तमे करज्यो)

अस्मद्–पुरुष—हूं, अम्हे करिजउं (हुं करुं, अमे करिए) लेजउं
वा (हुं लउं के अमे लइए), देजउं (दउं के दइए)

प्रथम–पुरुष— करत (हुं तुं ते अमे तमे तेओ करत)
लेअत (,, ,, ,, ,, ,, ,, लेत)
देअत (,, ,, ,, ,, ,, ,, देत)

श्रावकइं विनउ जिनरहइं करिवउ (श्रावके विनय जिननो करवो) जन्मनउं फल लेजउं (जन्मनुं फळ लेवुं) देजउ (देवुं) दानु देवउं (दान देवुं) अम्हे भीख जीमवी (अमारे भीख जमवी) जूनउं वस्त्र पहिरवउं (अमारे जूनुं वस्त्र पहेरवुं) गुरि अणुजाणिउ चेलउ व्याकरण पढत (गुरुए अनुज्ञात थयेलो चेलो व्याकरण भणत–भणे)

तूं करिजे (तुं कर) हूं करिजउं (हुं करुं)

कर्मणि—तीणइं कीजइत–(ते वडे कराय)

भावे—हुईअत–(तेवडे होवाय–थवाय)

कर्तरि अनुमति अर्थ } त्रीजो पु०—करउ (करो) लिउ ("लातु" गुण०–ल्यो) दिउ (द्यो) हुउ (हो)

बीजो पु०— तूं करि (कर) लइ (ले) दइ (दे) जा (जा) आवि (आव), पढि (पढ), गुणि (गुण –गण)

कर्मणि— कीजउ (तारा वडे कराय) लीजउ (लेवाय– "लायताम्" गुण०)

आशीर्वाद—एउ राज्य करउ (ए राज्य करो) एहना वइरी मरउ (एना वेरी मरो)

भूतकाळ :

अद्यतनभूत—आजनउ—(आजनो)

आजु कीधउं (आजे कीधुं-कर्युं), आजु लीधउं (आजे लीधुं "अलासीत्" गुण०), आजु दीधउं (आजे दीधुं).

ह्यस्तनभूत—कालनउ (कालनो)

कालि कीधउं (काले कीधुं—कर्युं)

कालि लीधउं (काले लीधुं "अलात्" गुण०)

तत्रात्कन—तेह पहिलउ (तेनी पहेलो-तेनी पहेलांनो) भूत-सामान्यभूत—

आगइ करतउ (आगे—पहेलां करतो)

आगइ लेतउ (आगे लेतो)

बहु० आगइ करता (आगे करता)

आगइ लेता (आगे लेता)

भूत० कर्म०—आगइ कीधउं (आगे कीधुं—करायुं) आगइ लीधउं आगे लीधुं— लेवायुं (आगइ दीधउं (आगे दीधुं—देवायुं)

ईणइं धर्म कीधउं (एणे धर्म कर्यो)

ईणइं पुरुषइं दस ग्राम पाम्यां (ए पुरुषे दस गाम पाम्यां)

ईणइं वस्त्र वीक्यां (एणे वस्त्र वेक्यां—वेच्यां)

लहुडपणि दिहाडी प्रति हूं बि करस घी जिमतु (लघुपणमां—नानपणमां दहाडा प्रत्ये हुं वे करस घी जमतो)

एउ पाँच जोयण भूमि चालतउ (ए पांच जोजन भूमि चालतो)

तूं दिहाडी प्रति ५० श्लोक व्याख्यानि भणतउ (तुं दहाडा प्रत्ये ५० श्लोक व्याख्यानमां भणतो—कहेतो)

आगइं ए चेला दिहाडी प्रति वि सहस्र सज्झाय गुणता (आगे ए चेला दहाडा प्रत्ये वे सहस्र—हजार—सज्झाय[321] गणता)

तुम्हे त्रिन्नि सइं ग्रन्थ लिखता (तमे त्रणसें—श्लोक—ग्रंथ लखता)

अम्हे सउ श्लोक पढता (अमे सो श्लोक पढता—भणता)

एउ गामि गिउ (ए गामे गयो)

स्मरँ हो—संघ साथइ श्रीशत्रुंजइ श्रीगुरु चालिआ (स्मर—स्मरण—कर हो—संघ साथे श्रीशत्रुंजये श्रीगुरु चालवाना—चाल्या)

जाणँ हो—मित्र अहे दिहाडे आपणि जलकेलि करता (जाण हो-मित्र! ए दहाडे—दिवसे—आपणे जलकेलि करवाना—करता)

जाणँ हो—आपणि देवपणइ तीणइ विमानि वसता (जाण हो—आपणे देवपणे ते विमाने वसवाना—वसता)

बीजो पुरुष—म करे (तुं म कर) म करिजे (म करजे) म करिसि (म करीश) म दिइ (म दे) म देजे (म देजे) म देसि (म दईश) म जा (म जा) म रहिजिउं (म रहेज्यो—रहेजे)

आक्षेप—आक्रोश—म कीधु (म कीधुं—कर्युं—म करतो) म लीधु (म लीधुं—म लेतो), म दीधु (म दीधुं—म देतो) म जईउ (म जा—जतो) रखे जीवतउ (रखे जीवतो) रखे जातउ (रखे जातो) रखे करतउ (रखे करतो) रखे जीवतउ जे परावशाइं छतीइं जीवइ (रखे जीवतो जे परावशा छतां जीवे छे)

क्रियातिपत्ति—जइ किमइ अमुकं करत, लिअत, दिअत, तउ अमुकं हुयत (जो कांई अमुक करत, लेत, देत, तो अमुक होत—थात)

---

[321] 'स्वाध्याय' अने 'सज्झाय' ए बन्ने पर्यायशब्दो छे. जैनसंप्रदायमां 'सज्झाय' शब्द विशेष प्रचलित छे.

भविष्यकाळ—आजनउ (आजनो), काल्नउ (काल्नो), तेह परहउ (तेनी परनो–पछीनो):

कारिसिइ (करशे) लेसिइ (लेशे) देसिइ (देशे)

बीजो० पु०—तूं कारिसिइ (तुं करशे–करीश) लेसिइ (लेशे–लईश) देसिइ (देशे–दईश)

बी० व०—तुम्हे कारिसिउं (तमे करशो)

प्रथ० पु० ए० तथा व०–हूं करिसु (हुं करीश) अम्हे कारिसिउं (अमे करीशुं)

आशीर्वाद—करिज्यउ–(करज्यो) पढिज्यउ (पढज्यो)

मरिज्यउ (मरज्यो) हुज्यउ (होज्यो)

गुणरत्नना प्रयोगोनी मीमांसा

ऊपर जणावेलां क्रियापदो अने वाक्योने श्रीगुणरत्ने क्रियापदने लगती संस्कृत विभक्तिओनी वपराश केवी रीते करवी ? ते समझाववा नोंधेलां छे. ते क्रियापदोनो व्यवहार अने आपणो चालु क्रियापदोनो व्यवहार एक बीजा ओतप्रोत छे. मात्र ते क्रियापदोमां 'अइ' 'अउ' के 'अउं' वगेरे अंतस्थित स्वरो जुदा जुदा रहेला छे, त्यारे आपणा उच्चारणमां ए स्वरो 'ए' 'ओ' के 'उं' रूपे परिणमी गया छे. त्वरित उच्चारणमां एवो परिणाम सुघट छे. गुणरत्ने भूतकाळ अने भविष्यकाळना त्रण त्रण भेदो संस्कृतनी अपेक्षाए जणाव्या छे; परंतु ते वखतनी अने अत्यारनी गुजरातीमां भूतकाळ के भविष्यकाळनी विविधता बतावनारां क्रियापदो जुदां जुदां रह्यां नथी. पन्नरमी शताब्दीनुं 'कीधउं' वा आजनुं 'कीधुं'–'कर्युं' ए एक ज क्रियापद, अद्यतन ह्यस्तन के परोक्ष भूत एम त्रणे भूतकाळने जणावे छे, त्यारे संस्कृतमां तेम नथी. तेमां तो ह्यस्तन–'अकरोत्' अद्य-

तन–‘अकार्षीत्’ अने परोक्ष–‘चकार’ एम एक ‘कृ’ धातुनां त्रण जुदां जुदां क्रियापदो छे. प्राकृतमां संस्कृतनी पेठे नथी परंतु गुजराती जेवुं छे. एक ‘करीअ’ वा ‘करित्था’ (‘कृ’ नुं) क्रियापद सर्वप्रकारना भूत-काळ माटे प्राकृतमां प्रचलित छे.

चालु भाषामां उक्त भूतकाळोनी स्पष्टता बताववी होय तो अद्यतन माटे ‘आजे कर्युं’ ह्यस्तन माटे ‘काले कर्युं’ अने परोक्ष माटे ‘घणुं पहेलां कर्युं’ एम बोलवुं आवश्यक छे, एम गुणरत्न सूचवे छे.

ए ज प्रमाणे अद्यतन भविष्य माटे ‘आजे करीश’ ह्यस्तन भविष्य माटे ‘काले करीश’ अने घणा दूरना भविष्य माटे ‘घणुं मोडेथी–पछीथी–करीश’ –एम पण बोलवुं जरूरी छे. संस्कृतमां जुदा जुदा भविष्यकाळने सूचववा जुदां जुदां क्रियापदोनो व्यवहार छे त्यारे प्राकृतमां तो गुजरातीनी जेवुं धोरण छे.

वर्तमानकृदंत अने भूतकृदंतनो विवेक

गुणरत्न कहे छे के ‘रोज बे लाडवा जमतो’ ‘सो श्लोक भणतो’ ‘पांच गाऊ चाल्तो’ वगेरे प्रयोगोमां आवेलां (जिमतु) जमतो (भणतउ) भणतो अने (चालतउ) चालतो–ए बधां भूतकाळसूचक पदो कर्तरि भूतकृदंत छे. जिमितः के जिमितवान् (जिमतु–जमतो) भणितः के भणितवान् (भणतउ–भणतो), चलितः के चलितवान् (चालतउ–चाल्तो) ए रीते ए पदोनी उपपत्ति श्रीगुणरत्न सूचवे छे. मने लागे छे के ए उपपत्ति बराबर छे. एवां भूतकाळसूचक पदो अने ‘करतउ–करतो’ वगेरे वर्तमानकृदंतनां पदो उच्चारणनी दृष्टिए लगभग मळतां छे छतां ए बन्नेनी उपपत्तिमां अहीं जणाव्या प्रमाणे विशेष अंतर छे, ए ध्यानमां राखवा जेवुं छे.

१७७ 'लेवुं'मां मूळ 'ला' धातु छे ए आगळ जणावी गयो छुं. तेना विशेष समर्थनमां जणाववानुं के अहीं श्रीगुणरत्ने 'लिअइ' वगेरे क्रियापदोनी प्रतिकृति तरीके मूकेलां 'लाति' 'लातु' 'लायताम्' 'अलासीत्' 'अलात्' वगेरे बधां य क्रियापदो 'ला' धातुनां छे. एथी 'लिअइ' वगेरेमां 'ला' धातुनी उपपत्ति विशेष वर्तमान छे. बीजुं, चौदमा सैकानो संग्रामसिंह 'लहइ' 'लिअइ' अने 'लेअइ' एवां जुदां जुदां त्रण क्रियापदो दर्शावे छे अने ते दरेकनुं मूळ जुदुं जुदुं समझे छे: 'लहइ'नुं 'लभते'–(लभ) 'लिअइ'नुं (ला) 'गृह्णाति' अर्थ अने 'लेअइ'नुं 'नयति' (नी) एम बतावीने 'लभ' ऊपरथी 'लहइ' 'ला' ऊपरथी 'लिअइ' अने 'नी' ऊपरथी 'लेअइ'ने नीपजावे छे. एथी पण 'लिअइ'मां 'ला'नी उपपत्तिने टेको मळे छे.

लेवुं

गुणरत्न 'आवइ'नुं प्रतिबिंब 'आपतति' जणावे छे. माटे ज आगळ हुं 'आपतति' ऊपरथी 'आवइ' आव्यानी वात जणावी आव्यो छुं.

१७८ गुणरत्ने दर्शावेलां पदोमां एक 'रखे' पद आवे छे, ते निषेधवाचक छे. आपणी चालु भाषामां य ए पद उपरांत 'राख–राख' एवुं पद पण प्रचलित छे. ए पद व्युत्पन्न छे अने तेनी व्युत्पत्ति आ प्रमाणे छे: पाणिनिना धातुसंग्रहमां "ओखृ राखृ लाखृ द्राखृ ध्राखृ शोषण-अलमर्थयोः १२१–१२५" ए रीते एक 'राख' धातु छे तेनो अर्थ 'शोषण' अने 'अलमर्थ' छे. 'अलमर्थ'नी समझ आपतां सिद्धान्त-कौमुदीना टीकाकार कहे छे के "अलमर्थः भूषणक्रिया, पर्याप्तिः, वारणं

रखे

वा"। (कौमुदी पृ० ६८—भ्वादि–प्रकरण) अर्थात् अलमर्थ एटले शोभा, पूरतापणुं अने वारण—वारवुं—निषेध करवो—अटकाववुं. उक्त 'रखे' वा 'राख' पद, प्रस्तुत निषेधवाची 'राख' धातुमांथी आवेलुं छे. बीजा पुरुषना एकवचन आज्ञार्थमां 'राख' धातुनुं 'राख' रूप थाय छे, अने 'राख राख' मां ए ज मूळभूत छे. 'राखो राखो' ए बहुवचन छे; अने ते जूनी गुजरातीना 'राखहु' उपरथी आवेलुं छे. राखहि–राखइ उपरथी 'रखे'नी उपपत्ति घटमान छे. अथवा जूनी गुजरातीमां 'राख'ना आज्ञार्थ बीजा पुरुष एकवचनमां राखि, राखु, राखे, राखेज्जे वगेरे अनेकरूपो थाय छे. तेमांनां कोईपण एक उपरथी निषेधवाचक 'रखे' सारी रीते आवी शके छे.

'रहेवा द्यो' पद पण निषेधने सूचवे छे. तेमांना 'रहेवा' अंशनी उपपत्ति उक्त 'राख्–राह्' उपरथी समजवानी छे.

१७९ बारमीथी पन्नरमी सदी सुधीनी गुजरातीनी जे कृतिओ अहीं आपेली छे तेमां 'जे'ना अर्थमां 'जु' शब्दनो प्रयोग विशेषप्रमाणमां मळे छे, त्यारे प्रस्तुत गुणरत्न 'जु' ने बदले 'जे' पद पण वापरे छे, अने आपणे वर्तमानमां 'जे नर' 'जे स्त्री' वगेरे प्रयोगोमां ए 'जे' नो ज व्यवहार करिए छिए. ए ज रीते प्रस्तुत कृतिओमां वर्तमान भाषामां प्रचलित एवा 'ते,' 'ए' प्रयोगो पण मळे छे.

वळी, कर्मणि–प्रयोगमां क्रियासूचकरूपे 'कीजइ' वगेरे पदो जूनी गुजरातीथी पन्नरमी सदी सुधीमां विशेषे करीने वपरातां आव्यां छे त्यारे पन्नरमा सैकानो कुलमंडन 'पढायइ', 'चीकाइ,' 'बोलायइ' (प्रस्तुत निबंध पृ० २६४ पं० ४–५ तथा १२) वगेरे पदोने कर्मकर्तरि तरीके नोंधे छे, अने ए रीते कर्मणिमां एक नवा 'आय' प्रत्ययनो (पृ० २६९, २७१) वधारो करे छे. वर्तमानमां कर्मणि प्रयोगोमां 'खवाय

छे,' 'नगाय छे,' 'देवाय छे' वगेरे पदोमां उक्त 'आय' नो ज प्रधान उपयोग छे. आगळ जणाव्या प्रमाणे सोळमा शतकना एक औक्तिकमां मंडाइ (मंडाय छे—शणगाराय छे) वींकाइ (वींकाय—वंचाय—छे) भणाइ (भणाय छे) वगेरे कर्मकर्तरि प्रयोगोमां (प्रस्तुत निबंध पृ० २१५) पण उक्त 'आय' प्रत्यय वपरायेलो छे, ए ध्यानमां रहे.

१८० उक्त तरुणप्रभ, सोमसुंदर, लक्ष्मीधर, हेमहंस, कुलमंडन, गुणरत्न, असाइत अने भीम ए बधा पन्नरमा सैकाना छे. एमांना कोईना समय बाबत लेश पण शंकाने स्थान नथी. तेथी ए कविओ विशे अहीं विशेष लखवुं अप्रस्तुत छे.

पन्नरमा सैकानी गुजरातीमां केटलांक लक्षणो ते पहेलांनी गुजरातीनां छे एटले ज हुं प्रस्तुत गुजरातीने मध्य गुजराती कहुं छुं, पण हवे पछी सोळमा, सत्तरमा अने अढारमा शतकनी गुजरातीमां शरूआतना बे शतकनी गुजराती केटलेक अंशे पन्नरमा शतकनी गुजरातीने अनुसरे छे अने अढारमा शतकनी गुजराती आवी एटले तो जाणे के ते आपणी चालु ज गुजराती छे एम स्पष्टपणे मालूम पडे छे. अढारमा शतकनी गुजरातीमां प्रमाणमां प्राचीनतानां लक्षणो ओछां अने अर्वाचीनतानां वधारे; त्यारे सोळमा अने सत्तरमा शतकनी गुजरातीमां हजु केटलेक अंशे प्राचीनतानी छाप खसी नथी.

चा"। (कौमुदी पृ० ६८–च्वादि–प्रकरण) अर्थात् अलमर्थ एटले शोभा, पूरतापणुं अने वारण–वारवुं–निषेध करवो–अटकाववुं. उक्त 'रखे' वा 'राख' पद, प्रस्तुत निषेधवाची 'राख' धातुमांथी आवेलुं छे. बीजा पुरुषना एकवचन आज्ञार्थमां 'राख' धातुनुं 'राख' रूप थाय छे, अने 'राख राख' मां ए ज मूळभूत छे. 'राखो राखो' ए बहुवचन छे; अने ते ऊगती गुजरातीना 'राखहु' ऊपरथी आवेलुं छे. राखहि–राखइ ऊपरथी 'रखे'नी उपपत्ति घटमान छे. अथवा ऊगती गुजरातीमां 'राख'ना आज्ञार्थ बीजा पुरुष एकवचनमां राखि, राखु, राखे, राखेज्जे वगेरे अनेकरूपो थाय छे. तेमांनां कोईपण एक ऊपरथी निषेधवाचक 'रखे' सारी रीते आवी शके छे.

'रहेवा द्यो' पद पण निषेधने सूचवे छे. तेमांना 'रहेवा' अंशनी उपपत्ति उक्त 'राख्–राह्' ऊपरथी समझवानी छे.

१७९ बारमीथी पन्नरमी सदी सुधीनी गुजरातीनी जे कृतिओ अहीं आपेली छे तेमां 'जे'ना अर्थमां 'जु' शब्दनो प्रयोग विशेषप्रमाणमां मळे छे, त्यारे प्रस्तुत गुणरत्न 'जु' ने बदले 'जे' पद पण वापरे छे, अने आपणे वर्तमानमां 'जे नर' 'जे स्त्री' वगेरे प्रयोगोमां ए 'जे' नो ज व्यवहार करिए छिए. ए ज रीते प्रस्तुत कृतिओमां वर्तमान भाषामां प्रचलित एवा 'ते,' 'ए' प्रयोगो पण मळे छे.

वळी, कर्मणि–प्रयोगमां क्रियासूचकरूपे 'कीजइ' वगेरे पदो ऊगती गुजरातीथी पन्नरमी सदी सुधीमां विशेषे करीने वपरातां आव्यां छे त्यारे पन्नरमा सैकानो कुलमंडन 'पढायइ', 'बीकाइ,' 'बोलायइ' (प्रस्तुत निबंध पृ० ३६४ पं० ४–५ तथा १२) वगेरे पदोने कर्मकर्तरि तरीके नोंधे छे, अने ए रीते कर्मणिमां एक नवा 'आय' प्रत्ययनो (पृ० २६९, २७१) वधारो करे छे. वर्तमानमां कर्मणि प्रयोगोमां 'खवाय

छे,' 'नमाय छे,' 'देवाय छे' वगेरे पदोमां उक्त 'आय' नो ज प्रधान उपयोग छे. आगळ जणाव्या प्रमाणे सोळमा शतकना एक औक्तिकमां मंडाइ (मंडाय छे—शणगाराय छे) वीकाइ (वीकाय—वेंचाय—छे) भणाइ (भणाय छे) वगेरे कर्मकर्तरि प्रयोगोमां (प्रस्तुत निबंध पृ० २१५) पण उक्त 'आय' प्रत्यय वपरायेलो छे, ए ध्यानमां रहे.

१८० उक्त तरुणप्रभ, सोमसुंदर, लक्ष्मीधर, हेमहंस, कुलमंडन, गुणरत्न, असाइत अने भीम ए बधा पन्नरमा सैकाना छे. एमांना कोईना समय बाबत लेश पण शंकाने स्थान नथी. तेथी ए कविओ विशे अहीं विशेष लखवुं अप्रस्तुत छे.

पन्नरमा सैकानी गुजरातीमां केटलांक लक्षणो ते पहेलांनी गुजरातीनां छे एटले ज हुं प्रस्तुत गुजरातीने मध्य गुजराती कहुं छुं, पण हवे पछी सोळमा, सत्तरमा अने अढारमा शतकनी गुजरातीमां शरूआतना बे शतकनी गुजराती केटलेक अंशे पन्नरमा शतकनी गुजरातीने अनुसरे छे अने अढारमा शतकनी गुजराती आवी एटले तो जाणे के ते आपणी चालु ज गुजराती छे एम स्पष्टपणे मालूम पडे छे. अढारमा शतकनी गुजरातीमां प्रमाणमां प्राचीनतानां लक्षणो ओछां अने अर्वाचीनतानां वधारे; त्यारे सोळमा अने सत्तरमा शतकनी गुजरातीमां हजु केटलेक अंशे प्राचीनतानी छाप खसी नथी.

चौदमा अने पंदरमा सैकानुं

पद्य तथा गद्य

सखि नवि खीना नेमिहिरेसि मन आपणपउं तउं खय नेसि ।
जिणि दिक्खाडिउ पहिल्उं छेहु न गणिउ अट्ठ भवंतर नेहु ॥ ९ ॥

नेमि दयालु सखि निरदोखु कीजइ उग्रसिण ऊपरि रोसु ।
पसुय–भराविउ मूकउ वाडु मुझु प्रियसरिसउ कियउ विहाडु ॥ १० ॥

कत्तिग क्षित्तिग ऊगइ संझ रजमति झिझिउ हुइ अतिझंझ ।
राति दिवसु अछइ घिल्वंत वलि वलि दय करि दय करि कंत ॥ ११ ॥

नेमितणी सखि मूकि न आस कायरु भग्गउ सो घरवास ।
इम इइसी सनेहल नारि जाइ कोइ छंडवि गिरनारि ॥ १२ ॥

कायरु किम सखि नेमि जिणंदु जिणि रिणि जित्तउ लक्खु नरिंदु ।
पुरइ सासु जा अग्गलि नास ताव न मिल्हउं नेमिहि आस ॥ १३ ॥

मगसिरि मग्गु पलोअइ वाल इण परि पभणइ नयणविसाल ।
जो मइ मेलइ नेमिकुमार तसु णीवेल(?) वहउ सविचार ॥ १४ ॥

एहु कदाग्रहु तउ सखि मिल्हि करिसि काइ तिणि नेमिहि हिल्हि ॥
मंडि चडाविउ जो किर मालि 'हे हे कु' करइ टोहणकालि ॥ १५ ॥

अठभव सेविउ सखि मइ नेमि तसु ऊमाहउ किम न करेमि ।
अवगन्नेसइ जइ मइ सामि लगी अछिसु तोइ तसु नामि ॥ १६ ॥

पोसि रोस सवि छंडिवि नाह राखि राखि मइ मयणह पाह ।
पडिउ सीउ नवि रयणि विहाइ लहिय छिद्द सवि दुक्ख अमाइ ॥ १७ ॥

नेमि नेमि तू करती मुद्धि जुव्वणु जाइ न जाणिसि सुद्धि ।
पुरिसरयणभरियउ संसारु परणि अनेरउ कुइ भत्तारु ॥ १८ ॥

भोली तउ सखि खरी गमारि वरि अच्छंतइ नेमिकुमारि ।
अन्नु पुरिसु कुइ अप्पणु नडइ गइवरु लहिउ कु रासभि चडइ ॥ १९ ॥

माहमासि माचइ हिमरासि देवि भणइ मइ प्रिय लइ पासि ।
तइ विणु सामिय दहइ तुसारु नवनव मारिहि मारइ मारु ॥ २० ॥

इह सखि रोइसि सहु अरन्नि हृत्थि कि जा (ना ?) मइ धरणउ कन्नि ।
तउ न पतीजिसि माहरी माइ सिद्धिरमणिरत्तउ नमि जाइ ॥ २१ ॥

कंति वसंतइ हियडामाहि वाति पहीजउं किमह लसाइ ।
सिद्धि जाइ तउ का इत बीह सरसी जाउ त उग्रसेणधीय ॥ २२ ॥

फागुण वा–गुणि पन्न पडंति राजलदुक्खि कि तरु रोयंति ।
गब्भि गलिवि हउं काइ न मूय भणइ विहंगल धारणिधूय ॥ २३ ॥

अजिउ भणिउ करि सखि विम्मासि अछइ भला वर नेमिहि पास ।
अनु सखि मोदक जउ नवि हुंति छुहिय सुहाली कि न रुचंति ॥ २४ ॥

मणह पासि जइ वहिल्लउ होइ नेमिहि पासि ततलउ न कोइ ।
जइ सखि वरउं त सामल धीरु घण विणु पियइ कि चातकु नीर ॥ २५ ॥

चैत्रमासि वणसइ पंगुरइ वणि वणि कोयल टहका करइ ।
पंचबाण करि धनुप धरेवि वेझइ मांडी राजलदेवि ॥ २६ ॥

जुइ सखि मातउ मासु वसंतु इणि खिलिज्जइ जइ हुइ कंतु ।
रमियइ नव नव करि सिणगारु लिज्जइ जीवियजुव्वण सारु ॥ २७ ॥

सुणि सखि मानिउ मुझु परिणयणु नवि ऊवरि थिउ वंधवत्रयणु ।
जइ पडिवन्नइ चुकइ नेमि जीविय जुव्वणु जलणि जलेमि ॥ २८ ॥

वइसाहह विहसिय वणराइ मयणमित्तु मलयानिलु वाइ ।
फुट्टि रि हियडा ! माझि वसंतु विलवइ राजल पिक्खिउ कंतु ॥ २९ ॥

सखी दुक्ख वीसरिवा भणइ संभलि भमरउ किम रुणझुणइ ।
दीस पंच थिरु जोव्वणु होइ खाउ पियउ विलसउ सहु कोइ ॥ ३० ॥

रमणि पसंसइ राजल कन्न जीह कंतु वसि ते पर धन्न ।
जसु प्रिउ न करइ किमइ मुहाडि सा हउं इक्क ज भुंडनिलाडि ॥ ३१ ॥
जिट्ठ विरहु जिम तप्पइ सूरु घणविओगि सुसियं नइपूरु ।
पिक्खिउ फुल्लिउ चंपइविल्लि राजल मूछी नेहगहिल्लि ॥ ३२ ॥
मूछी राणी हा सखि ! धाउं पडियउ खंडइ जेवडु घाउ ।
हरिय मूछ चंदण-पवणेहिं सखि आसासइ प्रियवयणेहिं ॥ ३३ ॥
भणइ देवि विरती संसार पडिखि पडिखि मइ जादवसार ।
नियपडिवन्नउं प्रभु संभारि मइ लइ सरिसी गढि गिरिनारि ॥ ३४ ॥
आसाढह दिढु हियउं करेवि गज्जु विज्जु सवि अवगन्नेवि ।
भणइ वयणु उग्रसेणह जाय करिसु धम्मु सेविसु प्रियपाय ॥ ३५ ॥
मिलिउ सखी राजल पभणंति चिणय जेम न मिरिय खज्जंति ।
अउगी अच्छि सखि झखि मन आल तपु दोहिल्लउ तउं सुकुमाल ॥ ३६
अठभव विलसिउ प्रियह पसाइ किमइ जीवु सखि सुख न धाइ ।
हिव प्रिय सरिसउं जीविय मरणु इण भवि परभवि निमि जु सरणु ॥ ३७
अधिकु मासु सवि मासहि फिरइ छह रितुकेरा गुण अणुहरइ ।
मिलिवा प्रिय ऊवाहुलि हूय सउ मुकलाविय उग्रसेणधूय ॥ ३८ ॥
पंच सखीसइ जसु परिवारि प्रिय ऊमाही गइ गिरिनारि ।
सखीसहित राजल गुणरासि लेइ दिक्ख परमेसरपासि ॥ ३९ ॥
निम्मल केवलनाणु लहेवि सिद्धी सामिणि राजलदेवि ।
रयणसिंहसूरि पणमवि पाय वारइ मास भणिया मइ भाय ॥ ४० ॥
नेमि कुमरु सुमरवि गिरनारि सिद्धी राजल कन्नकुमारि ।

झबझब झबझब झबझब ए वीजुलिय झबकइ
थरहर थरहर थरहर ए विरहिणिमणु कंपइ ॥ ६ ॥

महुरगंभीरसरेण मेह जिम जिम गाजंते ।
पंचबाण निय कुसुमबाण तिम तिम साजंते ।
जिम जिम केतकी महमहंत परिमल विहसावइ ।
तिम तिम कामिय चरण लगि नियरमणि मनावइ ॥ ७ ॥

सीयलकोमल सुरहि वाय जिम जिम वायंते ।
माणमडप्फर माणणि य तिम तिम नाचंते ।
जिमजिम जलभरभरिय मेह गयणंगणि मिलिया ।
तिमतिम कामीतणा नयण नीरिहि झलहलिया ॥ ८ ॥

भास—मेहारवभरऊलटिय जिम जिम नाचइ मोर ।
तिम तिम माणिणि खलभलइ साहीता जिम चोर ॥ ९ ॥

अइ सिंगारु करेइ वेस मोटइ मनऊलटि ।
रइय रंगि बहुरंगि चंगि चंदणरस ऊगटि ।
चंपयकेतकिजाइकुसुम सिरि खुंप भरेइ ।
अतिआछउ सुकमाल चीरु पहिरणि पहिरेइ ॥ १० ॥

लहलह लहलह लहलह ए उरि मोतियहारो ।
रणरण रणरण रणरण ए पयि नेउरसारो ।
झगमग झगमग झगमग ए कानिहि वरकुंडल ।
झलहल झलहल झलहल ए आभरणहं मंडल ॥ ११ ॥

मयण खग्ग जिम लहलहंत जसु वेणीदंडो ।
सरलउ तरलउ सामलउ रोमावलिदंडो ।

बारहवरिसहंतणउ नेहु किणि कारणि छंडिउ ।
एवडु निठुरपणउ कंइ मूंसिउ तुम्हि मंडिउ ।
थूलिभद्द पभणेइ वेस अह खेदु न कीजइ ।
लोहिहि घडियउ हियउ मज्झ तुह वयणि न भीजइ ॥ १९ ॥

मह विलवंतिय उवरि नाह अणुराग धरीजइ ।
एरिसु पावसु कालु सयलु मूंसिउ माणीजइ ।
मुणिवइ जंपइ वेस सिद्धिरमणी परिणेवा ।
मणु लीणउ संजमसिरीहिसुं भोग रमेवा ॥ २० ॥

भास—भणइ कोस साचउ कियउ नवलइ राचइ लोउ ।
मूं मिल्हिवि संजमसिरिहि जउ रातउ मुणिराउ ॥ २१ ॥

उवसमरसभरपूरियउ रिसिराउ भणेइ ।
चिंतामणि परिहरवि कवणु पत्थरु गिण्हेइ ।
तिम संजमसिरि परिच्चएवि बहुधम्मसमुज्जल ।
आलिंगइ तुह कोस कवणु पसरंतमहाबल ॥ २२ ॥

पहिलउ हिवडा कोस कहइ जुव्वणफलु लीजइ ।
तयणंतरि संजमसिरीहि सुह-सुहिण रमीजइ ।
मुणि बोलइ जि मइ लियउ तं लियउ ज होइ ।
कवणु सु अच्छइ भुवणतले जो मह मणु मोहइ ॥ २३ ॥

भास—इण परि कोसा अवगणिय थूलिभद्दमुणिराइ ।
तसु धीरिम अवधारि-करि चमकिय चित्ति सुहाइ ॥ २४ ॥

अइबलवंतु सु मोहराउ जिणि नाणि निधाडिउ ।
झाणखडग्गिण मयणसुभड समरंगणि पाडिउ ।

गद्यभाग

(१)

चौदमो सैको

अतिचार संवत्–१३४० आशरे –(प्राचीन गुर्जरकाव्यसंग्रह, वडोदरा)

कालवेला पढयं, विनयहीणु वहुमानहीणु उपधानहीणु गुरुनिण्हव अनेराकण्हइं पढयं अनेरइं कहइं व्यंजनकूडु अर्थकूडु तदुभयकूडु कूडउ अक्खरु कानइ मात्रि आगलउ ओछउ दे-वंदणवांदणइ पडिक्कमणइ सझाउ करतां पढतां गुणतां हुउ हुयइ, सूत्रु अर्थु बेउ कूडां कह्यां हुइ, ज्ञानोपकरण पाटी पोथी कमली सांपुडं सांपुडी आशातन पगु लागउ थुंकु लागउ पढतां प्रद्वेष मच्छरु अंतराइउ हउं कीधउ हुइं तथा ज्ञानद्रव्यु भक्षितु उपेक्षितु प्रज्ञापराधि विणास्य विणासितउं ऊवेख्यं, हुंती सक्ति सारसंभाल न कीधियइ अनेरइ ज्ञानाचारि उ कोइ अतीचारु हुउ सुक्ष्मबादरु मनि वचनि काइ पक्षदिवसमांहि तेह सवहि मिच्छा मि दुक्कडं।

× × ×

प्रतिषिद्ध जीवहिंसादिकतणइ करणि, कृत्य देवपूजा धर्मानुष्ठानतणइ अकरणि, जि जिनवचनतणइ अश्रद्दधानि विपरीतपरुपणा एवं बहु प्रकारि जु कोइ अतीचारु हुयउ पक्षदिवसमांहि ॥

---

(२)

नवकारव्याख्यानम्–(प्राचीन गुर्जरकाव्यसंग्रह, वडोदरा)

नमो अरिहंताणं ॥ माहरउ नमस्कारु अरिहंत हउ। किसा जि अरिहंत; रागद्वेषरूपिआ अरि वयरी जेहि हणिया, अथवा चतुषष्टि इंद्रसंबंधिनी

पूजा महिमा अरिहइ; जि उत्पन्नदिव्यविमलकेवलज्ञान, चउत्रीस अतिशयि समन्वित, अष्टमहाप्रातिहार्यशोभायमान महाविदेहि खेत्रि विहरमान—तीह अरिहंत भगवंत माहरउ नमस्कारु हउ ॥ १ ॥

नमो सिद्धाणं ॥ महारउ नमस्कारु सिद्ध हउ। किसा जि सिद्ध; दुष्टाष्टकर्मक्षउ करिउ जि मोक्षि गया। आठ कर्म किसा भणियइ? ज्ञानावरणीउ × × × अंतराउ ईह आठकर्मक्षउ करिउ जि सिद्धि गया। किसी ज सिद्धि; लोकतणइ अग्रविभागि पंचत्तालीस लक्षयोजनप्रमाणि जिसउं उत्ताणु छत्तु तिसइ आकारि ज सिद्धिसिला, अमलनिर्मल जलसंकास ज़ु अजरामरस्थानु तेह ऊपरि योजनसंबंधियइ चउवीसमइ य विभागि जि सिद्ध अनंत सुखलीण ति सिद्ध भणियइ। तीह सिद्ध महारउ नमस्कारु हउ ॥ २ ॥

नमो आयरियाणं ॥ माहरउ नमस्कारु आचार्य हुउ। किसा जि आचार्य? पंचविधु आचारु जि परिपालइ ति आचार्य भणियइ। किसउ पंचविधु आचारु? ज्ञानाचारु + + + वीर्याचारु, यउ पंचविधु आचारु जि परिपाल इति आचार्य भणिइ। तीह आचार्य माहरउ नमस्कारु हउ।

नमो उवज्झायाणं॥ माहरउ नमस्कारु उपाध्याय हुउ। किसा जि उपाध्याय? द्वादशांगी जि पढइ पढावइ। किसी ज द्वादशांगी? आचारांगु सुयगड्डु + + + दृष्टिवादु ए बार आंग जि पढइ पढावइ ति उपाध्याय भणियइ। तीह उपाध्याय माहरउ नमस्कारु हुउ।

नमो लोए सव्वसाहूणं ॥ ईणि लोकि जि कोई अछइ साधु। यउ लोकु च किसउ भणियइ। अढाइ द्वीपसमुद्र पनर कर्मभूमि। × × × ईह पनर कर्मभूमिमाहि जि केई अच्छइ साधु। × × × तीह साधु सर्वेहीं माहरउ नमस्कारु हुउ।

एसो पंच नमोक्कारो ।। एउ पंचपरमेष्ठिनमस्कारु । पंच परमेष्ठि किसा ? जि पूर्वोक्त भणिया अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधु इह पंचपरमेष्ठिनमस्कारु भावि क्रियमाणु हुंतउं किसउं करइ ?

सव्वपावप्पणासणो ।। सर्वपापप्रणास कारियउ हुइ । ईणि जीवि चतुर्गतिकि संसारि भवभ्रमणु करतइ हुंतइ जि असुभलेश्या उपायी पापु सु ईणि पंचपरमेष्ठिनमस्कारि महामंत्रि सुमरीतइ हुंतइ क्षउ हुयइ ।

मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होइ मंगलं ।। ईणि संसारि दधि—चंदन—दूर्वादिक मंगलीक भणियइ । तीह मंगलीक सर्वहीमांहि प्रथमु मंगलु एहु । ईणिं कारणि सुभकार्यआदि पहिलउं सुमरेवउं जिव ति कार्य एहतणइ प्रभावइ वृद्धिमंता हुयइ । यउ नमस्कारु अतीत—अनागत—वर्तमान—चउवीसीआदिजिनोक्तसारु । सु तुम्हे विसेषहइ हिवडातणइ प्रस्तावि अर्थयुक्तु ध्येयु ध्यातव्यु गुणेवउ पढेवउ । × × × अनइ एहु नमस्कारु स्मरता इहलोकतणा भय नासइ । × × × ईणि नवकारि नव पद पांच अधिकार सत्तसट्ठि अक्षर तीहमाहि छ भारी इकसठि लघु । इसउं नमस्कारतणउं माहातम्यु ।

---

(३)

अतिचार संवत् १३६९—(प्राचीन गुर्जरकाव्यसंग्रह, वडोदरा)

तउ तुहि ज्ञानाचार + + + पंचविध आचार विषइया अतीचार आलोउ । ज्ञानाचारि कालवेला पढिउ गुणिउ विनयहीनु बहुमानहीनु उपधानहीनु गुरुनिन्हवु अनेरीकन्हइ पढिउं अनेरउ कहिउ । व्यंजनकूट अक्षरकूट कानइ मात्र आगलउ ओछउ देववंदणइ पडिक्कमणइ सज्झाओ करतां पढतां गुणतां हुओ हुइ, अर्थकूट तदुभयकूट ज्ञानोपकरणि पाटी

पोथी ठवणी कमली सांपडा सांपडी पति आसातना पगु लागउ थुकु लागउ पढतां गुणतां प्रद्वेषु मच्छरु अंतराइ हुउ कीधउं हुइ भवसगलाह-इमांहि तेह मिच्छा मि दुक्कडं ।

मृषावादि सहसातकारि आलु अभ्याख्यानु दीधउं, रहसमंत्रभेदु कीधउ मृषोपदेसु दीधउ कुडउ लेखु लिखिउ कुडी साखि थापणिमोसउ कुणहइसउ राडिभेडि कलहु विढाविढि जु कोइ अतिचारु मृषावादि व्रति भवसगलाइ-माहि हुउ त्रिविधि त्रिविधि मिच्छा मि दुक्कडं ।

अदत्तादानि विराइउं छानउं फीटुउं लीधउं दीधउं वावरिउं, घरि बाहिरि खेत्रि खलइ पाडइ पाडोसि अणमोकलाविउ चोरीच्छाइं चोर प्रति प्रयोगु कीधउ, नवउं पुराणउ रसु विरसु सजीवु निजीवु मेलिउं, कूडी तूल कूडइ मापि कूडउ काहिउ हुइ, अतीचारु अदत्तादानि व्रति भवसगलाइ-मांहि हुउ तेह सवहइ मिच्छा मि दुक्कडु ।

मैथुनव्रति लुहुडपणि आपणा विराया सील खंड्या सिउणइ सिउणां-तरि दृष्टिविपर्यासु आठमि–चउदसितणा नीमभंगु, अनंगक्रीडा परविवाह-करणु तिव्राभिलाषु धरिउ हुइ अनेरा जु कोइ अतिचारु मैथुनव्रति भवसग-लाइमांहि हुअउ तेह सवहइ त्रिविधि त्रिविधि मिच्छा मि दुक्कडं ।

हव हियामाहिं सम्यक्त्व धरउ । अरिहंत देवता सुसाधु गुरु जिण-प्रणीतु धर्मु सम्यक्त्वदंडकु उच्चरउ । हिव अठार पापस्थानक वोसिरावउ, सर्वू प्राणातिपात सर्वू मृषावाद सर्वू अदत्तादान सर्वू मैथुन सर्वू परिग्रहु सर्वू क्रोधु सर्वू मानु सर्वू माया सर्वू लोभु रागु द्वेषु कलहु अभ्याख्यानु पैशुन्यु रति–अरति परपरिवादु मायामृषावादु मिथ्यात्वदरिसणसल्यु ए अढार पापस्थान मोक्षमार्ग संसर्ग विघनसमान त्रिविधि त्रिविधि वोसिरावउ, अतीतु निंदउ अनागतु पच्चक्खउ वर्तमानु संवरु । सागारु प्रत्याख्यानु उ ।

खमिउं खमाविउं मइं खमिउ छव्विह जीवनिकाय।
सिद्धह दिन्ना लोयणा नइ मह वइरु न पावु॥

हिव दुकृतगरिहा करउं। जु अणादि संसारमाहि हींडतइ हूतइ ईणि जीवि मिथ्यात्वु प्रवर्ताविउ। कुतीर्थु संस्थापिउ कुमार्ग प्ररूपिउ सन्मार्गु अवलपिउ। हिवु उपाजि मेल्हिं, सरीरु कुटुंबु जु पापि प्रवर्तिउ, जि अधिगरण हल उखल घरट घरटी खांडां कटारी अरहट्ट पावटा कूप तलाव कीधां कराव्यां अनुमोद्या ते सवे त्रिविधि त्रिविधि वोसिरावउ। देवस्थानि द्रवि वेचि पूजा महिमा प्रभावना कीधी तीर्थजात्रा रथजात्रा कीधी पुस्तक लिखाव्यां साधर्मिक वाछल्य कीधां तप नीयम देववंदनवांदणांइ सज्झाइ अनेराइ धर्मानुष्ठानतणइ विषइ जु उजमु कीधउ सु अम्हारउ सफलु हुओ। इति भावनापूर्वकु अनुमोदइ।

(चौदमो सैको पूरो)

जइ अत्थि णई गंगा तिअलोए णिच्चपयडियपहावा ।
वच्चइ सायरसमुहा ता सेससरी म वच्चंतु ? ॥ १३ ॥
जइ सरवरम्मि विमले सूरे उइयम्मि विअसिआ नलिणी ।
ता किं वाडिविलग्गा मा विअसउ तुंबिणी कह वि ? ॥ १४ ॥
जइ भरहभावछंदे नच्चइ नवरंगचंगिमा तरुणी ।
ता किं गामगहिल्ली तालीसद्दे ण णच्चेइ ? ॥ १५ ॥
जइ वहुलदुद्धसंमिलिया य उल्लइ तंदुला खीरी ।
ता कणकुक्कससहिआ रब्बडिया मा दडब्बडउ ? ॥ १६ ॥
जा जस्स कव्वसत्ती सा तेण अलज्जेण भणियव्वा ।
जइ चउमुहेण भणियं ता सेसा मा भणिज्जंतु ॥ १७ ॥

+ + +

तं जि पहिउ पिक्खेविणु पियउक्कंखिरिय
मंथर गय सरलाविअ उत्तावलि चलिअ
तह मणहर चल्लंतिअ चंचलरवणि भरि
छुड्डवि खिसीअ रसणावलि किंकणि गय पसरि ॥ २७ ॥
गाहा तं निसुणेविणु रायमरालगइ
चरणंगुट्ठि धरत्ति सलज्जिर उल्लिहइ ।
तं पंथिउ कणयंगि तत्थ वोलाविअउ ।
कह जाइसि हिव पहिय कह व तुह आइअउ ॥ ४२ ॥
णयरणामु सामोरु सरोरुहदलनयणि
णायरजण संपुन्न हरिस ससिहरवयणि ।
धवलतुंगपायारिहिं तिउरिहिं मंडियउ
ण हु दीसइ कुइ मुक्खु सयल जण पंडियउ ॥ ४३ ॥

तोडि करंगुलि करुण सगग्गिरगिरपसरु
जालंधरि व समीरिण मुद्ध थरहरीअ चिरु ॥ ६८ ॥

रुइवि खणद्धउ फुसवि नयण पुण वज्जरिउ
खंभाइत्तह णामि पहिय तणु जज्जरिउ ।
तह अच्छइ महु णाहु विरहउल्हावयरु
अहियकालु गम्मियउ ण आयउ णिद्दयरु ॥ ६९ ॥

\+ \+ \+

संनेहडउ सवित्थरउ हउ कहणह असमत्थ
भण प्रिय एकतु वलियडइ वे वि समाणइ हत्थ ॥ ८३ ॥

संदेसडउ सवित्थरउ पर मइं कहणु न जाइ ।
जो कालंगुलिमूंदडउ सो बाहडी समाइ ॥ ८४ ॥

तुरिय णिअगमणु इच्छंतु तत्तक्खणे
दोहिया सुणवि साहेइ सुविअक्खणे
कहसु अह अहिउ जं किंपि जंपिव्वउ
मग्गु अइदुग्गु मइं मुंध ! जाइव्वउ ॥ ८५ ॥

\+ \+ \+

जिण हउं विरहकुहरि एव करि घल्लिआ
अत्थलोहि अकयत्थि इकल्ली मिल्हीआ
संदेसडउ सवित्थरु तुह उत्तावलउ
पहिअ पिअ गाह वत्थु तह डोमिलउ ॥ ९५ ॥

चउपई—

याद्वतणु वंश वरणवुं । वचनरसनाटिकअभिनवु ।
एता उदभूत वीत कवीत । भणता गणता पसरि चीत ॥ ३ ॥

चउपई—

सालिवाहन सुत उत्तम ठाइ
राज करि तिहां नरवाहन राइ
बावनवीरमाहि झूझार—लहुडु भाई शकतिकुमार ।
शखिरबद्ध दस सहस प्रासाद कनककलसधज नरवि नाद ।
गोदावरीइ निरमलनीर पुर पहिठाण वसि तिहां तीर ॥ ५ ॥
ब्राह्मण वेदशास्त्र अभ्यसि चारि वरण वरणांतरि वसि ।
बि सहस जिहां जिन थापीआ वीस सहस माहि व्यवहारीया ॥६॥
उत्तम धवलहर पोलि पगार वास नगर नव जोअण बार
चउरासी चउहट्टे बुहरीइ राइचा उसव बंदिणि दीइ ॥ ७ ॥
सांथ जात्र जूवटा घणा कलहट कोलाहल तेहतणां ।
एक चउषलीया कुडी घसि वेसहरि मंदिर वीससि ॥ ८ ॥
रूडी रूपि राजकूअरी त्रिणिसि साठि अंतेउरी ।
बहू वाराइत वानि घणि दासी त्रीस सहस तेहतणी ॥ ९ ॥
राजरुधि नवनधि नरमली चतुरंग सेन छत्रीसि कुली ।
बावनवीर सदा गहिगहि पणि त्रिपनमु न वि सासहि ॥ १० ॥
तेणि पुरि पाटणि नयरनरिंद एक वार पुढिउ निरु नीद ।
थयुं प्रभात सुपनंतर होइ ऊगिउ सूर न जागि सोइ ॥ ११ ॥
गियु कणयापुर पाटणि ठाइ परणि कुंयरि कनकभ्रम राइ ।
हंसाउली कर ग्रहीउ जसि सपन प्रेम मनि लागु जसि ॥ १२ ॥

थयु देवी तव बुद्धि निधान हाकि मुनिकेसर प्रधान ।
नरहत्या ति कीधी घणी मुझ मढि म रहेसि पापिणी ॥ ५३ ॥

हंसाउली शब्द जव सुणी जाण्युं देवि कुमी मुझ भणी ।
करजोडीनि ऊभी रहि गतपूरव भव वीतक कहि ॥ ५४ ॥

देवि अवधारु मुझ वीनती पेलि भवि हूं पंपिणी हती ।
ईडा मेहला सेवन कीउ दव वलतउ तेणि वनि आवीउ ॥ ५५ ॥

मझ भरतारि साहस नवि कीउ अपति मेहलीनि ऊडी गयु ।
जातीसमरणि संभारु सो इ मारु पुरुष न मेल्हुं कोई ॥ ५६ ॥

× × ×

द्वितीय खंड—

मास दिवस मनि निस्यु धरु सयंवरतणी सजाई करु ।
कुयरितणा चरण प्रणमेवि चाल्यु चित्रक संबल लेवि ॥ ६३ ॥

चतुर्थ खंड—

राजा भणि सेठि मनि धरु विवहारीआ कहि ते करु ।
तलारि चोर चलाव्यु जसि सेरीइ श्रावक मिलीया तिसि
आपण पा माहि मचका करि महेसरी भलु छि सेठि ।
धोति कपाड़ पहिरणि सरि सनान सहू तापस भणि ॥ २८ ॥

एक भणी मिथ्याती तजु आठ कर्म काई ऊपारजु ।
जोउ तलारतणी मनहोर आइ उपाइ मेलावु चोर ॥ २९ ॥

कुंयरि वपारि दीवी द्रेठि विठउ दीठउ सूमणसेठि ।

× × ×

वछराज वनारि गयु तत्र सेठ साहमु ऊठीउ ॥ ५ ॥
ने वनि मि मेहलउ भाई लेइ चंदन चालिउ तिणि ठाइ ।
देई दाव आवुं जेतलि तम थापणि आपु तेतलि ॥ ८ ॥
विवहारीया वीर वीसरु दीठुं रतन सेठि मनि हस्यु ॥ ९ ॥
ते द्रव्य आप्युं तेणि वार वहित्र सरि दीधु भार ॥ १० ॥
कुमर पूठि वहित्रा थउ सात गाऊ सोवनगिरि गयु ।
जइ जोऊं सरोवरपालि नमी शत्र तें वडनी डालि ॥ ११ ॥
कुंयर चरण विमासि हीइ इहा उपद्रव साविजनुं होइ ॥ १२ ॥
ते चंदन लुपिउं ते धणी अचरिज वात कही आपणी ॥
आपु थापणि जे तुम्ह हाथि हवि चालसुं अवर कहि साथि ॥ १५ ॥
आवा पाछा पगला भरि थापणिमोसु करवा करि ।
दीठा चार रतन वे तुरी लोभि सेठितणी बुद्धि फरी ॥ १६ ॥
धन भणीइ अनरथनूं मूल धन अदेयु माथाशूल ।
धन कारणि एक कूडा करि धन वदि सगा सहोदर मरि ॥ १७ ॥
कुगत्रा रोस धन कारणि पडि धन कारणि एक वाहणि चडि ।
धन कारणि हुइ कृपण कठोर धन कारिणइ एक पइसइ चोर ॥ १८ ॥
धन कारणि एक नींद्र न करि धन कारणि राजा रणि मरि ।
धन कारणि रानि एक रलि धन वदि हाथे कूदा वलि ॥ १९ ॥
धन कारणि एक पाडि वाट मारि अवला बंभण भाट ॥ २० ॥
भणि चडउ अस्व पूठि पल्हाण चार रतन तम आपु आणि ॥ २१ ॥
कुंयर तुरी छोडेवा गयु एक चडु एक वागि लीउ
अश्व ऊपरि जव दीठउ सेठि बूब पडावी सूमणसेठि ॥ २२ ॥

पंचम खंड—

चुपई—

सहित सुघासण आव्या तुरी ग्यु रा लगुनि सहु संचरी।
भणि हंस अपराधी वरु सेठि सकुटंब सूली धरिउ ॥ ९ ॥
भणि वच्छ करमि दीजि दोस पिता मंत्रेई म धरसि रोस।
लपिउ विधाता ते दिन तसिउ ऊपरि त्रणा कुहाडु कस्युं ॥१०॥
पुनरपि वछराज इम भणि निहालि हरिचंद चरित तइ सुणि।
राम युधिष्टर चाल्या धर्म हंसराज नवि छूटा कर्म ॥ ११ ॥
ततषिण हंस विमासि होइ वीरवचन केणी परि लोपीइ।
राजरीति चित चाहि रंग मेहल्यु सेठि लेई ससांग ॥ १२ ॥
कीधु वहू आलोच आवासि सुपिउ राजप्रधानह पासि।
सकल सेन सहित चालीया पुर पइठाण नगर ते गया ॥ १३ ॥
मेळ्या मात तात परिवार तलीया तोरण वनरवालि
छावि सेसि भरी वछ काजि ॥ १४ ॥

× × ×

भणता दोष दरिद्र तनि टलि भणि असाईत अफला फलि।
भणि भणावि नित गुणि नवनधि आवि अंगणि ॥ १७ ॥
संवत १४ चऊ चंद्रमुनि शंष वछहंसतर चरित असंप।
वावन वीरकथा रस लीउ एह पवाडु असाईत कहिउ ॥ १८ ॥

---

(३)

सदयवत्सचरित्र उर्फे सदयवत्सप्रबंध संवत् १४८८— कर्ता भीम कवि–(आचार्य श्री आनंदशंकर ध्रुव संपादित वसंत वर्ष १५ अं० ३–७ वर्ष १९७२)

संवत् १४८८ वर्षे फाल्गुन × × × भौमे श्रीपत्तने लिखितं विद्वज्जनमनःप्रमोदाय विनोदमात्रम् । छ । श्रीः ।

इम भणीइ भीम तसु गुण थुणिसु जो हरसिद्धि वर लब्ध ।

अथवा

कवि भीम तास गुण विन्नविसु जो हरसिद्धि वर लब्ध

वस्त—

विप्प जंपइ विप्प जंपइ निसुणि नरनाह ।
जयवंती ज्योतिषकला कुलकम्मि अम्ह अछइ अग्गइ ।
वत्तारउ संवच्छरह नष्ट-जन्म नवि चित्ति लग्गइ ।
जं सुरपुरि जं नरभुवणि जं जं हुइ पायालि ।
नरवर निजमंदिरथिकूं तं जाणूं तिणि कालि ॥ १५ ॥
लगन लिहंत वहंत तीणइ कहीय पडि कर झल्लि ।
जइ पुच्छिसि पहु वच्छ पहु मरइ ति कुंजर कल्लि ॥ १९ ॥

× × ×

धाइ धसइ अनइ धडहडइ किरि आसाढि अंबर गडअडइ ।
आपूं अंगतणउं शृंगारु आपूं एकाउलिनउ हार ।
आपूं अधिक वलीउ पसाउ जे वलीउ बांधइ गजराउ ।
गजि चउहटइ जइ मंडिउ गाह पानतणां सवि लाध्यां लाह ।
फूलतणा तहि पूर्या पगर मइगलि माथि कीधूं नगर ।

पुहतउ श्रेणी सुगंधीतणी राजवस्त्र मेली रेवणी ।
लांषइ केसर नइ कपूर वास्यां तेल वहाव्यां पूर ॥ ३६ ॥
तीणइ दीठइ दोसी दडवडइ पारिषिनइ पगि पींडी चडइ ।
फडीया फोफलीया सूनार नाठा लोक न जाणइ सार ॥ ३७ ॥
हाटमांहि हउं हालकुलोल किरि कमलावति करइ कलोल ।
पोता लाध्या पारिषितणां कापडि सरिस किरियाणा घणां ॥३८॥
एकि अटगलि मालि गढि चड्या इकि पाधरि दस दिसि दडवड्यां।
इकि छावडां अछइ छडछोक ते सीकिइ थ्या ल्हसइ लोक ॥३९॥
आगइ पंचायण पाषरिउ आगइ पन्नग पंषावरिउ ।
आगइ गज अंगि ज मदरूत वलि वारुणी भवि थिउं भूत ॥४१॥
सुंडाहल पूरइ परचंड दंतूसल जाणे जमदंड ।
पाडइ विसमा पोलि प्रसाद नर-नरिंद उतारइ नाद ॥ ४२ ॥

पाधडी—

तव आविउ धाइउ ते नारीभरतार बुंबारव पण करइ अपार ।
कोइ सुभट शूर साहसिक शुद्ध कोइ धीरवीर वंसह विशुद्ध ॥ ५१ ॥
कोइ जाइउ चउदिसि चपल अंग कोइ अकल अटल आहवि अहंग।
कोइ खित्तीय षलषंडणसमत्थ को अछइ छयल्ल खिति खग्गह हत्थ॥ ५२ ॥
तव धायुं धबड धसमसंत किरि आवइ केसरि कसकसंत ।
वब्बरीय झांटि झटकइ कवालि वलकलिउ वटाणु थिउ भ्रुकुटि भागि ॥५३॥

× × ×

गडअडिउ गयंदु कि पडिउ पव्व सुर अंतरिपि पेक्खि अपुव्व ।
जयजयशव्दु जंपइ जगत पहु वच्छ अच्चरिउ पेक्खि पुत्त ॥ ५६ ॥

गयगमणि रमणि तुरगय गमंति झड अनिलवग्ग अंगज नमंति।
पयपंकय लंकतलि विढरडंति पतिभत्ति चित्ति धरि चडवडंति ॥ ४७ ॥
जस जंघजूअल वररंभथंभ पिथल कि उरथल करिण कुंभ।
करपल्लव नव शापा अशोक सौवन्नवन्न सारीररोक ॥ ४८ ॥
मुखकमल अमल शशिहरसरिच्छ निलवटि तिलय ताडीक मच्छ।
कुंडल कि कन्नि पायार मार कोसीसनिकर परिगर अपार ॥ ४९ ॥
तिलफुल्ल नास संजुत्त मत्त त्रडि दाडिम दंत अहरा रगत्त।
अंजनसह पंजनसरिस नित्त सीमंत कुंत किरि मयरकित्त ॥ ५० ॥
हुइ भमह कामकोदंडपंड कटि विंब प्रलंबित वेणीदंड।
उरि हार तारश्रेणीसमान तनमंडल अवर न उपमान ॥ ५१ ॥
नाह कुरंगा रेणथलि जलविणु किमु जीवंती।
नयण सरोवर प्रीतिजल नेहिइं नीर पियंति ॥
धरवीरराय धूआ मुहुसाले मज्झ राय नरवीरो।
वर वीर सुदयवच्छो वंछउं शिव पुज्जि हे सहि ए ॥ ८ ॥
कलिजुगि कामुकतित्थो पत्थंतय अत्थ साहए सयलो।
छम्मासि अवहि अग्गइ मणवंछिय देइ माहेसो ॥

× × ×

हव धउल; राग धन्यासी

आसणतणउ अणाविउ ए नरवरिइं ए तरल तुरंग।
साहणपति पलणाविउ ए पलाणि पवंग।
तीणइ वरराउ चडाविउ ए ॥ ९४ ॥

चडंति षेवि जे जुडंति ते तुरंग आणयू जे सुद्धपित्त सालिहुत्त
लक्षणे वषाणिउ ।
पायाल हुंति कीकी पयड होम दीउ आसणे सोहंति सुदय
वत्सवीर ते तुरंग आसणे ॥ ९५ ॥

चिहुं दिसि चामर ढलइ ए सिरवरि ए सोहइ छात्र ।
विप्र वेउ-धुनि उच्चरइ ए आआ आगलि ए नानाविध पात्र ॥
बहु वंदिण कलरव करइ ए ॥ ९६ ॥

करंति बंदिणा अणिक्क मंगलिक्कमालयं ।
विचित्त नित्ति पत्त पाडराग रंगतालयं ।
चडी तुरंगि चंगि अंगि सार सुंदरी रसे ।
ति चालवंति नारि च्यारि चामरं चिहु दिसे ॥ ९७ ॥

वर आगलि थिउ संचरइ ए आआ राण ले ए सरिसउ राउ ।
पायदल पार न पामीइ ए आआ वलीयडउ ए नीसाणडे घाउ ।
हय दीसइ गयरायसारसी ए ॥ ९८ ॥

करिंति सारसी गइंद संडिसुंडि डंबरं नीसाणढोलढक्कघाउ हूअ ताव
अंबरं ।
उचित्तवाउ दिंति राउ वेगि ताव रइकरो प्रेमि सुदयवच्छवीर पत्त
तोरणइ वरो ॥ ९९ ॥

गयगामिणि गुण विन्नवइ ए आआ शशिमुखी ए करइ सिणगार ।
हार एकाउलि उरि ठवइ ए आआ कंदर्पू ए समउ कुमार अहिण-
वउ इंद नरिंदवरो ॥ ३०० ॥

नरिंद इंद मत्त लोइ लोयमज्झि सोहए अदिट्ठदिट्ठ माणिणी मणंतरंगि मोहए ।
भवानिपत्ति पायभत्ति कंत लद्ध कामिणी ते सुद्दवीर वन्नवंति गे गयंदगामिणी
॥ ३०१ ॥

कुंडलीउ ततः मौक्तिकदाम छंदः ।

पउमिणि हस्तिनी चित्रणी वारा संखिणी सार किद्ध संगारा ।
रतिपतिरंगि मिलवि सहि रामा पिक्खवि सुदयवत्स वर कामा ॥
जे कामनरिंदतणइ दलि सार गुडया मयमत्त पयोहर भार ।
जे हिल्लि सागिल्लि चलइ चमकंति ते सुद्दयवत्स सिउ रंगि रमंति ।
जे त्रद्वय दिट्ठ कि नट्ठ कुरंगि जे उप्पम रेह सनेह सुचंगि ।
जे चंदनि अंगि गमंति ते सुद्दयवच्छि सिउ रंगि रमंति ॥
करइ निज मानिनि आणणि सोह जे जाण जुआण तणइ मनि मोह ।
जे पत्तित्ति उर न मंति ते सुद्दयवच्छि सिउ रंगि रमंति ॥
ठवइ उरि हार कि तारयश्रेणि ढुलंति नितंव प्रलंवित वेणि ।
जे ताराणि आरणि नित्त घुमंति ते सुद्दयवच्छि सिउ रंगि रमंति ।

छप्पय—

हे सही कहि कुण कज्जि अज्ज उल्हास अंगि वहु ।
कुंकुमि कज्जलि कणयकुसुमि सिंगार किद्ध मुह ।
भरीय सेसि सीमंत कंत कंदप्पराय कारि ।
गुडी साहण मयमत्त नित्त सज्ज कि उप्परि ।
माणिसि निसि मयंक मधुरति मधुप पहु वत्सतगूड मुझ मनि वसिउं ।
उल्हवण अनिल त कि तनुरयणि सुदयवत्समुख निहि जिसिउ ॥

छप्पय—

अग्गइ अहरा रत्त अहिचिल्लि विलासीय ।
अग्गइ लोयण लोल अनइ कज्जलिहिं कलासीय ।
अग्गइ सिहिण सुथोर अनइ हाराउलि भारीय ।

अगगइ गय मंथारि अनइ नेउर झंकारीय ।
अगगइ सुकाम किय कामिनी अनइ वसंति निशि उजली ।
पुहु वच्छतणउ भ्रमरंगि ससि अनइ सुवर सुद्दा मिली ॥

× × ×

वंदिण तणइ वहिन क्षत्रिणि क्षित्रिणी मानइ भाइ भणी ।
ए नातरूं नवूं नही आज भाटभुवनि रहतां नही लाज ॥

× × ×

जिणि पाटणि पोढा प्रासाद मेरुशिखरसिउ वहइ विवाद ।
गरुउ गढ ऊंचा आवास किरि अहिणव दीसइ कविलास ॥ ६७ ॥
माहि महेस विष्णु नइ ब्रह्म सहू समचरइ कुलोचित धर्म ।
जिनशासन गाढउं गहगहइ जीवदया देषी मन हरइ ॥ ६८ ॥
दिनकर भगतितणउ अतिभाव अधिकउ परमेसरी प्रभाव ।
जे जोगिणि चउसठिनूं ठाम चउसठि चेटकनउं तिहि ठाम ॥६९॥
गणपतिक्षेत्रपालनी ख्याति दिवसपाहिइं रूडेरी राति ।
ठामि ठामि मंडल मंडाइ ठामि ठामि नितु गुणीया गाइ ॥७०॥
ठामि ठामि ढोणां ढोइइं ठामि ठामि जोणां जोइइ ।
सातइ वसण संसालइ जेउ मांहि घणां छइं माणस तेउ ॥ ७१ ॥
इकि लीला लषमी लेइ जाइं भोला भमहि सान वीकाइं ।
मणा न कामणमोहणतणी वरतइं धूरत विद्या घणी ॥ ७२ ॥
वसइ वासि छत्रीसइं कुली माहि मोटा वहुत्तरि मंडली ।
चउरासी सूरा सामंत च्यारि महाधर मंत्रि अनंत ॥ ७३ ॥
चउरासी चुहटानि जुगति वरणावरणतणी वहु विगति ।
उत्तिम मध्यम लोक अपार भामा भला न पामइं पार ॥ ७४ ॥

करइ राज सालिवाहण राउ वइरीतणइ विधंसइ ठाइ ।
अऊठ पीठ पहिलं पहिठाण सामीय आलितणूं अहिठाण ॥ ७५ ॥

वस्त—

कंत संभलि कंत संभलि कहइ कमलच्छि
जु मइं लुप्पइ मयरहर ते न पालि पत्थउ करिज्जइ ।
सीह विच्छूटइ संकलह ति किम देव दोरी धारेज्जइ ।
हत्थी अंकुस अवगणइ किम साहीजइ कन्नि ।
तिम प्रियतम पाधारतां मुक्क विमासण मन्नि ॥ ७८ ॥
सुणि सुदयवीरवयणं सच्चं जं चवइ सावलिंगी ए ।
पिय दिवस पंच पच्छइ तिहि गमिसु जिहि न पुच्छेसि ॥ ७९ ॥
तिणि वयणि सुद जंपइ मणि धरेवि रोसो हसेवि मुहकमले ।
तिहुयणि ते को ठाणं जिहि जुवई रहइ मह महिला ॥ ८० ॥
वयणशशी नयणमई हंसगई उरि करिंद मग्गि हरी ।
कणय पहाणंगंगी जत्थ तुयं तत्थ जीवभमणं च ॥ ८१ ॥
तिणि वयणि सुदवीरो गहबरिउ लगगल इसि वलंतो ।
गयगमणि म धरि दुहिल्लिउ निवारि नयणंमि नीर भरियाइं ॥ ८२ ॥

हव अडयल—

वलियौ रमणी रोयंति वारिहिं ।
लोअण लोहि सकज्जल वारिहिं ।
अवल जि नावूं बुड्डइ वारिहिं ।
जं मणि मुणइ स करे तिवारिहिं ॥ ८३ ॥

× × ×

अडयल—

आगि विरहि विलक्खौ पाणी लागी अंगि तिहां सप्पाणी।
कज्जलग्ग दिट्ठ दुउ पाणी पीधूं पुरिसि पशूवरि पाणी ॥ ८५ ॥
नर नवरंग सही सावुज्जल किं कारणि पशु जेम पीयौं जल।
नारी नरकारि लग्गौ कज्जल पीधि भीजइ भय भरइ न अंजल ॥ ८६ ॥

× × ×

एकि भणइ ऊतारउ लांव एक सेक दिवरावय पांव।
एकि भणइ आलस मेल्हीइ एकी भणिइ मंडल मांडीइ ॥ १८ ॥
एकि भणिइ अम्ह हल्लउ हाथ एकि भणइ दिउ कढ्उ काथ।
आपापणी कला सवि कहइ गुणीया अनइ वइद गहगहइ ॥ १९ ॥
गूजर वइद जिह्वारइं हसिउ जाणे धरणि धनंतरि जिसिउ।
दीठइ रूपि सरूप ओलषइ वैद अनेरा आलिइ झपइं ॥ २० ॥
एहनइ अंगि अगलउ अनंग नरवर को दीठउ नवरंग।
मूरतिइ मूरछा भाजिसिइ मिल्डिउ लोक देषी लाजसिइ ॥ २१ ॥

× × ×

किरि हाकी ऊठि हनुमंत किरि कोपानलि चडिउ कृतांत।
चडवड चउपट चाल्डिउ इम किरि आविउ गुरु भारथ भीम ॥ १० ॥
मोकलि वांह गाढा वलवंत मोकलि जे सूरा सामंत।
मोकलि राउत रणि वाउला मोकलि जे आंगइ आउला ॥ १७ ॥
जिणिइ अरथिइं न भाजइ भीड जिणिइ न टलइ परणी पीड।
मागणमित्र काजि टालीइ ते संपत्ति सघली वालीइ ॥ २८ ॥
अरथिइं सघला सीझइं काज अरथिइं आपणां कीजइ राज।
अरथिइं सवि टांकइ अखत्र वेची अरथ विछोडीसुं मित्र ॥ २९ ॥

वांस्या राय विछोडइ वंय पडी कुवेला ऊडइ कंथ ।
गढगाढिम नवि सीझइ अत्थ तिणि वेला वाणीउ समत्थ ॥ ३१ ॥

दूहा—

सूदा ! तुहाला साथ थिउं आंतरू अति उरतउ ।
हव जोसिइ जगनाथ साहस सामळ्या भणइ ॥ ४९ ॥
उंले आंतरिएहि तउ पइलुं पामीउं नही ।
ब्राह्मण विचि विहि लेहि निहरइ नीजामा पमइ ॥ ५० ॥
ऊभी आस करेहि अबला आहेडी तणी ।
वर पइंठउ वि मरेहि केसरिनां पग किम नीसरइ ॥ ५१ ॥
नाह तुहाला नेह किम ऊसंकल एक भवि ।
जां दसवार न देह ए आपणउ न होमीइ ॥ ५२ ॥
माणिकमूंठि जलेहि पडइ तउ प्रापति पामीइ ।
नाह नवेरइ देहि दरसणि देपेचूं थिउं ॥ ५३ ॥
आसाढ्वी एक पीहरि मेलही पारणी ।
तिह्नइ आज अनेकि ऊचाटइ ऊपांपळां ॥ ५४ ॥
सूदा शोक सरोप मनि माहरइ कांइ नही ।
सही समे वड वाप कीधां आज अणोसरा ॥ ५५ ॥
जिणुणी काजि न दीह आंक्या आवेवातणा ।
ते लेयेतां लीह करी कुडेरं दाझिसइ ॥ ५६ ॥

× × ×

आगइ एक न धरि वाआहि अनइ पंच पुहुता पडमाहि ।
अतिऊंचा अंजनघनदेह किरि महिमंडलि आव्या मेह ॥ ८७ ॥

घोरंधार अंधारउं करइ दिनकरतणा किरण आवरइ ।
सेवालीउ चडावइ शीत केवीतणां कंपावइ चीत ॥ ८८ ॥
सूलीभंजण भंजइ अंग जीणि दीठइ पायक हुइ पंग ।
अजउ अमउ बेहू भड भला उडीनइ शिरि तोलइं शिला ॥ ८९ ॥
इस्या वीर सूदानइ साथि वावनसरिसा आवइ बाथि ।
अणीधार नवि लागइ अंगि बीजइ झूझि न आवइ बंगि ॥ ९० ॥
ऊभा भड लूंटी लिइं लोह तीहं आगलि कुण जीपइ जोह ।
रायनइ हय मर हाथी बहू आघउ थिउ आराली सहू ॥ ९१ ॥
निवडनिहाय धरणि धमधमइं बूंबारव गयणंगणि गमइ ।
ब्रेहारवि नवि सूझइ सूर रणि विसर्या वाजइ रिणतूर ॥ ९२ ॥
मयमत्ता दंतूसल मोडि दीइं घाउ कडयडइं करोडि ।
घोडेसिउं घाल्या असवार रथपायक नवि लाभइ पार ॥ ९३ ॥

× × ×

छप्पय—

पुहुरि पहिल्लै विप्पराउ जागंतु लोइ ।
तां निसिभरि नारी मसाहाणि सूलीतलि रोइ ।
परिठवी पुछ दया परदइ मर पत्तो ।
कामिणी पूछीय कज्ज कंध ऊयरिऊ भत्तो ।
भोजन दियंतमिसि डायणी षाइ मांस मत्थइरि चडी ।
उत्तिम तिवार असि वावरी करि स चूडि तुट्टवि पडी ॥ २२ ॥
बीजइ पुहुरि प्रधानपुत्र बलवंत वइट्ठौ ।
तां उल्हाणौ अगनि तेज दूरट्ठिय दिट्ठौ ।
पावककज्जि पहुतु प्रेत परत्तरियौ पप्पलि ।
विचि खीचड कलकलइ वद्ध बावीस ऊमतलि ।

मुझ स्वामि होमसइं एवनौ एक गहीय बीजा गहिसु ।
धसि छिद्र धगंतौ लकइं तीण ऊडी ग्या सइं सहस ॥ २३ ॥

खित्तीय तीजइ पुहुरि दैत नयरीदिसि दिक्खइ ।
विंतर वंसइ वंधि पूठि थ्यौ परिकम पिक्खइ ।
सत्त कमाड ऊघाडि रायसुति सूती लीधी ।
आणी आपनिवासि युवति जागती कीधी ।
मुझ वरि कि समरि जीण ऊगिरह त्रिहु त्रीजउ समरू सभट ।
पडछांहि ऊभ असिभर सरिस कीय कंकाल त्रिखंड घट ॥ २४ ॥

चउथइ चतुर चकोर वीरवंसुद्धर जग्गै ।
तां ऊठवि मइं मुरेडिउ जूअजीअउडु त्रिमग्गै ।
सुद भणइ त न सारवइ कवडी न कडत्तह ।
तिणि तक्खणि आणयौ पाट जीण राइ रमंतह ।
शरकमल हराविउ हेल्हसि प्राणिप्रेतग्रह टालियौ ।
त्रिहुं मित्र अजग्गिइ एकलइं तिह ति पिंड प्रजालयौ ॥ ॥

× × ×

वस्त—

राउ हरपिउ राउ हरपिउ सुतह संपत्त ।
तव नयरी आणंद हूउ पंचशवद वाजित्र वज्जइ ।
माय ताय जोहार किय गरूय वीर गंभीर गज्जइ ।
तिणि अवसरि पय प्रणमया सुदयवच्छ तिणि वार ।
माडी आसीसह दिइ राउ सिरि सुंपिउ भार ॥ ७२ ॥

गद्यभाग

पंदरमो सैको

प्राचीन गुजराती गद्यसंदर्भ [गु० वि०] मांथी

(१)

संवत् १४११—तरुणप्रभ—

"राजा अनइ महामात्यु बे जणा अश्वापहार-इतउ अटवी-माहि गया. भूखिया हूया. वणफल खाधां. नगरि आविया। राजा सूपकार तेडी करी कहइ 'जि के भक्ष्यभेद संभवइं ति सगलाई करउ' सूपकारे कीधा, राजा आगइ आणिया. राजेंद्रि चींतविउं—मधुर मोदक—पूपकादिक भक्ष्यभेद पाछेई भाविसिइं इणि कारणि पहिलउं वाकुल—ढोकलादिक भक्ष्यभेद भषी करी पाछइ मधुराहारभक्षणु कीधउं. किसइ कारणि ? जिम सवहीं आहार-तणा स्वाद लिउं. महतइ पुणि जीमी करी वमन-विरेचनादिकु कीधउं. राजेंद्रि पुणि सर्वाहारभोगलुब्धि हूंतइ वमन-विरेचनादिकु न कीधउं। तिणि आहारि दोषि राउ मूयउ।" पृ० ५

"गच्छि एकि लघु क्षुल्लकु एकु वरसालइ वाहिरि वालकहं—माहि वाहलइ त्रेपणउं पेट हेठइ देई अनइ तरिवा लागउ. महात्मा आविया, चेला तरता देखी करी वटइं ति तेतलइं गुरु आविया. गुरि कहिउं—'महात्माउ ! चेलउ लहुडउ, भोलउभागडउ. म अडवडाउ (वडबडाउ)' ते ती वार चेलउ परहंसिउ. गुरे भणिउं—म वच्छ उगउ रहि. को काई नही कहइ, तउ चेलउ घणेरउं परहंसिउ. गलसरण भरिवा लागउ. गुरे माथइ हाथु देई करी आपणपा आगइ कीधउ. वसति आविया." पृ० ४८

---

(२)

संवत् १४५७—सोमसुंदर—

" ताम्रलिप्ती नगरीइं तामलि श्रेष्टि वैराग्यइं तापसी दीक्षा लिइं. नदी-नइं तटिं साठि वर्ष सहस्र तप करिं पारणइं भिक्षा चिहुं भागिं करइं. एक भाग मत्स्यादिक जलचररहइं दिइं. बीजो भाग गोग्रास—स्थलचररहइं दिइं. त्रीजो भाग काकादिक खेचररहइं दिइं. चउथु भाग २१ वार पाणीइं धोई पारणउं करइं." पृ० ७६.

" श्रीमहावीरनु जीव श्रीआदिनाथनइं (समयि) भरतेश्वरनउ वेटओ मरीचि नामि हूंतउं. श्रीआदिनाथकन्हइं मोकली दीक्षा लिवरावीओ. एक वार ग्लान थिओ. मनमांहिं जाणिउं—को सखा(सखा ?)ईओ करउं. पछइं कपिल क्षत्रीरहइं धर्म कहइं. बूझ्या, पूठि श्रीआदिनाथ कन्हइ दीक्षा लेवा मोकलइं. ते पूछइं—तूं कहइं किसिउं धर्म नथी श्रीआदिनाथ कन्हइं कां मोकलइं ? पछइं मरीचि कहिउं—कपिल ! धर्म इहांइ छइं, परइं छइं. इसिउं माइउं गोईउं वचन बोल्लिउं, तीणइं करी मरीचि कोडाकोडि सागरो-पम भमिओ. पछइं श्रीमहावीर थिओ." पृ० ७९

---

(३)

संवत् १४७८—माणिक्यसुंदर—

" सव्वे भल्ला मासडा पण वइसाह न तुल्ल ।
जे दवि दाधा रूंखडां तीहं माथइ फुल्ल ॥ " पृ० १३५

× × × ×

" अंगदेशि श्रीपुरिनगर, तिहां श्रेष्टि लक्ष्मीवर—श्रीलक्ष्मीइं सवर. तेहतणु पुत्र हुं श्रीपति पणि विषम देवगति. दस कोडि द्रव्य हूंती पणि

बापुजी साथि पहुती. पिता परोक्ष हूआ, पूठिइं जं वाहणमाहि घातिउं तं समुद्र सातिउं. कई वाणउत्रे ग्रसिउं, हाट चोरे मुसिउं, थलवटनउं थलवटइ रहिउं, कांई ठाकुर ग्रहिउं, घर बलिउं, समग्र मंडाण टलिउं, समग्र द्रव्य निस्तरिउं, एकलक्ष द्रव्य ऊगरिउं. पछइ अवर काजकाम छांडिउं, प्रवहण पूरिवा मांडिउं. भलइ दिवसि प्रवहण पूरिउ. त्रिन्नि सइं साठि क्रियाणां चडाव्यां, सप्तविध पकवान चडाव्यां, सप्तविध करंबा लिया, पोता सपाणी भरिया, देव समुद्रवायस पूजाव्या, षाभिल मादल वाजिवा लागां, बावरि कोलणि नाचेवा लागी, गलेला हेलाहेल करवा लागा. कूउषंभउ ऊभउ कीधउ, नांगर ऊपाडिउ, सिढ ताडिउ, घामतीउ घामतउ लीचइवा लागु, वाऊरीऊ तलि पइठउ, नीजामउ नालि बइठउ, आउलां पडइं, सूकाणी सूकाण चालवइं, मालिम वाहण ञालवइं, सुरवर लहलह्या, वादित्रनादि समुद्र गाजी रह्या."

× × × ×

"छासिइं केरउ आफरु दासिइ केरु नेह ।
कंबलकेरु मोलीउं षिसत न लागइ षेव ॥" पृ० १४०-१४१

---

(४)

संवत् १५००—हेमहंस—

"पुलिंदानु जीव मरी जंबूद्वीप मणिमंदिरि नगरि राजा मृगांक राजा, विजया राणी, तेहनइ गर्भि अवतरिउ. ××× महोत्सव करी राजसिंह कुमार नाम दीधउं. मउडइ मउडइ वहुत्तरि कलापारीण हूउ. ××× मतिसागर मुहतानउ वेटउ सुमतिकुमार. तेहसिउं राजसिंहनइ मित्राई छइ ××× तिसइं नगरलोके मिली राजाहूइ एकांतिं वीनवइ—स्वामी! अह्मे

किम करूं ? ए राजसिंह कुमार नगरमाहिं जीणइ जीणइ सेरीइं सांचरइ तिहां तिहां आपणां वालकइ रोव्यतां मूंकी मूंकीनइ सौभाग्यना व्यामोहिआ स्त्रीना वृन्द गमे गमे जोइवा धाइ. अह्मारां घरनां काजकाम सघलाइ सीदाइ छइ × × × पछइ कुमर कहइ–मित्र ! चालउ तेह देशांतर × × × भणी जईइ. × इसिउं विमासी वेहू जण पङ्ग हाथि लेई तिहां भणी नीकल्या. ठामि ठामि अनेक आश्चर्य जोअता जोअता जाइ छइ. एकवार अरण्यमाहिं सूनइ देवकुलि सूते कहिएक पुरुषनु करुण स्वर सांभलिउ. कुमार ऊठी पङ्ग हाथि लेई तेहभणी चालिउ. आगलि गिउ देपइ तु विकराल राक्षसइं पुरुप एक कक्षामाहिं चांपिउ छइ. ते आक्रंद करइ छइ. कुमरइं राक्षसहइ कहिउं–ए वापडउ मूकि, ईणइं ताहरुं सिउं विणासिउं. ?" पृ० १६७ थी

---

(५)

संवत् १४७१ पारसी पंडित लक्ष्मीधर वहेरामजी–अर्दाग्वीरा

(गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी संग्रह)

[२]

१. पछइ ते सातइ वइहइनि तेह अर्दाग्वीरा पुरुषतणी सातेए भार्या हुंई, तीह सातइरहइं दीनतणउ कोमल नावर कीधी अछइ ॥

२. जउ तेहे स्त्री एतलउं वचनु सांभल्यउं सांभल्या पछी अपार दुःखिनी थई, यम तींह स्त्रीरहइं महाभारतर दुःख पामिउं ॥

३. ते स्त्री गुस्तास्प राजा आगलइ अनइ अपर त्रीजा मज्दईअस्न आगलि गेई । नमस्कार कीधउ । पछइ ऊभी रही । तेहे स्त्रीए बोलिउं

जु तह्मो मज्दईअस्न ईउ इसुं म करु। जउ अह्मइ सात वहइन अछउं अनइ सातइनउ एउ एकु जि भर्त्तार अछइ। अह्मइ सातइ वहइन एह भर्त्तारतणी कलत्र अछउं। जइमु एकु घर सातपणउं हुइ। तेहि सात पण हेठइ विचालइ एकु स्तंभ कीधउ अछइ। जइ कमइ ते स्तंभ काढीइ तु सातइ पण पडइ। पछइ गुस्तास्प राजा तअं वचन सांभुली कोपु कीधउ। तींह स्त्री प्रति राजा बोलिउ। जउ तह्मरहइं महावायु लिउ। व्याघ्र तह्मरहइं खाउं। तह्मारां हाड लुंडी ताणउ।

४. पछइ अर्द्दाग्वीरा पुरुषइ जिम दीठउ जउ गुस्तास्प राजां कोपु कीधउ, राजारहइं अर्द्दाग्वीरा पुरुषइं संतोष दीधउ। तेउ अर्द्दाग्वीरा पुरुष गुस्तास्प राजा आगलइ गइय। हाथ बेहू जोडइया। स्तुति अपार घणी कीधी। तउ अर्द्दाग्वीरा बोलइय। जइ कमइ आदेश हुइ तु पाय षाउं। आत्मा आराधउं। सुंपणउं करउं। पछइ मंगि ऊषधी दीधी। पछइ गुस्तास्प राजां आदेश दीधउ, बोलिउं जउ इसुं करइ।

५. पछइ अर्द्दाग्वीरा पुरुष आपणइ अग्निस्छा(स्था)नक गिउ। तीणइ अर्द्दाग्वीरा पुरुषइं इजिस्नि कीधी आत्मा आराधय पाय पाधउं। तेहे स्त्रीए मंगि ऊषधी सज्ज कीधी। अनइ पात्रि ठाहरि मधूभक्षण सरसी घाली। अर्द्दाग्वीरा पुरुष हेठ वस्त्रि वइसइ। राजारहइ अनइ बीजां मज्दईअस्न-रहइं जणाविवउं कीधउं। पछइ गुस्तास्प राजा अनइ अपर बीजाइ मज्दईअस्न आव्या। तेह अर्द्दाग्वीरा पुरुषरहइं मंगि ऊषधी दीधी। वस्त्र ऊपरि सुआरिउ। अनइ एर्वद कीधा गहि सारी। जिम ते एर्वद अर्द्दाग्वीरा पुरुषतणउं सइरु पुहरि वइठा राषइ अनइ नस्क अवस्तावाणी पढइ उच्चरि.

६. अनइ ते साते भार्या अर्द्दाग्वीरा पुरुषतणा वस्त्र पाषलि फिरीनइ वइठी अनइ अवस्तावाणी उच्चरइ अछइ। जांजाण सात अहोरात्र हुइ.

[३]

१. अनइ तेह अर्दागवीरा पुरुषतणा शरीरतु आत्मा जीव चकात-दाइती इसइ नामि पर्वत अनइ चंदोरपुहलि नामि मांचि पहुतु। सातमइ दिवसइ आत्मा वली आव्यः। तनउ सरीरमांहि आव्युः।

२. अर्दागवीरा पुरुषः वस्त्र उपर थकु ऊठ्यउ। जाणे किरि तउ सुखनिद्राथकु ऊठ्यः। उत्तम निर्मलु मनु अछइ अनइ उत्तमरहइं आनंद करइं।

३. तेहे भार्या कलत्रि अर्दागवीरा दीठउ अनइ जोइउ। पछइ पछइ तेह स्त्रीरहइ उत्तम आनंदु हऊअ जाणे किरि ते स्त्री स्वर्ग्र(र्ग)भुवनइ जीवती नीपनीं अछइ। पछ तेहे एवंद आगलि अर्दागवीरा पुरुषरहइं प्रणाम नमस्कार कीधउ। अनइ गुस्तास्प राजा आगलि जई अनइ दस्त्रा गोस्प-दस्त फरइसुस्त मइदीओमाह अनइ बीजाइ मज्दईअस्नरहइं प्रबोध दीधउ।

[४]

७. जंअं प्रचउर चालइ तउझरहइ तीणइं स्वर्ग्र करी अनइ सखाईआ थाउं स्वर्ग्रलोक अनइ नरकलोकइ अनइ चंदोरपउहउलइ जातां पलि-पांच नही।

८. जअं स्वर्ग्रलोकतणी समृद्धि रद्धि समाधानउ रूडउं अतहइ सउ-खउ उत्तमक्रीडा लीआतपणउं अतहइ वइनोद उछव रामति अनइ सउ-गंधपणउं तुझरहइ आव देषाडउं। अनइ मुक्तात्मारहइं जेउ आनंद हर्ष अछइ।

९. अनइ नरक मउवन घोरांधकारं अतहइ मलिन अतहि रौद्र अंधकार महाभयंकारीउं द्रउर्गंध अछइ तीउं तउझरहइ देषाडउं। अनइ

जउ विभक्त विहच्यउ विहच्यउ देव अनइ राक्षसी विद्या पापकर्म्मियांरहइं नइग्रहउ कारइ अछइ ।

१०. अनइ जीउं सत्यवंततणउं दानशीलीया दातारतणउं स्थानइकु तीउं तउझरहइं देषाडउं अनइ जीउं असत्यवादीयांतणउं स्थानकु तीउं देषाडउं ।

११. अनइ जीउं स्थानइकु शुद्धिप्रवोधीयां नइर्म्मल्वीय ज्ञानवंततणउं अहुरमज्दस्वामीतउ अमरतउ गरूआतउ अनइ स्वर्गलोकीय संउदर रूडा सउषतउ अनइ नरकीय नइग्रहतउ अनइ भला शवोच्छान मृतक उज्या-तणा शरीरतणउं अक्षयत्वतणउ स्थानिकु अनइ ईश्वरतणा अस्तित्व आयइपणातउ अनइ देवतणा नास्तिकत्व अणछतापणातउ जीउ स्थानकु तीउं सहूकए तुझरहइं देषाडउं जइम तऊं पृथ्वीमांहि जि काइ दीठउं हुउइ तीउं सुहए कहइ ।

व्याख्यान चोथुं

सोळमो अने सत्तरमो सैको

१८१ हवे आपणे सोळमा अने सत्तरमा शतकनी गुजरातीनी कृतिओ तपासी जोईए.

सोळमो सैको लावण्यसमय (जैन) नरसिंह, पद्मनाभ, भीम वीजो, मांडण तथा सत्तरमो सैको सिद्धिचंद्र (जैन) विष्णुदास अने नाकरनी कृतिओ

सोळमा सैकाना प्रसिद्ध कवि लावण्यसमय (जैन), कविराज नरसिंह महेता, पद्मनाभ, भीम—वीजो, अने मांडणनी कृतिओ अहीं लीधेली छे अने सत्तरमा सैकाना सिद्धिचंद्र (जैन), विष्णुदास अने नाकरनी कृतिओनो अहीं उतारो करेलो छे.

ए कृतिओमां फक्त एक विष्णुदासनी कृतिनो उतारो हस्तलिखित चोपडा उपरथी करेलो छे. बाकीनी बधी कृतिओ मुद्रित छे अने ते मुद्रणमां पाठनी गरबड प्रायः नथी, एवी खात्री जणायाथी ते बधी मुद्रित कृतिओने उपयोगमां लीधी छे.

तेमां फक्त एक सिद्धिचंद्रनी कृति गद्यरूप छे. उक्त लावण्यसमयथी मांडीने नाकर सुधीना तमाम कविओनो समय अहीं आपेली ते ते कृतिओने प्रांतभागे आपेलो छे अने जेमनो समय कृतिने प्रांतभागे नथी लेवायो तेमनो समय बीजां अनेक पुष्टप्रमाणोथी सुनिश्चित छे एथी ए कविओना समय विशे कशुं लखवापणुं रहेतुं नथी अने तेमने लगता बीजा परिचयनी अहीं अपेक्षा नथी.

१८२ लावण्यसमय—

क्रि०	क्रि०	नाम	नाम
धरी	धूइ	रसि (ऋषि)	आगलउं
नमीय	लीइ	नांमइं	वोहातणउं
अछइ	घोली	दुरीया	घणउ
बोलिसु	पीइ	दूरि	ति
जयु	आवी	प्रहि	त्रीजउं
लहींइं	आपिया	ऊगमि	जेहना
कहिसइं	करि	प्रणमतां	जेहवा
सुणज्यो	वुहरी	नवइं	ठाम
करइ	वलिउ	निधान	सहु
वेचाइं	वागी	भोजनि	आदर
लपठइ	जाणइं	भला	नाम
ढली	आणइ	केतला	आठ
जाणीइं	कहु	भारति	चित्रकुट-पासइं
नमइं	धरइं	भगवति	बोहानूं
जयु	करइं	मनि	धनहीणउं
हुइ	देवइं	गुरूपय	कूडली
करइ	चडवा	पवित्र	तेल—घतनुं
भरइ	दइं	जस	व्यवहार
वाधइ	रहइं	जसवाय	चउहटइं
ऊधरइ	कहइं	बुद्धइ	पोढइ
जाइं	नमाया	पाथरि	कर्म
भटकइं	नडाया	द्राम	धन

क्रि०	क्रि०	नाम	नाम
थाइ	दीठा	दया	विण
चडइ	भमाया	वळी	मानव
सेवु	गमाया	ठेसि	उदर
सेवऊ	समाया	तिम	दोहिलां
दीइ	प्रणमिसु	धर्मतणा	कोइ
दिइ	तविया	भल	मान
		मेद	
पाम्या	लहिउ	हीअडइ	भुअणि
		पेद	नारि
हुउ	भणइ	निज	नेहे

१८२ कविराज नरसिंह महेता—

क्रि०	क्रि०	नाम	नाम
मूकुं	म्यल्ये	वाइ	यमुनानूं
जडी	वार्यु	हरि	घन
लपी	होइ	नाथनि	पछि
मूक्युं	कीधी	वही	छबीलाजीनी
आप्यूं	करी	हरजीशुं	नि
मूकशि	मांल्युं	थाढानो	लंपटपणूं
दीधो	हूआ	ध्रुवतणी	वैराग
ग्रिहि	दीजि	भलेरो	दूख
गाजे	बिठो	तूनि	सुखे
करूं	दि छे	व्यना	तेहनां
रिहि	खम्यां न जाय	मुहुनि	निश्चे

क्रि०	क्रि०	नाम	नाम
रली	आव्यो	टेव	तोरी
आव्यो	सुण्य	एक	नात्य
जाण्यूं	नथी	मन	सार्थ
हएस	भालवेश	प्रीत्य	अभिदान
छि	(भळावीश)	मिं	अवर्य
मूकी घि	छूटशो	पिरिं	गिहिले
किहि छि	छोडशो	भाभी	मिहिणूं
कहीश	हणी	नरसिंआनो	तम्यो
भमि	निवारी	ए	मिं
रीसाव्यो	पूरिआं	जीभल्डी	अहमो—अहम्यो
ग्यो	पामिश्यो	कोण	यहिं, यवारि
कीधु	जपि	शृंगारमांहिं	विना
दीजि	राक्ष, राख्य	अणबोल्यो	भाइ
आवी	कीजि	गर्भवासतणूं	रीस
देखाड्यो	कहि	मुहनि	पिरिं
बोल्या	धरो	कां	त्यहां
छि	थायो	क्यम—क्यमे	व्यचार
कह्यूं	होइला	नरसिंनिं	गोपेश्वरिं
मूकशूं	गैला	वैकुंठि	तूंहनिं
थाशि	पीयूला	गायना	वाहलुं
कर्यूं	आपी	ञें	क्रिया
मेहलुं	खलभलशो	रात्यदिवसे	सोल
आपशि	मारशि	सेवां	तूं
चढी	भींजशि		
वूढुं	थाइ		

नाम	नाम	नाम	नाम
ये	रात्य	स्वप्नमांहि	भाखर
टाढी	शाहनि काञ्चि	तमनिं	पोतानूं
अदेखाइ	भोजाइइं	ते	माल
माहरूं	नरसिंहानी	मुने	समि
तिणि	वनमां	पोताना माटि	वेहत्राइइं
कर्मचा	मन्य	वारि	ज्येहनी
तमची	वनमोझारि	रिहि	आंधलो

१८४ पद्मनाभ—

क्रि०	क्रि०	क्रि०	क्रि०
वीनवूं	जिमाइ (जमाय)	अवगणिउ	आविउ
कवूं	पाचइ	रीसावीउ	आवी
प्रणमूं	छइ	नीम्यूं	आव्या
निकंदीउ	सकीइ	करूं	सांभलइ
गाहीऊं	लोपि (लोपे)	आणूं	लाभइ
नाथीउ	करि	फरि (फरे)	हुइ (होय)
पामूं	चडइ	आवि (आवे)	छोडवि
धरु (धर्यो)	वलइ	थाइ	पामइ
वीनवइ	पलइ	पडावि (पडावे)	करिउ
करीसूं	दाखवि	खाइ (खाय)	छूटीइ
कर्यो (करजो)	वाले } वाळे	डगमगइ	पूजीइ
पूरीसिंउ (पूरशुं)	वालि } वाळे	थ्यु	आणिया
पूरूं	जाणीइ	गइ	भणइ
छइ	बोलाइ	आव्या	गया

क्रि०	क्रि०	क्रि०	क्रि०
करूं (कर्युं)	जोवा	दिउ	बोल्यूं
आणइ	रहीया	करी	फलइ
दिसिइ	जाणी	जई	पूरु
चडि	आदरी	छंडु	भणइ
चवि (वच्)	विटालि	लिउ	सुणइ
हती	आथडइ	दीइ	लही, लहि
मिली	थाइ (थाय)	हुइ	

ना०	ना०	ना०	ना०
गौरीनंदन	राइ	जाग	जे
सरसत्ति	नामि	जिहां	बीजि
बंध	बम्भ	विप्रनइ	दिवसि
भत्ति	विग्रह	पीपल	राजंगणि
धुरि	मूलगु	सहू	पहिद्ध
यादवकुलि	प्रधान	तीरथ	रा
जिणि—जेणे	प्रतिज्ञा	गाइ (गाय—गौ)	भेटणूं
जिभ	धान	नवखंडे	सहू
पंडित	गूजरातिनूं	माधवि	मेलु
सोनगिरातणी	तुरकाणूं	पुण्यतणी	मोतीभरिउ
जगि	महितइ (महेते)	परसिद्धि	थाल
जहे	अधर्म	ऋद्धि	विवहारीया
तासतणा	आगिलां	जूनां	वेढि (युद्ध)
तिणि (ति-तस्मिन्)	कर्म	तिणि (तेणे)	वरस
अवसरि	हरिनूं	असी (एवी)	साठि

नाम	नाम	नाम	नाम
फडीट	आहारइ	विप्र	योगिणी
द्रम	इंधणां	भाट	सरसती
फण	साचूं	नीचतणि	गरुडि
कोठार	पाखइ (पाखे-	घरि	सिंहवाहिनी
वणा	विना)	एकतणूं	रखिश्वर
अलतणइ	देउल	मन	सवि
मग	ईणीपरि	साखि	रुद्र
चोखा	अढार	डुंगरतणा	वृषभ
जव	त्रापडा	अजूआलुं	सज
काटा	गुल	साचुरि	महिषिसुर
गहुं	गडा	दिग्गज	खोडि (खोड)
आयस (आदेश)	लोभि	आठ	तेत्रीसइ
कापड	पाडूंआं (पातक)	विराल (वराळ)	कोडि
साह	वाहणि	सुरलोकि	सरगलोकथी
तेल	विदेसि	ततखिणि	अपछरा
असी (अंशी)	पाळा	अंतरिखइ	विमानि
दीवेल	अणाथि	देव	सवि
पाथर	हाथि	हस्ति	देवता
कोरुं	दारिद्र	एरावत	दीव्य
नहीं	कन्याविक्रय	सूरज	चक्षु
इंधण	अन्यान	चंद्र	पंनर
सूकडी (सुखड)	सगां	तिहां	वारोतरू
अगर	वाट	चुसठि	गढ
			पृथ्वि

१८५ भीम (बीजो)—

नाम	नाम	क्रि०	क्रि०
भाषानूं	ललाटि	कहूं	जाणूं
सम्यक	युगदीश्वरी	ऊपजइ	कहोस
एह	उमया	दीसइ	कर
ऊपरि	अंतरि	निवर्तइ	देशु
गाथा	नियमना	उपाशीइ	देखी
एक	तन्न	जाणइ	मारि
अज्ञानि	मुखि करी	पामीइं	विसारी
किरणविपि	ग्हां	प्रणमीजइं	हर्यां
यथा	त्हां	कर्यूं	दीधूं
मध्यदिवस	सिहियइं	जय	अवतरिआ
येहूनूं	योगीजन्न	रही	उतारे
कुसुमतणी	सनेह	वाधइ	आव्या
अगाधि	सुगति	वोलिउ	सोहइ
सनातन्न	ए	वोलियां	दीपइ
यति	रसनइ	कीधु	मारि
वैराग	येह (जे)	विस्तरइ	वइठा
विना	तेह (तेनो)	त्यजइं	धरि
—कल्याकरतणुं	आगइ	पामीइ	रचियूं
येहनी	कविजन	जाइ	करी
प्रापति	किसा कारणि	थाइ	मोहि
लोचननइ	तह्मो	करइ	उल्हसः
निदाइ		पामइ	जोइ

नाम	नाम	क्रि०	क्रि०
महाम्हो—महामोह (अहंत्व)	घरि	हसइ	आवइ
	उग्रसेननइं	धरि	त्यजीइ
गंयतणु	राजि	भरइ	आव्यु
दुःख	आइ (आयुष्)		
सवि	अवनीकेरु	ऊचरइ	सांभळु
एहनु	शिंघासणि	गयु	कह्यूं
इहिनिशि (अहर्निश)	दिन दिन	सांचरी	धरइ
नारायणतणूं	भेषज	सोहइ	झिरइ
विचार	उच्छव		
—जनतणा	यादव	करइ	खडभडइ
प्रसादि	छपनकोडि	कराव्या	कहइ
आखेप	समरथ	कांपइ	छांडेवूं
मोटा	गोव्यंद		
कवणमात्र	आगलि	कर्यु	जोएवा
खद्योत	सभामांहि	विगूतु	विमासइ
माणिकजमली (जमली—पासे)	रातां	रमिउ	किउ
	रूपइं		
गुंजा	खमणा (क्षपणक)	नथी	सांभलि

१८६ मांडण—

नाम	नाम	क्रि०	क्रि०
आगइ	हीइ	कविय्या	छे
मोटा	कांइ	वोलइ	वायु (वगाड्यो)
जे	जेता	वहइ	सांभळ्या
पूरइ (पूर—प्रवाह)	तेता	भरीया	मिल्या

प्राचीनतानी छापवाळां रूपो पन्दरमी शताब्दीनी कृतिओमां आवे छे खरां, पण ते ओछां. त्यारे प्रस्तुत कृतिओमां नवीनतानी छापवाळां आवां रूपो वधारे वपरायां छे; जेमके—सुणज्यो, धननुं, भाले, जयु, ढली, धाढानो, यमुनानूं, वडना, छबीलाजीनी, शिवनी, गर्भवासतणूं, पोतानूं, मूंनिं, मुहुनिं, मुहनिं, मूनें, तूनिं, त्यारि, ते वारि, माथि, नाथनिं, दामोदरें, सेवु, हरजिशुं, कोद्रवमां, माहि, मांहि, मांहिं, पिठु, वांचि, भाषानूं, हरिनूं, येहनुं, वीनवूं, कवूं, करूं, नवखंडे, माधवि, देसि, नाथीउ, धरु, भरिउ, ग्यो, ग्या, आव्यु, दीघो, रह्यो, छूटशो, छोडशो, आप्यूं, रिहिशो, थ्यो, कह्यो, पूरिआं, आपी, प्रणमतां, ऊघडतुं, जागतां, सुणतां, देहरां, सगा, धोतीआं, मोजां, अनुभवतां, जोतां, गिहिलो, आंधलो, नरसिंओ, आगलां वगेरे. जो के ए बधां रूपो छे तो सोळमी सदीनां छतां अहीं एमनो समय न जणाव्यो होय तो वांचनारा ए रूपोने वीसमी सदीनां ज कहे एवां ए छे.

वळी, केटलांक प्रांतिक उच्चारणो पण ए कृतिओमां देखा दे छे: ('वि'ने बदले 'व्य') व्यना, व्यचार, अहीं 'इ'ने बदले 'य' नुं उच्चारण थयेलुं छे अने ते वाग्व्यापारने अनुसरतुं छे.

नरसिंहनी अने क्वचित् भीमनी कृतिओमां एवां 'य' वाळां रूपो विशेष नजरे पडे छे. मन्य, गोव्यंद, कारज्य, क्यमे, म्यल्ये, प्रीत्य, रात्य, वन्य—(वनि).

मांडण अने भीमनी कृतिओमां 'ज' ने बदले 'य' नुं उच्चारण थयेलुं जणाय छे: यम (जेम) युगपति (जुगपति), युगदीश्वरी (जगदीश्वरी), यीवतां (जीवतां), येह (जेह), यिशू (जिशू), ये (जे).

ज्यां आपणे 'ओ' अने 'ए'नुं उच्चारण करिए छिए त्यां हजु सुधी उक्त कृतिओमां 'इ' नुं अने 'उ' नुं उच्चारण पण प्रवर्ते छे: मूकशि

(मूकशे), किहिछि (कहे छे), जाशि (जाशे), वांचि (वांचे), पिठु (पेंठो), पाछु (पाछो), वयसि (बेंश), रिहि (रहे), मूकी चि (मूकी दे) अर्थात् आवां रूपो उपर हजु सुधी प्राचीनतानी थोडी थोडी असर रहेली छे.

नांम, दांमि, परणांम, वगेरे शब्दोमां 'म' नी पूर्वनो स्वर, 'म' नी असरने लीधे अनुनासिक थयेलो छे. अने ए तो वाग्व्यापारनुं ज फळ छे.

मांडण 'शक्ति' ने बदले 'सकति' एवो 'स' वाळो प्रयोग करे छे. अने भीम 'उपार्सीइ' ने बदले 'उपाशीइ' एवो 'श' वाळो प्रयोग वापरे छे. मूळ श, ष, प्राकृतमां 'स' रूपे परिणमे छे, तेथी 'सकति' प्रयोग खोटो नथी अने 'स', भाषामां 'श' नुं रूप ले छे, तेथी 'उपाशीइ' रूप पण खोटुं नथी.

पन्दरमी सदीनी कृतिओमां 'जे' ने बदले 'जु' अने 'ते' ने बदले 'स' एवा प्रयोगो वपरायेला तेने बदले प्रस्तुत कृतिओमां आपणी पेठे 'जे' अने 'ते' प्रयोगो स्पष्टपणे एकवचनमां वपरावा शरू थई गया छे.

अत्यार सुधीनी कोई कृतिओमां 'ल' ने बदले 'ळ' वपरायो जाण्यो नथी ए ध्यानमां राखवानुं छे.

'राख' ने बदले 'राक्ष' प्रयोग तो 'पुंखु' ना 'पुंक्षु' जेवा उच्चारणवाळो कहेवाय. 'क्ष' नो 'ख' बोलाय छे, परंतु अहीं तो 'ख' नो 'क्ष' बोलायो छे. बीजा—सनातन्न (सनातन), तन्न–(तन), जन्न–(जन) वगेरे प्रयोगो पण एवा ज छे. अथवा कविताना प्रभावथी तेमनो कदाच बचाव करी शकाय.

नरसिंह महेतो 'अमची' 'तमची' प्रयोगो वापरे छे. प्रा० 'अम्हेच्चय'नी प्रतिकृति 'अमची' अने प्रा० 'तुम्हेच्चय'नी प्रतिकृति 'तमची' छे. एनी उपपत्ति विशे आगळ कहेवाई गयुं छे. 'होइला' अने 'गैला' प्रयोगो भासे छे मराठी जेवा, पण गुजरातीमां तेवा प्रयोगो प्रचलित छे. 'होएलुं' अने 'गएलुं' ए प्रयोगो सर्वविदित छे. तेवा ज बीजा करेलुं, भणेलुं, जागेलुं, पीधेलुं, खाधेलुं वगेरे. 'हूअ' अने 'गअ' भूतकृदंतने स्वार्थिक 'इल्ल' प्रत्यय लगाडतां 'हूइल्ल' के 'हूएल्ल' अने 'गइल्ल' के 'गएल्ल' एवां रूपो नीपजे छे. ए रूपो उक्त 'होइला' 'गैला'ना मूळमां छे. 'शुं होएलुं', क्यां गएलो–गयलो–एवा प्रयोगो सुरत तरफ प्रचलित होवानो मने ख्याल छे.

अत्यार सुधी 'ऊपरि' प्रयोग आवतो पण हवे 'ओपरि' पण शरू थयो छे. ए बन्ने पदो जोडणीनी दृष्टिए शुद्ध छे.

'जेहना' अने 'येह्नूं' एम आखा 'ह' वाळी अने अडधा 'ह्'–वाळी जोडणी पण उपलब्ध थवा लागी छे.

वळी, एक विलक्षणता एवी जणाय छे के आदि 'ज' ने बदले 'य'–नुं उच्चारण भीम अने मांडण बन्नेमां मळे छे. 'य' नुं 'ज' उच्चारण तो विशेष विदित छे; परंतु 'ज' नुं 'य' उच्चारण तो अविदित जेवुं छे; माटे मने विलक्षण जेवुं लागे छे. प्राचीन भाषाओमां मागधी भाषामां 'ज' ने बदले 'य' बोलाय छे. प्रा० जाति मा० यादि, प्रा० जहा मा० यधा, प्रा० जाणति मा० याणदि, (८–४–२९२ हैम०). अत्यारे घणा लोको 'ह' ने बदले 'स' बोली शुद्ध बोलवानी कल्पना सेवे छे तेम कदाच 'ज' ने बदले 'य' नुं उच्चारण भीमे कर्युं होय अथवा ए प्रांतिक उच्चारण होय तो ना नहीं.

सोळमी सदीनी गुजरातीनी जे वानकी ऊपर आवी छे ते ऊपरथी साफ जणाय छे के तेमां आपणा वलणनी गुजरातीनी छाप वेसवा लागी छे; एटलुं ज नहीं पण विशेष स्पष्टपणे ते छाप वेटेली छे अने आगळ जतां ते वधारे स्पष्टपणुं धारण करनारी छे; ए आपणे हवे तद्दन नजीकमां ज जाणी लेवाना छीए.

तिणि

पद्मनाभे 'ते अवसरे' अर्थ बताववा 'तिणि अवसरि' एवो प्रयोग वापर्यो छे. जैन सूत्रोमां अनेक स्थळे 'ते काले, ते समये' एवा अर्थ माटे 'तेणं कालेणं तेणं समएणं' प्रयोग ठेकठेकाणे आवे छे. आ प्रयोगमांनुं सप्तमीसूचक 'तेणं' अने पद्मनाभनुं 'तिणि' ए बन्ने एकसरखां छे. हेमचंद्र कहे छे के (८-३-१३७) 'तेणं' मां सप्तमीना अर्थमां तृतीया वपरायेली छे. 'तिणि' ए तृतीयांत पण छे अने सप्तम्यंत पण छे. तिण+इ-तिणि. 'इ' तृतीयानो अने सप्तमीनो एम बन्नेनो छे. अहीं पद्मनाभना प्रयोगमां तृतीया अने सप्तमी बन्ने वर्तमान छे. तृतीयानो 'इ' तृतीयाना 'ए' नी प्रतिकृति छे ए ध्यानमां रहे. काळ, सर्व चराचरनो आधार छे अने हेतु पण छे एटले कालवाचक नाम सप्तमी अने तृतीया ए बन्ने विभक्तिओनो उपभोग करी शके छे.

'लिप्त' पद ऊपरथी भाषानुं 'लपटवुं' क्रियापद आव्युं छे. अने लावण्यसमये वापरेलुं 'लपठइ' क्रियापद पण ए 'लिप्त' नुं प्रतिबिंब छे: ए, लिप्त-लिपत्त-लिपट-लपट-लपठ-ए रीते 'लपठ' ऊपरथी नीकळ्युं छे.

१८८ लावण्यसमये एक स्थळे एम कह्युं छे के "त्यागी गुरुओ अपरिग्रही-अकिंचन-होवा जोईए, छतां तेओ गरथ-धन-मेगो करी देहरांनो उद्धार करता देखाय छे. तेमनुं ते काम चंदन बाळीने

निभाडा करवा जेवुं छे." आ माटे लावण्यसमयनी असल उक्ति आ प्रमाणे छे:

"गुरु गरथि देहरां ऊधरइ चंदन वाळी लीहाला करइ"

आ हकीकत कोइ सामाजिक प्रसंग माटे हुं अहीं नथी टांकतो. मारे तो 'नीभाडा' अने 'लीहाला' ए बन्ने शब्दनी समानता बताववी छे. संस्कृतमां 'आपाक' अने 'आवाप' शब्द 'निभाडा' ना अर्थ माटे प्रचलित छे. प्राकृतमां 'आवाग' के 'आवाय' 'आवाव' शब्द ते ज अर्थने बतावे छे, हिंदीमां तेने बराबर मळतो अने ते ज अर्थनो शब्द 'आवा' छे. संस्कृतमां 'घडा' ने सूचवनार कुम्भ, घट, कुट, निप वगेरे अनेक शब्दो छे. निप–आपाक –निपापाक–प्रा० निवावाअ; स्वार्थिक 'ड' लागतां 'निवावाअडो' अने ए उपरथी वाग्व्यापारना धोरणे निवाडो, निभाडो के निहाडो रूप आवी शके. प्रस्तुत 'लीहाला' नुं मूळ उक्त 'निवाडो' पदमां संभवी शके छे. 'न' नो अने 'ड' नो 'ल' परिणाम सुप्रतीत छे. तथा 'व' नो 'भ' अने 'भ' नो 'ह' परिणाम पण प्रचलित ज छे. 'निभाडा' पदमां आद्य 'नि' लाववा में अहीं 'निप' शब्द कल्प्यो छे. अथवा संभव छे के 'भट्ठी' शब्दमां जे 'भ्रस्ज्' धातु छे ते धातुना 'भ्रष्ट' (पक्व) पद द्वारा 'भाडो' प्रयोग आव्यो होय अने तेने पूर्वग 'नि' लागतां 'निभाडो' बन्युं होय.

नीभाडा

जैन कविनी अने ब्राह्मण कविनी ते ते समयनी गुजराती भाषामां कशुं अंतर नथी ए बताववा ज अहीं में सोळमी सदीनी कृतिओमांथी नामो अने क्रियापदो वधारे आप्यां छे. आटलाथी कोईने असंतोष रहे तो ते, आ साथे आपेला बन्ने प्रकारना कविओनी कृतिओना ऊताराओने वांचवा जरूर प्रयत्न करे एवी मारी नम्र विनंती छे.

गर्भे, त्यारेज ए शब्दो आपणी प्रचलित गुजरातीमां पण ज आवी गया छे. ए उदाहरणो पण ए पछीना सत्तरमा सैकानां [illegible] छे.

१८९. हवे ज्यामाएं सत्तरमी सदीनी गद्य कृतिओ अहीं लीधेली छे. पहेली गद्य कादंबरी, ते श्रीसिद्धिचंद्र (जैन) नी छे. तेनी साथे सत्तरमा सैकानो एक शिलालेख छे. जे, गाम अमरेलीनो लखेलो छे. बीजी कृतिमां महाभारत ते श्रीविष्णुदासनुं छे अने त्रीजी कृति महाभारत आरण्यकपर्व ते वैश्यकवि श्रीनाकरनी छे.

सिद्धिचंद्रना गुरु भानुचंद्रे कादम्बरीनी टीका लखी छे. तेमनाथी ते टीका पूरी न लखी शकाई. टीका लखतां लखतां वचे ज तेओ पंचत्व पाम्या एटले बाकीनो भाग तेमना शिष्य प्रस्तुत सिद्धिचंद्रे पूरो कर्यो छे. तेओ बादशाह अकबरना समसमयी हता एटले तेमनो सत्तरमो सैको सुनिश्चित छे. ते ज रीते महाभारतने गुजरातीमां उतारनार श्रीविष्णुदास तथा वैश्य कवि नाकरनो समय सत्तरमो सैको पण तेमनी ते ते कृतिओमां आपेलो छे. एथी तेओ विषे विशेष कांइ लखवानुं रहेतुं नथी.

१९० सिद्धिचंद्रनी गद्य कादंबरी तथा अमरेलीनो शिलालेख:

नाम	नाम	क्रि०	क्रि०
नदीनि (–ने)	वर्णं	करि (करे)	कहुं (–हुं)
तटि (–टे)	प्रसंन	देइ	भणइ छइ } एक
त्यहां (त्यां)	चांटालीइं (–ळीए)	धरी	भणइ छि } वचन
शीख्यं	शकुनं	आवी छि (छे)	दीसि छइ
एक समि (–में)	नम योग्य	तेडी	छि
दक्षिण देशथी	ते माटे	कीधो	मोकल्यो
राजद्वारि (–रे)	एह तमे राखो	थया	कहेशी
राजइं (–जाए)	प्रेमइं	कहुं	मोकल्यो

नाम	नाम	क्रि०	क्रि०
मांहि (मां)	ते	छिं	लीधो
तेणे	अविनय कीधांना	ल्यावी हूं	छ (छे)
शुकिं (–के)	हूं	राखो	पधारा (–र्या)
राजानि (–ने)	पांख	राख्यो	पूछुं
प्रधानें	जत	लाव्यो	कहि छिं
एहनिं	तमनि (–ने)	कह्युं	पूछुं (–छ्युं)
मोहलमां	प्रगणे[322]	पड्यो	मागे
पछि	नवापुराना	जाणी	पायूं
शुकनि (–ने)	माहजन	लाव्यो	करी
क्षेत्रमाहि	विठ (वेठ)	मुई	बिठा हता
त्यहां	पछइ (–छी)	पालतो	लेई गयो
अगस्त्यनो	पोतानो	मरडी	जोई
माहरी	तेहनिं (–ने)	लीधो	कहुं
तेहने कांठि	ए कशुक(कशुंक)	पड्यो	पूछुं
शींवलनूं	एह	रहों	कह्युं
तेहना	विना	दीठो	कहशुं
शो	पुत्रादिके (तृ०)	थयो	विसारी
कोटरमां	वृक्षतले	हतुं	कही
मुनिं (–ने)	पासे	गयो	सांभलो
ऋषिनी	पांदडाना	रहि (–हे)	कही (कहेली)
जणतां	पुंजमां	आवतां	कहि छइ
मुनिं, मुनें (-ने)		पड्यो	सूंपी (सोंपी)
		दीठो	करिं (–रे)

३२२ नीचे रेखावाळा शब्दो अमरेलीना शिलालेखना छे.

नाम	नाम	क्रि०	क्रि०
मि	स्वांमी	जै (जईने)	मेहेली (मेली)
पांडव साथे	तह्मो	थयो	वलीनि (वळीने)
ये	हेलामात्र	कह्यूं	मारीश
पापी	मोझार्य	जाओ	नीर्मो
तमनि (—ने)	शेवक	किहिजो	बिठा
अह्मारो	त्यारि	आणी	थया
शर्ण्य	अमारि (—रे)	सकि (शके)	पड्या
माहादेवतणि	त्रीपुरार्य	आव्या	हवो (थयो)
नीज	को	स्तव्यां	टाल्यू
वृत्तांत	मुझ पि	थया	कर्य (कर)
वीना	अधीको	थाय	कर्यूं
लोहमि (लोहमय)	देत्य	करो	करवूं
वीध्याता(विधाता)	ब्रह्मानिं (—ने)	होय	सांभल्य (-ळ)
कोणि (कोणे)	जेजेकार	हणाए (हणाय)	कह्यूं न जाय
ब्रंह्मानि	युद्धनो	कर्या	थै (थई)
मुक्ष (मुख्य)	अमरनी	वरत्यो	रह्यो
ततषेव	हांम	हणवा	भोगवि
एकाग्रपणि	बांहा (बाहु)	संचर्या	हौआ (थया)
त्यारि	शीव	आणी	जोयूं
प्रसंन	त्रण्ये	जई	दीसि (—से)
माहादेव	अमरतणुं	रच्यो	कहावि (-वे)
श्रव (सर्व)	तूं	पूरवा	नावि (न-आवे)
तेहनो	ते माटि		
तह्य विना	कर्णतणुं		
श्रव (सर्व)	अतीहास		
अह्मो			

ना०	ना०	क्रि०	क्रि०
आपणु (-णो)	आइं	आवी	गया
जु	तहूमनइं	कर्यां	कहूं
घरमांहि	निःश्वास	ढंस्या	वइशी
जेहूनइं	जिहां	नापिउ (न आप्यो)	आविआ
जेहूवी	वृत्तांत	करिउ (कर्यो)	कहूं
तेहूनइं	सर्व	दुहूविआं (दुहव्यां)	थाइ
तेहूवूं	मांडी	नीपना	कहइ छइ
पछइं	भीमि	ज्यमित्रा (जमवा)	करशु (-शो)
आ	एकांति	वइठु	भांजशि (-शे)
शा माटि	मुह्मनइं (-ने)	उत्रेखिआं	कहूं
विपत	राइ (राय-राजा)	पोष्यूं	उच्चरइ
आज	मोटा	आव्यूं	झरइ
मइं (में)	जे	मूकी	कुड (कहो)
पूर्वे	मुखिथु	ज्यमूं	आपिऊं (आप्युं)
शां	त्याज	भोगवूं	पाम्या
कणकोठार	तव (त्यारे)	ऊठिआ	सांभलु
अन्नकाजि	ऊपरि		
पेट	नयणेथूं		

सत्तरमी सदीनी भाषामीमांसा

१९३ सत्तरमी सदीनी उक्त त्रण कृतिओमांथी लईने जणावेलां सविभक्तिक नामो अने क्रियापदो ऊपरथी स्पष्ट जणाय छे के ते कृतिओनी गुजराती भाषामां अने अद्यतन गुजराती भाषामां नहीं जेवो ज भेद छे. केटलांक रूपोमां जूनापणुं टक्युं छे; परंतु वधारे प्रमाणमां ते नथी रह्युं.

ज्यां त्रीजी के सातमी विभक्तिमां आपणे छेडे 'ए' वापरिए छिए त्यां ते कृतिओमां हजु केटलांक रूपोमां 'इ' टकी रह्यो छे. ए ज रीते त्रीजीमां पण छेडे 'इ' देखाय छे. क्रियापदोमांथी पण 'इ' सर्वथा तो खस्यो नथी, एम छतां नामनां अने क्रियापदनां रूपो अद्यतन गुजरातीनां वधारे प्रमाणमां ए कृतिओमां देखाया विना रहेतां नथी: दक्षिण देशथी, त्यहांथकी, नयणेयूं, मोहलमां, ते माटे, पोतानो, अगस्त्यनो, तेहना, तेहने, कोटरमां, नव्रापुराना, माहजन, अविनय कीधानां, तम योग्य, दने, प्रगणे, जीव्यानी, विधानुं, हाथे, पांडव साथे, लोकमां, स्वामी, युद्धनो, अमरनी, रायनी, गृहस्थना, नाकार, तेहवूं, जेहवी, आइं वगेरे तथा लेई, तेडी, मोकलो, मोकल्यो, पधारा, लाव्यो, पड्यो, कह्युं, ल्यात्री छुं, मरडी लीधो, लेई गयो, सांभलो, हतुं, थयो, पायूं, चाल्या, थाय, करो, आपी, नामी, बोल्या, अवीचारो, मारीश, जांणो, थयो, पमाडुं, देपाडुं, जाओ, हणाए, वरत्यो, रच्यो वगेरे.

जांणो, स्वांमी वगेरे पदोमां अनुनासिकथी पूर्वमां आवेलो स्वर सानुनासिक बोलाय छे, एनी उपपत्ति आगळ आवी गई छे.

माहारी, माहरी, ताहरूं, जेहवी, तेहवुं—एमां 'ह' श्रुति धीरे धीरे खसवा तरफ छे. एकमां सस्वर 'ह' छे त्यारे बाकीनामां मात्र 'ह्' ज छे: अह्मो—अम्यो, तह्मो—तम्यो; एमां 'अम्यो' 'तम्यो' मां 'ह' नीकळी गयो छे. 'संघाते' ने बदले वपरायेला 'संघात्य' मां 'ए' ने बदले 'य' वपरायो छे. संघाते—संघाति—संघात्य. ए, एनो क्रम छे.

'सर्व' ने बदले श्रव, 'सरखो' ने बदले 'शरपो' 'विधाता' ने बदले 'वीध्याता' 'कारण' नी जग्याए कार्ण, 'इतीहास' ने स्थाने 'अतीहास' 'शरणे' ने स्थाने 'शर्ण्ये' ए बधां अद्यतन गुजरातीनां तळपदां उच्चारणो छे.

ना०	ना०	क्रि०	क्रि०
आपणु (-णो)	आइं	आवी	गया
जु	तह्मनइं	कर्यां	कहूं
घरमांहि	निःश्वास	ढंस्या	वइशी
जेह्नइं	जिहां	नापिउ (न आप्यो)	आविआ
जेह्वी	वृत्तांत	करिउ (कर्यो)	कहूं
तेह्नइं	सर्व	दुहुविआं(दुहव्यां)	थाइ
तेह्वूं	मांडी	नीपना	कहइ छइ
पछइं	भीमि	ज्यमिवा (जमवा)	करशु (-शो)
आ	एकांति	वइठु	भांजशि (-शे)
शा माटि	मुहुनइं (-ने)	उवेखिआं	कहूं
विपत	राइ (राय-राजा)	पोप्यूं	उच्चरइ
आज	मोटा	आव्यूं	झरइ
मइं (में)	जे	मूकी	कुहु (कहो)
पूर्वे	मुखिथु	ज्यमूं	आपिऊं (आप्युं)
शां	त्याज	भोगवूं	पाम्या
कणकोठार	तत्र (त्यारे)	ऊठिआ	सांभलु
अन्नकाजि	ऊपरि		
पेट	नयणेथूं		

सत्तरमी सदीनी भाषामीमांसा

१९३ सत्तरमी सदीनी उक्त त्रण कृतिओमांथी लईने जणावेलां सविभक्तिक नामो अने क्रियापदो ऊपरथी स्पष्ट जणाय छे के ते कृतिओनी गुजराती भाषामां अने अद्यतन गुजराती भाषामां नहीं जेवो ज भेद छे. केटलांक रूपोमां जूनापणुं टक्युं छे; परंतु वधारे प्रमाणमां ते नथी रह्युं.

ज्यां त्रीजी के सातमी विभक्तिमां आपणे छेडे 'ए' वापरिए छिए त्यां ते कृतिओमां हजु केटलांक रूपोमां 'इ' टकी रह्यो छे. ए ज रीते बीजीमां पण छेडे 'इ' देखाय छे. क्रियापदोमांथी पण 'इ' सर्वथा तो खस्यो नथी, एम छतां नामनां अने क्रियापदनां रूपो अद्यतन गुजरातीनां वधारे प्रमाणमां ए कृतिओमां देखाया विना रहेतां नथी: दक्षिण देशथी, त्यहांथकी, नयणेयूं, मोहल्मां, ते माटे, पोतानो, अगस्त्यनो, तेहना, तेहने, कोटरमां, नवापुराना, माहजन, अविनय कीधानां, तम योग्य, दने, प्रगणे, जीत्यानी, विद्यानुं, हाथे, पांडव साथे, लोकमां, स्वांमी, युद्धनो, अमरनी, रायनी, गृहस्थना, नाकार, तेहवूं, जेहवी, आहूं वगेरे तथा लेई, तेडी, मोकलो, मोकल्यो, पधारा, लाव्यो, पड्यो, कह्युं, ल्यावी छुं, मरडी लीधो, लेई गयो, सांभलो, हतुं, थयो, पायूं, चाल्या, थाय, करो, आपी, नामी, बोल्या, अवीचारो, मारीश, जांणो, थयो, पमाडुं, देपाडुं, जाओ, हणाए, वरत्यो, रच्यो वगेरे.

जांणो, स्वांमी वगेरे पदोमां अनुनासिकथी पूर्वमां आवेलो स्वर अनुनासिक बोलाय छे, एनी उपपत्ति आगळ आवी गई छे.

माहारी, माहरी, ताहरूं, जेहवी, तेहवुं–एमां 'ह' श्रुति धीरे धीरे खसवा तरफ छे. एकमां सस्वर 'ह' छे त्यारे बाकीनामां मात्र 'ह्' ज छे: अह्मो–अम्यो, तह्मो–तम्यो; एमां 'अम्यो' 'तम्यो' मां 'ह' नीकळी गयो छे. 'संघाते' ने बदले वपरायेला 'संघात्य' मां 'ए' ने बदले 'य' वपरायो छे. संघाते–संघाति–संघात्य. ए, एनो क्रम छे.

.'सर्व' ने बदले श्रव, 'सरखो'ने बदले 'शरषो' 'विधाता' ने बदले 'वीध्याता' 'कारण' नी जग्याए कार्ण, 'इतीहास' ने स्थाने 'अतीहास' 'शरणे' ने स्थाने 'शर्ण्य' ए बधां अद्यतन गुजरातीनां तळपदां उच्चारणो छे.

'शिव' नुं 'शीव' अने 'निज' नुं 'नीज' उच्चारण कविताने कारणे थयेलुं जणाय छे.

'लोहमय' उपरथी 'लोहमि' शब्द आव्यो छे. 'मय' नो प्रा० 'मइअ'[३२३] अने ते उपरथी 'मि–' 'लोहमि' एटले लोढामय–नर्युं लोढानुं.

सत्तरमी सदीनी कृतिओनी भाषा अद्यतन गुजरातीने अनुरूप छे, एटले ए संबंधे विशेष कहेवापणुं रहेतुं नथी.

---

३२३ जुओ "मयटि अइः वा।" ८।१।५०।

सोळमा अने सत्तरमा सैकानुं पद्य तथा गद्य

सोळमो सैको

(१)

कवि—लावण्यसमय–संवत १५८९–खिमऋषिरास वगेरे

भारति भगवति मनि धरी गुरूपय नमीय पवित्र ।
बोलिसु बुद्धइ आगलउं बोहातणउं चरित्र ॥ १ ॥
जस जसवाय अछइ घणउ जसु ति जसभद्र सूरि ।
त्रीजउं कहीइ किन्ह रसि नांमइं दुरीया दूरि ॥ २ ॥
प्रहि ऊगमि नितु प्रणमतां लहीइं नवइं निधान ।
भोजनि कूर कपूर रस भूप भला बहुमान ॥ ३ ॥
कविजन कहिसइं केतलां जेहना जेहवा ठाम ।
सुणज्यो सहु आदर करी आठ प्रभावक नाम ॥ ४ ॥

× × ×

चित्रकूटपासइं वडगाम सुश्रावक बोहानूं ठाम ।
धनहीणउ रूपइ रूडली पंचद्रम सारु कूडली ॥ २२ ॥
करइ तेल–घतनुं व्यवहार चित्रकूट चउहटइ वेचाइं ।
पोढइ पाथरि लपटइं पाइं ढली कूडली कर्मपसाय ॥ २३ ॥
ग्रामलोक मनि आवी मया आपिया पंच द्राम करि दया ।
वुहरी घृत वलिउ जव वली वागी ठेसि वली तिम ढली ॥ २४ ॥
जाणइं धर्मतणा भल भेद हीअडइं परु न आणइ पेद ।
परनइं आपइं किंपि म जोइ जां आपा निज कर्म न होइं ॥२५॥

धन विण मानव कहु किम करइं धन विण उदर दोहिला भरइं ।
धन विण भुअणि भला नही भोग धन विण नहीं सकल संयोग २६

धन विण नारि नेह नवि धरइं धन विण दास करम न करइं ।
धन विण कोइ न देवइं मान धन विण अंतर फोफल पान ॥२७॥

सगा सणीजा जे संसारि धन विण नवि चडवा दइं वारि ।
यती पाधरा जे वनि रहइं सूध मनि धर्मलाभ न कहइं ॥ २८ ॥

रयणि दिवसि जाइं जागतां भाइ भटकइ काइ मागतां ।
धननुं धणी जिहां जिहां जाइं असगा हुइं सगा ते थाइ ॥ २९ ॥

× × ×

तपगछि गुरू गोयमसमा श्रीसौभाग्यनंदिसूरि सार ।
श्री अमरसमुद्र गुरू राजीआ श्रीहंससंयमसार ॥ १६५ ॥.

जयवंता गुरु जाणीइं जास नमइं नरराय ।
श्रीसमयरत्न सहि गुरु जयु प्रणमीय तेहना पाय ॥ १६६ ॥

संवत पनरनव्यासीइं माघमासि रविवारि ।
अहिमदावाद विशेषीइं पुर--बुहादीन मझारि ॥ १६७ ॥

संघ सुगुरू आदेसडइं जिह्वा करी पवित्र ।
वोहा वलिभद्र किहरसि जसभद्र रचिउं चरित्र ॥ १६८ ॥

गुणतां घरि गुरूअडि घणी भणतां लहीइं भोग ।
थुणतां थिर कीरति हुइ सुणतां सवि संयोग १६९ ॥

—अंत.

श्रावकविधिसज्झाय

जे गुरु गांठि गरथ ज करइ ते निश्चइ पिंड पापि भरइ ।
गरथ ऊपरि वाधइ मोह गरथइं आणइं मन अंदोह ॥ ८ ॥

रातदिवस मन गरथइ रमइ मुनिवर चारित्र सहीआं गमइं ।
गरथिं वाधइ कल्ह विवाद गरथइं जीव करइ उनमाद ॥ ९ ॥
गरथ लगइ अनरथ ऊपजइ गरथिं मन मयला नीपजइ ।
गुरु गरथिं देहरां ऊधरइ चंदन वाली ठीहाला करइ ॥ १० ॥
गरथ सहित जे गुरुइ आदर ते निश्चइ सवि कूडुं करइ ।
मयलं चीवर जे कादवि धूइ तेह वली ऊघडतुं जूइ ॥ ११ ॥
रतन विरांसइ पत्थर लीइ अमृत ठामि विप घोली पीइ ।
गज मूकी पर ओपरि चढइ सुख कारणि कूयामांहि पडइ ॥ १२ ॥
वरि सेवु दृष्टिविप साप कुगुरू म सेवऊ अति बहु पाप ।
साप मरण दीइ एक जि वार कुगुरू मरण दिइ अनंती वार ॥ १३ ॥

मालिनी

कनक तिलक भाले हार हीइ निहाले ।
ऋपभपय पपाले पापना पंक टाले ।
अरजिनवर माले फूटरे फूलमाले ।
नरभव अजुआले राग निइं रोस टाले ॥ १ ॥

समोसरणि वइट्ठा चित्त मोरइ पइट्ठा ।
असुप अति अरिट्ठा ऊपचिय ते अदीठा ।
सुपरिकरि गरीठा सौख्य पाम्या अनीठा ।
भव हुड मझ मीठा संभव स्वामि दीठा ॥ २ ॥

मदन मद नमाया क्रोध जोधा नडाया ।
भव मरण भमाया रागदोसे गमाया ।
सकलगुण समाया लक्ष्मणा जास माया ।
प्रणमिसु जिनपाया चंग चंद्रप्रभाया ॥ ८ ॥

तवगच्छ दिवायर लच्छिसायर सोमदेवसूरीसरो ।
श्रीसोमजय गणधार गिरूआ समयरत्न मुनीश्वरो ।
मालिनी छंदइ कय पबंधिइ तविया जिन ऊलट घणइ ।
मइ लहिउ लाभ अनंत मुनि लावण्यसमय सदा भणइ ॥ २८ ॥

(ऐतिहासिक राससंग्रह—भाग बीजो सं. श्रीविजयधर्मसूरि)

(२)

कवि—नरसिंह महेता—संवत १५१२

हारमाला

(संपादक श्री. केशवराम शास्त्री)

१

वाइ मुहुनिं हरि जोवानी टेव पडी माहरा नाथनिं न मूकूं एक घडी ।
वेधलूं मन अलगूं न रिहि [एहवी] हरजीशुं प्रीत्य जडी—वाइ०
आखा घाटानो रली खपी आव्यो [माहरी] भाभीइं मूक्यूं न पाणी ।
मिं जाण्यूं ध्रुव तणी पिरिं करूं भाभी नहीं गोराणी—वाइ०
नामानूं छापरां छाहि आप्यूं कबीरानी अविचल वाणी ।
ते पांइं तां हूं हएस भलेरो छबीलुजी मूकशि पाणी—वाइ०
धन वृन्दावन धन ए भाभी धन यमुनानूं पाणी ।
धन नरसिंआनी जीभलडी पछि छबीलाजीनी वाणी—वाइ०

२

कोण छबीलो नि कोण छि नाथ कोणिं दीधो ताहरि माथि हाथ ?
विषया शृंगार मांहिं भीनो रहां हरि मलवानो ए मारग क्यहां ?

लम्पटपणूं तूं मूकि घि अणबोल्यो अध्यातम ग्रिहि ।
ज्ञान वैराग पन्थ जो म्यल्ये गर्भवासतणूं दूख टलि ।

आ सहू संन्यासी किहिछि तूनि ।
पछि कहीश वार्यु नहि मुहनि ।
भीम भणि नरसिंआ कां भमि ।
गुरु व्यना ज्ञान न होइ क्यमे ।

३

भाइ भोजाइइं रीस ज कीधी नरसिंहानी केही पिरि ।
रीसाव्यो ग्यो वनमां त्यहां सेवा साची शिवनी करी ।
चैत्र सुदि सप्तमी सोमवार नरसिंइं मन्य कीधु व्यचार ।
तप मांड्यूं महाउग्र मोट्टूं हूं रह्यो [निरन्तर] वन मोझारि
गोपेश्वरिं कह्यूं स्वप्न मांहि मागां ते आपूं तूंहनिं ।
मिं माग्यूं (ज्ये) स्वामी तमनिं वाहलूं ते क्रिपा करीनिं दीजि मुनें
भाला चक्रत्य प्रसन्न हूआ नि आवि मस्तक्य दीजी हाथ ।
सोल सहस्र गोपीवृन्द रमतां रास देखाड्यो वैकुण्ठनाथ ।
हित जाणी पोताना माटि महादेव बोल्या वचन ते वारि ।
नरसिंआ तूं लीला गाजे ये कीधी कृष्ण-अवतार ।

१५

रिहि रे भगवा लवलव करतो भलो हांआं-तां-आंथो जा ।
रलतां ताहरूं सेहर न वहितो टाढी चोली भाखर खा ।
अदेखाइ करतो टींट [रिहिनिं] आंहांथो पहरो उठी जा ।

ओ पेला छि वडना टेटा भावि तेटला वीणी खा ।
जो तूं हित वांछां पोतानूं (तो तूं) सुंदर शाम छबीलो गा ।
भणि नरसिंओ कह्यूं करि माहरूं माल धरीनिं वैष्णव था ।

२४

कोणे कह्यो कपटी कोणे कह्यो कामी कोणे कह्यो तालकूटिओ रे आव्यो ।
आपत्रा मूकवा नहिं कांइ एहने कोहो रे मामिरूं शूं रे लाव्यो ।
गोपालजी तमची भक्त छि दोहली पण दासनिं सदा सोह्यली–ध्रुव ॥ १ ॥

तिणि समि पुत्रीइं वचन एहवूं कह्यूं सभामांहि बिठो शूं ताल वाये ? ।
सासरा माहरां मांहि मिहिणूं दि छे ते वचन मिं खम्यां न जाये ॥ २ ॥

चङ्ग नि ताल अहम्यो देह साथि मूकशुं धरणी आकाश यवारिं एक थाशि ।
लोकडा बोलशि ते पण सहीशि कृष्णजीनूं भजन क्यम मेहल्यूं जाशि ? ॥३॥

तिणि समिं वेहवाइइं हास्य एहवूं कर्यूं मेहल्यूं उष्णोदक त्यारिं पाणी ।
रात्य दिवस ज्येहनी सेवा करां छां समण आपशि ते रे आणी ॥ ४ ॥

चैत्र सुदि द्वादशी मेघघटा चढी गडगडीनिं कूंडी मांहि वूंठूं ।
समण घाती ज्येहवो नरसिंओ सूझव्यु तेहवो समस्त वैष्णवनिं त्रूठो ॥ ५ ॥

३३

तूं दयाशील हूं दीन दामोदरा ! इन्दिरानाथ ! एहवूं विचारी ।
चरणनि शरण आव्यो क्रिपानाथ ! हूं, करिनिं गोपाल संभाल्य माहरी ॥१॥

देवना देव ! सुण्य देवकीनन्दन ! [भक्तपालक एहवूं बरद ताहरूं]
एह जाणी ;घटे त्यम करो त्रीकमा ! अवर्य अधिपत्य को नथी माहरे ॥२॥

माहरा कर्मनिं भालवेश भूधरा ! 'पतितपावन' ताहरूं वरद जाशि ।
छोडतां तो हि किम छूटशो सामला ! छोडशो तो उपहास्य थाशि ॥३॥

दुष्ट भावि भरी तें हणी पूतना तेह यमदूतपथ [थी] निवारी ।
मामकी नारि कीर्तन करी ऊधरी एम तो कोहने को मोरारि ॥ ४ ॥

नाम जपतां द्रुपदी[नां] पट पूरिआं ध्रुव भगत पामिओ अचल पद आगे।
इम[तो] ताहरूं नाम नरसिंओ जपि राक्ष चरणे रखे लाज लागि ॥५॥

३४

गर्व न कीजि गिहिलडा ! शूं मान गमायु ।
नाम नारायण मूकीनिं शूं काम कमायु गर्व० ॥ १ ॥

शाहनि काज्यि आविओ शूं कारज्य कीधूं ।
अमृत आलिं ढोलिउं हलाहल पीधूं गर्व० ॥ २ ॥

छते नेत्रे तूं आंधलो मन्य जोनां विचारी ।
जेहवी जनेता आपणी तेहवी परनारी गर्व० ॥ ३ ॥

कृष्णजी व्यनां ज्ये तूं कहि ते कारज्य काचूं ।
विश्वासिं सिध्य पामीइ मन्य जोनां साचूं गर्व० ॥ ४ ॥

रङ्ग लाग्यो रूडा रामशूं तेहनूं कारण एह ।
भीम भणि इम जाणज्यो जूठो छे देह गर्व० ॥ ५ ॥

३९

माहरि ताहरा नामनो आशरो तूं विना कूण करि सार माहरी ? ।
दीननो नाथ तूं सदा य दामोदरा ! अवसरि आव्यनिं लि ऊगारी ॥ १ ॥

भक्तनी लाज तूं राख्य लक्ष्मीवरा ! नाम 'दयाल' तूं वरद भारी ।
तारे कूण छे सेवक सामला ! माहरि किहिवानिं [इक] ठाम ताहरी ॥ २ ॥

मण्डलीक रायनूं नाम वाध्यूं घणूं तह्यो चीत धरो नाथ माहरा ! ।
भणि नरसिंओ भूतलिं अवतरी अहर्निश हूं गुण गांउं तोरा ॥ ३ ॥

४१

तूं किशा ठाकुर हूं कशा सेवक जो कर्मचा लेख भूंशा न जाय।
मण्डलिक हारनिं (काजिं) पिरिंपिरिं प्रभवि छबीला व्यना दूख कह्यूं न जाय ॥ १ ॥

को कहि लम्पट को कहि लोभिओ को किहि तालकूटिओ रे खोटो ।
सार करि माहरी दीन जाणी हरि हार आपां तो कहूं नाथ मोटो ॥ २ ॥

बहु पाशें सूंदरी कण्ठ बांहो धरी केशवा कीर्तन इम होये ।
अज्ञान लोक ते अशुभ वाणी वदि पूर्ण भक्त ते प्रेमिं जूइ ॥ ३ ॥

यहिंइ महादेवजीइं पूर्ण क्रीपा करी तहिंनो मिं लक्ष्मीनाथ गायो ।
माहमिरा–वेला लाज जाती हूती गुरुड मेहलीनि चरणे धायो ॥ ४ ॥

मूहर्नि विहिवाइइं अतीशि विगोयो उष्ण जल मूकीनिं हास्य कीधूं ।
द्वादश मेघ तिं मोकल्या श्रीहरि ! आपणा दासनें मान दीधूं ॥ ५ ॥

सोरठमांहिं मुनिं सहूइं साचो कह्यो पुत्रीनिं माहमिरू वारू कीधूं ।
नागरी नात्य मांहिं इंडूं चढाविऊं नरसिंआनिं अभिदान दीधूं ॥ ६ ॥

४५

देवा ! अमची वार कां वधिर होईला आपूला भक्त कां वीसरी गेला ।
ध्रू प्रह्लाद अमरीष विभीषण नांमिचे हाथ तिं दूध पीयूला ॥ १ ॥

म्लेच्छ माटि तें कबीरने ऊधर्यो नामाचां छापरां आप्यां छाहीं ।
जिदेवनिं पदमावती आपी मुंह्नंनिं नागरा माटि रखे मेहलां वाही ॥ २ ॥

अहमो खलभलतां तम्यो खलभलशो वैकुण्ठ एकला क्यम रिहिशो ।
वृन्दावन मांहिं राधिका संगि मूंह्नंनिं एकलो मूकी क्यम विनोद करशो ? ३

जो राजा मण्डलिक मूंह्नंनिं मारशि भींजशि धूल केइ हाणि थाशि ।
भकत्य करतां किहिशि नरसिंओ मार्यो तो 'भक्त वछल' ताहरू वरद जाशि ४

५८

आप्य रे हार सुत नन्द—वसुदेवना अद्याप्य तूजनिं लाज थोडी ।
कंसना भय थकी नाशी गोकुल गयो आहीरशूं रह्यो प्रीत्य जोडी ॥ १ ॥

(हल्या !) गरज माटि मायबाप तिं वि करां भव-इन्द्र-अपर-मुनि-रुषि जोतां ।
कंसनो वध करि काज ताहरू सरू (पछि) बापडां मूक्यां ते वन्य रोतां २

(हल्या !) तान्दूल लेइनि विप्रनिं रध्य मोकली तेहनूं भवन कीधूं वैकुण्ठ सरखूं ।
माहरि दान तां गान छि भूधरा ! नित्य प्रतिं ताहरां चरण निरखूं ॥ ३ ॥

(हल्या !) भगत्य कीधि आहीरनो नव्य हवो तो तूं हार मूनिं क्यम्म आपि ।
भणि नरसिंओ सरवरी थोडी [रही] आप्य तस्कर ! मूंने शूं संतापि ? ॥४॥

७५

हूं मागूं तां मुझनिं मया करु गायना चारण गोवालिआ ! परदुःखभंजन
पींडारिआ ॥ १ ॥

जे जे मागे तेहनिं ते आपां तो हूंनि शें नापां नारायणिआ !
रात्यदिवसे सेवां करूं तोरी सार्य कर्य मोरी सामलिआ !
भणि नरसैं हूं अवर्य न लेश ताहरी भक्ति विना अवतार म देश ॥ २ ॥

८०

दामोदरें कीधी दया मुगट सहित मुनिं आप्यो हार ।
बाजूबंध विहिरखा आप्या त्रिभुवन वरत्यो जेजेकार । ध्रुव ।
राजा ! तूं गिहिलो थयो छां खड्ग लेइनिं आव्यो सङ्घ ।
जे वाहलाशूं रङ्गभरि रमतां ते गोपालजीआं राख्यो रङ्ग दामो० ॥ १ ॥
एह वातनूं साचूं जाणो हृदय आणो दृढ विश्वास ।
नरसैंआचो स्वाम्य भलिं मिलिओ सफल मनोरथ पुहुती आश दामो० २

८१

संवत पन्नर बारोतर सपतमी अने सोमवार रे ।
मार्गशीर्ष—अजुआलि पखे [आ] नरसिंनिं आप्यो हार रे ॥ १ ॥
पचाश पद निर्मल गायां ते वैष्णव सुखे सुणाइ रे ।
अगम अगोचर अधात्म तेहनां पातिक सघलां जाइ रे ॥ २ ॥
जे जन भाव धरीनिं सांभलि ते नर निर्मल थाइ रे ।
भणि नरसैंओ हरि-पद पामे निश्चे वैकुण्ठि जाइ रे ॥ ३ ॥

---

(३)

कवि-पद्मनाभ-संवत् १५१२ कान्हडदेप्रबंध

(संपादक स० डाह्याभाई देरासरी)

दुहा

गौरीनंदन वीनवूं ब्रह्मसुता सरसत्ति ।
सरस बन्ध प्राकृत कवूं दिउ मुझ निर्मल मत्ति ॥ १ ॥
आदि पुरुष अवतार धुरि यादवकुलि जयवंत ।
असुरवंस निकन्दीउ ते प्रणमूं श्रीकन्त ॥ २ ॥

जिणि जमुनाजलि गाहीउं जिणि नाथीउ भुयङ्ग ।
वासुदेव धुरि वीनवूं जिम पामूं मन रङ्ग ॥ ३ ॥
पद्मनाभ पण्डित सुकवि वाणी वचन सुरङ्ग ।
कीरति सोनगिरा तणी तिणि उचरी सुचङ्ग ॥ ४ ॥
जाल्हुर जगि जाणइ सामतसी सुत जेह ।
तास तणा गुण वर्णवूं कीरति कान्हडदेह ॥ ५ ॥

(पृ० १)

× × ×

तिणि अवसारे गूजरधर राइ सारङ्गदे नामि बोलाइ ।
तिणि अवगणिउ माधव बम्भ तांहि लगइ विग्रह आरम्भ ॥ १३ ॥
रीसाबीउ मूल्गु प्रधान करी प्रतिज्ञा नीम्युं धान ।
गूजरातिनूं भोजन करूं जु तुरकाणूं आणूं अरहूं ॥ १४ ॥
माधव महितइ करिउ अधर्म नवि छूटीइ आगिलां कर्म ।
जिहां पूजीइ सालिग्राम जिहां जपीइ हरिनूं नाम ॥ १५ ॥
जिणि देसि कीजइ जाग जिहां विप्रनइ दीजइ त्याग ।
जिहां तुलसी पीपल पूजीइ वेद पुराण धर्म बूझीइ ॥ १६ ॥
जिणि देसि सहू तीरथ जाइ स्मृति पुराण मानीइ गाइ ।
नवखण्डे अपकीरति कही माधवि म्लेच्छ आणिया तहिं ॥ १७ ॥

(पृ० २)

× × ×

मन्त्र महोषधी देवता अनुदिनि पूरि ऋद्धि ।
पद्मनाभ पंडित भणइ पुण्यतणी परसिद्धि ॥ १२२ ॥

जूलां धान हुइ वल्हीण तिणि करी देह थाइ खीण ।
असी वात राउल जे भणइ बीजि दिवसि महाजन सुणइ ॥१२३॥
राजंगणि सवि ग्या संचरी पहिल्ल सवि सहू मेलु करी ।
जई रा लगुनि मेटणूं करूं मोती भरिउ थाल ते धरु॥ १२४ ॥
वीवहारीया राय वीनवइ अह्मो आलहिणूं करिसूं सवइ ।
करयो वेढि, म छंडु मान वरस साठि पूरीसिउ धान ॥ १२५॥
रामसींह फडीउ इम भणइ कण कोठार घणा अह्म तणइ।
मग चोखा जव काठा गहुं पूरूं वरु जु आयस लहु ॥ १२६॥
वीरम भणइ उधारु जीउ वरस त्रीस हूं पूरुं घीउ ।
मागूं सीख पसाय अह्म करु भुंजाइइ विमणउं वावरु ॥ १२७॥
जइतसी दोसी इम भणइ वस्त्र वखारि घणी अह्मतणइ ।
लेवा तणी म करसिउ भाठि कापड हूं पूरूं वरस साठि ॥१२८॥
भोलु साह भणइ लिउ तेल असी वरस पूरूं दीवेल।
वाले एतलु छइ पाथरु वलते वारे नाहणूं करु ॥ १२९ ॥
राय भणइ महाजन परि कही कोहं धान जिमाइ नहीं ।
जमलि साखि दीइ परधान ईधण विण नवि पाचइ धान ॥१३०॥
मोह्लणसाह कहइ ए परि वात एतली छइ पाधरी ।
सूकडी अगर अह्मारइ घणां वरस साठि पूरुं ईधणां ॥ १३१॥
राय भणइ ई साचूं सही पाखइ गोल न सकीइ रही।
भीमु साह ईणी परि भणइ देउल मन भाजु आपणइ ॥ १३२॥
वरस अढार लगइ त्रापडा गुल टीकलीइ पूरूं गडा ।
तेह पारखूं जोउ राय गुलनु गोलु विमणु जाय ॥ १३३ ॥

(पृ० ८२)

× × ×

सेजवाल काढि कारण करी पापी पापबुद्धि आदरी ।
लोभि एक विटालि आप लोभि एक करि घण पाप ॥ १८३ ॥
लोभि एक नर लोपि धर्म लोभि करइ पाहूआं कर्म ।
लोभि मिली माल आथडइ लोभि एक नर वाहणि चडइ ॥१८४॥
लोभि एक विदेसि वलइ लोभि एक नर पाला फलइ ।
लोभि एक दाखवि अणाथि लोभि वूटां वालि हाथि ॥ १८५ ॥
लोभि एक फरि दारिद्र लोभि चोर न आवि निद्र ।
लोभि काजि पीयारि मरइ लोभि कन्याविक्रय करइ ॥ १८६ ॥
लोभी जमलु वासि म वसे लोभि एक सेडि सांडसे ।
लोभि एक थाइ अन्यान लोभि एक पडावि वान ॥ १८७ ॥
लोभि धर्म लोप आदरइ लोभि सगां सहोदर मरइ ।
लोभि एक नर पाडइ वाट मारइ विप्र नगारी भाट ॥ १८८ ॥
लोभि एक नर छंडि मान नीच तणि घरि खाइ धान ।
लोभि एक तणूं मन राखि लोभि एक दीइ कूडी साखि ॥१८९॥

(पृ० ८९)

× × ×

डुंगरतणां शिखर डगमगइ थ्यु अजूआलुं साचुरि लगइ
दिग्गज आठ रहीया अवलोकि धुम विराल गई सुरलोकि ॥ २४२ ॥

जाणी वात न लाई खेव ततखिणि जोवा आव्या देव ।
हस्ति चडिउ एरावत इन्द्र अंतरिखइ सूरज नइ चन्द्र ॥ २४३ ॥

नैऋत वरुण सवि सुर मिली नरवाहन तिहां आविउ वली ।
तिहां चुसठि योगिणी हती हंसि चडी आवी सरसती ॥ २४४ ॥

गरुडि चडी हरि आव्या अनइ आवी शक्ति सिंघवाहनी ।
सप्त रखिश्वर साचू चवि ब्रह्मादिक तिहां आव्या सवि ॥ २४५ ॥

आव्या रूद्र वृषभ सज करी महिषिसुर आविउ संचरी ।
पाछा रहि आवसि खोडि आव्या सुर तेत्रीसइ कोडि ॥ २४६ ॥

सरगलोकथी साचु मानि सवि अपछरा चडि विमानि ।
सवि देवता अंतरिख रही दीव्य चक्षु विण दिसिइ नहि ॥ २४७ ॥

(पृ० ९४)

× × ×

संवत पंनर बारोतरू तिणइ दिनि सोमवार विस्तरु ।
जालहुर गढ उत्तम ठाउ राउल कान्हमालदे नाउ ॥ ३३८ ॥

पद्मनाभ मति आणइ नवी तेह तणी कीरति वर्णवी ।
एक चित्त जे नर सांभलइ तेह तणां सवि दुष्कृत टलइ ॥ ३३९ ॥

जे फल लाभइ दीधइ दानि जे फल गंगा तणइ सनानि ।
जे फल हुइ तप कीधइ सदा जे फल हुइ दर्शनि नर्मदा ॥ ३४० ॥

जे फल सत्य वचन प्रमाण जे फल हुइ सांभलि पुराण ।
जे फल लहि तापसि सवि जे फल हुइ बंध छोडवि ॥ ३४१ ॥

जे फल पामइ कीधइ जागि जे फल भेटि हुइ प्रयागि ।
जे फल पामइ गंगाद्वारि जे फल हुइ भेटि केदारि ॥ ३४२ ॥

जे फल हुइ विद्या उद्धरि जे फल भेटि गोदावरी ।
जे नारायण दीठइ नेत्रि जे फल हुइ दानि कुरुक्षेत्रि ॥ ३४३ ॥

जे फल पामइ साहसि सती जे फल माहमास गोमती ।
जे फल लही द्वारिकां खट मासि जे फल भेटि हुइ प्रभासि ॥ ३४४ ॥

जे फळ हुइ मुक्तिपुरी साति रामनाम उचरइ प्रभाति ।
कान्ह चरित्र जिको नर भणइ एक चित्ति जिको नर सुणइ ॥३४५॥

तीर्थ फळ बोल्यूं जेतलूं पामइ पूण्य सवि तेतलूं ।
पूण्यि संग सवि सज्जन मळइ पूण्यि आस मनोरथ फळइ ॥ ३४६ ॥

प्राकृतबंध कवित मति करी कल्युगि कथा अभय विस्तरी ।
चाहूआण कुलि कीरति घणी पूरु आस सवि कह तणी ॥ ३४७ ॥

(पृ० १०२)

(४)

कवि—भीम—प्रबोधप्रकाश

(संपादक श्री० केशवराम शास्त्री, गु० व० सो०)

भाषानूं कारण नहीं कारण अर्थविशेष।
सम्यक एह ऊपरि कहूं पिंगलगाथा एक ॥ ३ ॥

ये अज्ञानि ऊपजइ विश्व चराचर शूर ।
किरण विपि दीसइ यथा मध्य दिवस जलपूर ॥ ५ ॥

येह्नूं स्वरूप विचारतां मोह निवर्तइ एह ।
कुसुमतणी माला विपइ यथा भुजंगम–देह ॥ ६ ॥

(पृ० १)

ते हरि सदा उपाशीइ आतमबोध अगाधि ।
सनातन्न आनंदघन वर्जित अखिल उपाधि ॥ ७ ॥

शास्त्रसम्पत्ति गुरुवचनि आतमतत्त्व अनन्त ।
अनुभवतां जाणइ यति शमदम साधनवन्त ॥ ८ ॥

श्रद्धा भक्ति वैराग अति ध्यानविचार विवेक ।
साधन विना न पामीइं जोतां जन्म अनेक ॥ ९ ॥
शंकर करुणाकरतणूं प्रणमीजइ पदद्वन्द्व ।
येह्नी अनुकम्पा करी प्रापति परमानंद ॥ १० ॥
(अमृत उदरि छि सुर तणइ तो हि तेह मरंत
कंठि हलाहल विष वहइ जय जय ते जीवंत)
त्रीजा लोचननइ मिशइ ललाटि पावकरूप ।
परम तेज परगट कर्यूं जाणे ज्योतिस्वरूप ॥ ११ ॥
जय जय जय युगदीश्वरी उमया उज्ज्वलअंगि ।
आदिशक्ति अंतरि रही आलिंगी शिवलिंगि ॥ १२ ॥
अंतर मारुत नियमना नाडी सूक्षम तन्त्र ।
ब्रह्म रुद्र गुरु मुखि करी जाणइ योगीजन्न ॥ १३ ॥
(पृ० २)

प्राण पवन मन समरसइ अनुभव करतां एह ।
सिहियइं परमानंदनु वाधइ सदा सनेह ॥ १४ ॥
मुगति-मूल ए शांतरस नव रसनइ धुरि येह ।
मोक्ष-पणइ ते (णइ) कारणि बोलिउ महिमा तेह ॥ १५ ॥
आगइ नाटक बोल्यिां कविजन बहु महिमाइ ।
वली किशा कारणि करी कीधु तह्मो उपाइ? ॥ १६ ॥
विवेक विचार विस्तरइ त्यजइ महाम्हो—दंभ ।
भीम भणइ ते (णइ) कारणि ए ग्रंथ तणु आरंभ ॥ १७ ॥
सांभळतां सुख पामीइ भणतां दुःख सवि जाइ ।
एह्नु अर्थ विचारतां मति अतिनिर्मळ थाइ ॥ १८ ॥

इहिनिशि अविलोकन करइ एह प्रबोधप्रकाश ।
ते नर नारायण तणूं पामइ पद अविनाश ॥ १९ ॥

(पृ० ३)

नायक नंदी रंगाचार उत्तम मध्यम पात्र विचार ।
लघु गुरु गण पिङ्गल प्रस्ताव नाटक भेद न जाणूं भाव ॥ २५ ॥
विष्णुभक्तजन तणा प्रसादि प्रबोधचंद्रोदय अनुवाद ।
कहोस विचार सार संक्षेप पंडित रखे करु आखेप ॥ २६ ॥
ज्हां मोटा कवि रवि उद्द्योत त्हां हूं कवण मात्र खद्योत ।
माणिक जमली गुंजा यथा दोप म देशु देखी कथा ॥ २७ ॥
वैकुंठपति पुरुषोत्तम एव अवतरिआ हरि घरि वासुदेव ।
कंटक कंस महारिपु मारि उग्रसेननइं राजि विसारी ॥ २८ ॥
जरासन्ध साल्व शिशुपाल भीष्म दुर्योधन भूपाल ।
दरशन मात्र हर्या ते आइ दीधूं राज युधिष्टिर राइ ॥ २९ ॥
अवनीकेरु भार ऊतारि आव्या हरि द्वारिका मझारि ।
शिंघासणि सोहइ सामला दिन दिन दीपइ चडती कला ॥ ३० ॥
नवनिधिपूरित द्वारामती भव—आमय भेपज गोमती ।
श्रीजसवंत संत प्रतिहार इहिनिशि उच्छव मंगल चार ॥ ३१ ॥
सभामांहि वइठा धरि धीर छपन कोडि कुल यादव वीर ।
सुभट महाभट समरथ शूर निज सेवक उद्धव अक्रूर ॥ ३२ ॥
राजा गुणसागर गोव्यंद श्रीपति पूरण—परमानंद ।
धर्मशिला हरि आगलि सार रचियूं नाटक करी विचार ॥ ३३ ॥

(पृ० ४)

* * *

कामिनीकंठि अलिंगित हाथ सभामांहि आव्या रतिनाथ ॥ ४६ ॥
रातां लोचन मद्यौवन रूपइं मोहि त्रिभोवन–जन्न ।
अबला अङ्गसंग उल्हसइ दुहुदिशि जोइ हल्लइ हसइ ॥ ४७ ॥
कारि धरि कूच मूछ वल भरइ क्रोध सहित वाणी ऊचरइ ।
किहां गयु ते पापाचरण येणईं कह्यूं मोहनूं मरण ॥ ४८ ॥
रूप अनोपम चंचल नारि नमता पीन पयोधर भार ।
सोलकला मुख यिशु मयंक कटितटि झटित केसरी लंक ॥ ४९ ॥
हरिणाखी हंसगामिनी यौवन मदमाती कामिनी ।
दाडिमकली दंत निर्मला अधर सुरंग अंगि कोमला ॥ ५० ॥
कंकण हार चीर चूनडी मस्तकि मणिमण्डित राखडी ।
सवि शणगार करी सांचरी कामसहित सोहइ सुंदिरी ॥ ५१ ॥
रतिपति करइ विनोदइ वात कुसुम धनुष निज कोकिलनाद ।
वसंत अबला अंब अनेक अम्ह यीवतां किशु विवेक ॥ ५२ ॥
माहरां सकल सफल आयुध (मइं) शुम्भ निशुम्भ कराव्या युद्ध ।
वध्यु सरिसु वानर वालि रावण–आइ हर्यु अगालि ॥ ५३ ॥
विश्वामित्र पराशर ईश मुझ भइं कांपइ सुर तेत्रीश ।
ब्रह्मा लोकपितामह येह पुत्री सरिसु कर्यु सनेह ॥ ५४ ॥
इहिल्या सरिस विगूतु इन्द्र गुरुनारीशूं रमिउ चन्द्र ।
त्रिभोवन कोई नथी ते सही ये माहूरइ वशि आवइ नहीं ॥ ५५ ॥

(पृ० ५)

* * *

उत्तम पात्र विवेक विचार त्यजीइ मोहादिक परिवार ।
बीजा अंकतणु आरंभ ते मांहि प्रथमइ आव्यु दंभ ॥ १ ॥

भणइ दंभ भणइ दंभ जन सांभलु।
महामोहि मझनइं कह्यूं अरे वत्स ! अमरिख धरइ ॥
कुलअंगार विवेकरिपु आपणशूं कलह्नु करइ ।
तीरथि तीरथि मोकल्या शमदम संयम सार ॥
ऊपजवा दे अमरखे ते तूं बोल विचार ॥ २ ॥
ये मझनइं कहियूं महाराजि ते तां कारय कीधूं आज
मुगतिपुरी ये मांहि इशी मइं वशि कीधी वाराणसी ॥ ३ ॥
निशि वेश्यामुख आसवपान दीहइ धूरत मांडइ ध्यान
सर्वेज्ञा दीक्षिता तापसा सकल लोक मइं कीधा अश्या ॥ ४ ॥
दीठु पंथी गंगातीरि त्रिभुवन-तापन उग्र शरीर
दंभ करइ मनमांहि विचार जाणो करि आव्यु इहकार ॥ ५ ॥
तत्क्षणि आव्यु सभा मझारि ते देखी कांपइ नरनारि ।
जन समोह जोतु सांचरइ खट दर्शननी नंदा करइ ॥ ६ ॥
गुरुतरमत प्राभाकर भाट्ट जन व्याकरण न जाणइ वाट ।
पाठइ भणी सकइ नवि वेद तु किम कहइ अर्थनु भेद ॥ ७ ॥
स्मृतिपुराण व्याससंवाद ज्योतिक न्याय कपिल काणाद ।
नाटक पिंगल सहितु सही ए मूरख जन जाणइ नहीं ॥ ८ ॥
ब्रह्म एक नइं जीव अनन्त जुआ शास्त्र कहइ वेदान्त ।
परतर्खि वदइ विरोध अगाध वौद्ध विपइ केहु अपराध ॥ ९ ॥
तापस मुनि मसवासी सती कहइ इहकार किशां ए यति ? ।
शिखासूत्रनु कीधु नाश भिक्षा कारण ए संन्यास ॥ १० ॥
कपटइं जंगम योगी थया त्रिडंडी वेहू भव गया ।
चारवाक खमणा खडभडइ आगइ हीन वलीशूं पडइ ॥ ११ ॥

गंगामज्जन हरि उच्चरइ सदा साधुमारगि सांचरइ ।
श्रद्धासहित करइ खटकर्म एह्नइ कहि ते दंभक धर्म ॥ १२ ॥

(पृ० १७)

* * *

दिगंबर आव्यु सभा पुस्तक पाणि धरंत,
कहइ कथा सिद्धांतनी नमो नमो अरिहंत ॥ १६ ॥
आप विमल काया मलिन झिरइ सदा नवद्वार,
ते जलि किम निर्मल हुइ गाथा कहि विचार ॥ १७ ॥

वस्तु—सुणु श्रावक सुणु श्रावक परम सिद्धांतः
क्रोध-लोभ परहरीइ मति गुरुभक्ति आदरकरु
खटरस भोजन विविधपरि प्रणाम करी आगलि धरु
जीवदया-मति विस्तरु छांडु निंदाभाव,
गुरु अवगुण देखी करी करता रखे कुभाव ॥ १८ ॥
गुरुनां चरण उपासता मनि न धरता रीस,
आगइं पाम्या केवली तीर्थंकर चुवीस ॥ १९ ॥
श्रद्धा प्रति क्षपणक कहइ सांभलि माहरी वाणि,
श्रावक कुल छोडइ रखे ए शीखामण जाणि ॥ २० ॥

* * *

ते देखी शांति टलवली, करुणासहित वीमासइ वली;
ए तां रूपइं दीसइ इशी श्रद्धा हुइ पणि तामसी ॥ २१ ॥
वली जोएवा उपक्रम किउ, भिक्षुक एक सभां आविउ;
मस्तक मुण्डित पुस्तक पाणि वदइ ते बोधागमवाणि ॥ २२ ॥

सुणु सेवक सिद्धांत कवूं, क्षणक्षण विश्व ऊपजइ नवूं;
स्त्री ऊपरि गुरु आणइ भाव, करता रखे कदाचि कुभाव ॥ २३ ॥

अहो साधु ए सौगत धर्म, मोक्षमहासुख प्राप्ति कर्म ।
श्रद्धानइं शीखामण कही ए तइं कुल छांडेवूं नहीं ॥ २४ ॥

शांति भणइ ए सचूड पिंड बुद्धउपासक मुण्डितमुण्ड ।
जमली ऊभी माता जिसी श्रद्धा हुइ पणि तामसी ॥ २५ ॥

(पृ० ३१)

* * *

संवत १५ रुद्रनी वीस पट आगलां वरस च्यालीस ।
दषणायन वरखा रतु सार श्रावण सुदि दसमी गुरुवार ॥ ७३ ॥

भवभयभंजन श्रीभारती पंचप्रवाहि वहि सरस्वती ।
श्रीसोमेश्वर निज आवास भुवि मांहि बीजु कैलास ॥ ७४ ॥

तीरथतिलक खेत्र प्रभास ग्हां वसइ द्विज नरसिंह व्यास ।
ते घरि सेवक वैष्णवदास कीधु एह प्रवोधप्रकाश ॥ ७५ ॥

(पृ० ७४)

* * *

प्रवोधचन्द्रोदय-विस्तार नाटक शांत महारससार ।
भीम भणइ नाराइणदास अंक समापति छट्ठु प्रकाश ॥ ८३ ॥

(पृ० ७६)

(५)

कवि–मांडण–प्रबोधबत्रीशी

(सं० स० मणिलाल बकोरभाइ व्यास)

भक्तिवीशी

आगइ कवि ग्या मोटा कवि जे बोलइ ते वाणी नवी ।
गंगा अतिघण पूरइ वहइ सकति आपणी जल संग्रही ।
गुणसागर ए भरीया तो य 'चोरी भागि मुंधी न होइ' ॥ १ ॥
मूरख नइ मति दीजइ किसी हीइ न जाणइ कांइ उल्हसी ।
जेता अवगुण तेता ग्रहइ गुणनी वात न एकु लहइ ।
मनि जाणइ मारइ छे झंख 'बहिरा आगली वायु संख' ॥ २ ॥
खिण सांभळवा श्रोता मिल्या जाणे 'तिल कोद्रवमां भल्या' ।
तेहनी घयसि न घाणी होइ वांचि व्यास न बूझइ कोइ ।
इम करतां ते नवि छूटीइ 'सेवंतरां डांगिं कुटीइ' ॥ ३ ॥

* * *

हरिभक्ति श्रीसुख सांपडइ हरिभक्ति यश मोटा चडइ ।
हरिभक्ति नर निर्विष होइ हरिभक्ति किंकर न विगोइ ।
हरि छांडीनइ अन्य आराहि 'कोठी सरसा कांठा खाइ' ॥ १५ ॥
यमभागु नर तीरथ करइ यमभागु बहु तप आदरइ ।
यमभागु वनि योगी थाइ यमभागु ज क्लेश कराय ।
पर्यंकि पुढ्यां हरिगुण लीयु 'गुलि मरि तु विष कां दीउ' ॥ १६ ॥
तु रण खेद तु जु घरि तिजु पाणि खेद तु जु कहि भजु ।
श्रवण खेद सांभलवु कांइ चक्षु खेद कहि साहमूं जोइ ।
एम ज भक्ति होइ हरिवडइ 'कांइ न ल्यु तम्हे मधु आकडि' ॥ १७ ॥

पाप तणइ प्रभावि करी ए काया माया आवरी।
किंकरि करी मूक्यू आपणु नाम न जाणि ग्रुगपति तणु।
सत्संगति तजी कीध आव 'डोकरि नइ घरि पिठु वाघ'॥ १८॥

दल अहंकारतणां सांचर्यां जन्मकोडि पातक परवर्यां।
मोहवाण मेल्हि अति घणां राखि न चरण शरण तम्ह तणां।
नारायण नामि शूं कीयूं 'वाइं वादल यम ठेलीयूं'॥ १९॥

शंघ तणइ बलि शंघ ज रहि (तिम) ताहरी माया तूंह ज लहइ।
शेव करंतां सूधु काय मझ मन राखि न तोरे पाइ।
कहि **मंडण** *अहमचा नृप होइ स्वामि विना कुंण साहमुं जोइ?॥२०॥*

पाखंडवीशी

पाखंडी गुरु मायइ कर्या वामी वेद उवटि सांचर्या।
धर्म तणी हांणि नवि सयुं उपरि आलि धन वावर्युं।
मिथ्यालापि हौआ संयमी 'भइसि केडि पाडी नीगमी'॥ ८१॥

मीचइ आंखि न मीचइ हेआ न चलइ काछ चालइ धोतीआं।
लाई भूती विभूती न लइ तन सांकली नइ मन सांकलइ।
दांमी ऊंट सकि नवि कोई ए गाहादि दामंतां जोई॥ ८४॥

अंगि राख मनइ राखडी वाहरि वांग मांहि वांगडी।
भालि चंदन मन माहि चंदली माहि वन अंतरि वनी॥ ८५॥

वैष्णव धर्म लोक नइ कहइ करणी चंडाली मध्य ग्रहइ।
सहितु टालि वि शीस न होइ महिषी ऊंट न चारइ कोइ॥
किम होशि नामि निर्मलां 'ठालि ऊखलि वि मूसलां'॥ ८७॥

जु योगी तु कांइ क्रोध आतमसुख तु काइ निरोध ।
सन्यासी तु कांइ असंतोष जु तप तु शूं कारण लोक ।
जु विद्या तु कां कूडुं कवइ माथा मार्नि शीसक शवइ ॥ ८८ ॥

वैष्णव काहावि वशि नवि एक ब्रह्म क्रिया विण ब्राह्मणवेष ।
ज्ञांन हीन ज्ञांनी मांहि भलइ एक प्रश्न पूछी नीकलइ ।
इंद्रि साधि नही कहि सध कूडइ लोहडइ कटक जु खध ॥ ८९ ॥

योग न जांणइ योगी कहइ खमणु तु जु खम नर हुइ ।
इंद्रि वशि तु वैष्णव नांम पाखंडी पंडित परणांम ।
कूडा बोल न आवि वरइ विण पांणी मोजां उतरइ ।
रोली राख लाख सिद्ध थाइ हौआ साध व्याध घरि खाइ ॥ ९० ॥

रूढ पड्यां नर क्षण सांभलइ पाप करंतु नवि पाछु वलइ ।
शीख शवे घरि ग्यां वीसरी पोथां थोथां नांख्यां करी ।
व्यास वचनि मन नु हि थीर 'उंटघटि यम नांम्युं नीर' ॥ ९४ ॥

बंधु धर्म पाप पाधरूं मोहि मनी विठा खरूं ।
शवकहि शीख देअंतां होइ बूडंता आपिं नवि जोइ ।
साप डशु किम उखध करइ भांड मरइ सम खातुं शरइ ॥ ९६ ॥

माहि मइला नइ करि सनांन परद्रोही नइं आपि दांन ।
मुहि मीठा अंतरि गुण जूआ माहि मोटा विषना लाडूआ ।
इम करंता किम जाशु पारि 'मींनी जइ आवी केदारि' ॥ ९७ ॥

घरनां पातक तीरथि जाइ तीरथनां कोटी गण थाइ ।
पाप अजांणि लघु लेखवु जांणिं मेर समान भोगवु ।
विण विश्वाधार वाहार कुंण धाइ ? दीहइ चव्यूं चुडडुं छसाइ ॥ ९८ ॥

एक कहिंहिं निंदा करइ 'मोदक मंदाग्नि न वि जरइ'।
रहिं जवासु जलि मूकाइ 'गणिकापुत्र न तात सुहाइ'।
सर्पा मृत पाणि न वि सहइ ढूंढी पेटि क्षीर नवि रहि ॥ ९९ ॥
मंडण कविता नांगि गणइ माणि मणि कार्कोटा तणइ।
कूडी काया हरि गुण सीध कुटी वटइ मांथीड लीध।
उखाणे हरि लागूं मन्न यम उकरडामाहिं रतन ॥ १०० ॥

- - - -

हास्यवीशी

पापमती नइ मदिरा पीध वडकार्गी वह्नु नइ प्रीय पक्ष कीध।
हृदय मूनुं भांगि वावरइ व्याधि पीड्यु दुःकृत करइ।
कुमार्गी नइ कुसंगति जडी यम कारेली लींबडी चडी ॥ १०१ ॥
थोडी विद्या थ्यु ठीकरू धन थोडुं धनवंत थ्यु सरूं।
उणु घडु गाजि ते घणुं पूरू पांणी ग्रहइ आपणूं।
गर्वइ सर्व सुवर्णमइ होइ कीडी चडी काटरलइ जोइ ॥ १०२ ॥
परणी नारि तजी वन गयु आळस अंगि तपसी थयु।
कांम वांण न सक्यु जाळवी रडवडती स्त्री आंणी नवी।
श्वान भसावइ हींडइ चक्यु बाहरि न ग्यु घर न राखी सक्यु ॥१०३॥
पुण्य विना नवि पाधरूं क्षेत्र पुण्य विना गौ विणसइ चैत्र।
वीजु विणज करइ अपाइ करइ पाधरूं ऊंधूं थाइ।
पुण्य विना दुःख दारिद्र नडइ वडूं घरि कुहांडां घडइ ॥ १०८ ॥
माता पिता मारग दाखवइ सजन लोक मिली शीखवइ।
गुरू स्मृति वांणी सांभलि देखइ नृप शारि दंडा फलइ।
एतां वारीतां कर्म कीध 'भुंकतु गाधह चोरे लीध' ॥ ११० ॥

करणी नवि देखइ आपणां लोकधर्म देखाडइ घणा ।
शीवली फूल मभ माहि ग्रहइ वाहरि शोभा जोई वहि ।
कहि कारणि नवि खरचइ रूउ 'उखरली खाटि चंद्रूउ' ॥ १११ ॥

मूर्खवीशी

मूरखशूं मन करशु संग रंग माहि ते करशि भंग ।
'सोना झाल म पांणी खोइ' 'मट्ठ मालि चडाव्यु किम टोहि' ।
ढेढनंइ राज कराव्युं करइ मातु बोकड मुखि मूतरइ ॥ १२२ ॥

पहिलूं वचन न कीधूं तात बीजी लोपी गुरनी वात ।
लोके पुरणा न कीधी रीति भय भूपति न आव्युं चीति ।
वारीतु नर प्रांणि पलइ जां न भीर्ति शर आफलइ ॥ १२६ ॥

आंणीतां आघेरू जाइ वारीतां वांकेरू थाइ ।
स्वांन पूंछ नली खटमास तु हि न छंडइ वंक अभ्यास ।
शीख देअंतां साहमुं भडइ 'मुलि लोहि न पोगर चडइ' ॥ १३१ ॥

सज्जनवीशी

कुलवंतु नइ क्रिया घणी इंद्रय वशि नइ तीरथ मणी ।
धनपूरित नइ अंतरि दया विनय विवेक नइ भूपति मया ।
श्राद्धपात्र नइ मत्यु रवि राहु 'मा प्रीसणइ मुहुसालि वीवाह' ॥२०१॥

निर्मल काया नइ निरोग बीजइ आश्रमि पाम्यु योग ।
कविता विण प्रतिबोध न कवइ व्यास वचन विण ना रद चवइ ।
वाडव विष्णुभक्ति आवर्यु आगइ शंख गंगोदक भर्यु ॥ २०२ ॥

ईंद्रि वसि हु राख्यां आप त्यजूं पल्यना मन संताप ।
स्वामिशरण नावि मूकइ घटी मनसा मेहेलि संतोषि जडी ।
ठगकचोट फरि जो होइ घरइं भीख नहीं को कोइ ॥ २०३ ॥
जइन तणी त्यु जयणा सार वरतु वेदकर्म आचार ।
अमुरतगु आंशु वीसास शेतु आदिपुरुष अविनाश ।
ए रजमांहि तज कादि जोइ 'सोलें वाले गदीआणु होइ' ॥ २१९ ॥

छतवीशी

के उपवीत पेटि न वि भण्यां तरक म सूनति साथि जण्या ।
शिर नो ढूंचि श्रावक नीसरा फाटे कांन न योगी गर्या ।
कर्मविकारि कर्यां आपणा ऊचनीच कूचा मन तणा ॥ २२२ ॥

(सोळमो सैको पूरो)

सत्तरमो सैको

(१)

अकबरसंमानित कवि सिद्धिचंद्र—सत्तरमो सैको-संक्षिप्त गुजराती कादंबरी।

"विदशा नगरी, वेत्रवती नदीनिं तटिं। त्यहां राजा शौद्रकं राज्य करिं। एक समिं दक्षिण देशथी एक चांडाली परम सुंदरी, शुक एक लेई राजद्वारि आवी। प्रतिहारिं राजानिं आवी विनती करी कहुं-एक चांडाली द्वारि अतिसुरूपा अतिचतुरा शुक हस्त धरी आवी छिं। राजाइं मांहिं तेडी, शुक परम गुणी चतुर, तेणे शुकिं राजानि केटलाएक श्लोक भणी आशीर्वाद कीधो। राजा घणूं प्रसंन थया। चांडालीइं कहुं-एह शुकनूं नाम वैशंपायन छिं। अत्यंत गुणी सकल कला प्रवीण छिं। तम योग्य छिं ते माटे ल्यावी छूं। एह तमे राखो। ते राजाइं प्रेमशूं राख्यो। पछइ राजाइं पोतानो प्रधान कुमारपाल नामिं, तेहनिं कहुं-ए कशुक उत्तम भणइं छइ। प्रधांने कहुं—एहनिं शाप दीसि छइ, वर छि ते माटे उत्तम भणइ छिं। मोहलमां मोकलो। वृत्तांत सर्व कहेशिं। ते राजाइं शुक महोलमां मोकल्यो। पछि राजा भोजन करी मोहलमां पधारा। शुकनि प्रसंन मनिं पूर्वापर शुकनूं वृत्तांत पूछुं। शुक कहि छिं-विंध्याटवी स्थानक दंडकारण्य क्षेत्रमाहि छिं। त्यहां अगस्त्यनो आश्रम छि। त्यहां माहरी जन्मभूमि छिं। त्यहां पंपासर नांमि सरोवर छि। तेहने कांठिं एक शांबलनूं वृक्ष छिं। तेहना कोटरमां माहरी माता मुनिं जणतां मुई। पिता मुनें पालतो। ते एकवार आहेडीइं कोटि मरडी लीधो। पछि

हूं पांख विना वृक्षतलै पांदडांना पुंजमां पड्यो। ज्ञानि रह्यो ते आहेडीइं न दीठो। त्यहां हूं तृषाक्रांत थयो। त्यहां थकी तपोवन ढूंकडुं हतुं त्यहां हूं अतिदुखि दुकतो गयो। ते तपोवन जावालि ऋषि रहि। तेहनो पुत्र हारित सरोवरि स्नाननि आवतां हुं अतिदुखी पड्यो दीठो। पछि शिष्य हस्ते हूं लीधो। जल पायूं। पछि ऋषिपुत्र, स्नान करी अशोकवृक्ष तलि जावालि शिष्यसंयुक्त वृंदमां बिठा हता त्यहां मुनि लेई गयो। ऋषिइं पूछ्युं पुत्रनि—येह, एह शुक त्यहां थकी लाव्यो? कह्युं—वनमाहिं दुखी तृषाक्रांत पड्यो तो दया जाणी लाव्यो। ऋषि त्रिकालदर्शी मुज सांहांमुं जोई मुंने कह्युं, अविनय कीधांना एह फल। पछि शिष्य–पुत्रादिके ऋषिनि पूछ्युं—एहनो स्वांमी! शो अविनय छि? ते ऋषिइं कह्युं—एकांत रात्रि विधिपूर्वक कहशुं। पछि रात्रि मुंनि पासे विसारी सर्व आगलि ऋषिइं कथा कही, 'ती कथा सांभलो' इम कही वैशंपायन शुक, ते, हवि राजा शौद्रक आगलि जावालि ऋषिनी कही कथा कहि छइ—

उजेणी नगरी पुरीशिरोमणि। त्यहां सूर्यवंशी तारापीड राजा अति विख्यात। तेहनो मंत्री शुकनाश नामि ब्राह्मण धीर अतिचतुर। ते मंत्रीनिं सर्व राजकार्य सूंपी राजा क्रीडा करिं। ते राजानें पुत्र नहीं"—

(पुरातत्त्व पुस्तक ५ (चैत्र १९८३) पृ० २४४)

(२)

अमरेलीनो शिलालेख सं० १६५० नो

संवत १६५० वरषे भादरवा सद १२ दने श्रीदीवान पान नवरंगपान हवाले प्रगणे अमरेली मीर श्री मिहमद हुसेन आहिशन नवापुराना माहजन समतजोग जत तमनि विठ माप छ. हीदवाण गय त्रुकणे सूहर मागे तेने....गधेडे गाल.

(पुरातत्त्व पु० ५ पृ० १८१)

(३)

कवि श्री विष्णुदास–सत्तरमो सैको–महाभारत

(हस्तलिखित प्रति–श्रीफार्बस गुजराती सभा–अं० १३३)

प्रभातकाल हवो सहु चाल्या करवा माहासंग्राम ।
दुर्योधन पांडव जीत्यानी करी हृदि शूं हाम ॥ ७ ॥

त्यारि कर्ण किहि माहारी वीद्यानुं सकल कार्ण देषाडुं ।
कि पांडव मुझनि मारि कि हु तेहनि नाश पमाडुं ॥ ८ ॥

आगि ईंद्रि धनुष समर्प्यूं फरशूंरामनि हाथे ।
तेह वाय करि ग्रही युद्ध मि करवूं पांडव साथे ॥ ९ ॥

अर्जुनना शरषी माहारि बाकी सर्व सजाई होय ।
एहनि सारथी कृष्ण छि तेहवो माहारि नथी कोय ॥ १० ॥

ते शरषो आपणि शल्य छि सत्य जांणो मनमांहि ।
ते माहारो सारथी होइ तो युद्ध करूं जै त्यांहि ॥ ११ ॥

दुर्योधन एहवूं वाक्य सांभली मनमां थयो रलीआत्य ।
कह्युं कर्ण हुं सैन्य लेइनि आवूं तुझ संघात्य ॥ १२ ॥

पछि कर्ण सावधांन थयो माहाधीर्यपणूं मन्य आंणी ।
तेणि समि वली शल्य प्रत्यि दुर्योधन बोल्यो वांणी ॥ १३ ॥

आहो ! ! ! शल्य तू माटि हुं रणमां रूडुं भाव्यो ।
कर्णतणूं सारथीपणूं करि ए प्रारथवा आव्यो ॥ १४ ॥

तुझ देषीनि ए समरांगण्य सुभट सहु को त्राहासि ।
यम अर्जुननि एक कृष्ण त्यम कर्णतणि तू पासि ॥ १५ ॥

ते ते सुभट पच्या रणमा ये माहाबलीआ होय।
कर्णसंघात्यि तुझ देषी उभा न रहि कोय॥ १६॥

शल्य किहि हुं हीनप्राक्रमी एहवूं तूझ मन्य आवि।
ये तू मुझनि कर्णतणुं सारथीपणुं करावि॥ १७॥

क्रोधवाणे इम शल्य उच्चर्यो अरे पापी शूं बोलि।
हु एकलो संग्राम करूं पण नही को माहारि तोलि॥ १८॥

आहारि पर्वत चूर्ण करूं अनि वसुधा पांण्य वीदारूं।
किहि तो समुद्रतणुं जल शोषूं को न सकि बल माहारूं॥ १९॥

अणप्रीछ्यूं अविचार्यूं वायक आंहां बोल्यो तूं इम।
सुतपूत्रनो मुनि सारथि करवा ईछि क्यंम॥ २०॥

जो त्यि एहवां वाक्य कह्यां तो युध करुं नवि लेश।
अतीक्रोधि उठी त्यांहाथो संचर्यो शल्य नरेश॥ २१॥

दुर्योधन कहि अहो शल्य हु तव वचने मन्य राचूं।
तुझथी अधीको कर्ण नही ए तू बोल्यो मुझ साचूं॥ २२॥

आर्तिवंत पूरुषनि राषवा पोते वर्द कहाव्यूं।
शत्रू सर्वनि शल्यरूप त्यि साचू नांम धराव्यूं॥ २३॥

दुर्योधन किहि हु मुझ अर्थे वाक्य कहुं छुं एह।
तुझ सरषो को सुभट नथी रणमां हय राषि येह॥ २४॥

शल्य कहि सारथीपणूं हवि मि करवूं नीरधार।
ए रणमां कह्यूं कर्णनूं हुं नही करुं एक लगार॥ २५॥

दुर्योधन कहि अहो शल्य तूं आंणे मन्य विश्वास।
एक मार्कंडयनु उक्त छि ते तुझनि कहुं अतीहास॥ २६॥

माहारा पीतानि किहि मार्कंडेय सांभलि कौरवराय ।
को एक कालि देवदानव शूं युद्ध अपमीत थाय ॥ २७ ॥

हाहाकार तव थै रह्यो रे भूवन त्रण्य मोझार्य ।
प्रथम युद्ध तारकि करं ते रणमां पाम्यो हार्य ॥ २८ ॥

त्रण्य पूत्र तेहनि हवा रे एक नांम कमलाक्ष ।
वीजो पूत्र ते वीद्युमाली त्रीजो ते तारकाक्ष ॥ २९ ॥

त्रोहि मलीने माहातप मांड्यो ब्रंह्मा थया तुष्टमांन ।
कह्यूं पूत्र मागो मन्य भावि ते आपू वरदान ॥ ३० ॥

तारकसुत वलता वदि ते ब्रंह्मानि शीर नामी ।
प्राणीमात्रथी अह्मो न मरीइ ए वर आपो स्वामी ॥ ३१ ॥

पछि ब्रंह्मा कहि मृत्युलपसृष्टीमां अमर नही को प्रांणी ।
ते माटि वीजो वर मागो ए कारण मन्य जाणी ॥ ३२ ॥

करी वीचार वीरंची प्रति पछि एहवूं वोल्या त्यांहि ।
त्रण्य भूवनमां रह्या थका अह्मो वीचरू त्रीभोवनमांहि ॥ ३३ ॥

सहस्र वर्षे ते नगर पछि मलि एगठा यारि ।
एके वांणे वेध करि अह्मो मरू पीतामह त्यारि ॥ ३४ ॥

सत्यवर आपी अनि वीध्याता हौआ अंतरध्यांन ।
रचवा त्रण्ये नगर वीचारी जोयू आभींतर ज्ञान ॥ ३५ ॥

पछि मयदांनवनि जै कह्यूं तेणि नगर रच्यां ततकाल ।
एक कनक एक रुप्यतणूं एक लोहमि अधीक वीशाल ॥ ३६ ॥

स्वर्गि कनक अंत्रीक्षि रूप्यमय कह्यूं न जाय वीयांण ।
लोहमि नगर रहि वसुधातलि शत योजन प्रमांण ॥ ३७ ॥

घर प्रकार अनेक अटाली युक्त्य मनोहर दीसि ।
अनेक द्वार वीराजीत रचना ये जोतां मन हींसि ॥ ३८ ॥

हेमनगरनो तारकाक्ष ते थै रह्यो अधीकारी ।
रूप्यनगर कमलाक्ष भोगवि माहाप्राक्रम बलधारी ॥ ३९ ॥

लोहमि नगरतणो अधीपति ते वीद्युन्माली कहावि ।
त्रण्य भुवनमां माहावलीओ येहनी यमली को नावि ॥ ४० ॥

एणि प्रकारि त्रण्ये बांधव राज्य करि अवस्यमेव ।
मनमां ये ईछा करि ते त्यांहां पांमि ततपेव ॥ ४१ ॥

तारकाक्षनो पूत्र हरी तेणि माहां उग्रतप कीधो ।
वीरंची प्रगट हवा वरकारणि सत्य बोल करि दीधो ॥ ४२ ॥

हरी कहि ब्रंह्माजी मुझनि एक वर करो पसाय ।
स्वामी अह्मारा नगरवीषि एक अमृतवापी थाय ॥ ४३ ॥

तेणि समि ब्रंह्माजी अंतर ध्यांन हवा वर आपी ।
हेलां मात्रमांहां नीमी एक अमृतकेरी वापी ॥ ४४ ॥

पछि उन्मत्त हवा ते दांनव माहावलीआ ये होय ।
त्रण्य लोकमां देवल्पेश्वर दुपी कर्या श्रव कोय ॥ ४५ ॥

तेणि समि जई अमर कहि श्रीब्रंह्मानि शीर नामी ।
त्रैलोक्यमां तरकसुत आगलि क्यम रहीछि अह्मो स्वांमी ॥ ४६ ॥

ब्रंह्माजी वलता इम बोल्या अमर तह्मो अवीधारो ।
ये पापी तमनि दुपदायक ते तां द्वेपी अह्मारो ॥ ४७ ॥

जाओ शर्ण्य माहादेवतणि त्यांहां किहिजो नीज वृत्तांत ।
ईश वीना कोणि पापीनो आणी न सकि अंत ॥ ४८ ॥

ब्रंह्मानि पछि मुक्ष करी सुर त्यांहां आव्या ततपेव ।
मन एकाग्रपणि स्तव्यां त्यारि प्रसंन थया माहादेव ॥ ४९ ॥
ब्रंह्मा कहि तारकसुत आगलि अमर दुषी श्रव थाय ।
तह्म वीना तेहनो नाश करी को न सकि शंभूराय ॥ ५० ॥
पछि ईश किहि हुं मारीश हेलां मात्र मोझार्य ।
त्यारि दीव्यरूप अमरि रथ नीर्मो बिठा श्रीत्रीपुरार्य ॥ ५१ ॥
रुद्र कहि सारथी करो को मुझ पि अधीको होय ।
ते तां तिंमि एणि रथ विठा देत्य हणाए तेह ॥ ५२ ॥
पछि ब्रंह्मानि सारथी कर्या रे वरत्यो जे जे कार ।
दांनव हणवा ईश संचर्या आणी प्रेम अपार ॥ ५३ ॥
जई युद्धनो समि रच्यो पूरवा अमरनी हांम ।
पाशुपर्वतास्त्र बांहा मेहेली शीघ्र करे माहासंग्राम ॥ ५४ ॥
त्रण्ये पुर तेणि समि बलीनि भस्मरुप थया त्यांहि ।
तारकासुत त्रण्ये पापी पछि पड्या रणमांहि ॥ ५५ ॥
पर्म क्रीपा कीधी माहादेवि वचन पोतानूं पाल्यूं ।
जयजयकार हवो त्रीभोवनमां अमरतणुं दुख टाल्यूं ॥ ५६ ॥
दुर्योधन किहि अहो शल्य तूं सांभल्य सत्य उपाय ।
ते माटि हवि कर्णतणुं सारथींपणूं कर्य राय ॥ ५७ ॥
रुद्ररुप ए कर्ण भणि जि तू ते वीरंची समांन्य ।
तेणि त्यांहां कर्यूं त्यम त्यिं करवूं कार्य नीदांन्य ॥ ५८ ॥
तेमाटि वली सांभल्य तुझनि हु कहु एक अतीहास ।
दुर्योधन राजा इम बोलि किहि शेवक वीष्णुदास ॥ ५९ ॥

* * * *

ते शल्यपर्वमां कथा सवंध कवीता किहे बांधीश प्रतीबंध ॥ ११ ॥
संवत सोल पंचावनो सार येष्ट शुद चोथ्य शनवार ॥ १२ ॥
ते दीन पूर्ण थई ए कथा बुद्धमांने बोलीश सर्वथा ॥ १३ ॥
गाई सांभलि तेहने वैकुंठवास वेह्र करजोडी किहि वीष्णुदास ॥ १४ ॥

---

(४)

वैश्यकवि नाकर—सत्तरमो सैको—महाभारत आरण्यक पर्व

(सं० श्रीकेशवराम शास्त्री)

प्रथम ते प्रणमी श्रीगणपतिनइं जोडीनइं बि पाणि ।
विघन हरु तम्यो कृपा करीनइं आपु अविचल वाणि ॥ १ ॥
एकदंत ज शोभतु गजवदन शोभइ तेह ।
दुंदल देव दया करी निज बुद्धि आपु एह ॥ २ ॥
मोदक-आहार अंतर्यामी कविनइं करु पसाइ ।
संमुख स्वामी अवलोकतां बुद्धि-ज्ञान परिपूरण थाइ ॥ ४ ॥
देव दानव असुर किंनर स्तवइ गुणभंडार ।
मुह्नइं दीन जाणी दामणु करु माहरी सार ॥ ६ ॥
शुभ कारणि प्रथम स्तवइ त्रैलोक मांहां देव ।
ताहरी कृपा विना पामइ नहीं बुद्धिज्ञान ज खेव ॥ ७ ॥
ते माटइ महाराज ! मुह्नइं कालनइं परम कृपाइ ।
इतिहास किहिवा बुद्धि माहरी सफलित-हृदया थाइ ॥ ८ ॥
कहेश महापुराण नइं कविता खोडि म देशु ।
मुझ बुद्धि-माने करुं रचना कृपा श्रीपरमेश ॥ १४ ॥

(पृ० ३)

धरणि ढलिउ धर्मराजाजी ।
मूर्छा पडिउ नहीं घटि सानजी ॥ १ ॥

सान नहीं घटि रायनइं शौनक दिइ प्रतिबोध ।
ज्ञान ताहरूं किहां गयूं माहरा धर्मराजा ज्योध ॥ २ ॥

अज्ञाने इम आवरिउ तूं अंतर्गति अविलोकि ।
सुखदुःख सरज्यूं देहिनइं हर्ष किहि तिहां शोक ॥ ३ ॥

अरे पडी वेलाइ पांडवो तम्यो म मेहलु चित्ति धीर ।
तम्हारइ तिहां साहि छइ स्वामी श्रीज्यदुवीर ॥ ४ ॥

मूर्छा वली रायनी तव बोलिउ धर्मकुमार ।
शौनकजी तम्यो सांभलु गृहस्थना आचार ॥ ५ ॥

ब्रह्म क्षत्री वैश्य शूद्र जे मुख्य च्याहरि वर्ण ।
प्रातःकाले ऊठी स्नान संध्या [अनइं] सेवा स्मरण ॥ ६ ॥

उपवीतधारी सांचवइ ते आपणां सत्कर्म ।
ज्यज्ञ—ज्याजन—अध्ययन—अध्यापन—दान—प्रतिग्रहधर्म ॥ ७ ॥

शूद्र सेवा विप्रनी वली कथाकीर्तन बुद्धि ।
अन्य वर्ण अलगा ते थकी तेहनइं तेह्वी विधि ॥ ८ ॥

अष्टादश अन्न ऊपनां हुइ शाकपाक विवेक ।
पणि शौनकजी तम्यो सांभलु पिहिलु दयाधर्मविवेक ॥ ९ ॥

अतिथि आविउ आंगणइ तेहनइं न करिवु नाकार ।
गौ गवानिक वास वायस श्वाननइ दिइ आहार ॥ १० ॥

परिवार पोषइ आपणु नइ ऊगरतूं रिहिशि कष्ट ।
[पवि]त्र अन्न ते प्रासतु जु हुइ घरमांहि ज्येष्ठ ॥ ११ ॥

यथासंपदा जेह्नइं जेह्वी तेह्नइं तेह्वूं दान ।
राजानइं तां राजरीतिइ रंकनइं [रंकसमान] ॥ १२ ॥

पणि रत्नमणि कनकभूषण देतां अन्न अवारि ।
विमुख को वालिवु नहीं पछइं लिहिवु आहार ॥ १३ ॥

तो हि आशा माटि थयूं अनइं विपत आवी आज ।
ते गम्यूं श्रीगोविंदनइं जे द्वारिकां तणु राज ॥ १४ ॥

मइं पाप पूर्वे शां कर्यां ठूंस्या कणकोठार ।
अतिथि को आविउ आंगणइ तेह्नइं नापिउं आहार ॥ १५ ॥

दुर्बलनी मइं भूख न लही अन्नकाजि करिउ नाकार ।
याचकजन मइं दुहुविआं तेह्नइं मुखि करिउ तिरस्कार ॥ १६ ॥

पाक पूरण नीपना हूं ज्यमिवा वइठु ज्येष्ट ।
अन्नकाजि उवेखिआं मइं पोतइं पोष्यूं पेट ॥ १७ ॥

अंतर मइं एह्वुं करिउ ते आइं आव्यूं पाप ।
ऋषि ! तह्मनइं मूकी हूं ज्यमूं तु भोगवूं किहां आप ॥ १८ ॥

निःश्वास मूकी ऊठिआ नइं गया जिहां गुरु धौम्य ।
वृत्तांत सर्व मांडी कह्यूं एकांति वइशी भोमि ॥ १९ ॥

मुहुनइं राइ जाणी आविआ मोटा जे द्विजराज ।
नाकार मुखिथु नवि कहूं देह प्राण थाइ त्याज ॥ २० ॥

तव धौम्य कहइ छइ धर्मनइं चिंता म करशु चिंति ।
विपत सघली भांजशि कहूं ऊपरि दृष्टांत ॥ २१ ॥

*　　　　*　　　　*

जनमेजे राइ ऊच्चरइ ते जल नयणथूं झरइ ।
राइ कहइ वैशंपायन मुह्नइं कुहु रे ॥ १ ॥
वैशंपायन मुहुनइं कुहु एक संदेह मोटु आपि ।
धौम्य ऋषिनइं किहां थकु ए कश्यपसुत तणु जाप ॥ २ ॥
सद्य प्रभाकर प्रगटिउ अनइं आपिऊं वरदान ।
मूल मंत्र ज किहां थकु किम पाम्या परमनिधान ॥ ३ ॥
वैशंपायन वलतूं वदइ उत्तर सांभलु राइ ।
एक समइ इच्छा थई स्वर्ग मांहि सुरराइ ॥ ४ ॥
सूरजनूं एक स्तोत्र कीधूं नाम शत ऊपरि अष्ट ।
अंतर्गति आराधतां सविता थया संतुष्ट ॥ ५ ॥
आवीनइं ऊभा रह्या आपिऊं वरदान ।
आ वैभव ताहरु अचल रिहिज्यो इम कही थया अंतर्धान ॥ ६ ॥
एहवइ ऋषिजी आविआ कारि वीणा हरिगुणगान ।
आसन आपी अरचिआ नइं स्तवइ सुरराजान ॥ ७ ॥

(पृ० ३०)

जनमेजे वलि पूछइ वात वैशंपायन कुहु साक्षात ।
एकमास ए अंतरि रह्यु ते पांडवे किम निर्वह्यु ॥ १ ॥
तेह्मां विघ्न थयां जे यथा तेह्नी मुहुनइं कुहुनइं कथा ।
वैशंपायन किहि सुणि राइ ! एक मासमां विघ्न वि थाइ ॥ २ ॥
सुखसमरिधि वनमांहि रमइ एकवार एहवु आव्यु समइ ।
मृगया रमवा वनमां गया पांचे भाइ जूजुआ थया ॥ ३ ॥
त्रणि दिशाइं तेह परवर्या निकुल सिहिदे एकठा पल्या ।
इम ते वनमां पांचे भाइ तेह समइ सांभलिनइं राइ ॥ ४ ॥

मध्याह्नि आश्रम सूना थाइ ऋषिजी नितिकर्म करवा जाइ ।
शाल्वतणी सुता सुंदरी जिद्रथनइं कन्या ते वरी ॥ ५ ॥

लग्न केत ते दिन आविउ जिद्रथनइं संदेशु काह्विउ ।
परणेवा पधारज्यो तम्यो आंहि सामग्री कीधी अम्यो ॥ ६ ॥

जिद्रथि जान शणगारी बहु हय गज रथ ते लीधा बहु ।
भेरी मृदंग वाजइ घणी साथि..............तणी ॥ ७ ॥

स्त्रीजन रथ मांहि गान करइ एणी पिरि जिद्रथ परवरइ ।
दूत-काम्यिकनी वाटें जाइ नीसाणना निर्घोष वगडाइ ॥ ८ ॥

तेणइ समि वनमांहि द्रुपदी एकली मनमांहि वदी ।
दुंदुभिनाद बहु सांभली स्त्रीनां गान सुणी मनि रली ॥ ९ ॥

कोइक राजा वरवा जाइ ते जोवा केरू मन थाइ ।
पर्णकुटी ऊघाडी करी द्रुपदी जोवा ते नीसरी ॥ १० ॥

ऊपरि ऊपरि जोइ चढी जिद्रथ केरी दृष्टिइं पडी ।
तव प्रधाननइं पूछ्यू भूपि ए स्त्री कुण दीसि तेजस्वरूप ॥ ११ ॥
सूर्य्यकोटि दीसि आत्कार एह्वी जानमां नथी कुह्ण नारि ।
कोटरास परधान किहियाइ तेह्नि पूछवा मूकिउ राइं ॥ १२ ॥
जाउ मित्र आवु पूछी वात कुह्णनी कामिनी कुण मा-तात ।
तिह्वारि प्रधान पूछवा गयु द्रुपदी आगलि ऊभु रह्यु ॥ १३ ॥
परधानें जै कहूं कामिनी ते मुह्णनइं किहि तूं भामिनी ।
परधान केह्वु सोभइ त्यांहि बावळ वृक्ष ऊभु वनमांहि ॥ १४ ॥
एह्वी ऊभी द्रुपदनी बाल सिंहनी नारी पूछि शिआल ।
तिह्वारि द्रुपदी बोली वाणि पांडवपत्नी मुह्णनइं जाणि ॥ १५ ॥

एटलुं सांभली पाछु वल्यु जिद्रथनइं ते आवी मिल्यु ।
स्वामी पांडव केरी नारि एकली ऊभी मठनइ द्वारि ।। १६ ।।
पांडव तु मृगया गया वन्नि कुह्य नवि दीसइ पासइं जन्न ।
एह्वूं आवी प्रधानि कह्यूं जिद्रथनूं मन वल्लभ थयूं ।। १७ ।।
द्रुपदी जाणी अवश्यमेव रथ खेडी चालिउ तत्खेव ।
जान जाती मेह्ली यदा द्रुपदीनि हरवा आव्यु तदा ।। १८ ।।
कृष्णा मन्नि विचारइ त्यांहि एकलु रथ कुह्य आवइ आंहि ।
मनमां एह्वी आवी भ्रांति सूनूं मंदिर छूं एकांति ।। १९ ।।
शूं जाणिइं कुह्य कपटी राइ मननी वात कली नवि जाइ ।
एह्वी वात विचारइ मन्नि वैशंपायन किहि राजन्न ।। २० ।।
एटलि रथ आविउ ढूकडु मन्न केरु भागु ऊभरु ।
जिद्रथनइं उलखिउ नारिं तिहारइं प्राण आवइ ठाह्रि ।। २१ ।।
एह तु पूज्य परुहुणु राइ मुझ दीठइ रलिआयति थाइ ।
एह्वूं रिदइ विचारी जोइ एह्ना मननूं कपट न होइ ।। २२ ।।
रथ तां आवी रह्यु क्षणमांहि द्रुपदी ऊभां छइ ते त्यांहि ।
मुखि छेडु देइ पूछइ वात आसन आप्यूं किहि विसु भ्रात ।। २३ ।।
भलइं पधार्या नणदुइ ! तम्यो परुणागति शी कीजिइं अम्यो ।
हवडां मृगया ग्या छइ राइ पाण्डव ते तां पांचे भाइ ।। २४ ।।
मृग मारीनइं ल्यावशि घइरि करज्यो भोजन रूडी पइंरि ।
वासी ते तह्मनइं नवि रुचइ ताजूं हुइ ते तह्मनइं पचइ ।। २५ ।।
जिद्रथ किहि हूं भूख्यु नथी पाछइं एह्वी वाणी कथी ।
तां मुझ साथइं आवे सही पांडव पासइं वनि शूं रही ? ।। २६ ।।
ए वनवासी भूंडा दखी मुझ घिरि आवी थाज्ये सुखी ।
तिहारि वचन इम बोल्यां सती जा जा अकर्मी थयु कुमति ।।२७।।

(पृ० २९८)

व्याख्यान पांचमुं

अढारमी सदीनी गुजराती अने उपसंहार

१९४ हवे, जे कृतिमां बराबर अद्यतन गुजराती वपरायेली छे तेवी अढारमी सदीनी त्रण चार कृतिओमांथी मेळवेलां नामो अने क्रियापदो इत्यादि जोई लईए.

अढारमा सैकाना कविओ लक्ष्मीरत्न (जैन) रत्नेश्वर-प्रेमानंद अने यशोविजय (जैन)

ए कृतिओ विशे विशेष कशुं लखवापणुं रहेतुं नथी, अढारमी सदीनी कृतिओमां पहेली कृति खेमाहडालियानो रास-कर्ता लक्ष्मीरत्न (जैन), बीजी श्रीमद्भागवत-रचनार कवि रत्नेश्वर अने त्रीजी कविराज प्रेमानंदनी कृति छे अने ते राजा नैषधनी कथा. तथा चोथी कृतिरूपे द्रव्यगुणपर्यायनो रास (मूळ पद्य अने अर्थ गद्य) अने जंबूस्वामिरास पद्य-कर्ता उपाध्याय यशोविजय. ए चार कृतिओना कर्ताना समय विशे सुनिश्चितपणुं छे, एटले ए बाबत खास कशुं लखवापणुं नथी.

१९५ विभक्तिना क्रमप्रमाणे नामो अने क्रियापदो तेमांथी आ प्रमाणे तार्व्यां छे:

ए कविओना नामविभक्तिवाळा प्रयोगो — सात विभक्तिनां रूपो

विभक्ति-१—

लक्ष्मीरत्न—जनेसर, नृप, पुरुष, भवीक, खेमो, भगवंत, गुजरदेस, गुंणनीलो, त्रण.

रत्नेश्वर–सूत, पाडव, अबोल्यो, बेटो, व्यासपुत्र, बालक, नाना, शुकजी, अर्जुन, सर्वे, जमा, सामा.

प्रेमानंद–पांडव, अरजुन, तापश, आव्यो, जुधीष्टर, वडवडतो, वलता, नल, धर्म, पांडवो.

विभक्ति–२—

लक्ष्मीरत्न–चरण, विलास, कथा, जल, गुरू, रास, सानिद्ध.

रत्नेश्वर–श्राद, निःश्वास, मोक्षमार्ग, गमन, वेष, कौतुक, मस्तक, शुकने, मुनिवरने, कर्मने.

प्रेमानंद–ध्यांन, जश, सरस्वतीने, राज, पुत्रने, त्रीपुरार, शेवा, द्रुपदीने, मुने, रीषशीषने.

विभक्ति–३—

प्रेमानन्द–नांमी, मे, (में) नले, कद्रष्टे, दीवशे, प्रतापे, नामें, पांडवे.

लक्ष्मीरत्न–कुंभें, ज्ञांनें, नांमें, नामें, जिणें, भुजबलें, साथे.

रत्नेश्वर–तेणे, समे, शरीरे, हरखे, अतिथिरूपे, युधिष्ठिरे.

विभक्ति–४ तथा ६—

प्रेमानंद–सुततु, नैशदतणो, नैशदराएनी, पर्वनो, वश्यानो (रहेवातुं), तेहेनी, भीमशेन्यनी, शेहेदेवने, चंद्रतुं, भाइनी, तेहनां, कोहोने (कोने), देशनो, तेहनो, तेहना, नलनी, नलनु, तेहना, तेहेनी, ताहारू.

रत्नेश्वर–पाम्यानो, परीक्षितने, अवधूततणो, जेह्नी, जेह्नूं, वरसना, जेह्नां, त्रिवल्लीनी, जेह्ना.

लक्ष्मीरत्न–श्रीजीनतणा, वेंपारीनी, वेसानां, गुंजरनो, धर्मतणि, केइनें, जीवतुं, तेतुं, जेनी.

विभक्ति-५—

लक्ष्मीरत्न—..

रत्नेश्वर–कंठथकी, कर्येथी, आननथी, आसनथी.

प्रेमानंद–घेरथी

विभक्ति-७—

प्रेमानंद–वनमुझार, कैलाशे, पाशे, मध्यांने, दीशाए, वेलाए, ह्रदयामां, वनमां, काले.

रत्नेश्वर–मांहोमांह्य, सवलामध्ये, मनमां, कण्ठविशे, वेर्य, आसन्य, मोटामध्ये, सभामां, ठाम्य, आकाशे.

लक्ष्मीरत्न–एणे, मध्यपण्डे, सहेसमां, मेहदानिमें (मेडनामां), जगमां, धन्याश्रीमां.

क्रियापदो

वर्तमान		भूत		भविष्य
१९६	कीजें	हुवो	बोल्या–	
लक्ष्मीरत्न–	होइ	प्रगट्यो	(बोल्या)	
प्रणमुं	रहे	कह्या	वुंठा	
द्यो	छे	वांध्युं	निपनुं	
सांभळ्यो	करे	कीधी	पडीओ	
रचुं	थयुं छे	दिधुं	वखाणि	
करज्यो	आपें	दीठो	लीधुं	
कहुं				

	वर्तमान	भूत		भविष्य
रत्नेश्वर—	साधे	पूछ्या	ढांक्यां	होनार
सांभळज्यो	दीसे	बोध्यां	आव्यां	
कहे	लवे छे	पाम्यो	अतिशोभ्यो	
प्रमाणे	आवे	बेठो		
विखाणे	पूंछे	आव्यो		
वाधे		आव्या		
प्रेमानंद—	दीउ	वशा	धरू	थयू हशे
धरू	नीशरे	गयो	थयू	भागशे
करू	छे	आव्यो	पांम्यो	आवशे
आदरू	जांउ	रहो	परणो	
कहु	पांमु	बेठा	धराव्यू	
वदे	आपे	आप्युं	गयो	
चांपे	नथी	पड्यो	मुको	
मागु	छउ	बोल्या	आव्यू	
आपे	केहे छे	भोगव्यू	होए जी	
लगाडे	कोहो	छांडी		

कृदंतो

१९७ लक्ष्मीरत्न—आवता, करतां, खातां, जातां, रडतां, चढतै, सांभलतां, कहंदा.

ए कविओना कृदंतप्रयोगो

रत्नेश्वर—विचारी, सुणीने, थैने, मेह्नली, करंता, लै, फरंता, जोवा, दीसंतां, निरखी, देखी, राखीने, रहीने, करतो, हरवा, करवा.

प्रेमानंद—हरीने, आराधवा, तलावाने, आंणी, चढावी, जोतोजोतो, करीने, लेई, वीशरतो, वशष्ट, भमयंती, करतां, आपी, करवा, करी, शांमली.

५ कविओना केटलाक शब्दो

१९८ केटलाक शब्दो—

लक्ष्मीरत्न—मावइ, कीरतार, पील्या, दीवाकर, मंडांण, गढ, वेंसणो, अढार, वनराइ, सरग, तलेटी, मढ, मंदर, पोळ, समसुंमीयां, वरण, हाट, सरइयां,—पातशाह, मेम्मद वेगडो, हेंमर, पांन, ओमराओ, राणाराओ, मे'तो, माजन, दरवार, भाट, सेठ, माठुं, मेह, मेहदनि, काटुं-(काष्टमय), दकाळ, परजा, माप,—वेटा, मोजाइ, देवांन-(देहवर्ण) नाल्य, जाल्य, जुठां, मापि, पंपि, जोसी, मुरत, मानव्य, कागळ, काम, रंक, वरद, दोषण, पसाय.

रत्नेश्वर—नाना—शास्त्र—विचक्षण—वाडव, सघळां, सूरय, वात वणाइक, आप, मुक्य (मुखे), अवमेव (अवश्यमेव), झळहळ, उपवीत, आश्रम्म, कौतुक, केडे, हाड (हाडकां), वक्ष, वर्तुळ, जंडेरी, वांका, भुज, आजानु, ज्योत्य, जनमन, ऊभा, साह्मा, अम्यो (अमो), अमने, अम, ते माट्ये, पदोदक, ग्राम्य, निपट, समंधी, भरथार,—द्वेखी (द्वेषी), म्हामय, कंपारव, म्हाभूंडं, सूरज, हींसे, कूडं, कुच्छित, शोइर, उज्जड, घूंसर, वीज, वरसाद, वादळ, ओगणपंचास, गीर्वाण, प्राकृत, तोहे.

प्रेमानंद—सरस्वती, प्रणाम्य, नैशद, वैशंपायेन, चातुरमाश, आरणीक, दैतकवन, अरजुन, कैलाश, त्रीपुरार, वाम (समय), तापश, कुंतीशुत, रातनीरात, चांने, चर्ण, अंतरशकर्ग, भीमशेन्य, पाशे, दातणपांणी, प्रातशांमग्री, शेश, वक्ष, नींकुळ, पोहोर, वरणागी, श्हेदेव, काम, शेश, नव्यांन, जोश, जोगणी, शांसु, श्हेदश, नीश्वाश, वीशरतो, हृदय,

रूषी, वीजोग, शरपो, आशन, शीध, शोमो भाग, कष्ट, शंतोष, दाशी, जुधीष्टर, व्रथा, वेमांन, आक्षांन, जग्न, रीतुपर्ण, राय, वीरक्षेत्र, चोवीशा, न्यात्त, पदबंध, कालवाला, मुहुरत्त, शुरत, शार, शतर, वाशेठा, वरपे.

१९९ विभक्तिवाळां नामोनी यादी

यशोविजयजी—१ शारद. तूठी. कुकवि. वीर. आपण. गाम. संतोष. वडो. सो. अवबोध. जे. ते. केहवा. सोभागी.

२ दया. जाप. आंबेल (अम्ल—खाटी) द्राखने. वाणीने. सान्निध्य. सूत्र. मही. रचना. ते प्रत्यें. उपाय. स्वशिष्यने. अभ्यास.

३ तें. हियडे. जसविजये. शिष्ये. बुद्धिं. रसे. भट्टाचार्यइ. हेतइं. जेणे. वचनद्वारे. अभ्यासे. अनुसारे. जेण. तेण. लीलाए. आपणे.

४ भरणने काज. हितहेत. जे माटइं. उपकारनइं हेतइं ते माटिं. भणवाने काजे.

५ विशेषथी. अतिलोभथी. सुखथी. दुःखथी. सामान्यथी.

६ मुज. काव्यनो. विबुधतणुं. तेहनुं. भोजनतणी. भवना. स्त्रीने. तास. तुम्हारो. शुदिनो. प्रश्नरो. वाईरी. अवधिज्ञानरी. तेहनो. तेहनी.

७ पद. कंठे. जिहां. तळे. इहां. खंभात मध्ये. क्षत्रीकुण्डग्रामे. तेमांहे. गणमां. सूरीश्वरमां. —समुदायमांहे. कासीये.

संबोधन—आत्मार्थियो ! प्राणियो.

त्रणे काळनां क्रियापदोनी यादी

वर्तमान		भूत		भविष्य
पूजुं छुं	होय	दीधो	रह्यो	करशे
उपशमे	वाचइं छइ	तूठी	थई	कहेशुं
आपो	छइ	आरोप्यां	चाली	थास्यइ
करो	विचारयो	कर्या	ऊपना	
नचावे	जाणज्यो	कियो	दिऊं	
करे	देखाडइ छई	विणट्ठ	देपाड्युं	
होजो	करुं छुं	दीठुं	कर्या	
कीजे	कीजइं छइ	जोतरीया	थया	
वदे	छे (अनेकवार)	कीवी	मूक्या	
सांभलजो	सोहे, सोभे	झणगार्या	वाध्यो	
उंघजो	गाय छे	चढ्या	साध्यो	
लेखवे	भणज्यो	हुआ	थयो	
	कहे छे		प्रकाशी	

कृदंतो–

करत. हुंत. चढता. रमंत. सुणीने. देदीप्यमान. करीने. झरता.

केटलाक शब्दो–

उपगंग. सुरंग. हुं. दक्खिणावत्त. पवित्त. त्रिभुवन. गाम. सीम. [illegible]. वानर. पेरे. सरवर. वालुका. ग्राम. आचारजपदकमल. पवित्र. सात्रो. ऊंट. रसघूंट. द्राख. साकर. मोहनगारां. कुंमर. अंबर. लवी. [illegible]. [illegible]. वेष. चकडोळ. रंगरोळ. चारी. उच्छव. वादित्र. [illegible]. नूर. [illegible]. सनूर. गाजावाजा. समाचार. न्यायाचार्य. तो. नंदनवन. [illegible]. निसदीस. लिखावित.

अढारमी सदीनी भाषामीमांसा

२०० अहीं उपयोगमां लीधेली अढारमी सदीनी चारे कृतिओमांथी निदर्शनरूपे जणावेलां साते विभक्तिवाळां रूपो, क्रियापदो, कृदंतो अने बीजा शब्दोने वांचवाथी ए स्पष्ट जणाइ आवे छे के ए कृतिओमां वपरायेली गुजराती ते, अद्यतन गुजराती छे. ते कृतिओना केटलाक प्रयोगोमां जूनी गुजरातीनी छांट देखाय छे खरी पण ते नगण्य जेवी छे, एथी अद्यतन गुजरातीनो आरंभ अढारमी सदीथी थयो छे एम मानवाने वा कहेवाने कशो वाध नथी. जूनी गुजरातीनी छांटवाळा जे थोडाक प्रयोगो छे ते आपोआप समझाय एवा छे, एटले तेने जुदा गणाववानी जरूर जणाती नथी. जे समयथी जैन अने वैदिक परंपराना गुजराती कविओनुं गुजरातीसाहित्य उपलब्ध थाय छे ते काळनी कृतिओना क्रमवार उत्तरोत्तर उदाहरणो वधारे प्रमाणमां आपतो आव्यो छुं अने ते रीत छेक छेल्ली अढारमी सदी सुधी राखेली छे. जे साक्षर बंधुओ हजु पण जैन अने जैन नहीं एवा कविओनी भाषा वच्चे भेदभाव वा भिन्नप्रवाह-मूलकता समझता होय तेओ कृपा करीने बारमी सदीथी अढारमी सदी सुधीनी गुजरातीनां अहीं आपेलां ए निदर्शन-प्रयोगो ध्यानपूर्वक जरूर तपासे एवी तेमने मारी नम्र विनंती छे; अने ए भ्रम भांगवा सारु ज निदर्शनो वधारे आपवानी उक्त पद्धति अहीं स्वीकारी छे अने साथे साथे प्रत्येक भाषणना अंतिम पानांओमां में बारमी सदीथी मांडीने अढारमी सदी सुधीना गुजराती पद्य अने गद्य साहित्यना नमूनाओ पण आप्या छे. ते नमूनाओनुं सळंग निरीक्षण पण उक्त भ्रम भांगवाने पूरतुं छे. सदीवार त्रण कविओ तो लीधेला ज छे.

अहीं सुधी उक्त सदीओना साहित्यनुं निरीक्षण करेलुं छे. हवे ए निरीक्षणनो निष्कर्ष बताववा अंतिम वचनरूप उपसंहार करीने आ व्याख्यान पूरुं थशे.

अढारमा सैकानुं पद्य तथा गद्य

अढारमो सैको

(१)

कवि–लक्ष्मीरत्न–संवत् १७४१–खेमा हडालियानो रास—

दुहा

आद्य जनेसर आद्य नृप आद्य पुरुष अवतार ।
भवभय भावट्ट भगवंत नरु करुंणानिधी कीरतार ॥ १ ॥
प्रणमुं तास प्रथम चरण द्यो मुझ वचन विलास ।
सांभलज्यो भवीक जन्न हुं रचुं पेंम रास ॥ २ ॥
कवण पेमो क्यां हुवो प्रगट्यो कवण प्रकार ।
सानिद्ध करज्यो गुरू सदा कहु कथा तस सार ॥ ३ ॥
गुरु माता गुरु पीत्या कीजें गरु पाये सेव ।
ज्ञांन दीवाकर गुरु कह्या नमो नमो गुरुदेव ॥ ४ ॥
कुंभें वांध्युं जळ रहे जळ विना कुंभ न होइं ।
ज्ञांनें वांध्युं मन रहे गुरू विना ज्ञांन न होइं ॥ ५ ॥

चौपइ. राग रामगीरी

जंबुद्वीप भरत एणे ठांम मध्यषंडे मोटा मंडांण ।
गुजर देस छे गुंणनीळो पावा नामें गढ वेंसणो ॥ १ ॥
गढ उपर छें सोभा घणि अढार भार वनराइ तणि ।
मोटा श्रीजीन तणा प्रसाद सरग सरीशुं मांडें वाद ॥ २ ॥

वसें सेंहेर तलेटी तास चांपानेर नामें शुवीलास ।
गढ मढ मंदर पोल प्रकास सप्त भुंमीयां उत्तम आवास ॥ ३ ॥
वरण अढार त्या सुषि वसें सोभा देषि मन सुलसें ।
वेंपारीनी नही रे मणा सातसें हाट सरइयां तणां ॥ ४ ॥
नित्य चोकडीयां कोडी करे वेसानां मंदर वीससे ।
.... ॥ ५ ॥
पातसाह तिहां परगडो राज्य करे मेंम्मद वेगडो ।
सतरसेंस गुंजरनो धणि जिणें भुजबलें कीधी पोहवि घणि ॥ ६ ॥
सवालष हेंमर सोभता दस सहेसनां गज दीपता ।
सीतेर षांन बहोतेर ओमराओ अवर घणां छे रांणा राओ ॥ ७ ॥
नगर सेठ मेंतो चांपसी अहनिस धर्म तणि मति वसी ।
सेठ साथें माजन सोहाइं एक दीवस दरबारे जाइं ॥ ८ ॥
मारगं मलिओ दिधु मांन ओमराओ सालोदुषांन ।
षांन साथें आवता सेठ बंब भाट तव दीठो दृष्ट ॥ ९ ॥

× × × × ×

इंम करतां दिन केता वोल्या वरस थयुं छे माठुं ।
मेह न वुंठा मेहदनिमें वरस निपनुं काठुं ॥ ३० ॥
पडीओ दकाल कें परजा पीडे को केइनें नव्य आपें ।
आप आपणें मापें पातां धांनें कीमें न धापे ॥ ३१ ॥
मात पीता बंधव ने बेटा भाई ने भोजाइं ।
नात्य जात्य गोत्रीजन जुठां एक अन्न साथें सगाइं ॥ ३२ ॥
अन वीना देवांन न दीपे बुध्य शुध्य सवी जाइं ।
कीडी कुंजर माषि पंषि अन सहु को षाय ॥ ३३ ॥

जांण्या जोसी अननें मागें पण मुरत अन्न जोइइं ।
अन्न वीना सुर सेवा न मांनें तो मानव्य क्रम वगोइं ॥ ३४ ॥
अनें रथ चंचल चालें अन रतनसी मागें ।
अन वीना तो वस्त्र न थाइं कागळ रूडो न लागें ॥ ३५ ॥
अन वीना क्रम एक न चाले सर्व जीवनुं काम ।
सहु कोमां अन्नदाता मोटो तेनुं सुरनर करे वषांण ॥ ३६ ॥
अन वीना तेणे अवसरें वस्त्र वीना निसंक ।
पातसाह तां पडीयां देषें जातां रडतां रंक ॥ ३७ ॥

× × × ×

राग धन्यासरी

धन्य धन्य षेमो देदरांणि जेनी कीरत जगमां जांणि जी ।
दिधां दांन ते चढतें पांणि जी कविजने वात वषांणि जी ॥ धन्य०
॥ १२९ ॥

पातसाइं वणुं मांन ज दीइं साह वरद जेणे लीधुं जी ।
जातां वरद जेणे राप्यां सवलां देइं दांन मन प्रघलां जी ॥ धन्य०
॥ १३० ॥

× × × × ×

गल्या साधुतणा गुंण गाया अनें वलि रीपि राया जी ।
कवीजन मत कोइं दोषण म देज्यो गुंण हुवा ते गाया जी ॥ धन्य०
॥ १३२ ॥

संवत सतर एकताळिसा वरषे रास रच्यो मन हरषे जी ।
मागसर सुद पुंन्यम गुरूवार गांम उंनाउं मोझार जी ॥ धन्य० १३३ ॥

पंडित हीररत्न परसीध्या तस पसाय रास कीधो जी ।
छठ्ठी ढाल धन्याश्रीमां गावै सांभलतां सुष पावैं जी ॥ १३४ ॥

× × × ×

कीजे धर्म भवीक जन वृंदा लषमीरतन कहंदा जी ॥ १३५ ॥
(ऐतिहासिक राससंग्रह, भाग १ लो, सं. श्रीविजयधर्मसूरि)

(२)

कवि–रत्नेश्वर–संवत् १७४९–श्रीमद्‌भागवत

(संपादक—श्रीकेशवराम शास्त्री)

(पृष्ठ १४५)

सूत कहे सांभल्ज्यो शौनक देवरात नृप तेह ।
तेणे ए विध्य पूछ्या वाडव कहे विचारी जेह ॥ ५० ॥
नानाशास्त्रविचक्षण वाडव मांहोमांह्य विचारी ।
विविध विरोधी साधन बोध्यां सघलां संशय कारी ॥ ५१ ॥
कोय कहे जे विष्णू देवता कोय कहे शिव देव ।
कोय कहे ते सघला मध्ये सूरय सारो देव ॥ ५२ ॥
कोय कहे जे कालदेवता कोय स्वभाव प्रमाणे ।
कोय कर्मने श्रेष्ठ कहे इम अनेक वात विखाणे ॥ ५३ ॥
हवे घणाइक वाद सुणीने आकुल अन्तर्वेद ।
सांभल्य शौनक राजऋषि ते मनमां पाम्यो खेद ॥ ५४ ॥
आप अबोल्यो थैने वेठो मुख्य मेह्ली निःश्वास ।
मोक्षमार्ग पाम्यानो मनमां नव्य आव्यो विश्वास ॥ ५५ ॥
पूर्व पुण्य परीक्षितने आव्या व्यासपुत्र शुकदेव ।
ज्ञानसुधाभरसागरशशिवर तेणे समे अश्वमेव ॥ ५६ ॥

सुंदर धाम स्वरूपी शुकजी स्वेच्छा गमन करंता ।
वेष विशद अवधूत तणो छै महितल मांह्य फरंता ॥ ५७ ॥

झलहल तेजलता सम जेह्नी जटा यत्न विन वाधे ।
कण्ठ विशे उपवीत अचल त्यहां माला मोहिनी साधे ॥ ५८ ॥

जेह्नूं चिन्ह जणाय नहीं जे कोण वर्ण आश्रम्म ।
यथालाभ संतोषी शुकजी पूरणरूपी परम ॥ ५९ ॥

नाना बालक कौतुक जोवा केडे फरता कोड ।
कर्दम ने तृण तनुये वलगां अलगां वंधन छोड ॥ ६० ॥

सोल वरसना शुकजी त्यहिये कोमल चरण सुगात्र ।
कर उर स्कन्ध कपोल सुकोमल सुंदर शोभापात्र ॥ ६१ ॥

दर्शनीय ने दीरघलोचन उत्तम नासाकीर ।
तुल्यकर्ण भ्रुकुटी मुख सुंदर कम्बुकण्ठ सुशरीर ॥ ६२ ॥

कंठ थकी हेटेरां दीसे युग्म हाड त्म्हां जेह ।
ते जेह्नां मांसे करी ढांक्यां नव्य दीसंतां तेह ॥ ६३ ॥

जेह्नूं वक्ष विशाल ने वली वर्तुल नाभिकूप ।
ऊंडेरी त्रिवह्लीनी रेखा उदर अनूप सुरूप ॥ ६४ ॥

नग्न दिगंवर वांका वलता अलकजटा भगवान ।
नारायण सरखो दीसंतो जेह्ना भुज आजानु ॥ ६५ ॥

श्याम शरीरे सदा काल जे यौवनवननी ज्योत्य ।
अंगतणी त्म्हां उत्तम शोभा स्त्रीजनमन उद्द्योत ॥ ६६ ॥

हरखे हास्य करंता आवे निरखी सुंदर शोभा ।
शुकने देखी आसनथी सह्न थया मुनिजन ऊभा ॥ ६७ ॥

यद्यपि शुक योगीनो अंतर्य तेज गूढ महिमाय ।
तेह्रवां लक्षण जाणे मुनिवर सर्वे साह्मा जाय ॥ ६८ ॥
विष्णुरात आव्या अतिथिनी पूजा कीधी सार ।
मस्तक नामी आत्मनिवेदन कीधूं नृप निरधार ॥ ६९ ॥
पूज्या अरच्या शुकजी आसन्य वेठा अंतर्यामी ।
पाछल्य आव्यां अवला बालक नाठां विस्मय पामी ॥ ७० ॥
मोटा मध्ये मोटो मुनिवर तेह सभामां पेठो ।
ब्रह्मऋषि राजऋषि सुरऋषि मंडलमध्ये वेठो ॥ ७१ ॥
मुनिजनकेरा मंडलमध्ये अतिशोभ्यो भगवान ।
ग्रहतारानक्षत्र विच्ये जाण्ये ऊग्यो इंदुसमान ॥ ७२ ॥
जेह्नी बुद्धि अकुण्ठित ते मुनि आसन्य वेठा शांत ।
वैष्णवराज परीक्षित तेने अति पाम्यो अभ्रांत्य ॥ ७३ ॥
कर जोडी शिर मोडी कीधो मुनिवरने परणाम ।
विनयवचन मन स्थिर राखीने पूछे परीक्षित आम ॥ ७४ ॥
अहो अम्यो त्यां अधुना ब्रह्मन थैने क्षत्रीराज ।
सज्जन अमने सेवे एह्वा अम्यो थया छूं आज ॥ ७५ ॥
कृपा करीने अतिथिरूपे आव्या छो अम घेर्य ।
ते माट्ये अम्यो तीरथ कीधा सर्वोपरि करी पेर्य ॥ ७६ ॥
जेह्नूं स्मरण कर्येथी नरनां मंदिर पावन थाय ।
तेह्नूं दर्शन स्पर्श पदोदक कोण कहे महिमाय ॥ ७७ ॥

× × ×

(पृ० १०३)

मास घणा वही चाल्या तोहे अर्जुन नाव्या गाम्य ।
घोररूप अपशुकन देखता धर्मराय ते टाम्य ॥ ५ ॥
कालतणी गति घोर निहाली अवला ऋतुना धर्म ।
क्रोध लोभ अनृत आकुल नर करता पातक कर्म ॥ ६ ॥
कपटसहित विहार विलोक्यो राय युधिष्टिर निपट ।
मांहोमांहे मैत्र्य करे नर मन मध्ये रहे कपट ॥ ७ ॥
मात पिता ने सुहृद समंधी स्त्री भरथारशूं द्वेखी ।
मांहोमांहे कलह करंता राय युधिष्टिरे देखी ॥ ८ ॥
एह्वां चिह्न अनेक ज दीठां अत्य अरिष्टशूं कर्म ।
दिवसे दिवसे लोकविशे म्हा लोभ अपार अधर्म ॥ ९ ॥

× × ×

आ जो रे नरवीर निहाली अति उत्पात विघात ।
आकाशे उत्पात घणा ने अवनीगत उत्पात ॥ १८ ॥
अंगविशे उपचिह्न घणां ए आपणने भयकारी ।
आपणने ए म्हाभय कहे छे मोह पामे गति माहरी ॥ १९ ॥
लोचन जंघा ने कर माहरा फरके वारंवार ।
हृदे विशे कंपारव अति कांइ म्हा भूंडुं होनार ॥ २० ॥
आ जो रे आ फाल्ह सूरज साहमूं रहीने रोय ।
आननथी अंगारा ऊडे कांइक भूंडुं होय ॥ २१ ॥
माहरे सन्मुख श्वान रहीने गाढे रोतो जाय ।
शंका विन मुझ आगल्य ऊभो तेणे ते भय थाय ॥ २२ ॥

अधम पशु दक्षिण दिश जातां उत्तम पशु तां वाम ।
अश्व न हींसे रोता दीसे कांइक कूडूं काम ॥ २३ ॥
मृत्युदूत कपोत रह्यो करतो कुच्छित शोहर ।
उलूक मन कंपावे माहरूं घुर्घर शब्दे घोर ॥ २४ ॥
कलकल शब्द काक लवे छे सर्वे तणां सुख हरवा ।
ए सर्वे अपचिह्न अनेरां अवनी उज्जड करवा ॥ २५ ॥
धूंसर दिश ने रवि शशी पाछल्य जलकुंडल भयकारी ।
पर्वत साथ्ये पृथ्वी कांपे भय उपजावे भारी ॥ २६ ॥
वीज पडे वरसाद विना ने घन विन वादल गाजे ।
एहवा आ उत्पात विलोकी माहरूं मन अति भाजे ॥ २७ ॥

× × × ×

(पृष्ठ २२९)

त्रेपन श्लोक तणो विस्तार रत्ने कर्यु यत्ने विस्तार ।
संवतनी संख्या सविलास सत्तरशे ओगणपंचास ॥ १०८ ॥
कार्तिक विधु सह एकादशी वार विधुसहित उल्लसी ।
मेघतनय दर्भावती गाम श्रीमाली रत्नेश्वर नाम ॥ १०९ ॥
गीर्वाण वाणीनो कवि तोहे प्राकृतनी मति हवी ।

(३)

कवि प्रेमानंद (हस्तलिखित गुटको—गु० व० सो०)

लख्या वर्ष—१७६२ रचना पछी २४ वर्षे लखायेल

(आरंभ)

अथ श्रीनैशदराएनी कथा लखी छे.

राग केदारो—

श्रीशंकरश्रुतनु* ध्यांन ज धरू
सरस्वतीने प्रणांम्य ज करू ।
आदरू जोडवा जश नैशदतणो रे ॥ १ ॥

डोठ—

नैशधराएनी कहु कथा पुन्य श्लोक जे राए ।
वैशंपायेन वांणी वदे आरणीक पर्वनो महीमा ए ॥ २ ॥
राज हारीने गया पांडव वशा दौतकवन मुझार ।
एकलो अरजुन गयो कैलाशे आराधवा त्रीपुरार ॥ ३ ॥
एहेवे शमे एक तापश आव्यो त्रेहेदश एहेवूं नांमी ।
पुजा कीधी पांडवे ने आप्यो वश्यानो ठांमी ॥ ६ ॥
चातुरमाश ते त्यांहां रहो तेहेनी कुंतीश्रुत करे शेवा ए ।
रातनी राते वारा करता पांडव चांपे पाए ॥ ७ ॥
एकवार जुधीष्टर वेठा तलाशवाने चर्ण ।
ते शमे अरजुन शंभारो भराई आव्यूं अंतशकर्ण ॥ ८ ॥

× × ×

भीमशेन्यनी पाशे जो हु मागु दातणपांणी ।
तो त्रडवडतो जाए रीश चढावी मोटां व्रक्ष आपे आंणी ॥ ११ ॥
प्रातशांमग्री नीकुल पाशे कदाच जो हु मागु ।
एक पोहोर तां वार लगाडे एटली करे वरणागी ॥ १२ ॥

---

* लिपिकार, चधे, 'शु' ने बदले 'श्रु' लखे छे.

शेहेदेवने जो कांम दीउ तो शाधु मंन आंणे रोश ।
मध्यांने घेरथी नीशरे जोतो जोतो जोश ॥ १३ ॥
दक्षण दीशाए जोगणी छे जो जांउ तो दुख पांमु ।
पुरव दीशाए परवरू तो चंद्रनु घर शांमु ॥ १४ ॥
एहेवी रीत तो त्रणे भाइनी मे तो रहु नव जाए ।
द्रुपदीने मोकलु तो कोइ हरण करीने जाए ॥ १५ ॥
वण मागे वेलाए आपे मुने जे जोईए ते आंणी ।
फल जल मुख आगल लैई मेले ते तो गांडीवपांणी ॥ १६ ॥
तेहनां गुण हु नथी वीशरतो रहो छउ रूदयामां राखी ।
श्रुप शंतोप वीनां छउ श्रुनो मुनी हु पारथ पाखी ॥ १७ ॥
नीस्वाश मुकीने धर्म एम केहे छे कोहोनी त्रेहेदश रूपी ।
वन वशावूने वीजोग पड्यो हु शरषो कोई दुपी ॥ १८ ॥
राज आशन भुवन रीध शीधने हारी ।
एहेवू कोहोने थयू हशे स्वामी पीडा पांमी नारी ॥ १९ ॥
वलता त्रेहेदश एणी पेर बोल्या श्रु आंणे वैराग्य ।
नल दुख पांम्यो अेरे पांडवो नथी तेहनो शोमो भाग ॥ २० ॥
रूप राएनु न मले धन नल नरेश शमांन ।
तेहना जेहवु कष्ट तमो नथी भोगव्यू राजांन ॥ २१ ॥
भीमक कुमारी नलनी नारी रूप कहु श्रु मांडी ।
ते नारी जांहां नही फल पांणी नले ते वनमां छांडी ॥ २२ ॥
दाशी रूप धरू दमयंती कुबडु थयू नलनु गात्र ।
तेहना दुख आगल अेरे राए जुधीष्टर ताहारू दुख कोण
मात्र ॥ २३ ॥

कर जोडीने धर्म एम बोल्या कोहो व्रेहेदश रुषी राए ।
घणु दुख पांम्यो नलराजा ते श्रु कारण केहेवाए ॥ २४ ॥
कोण देशनो नरेश काहावे केम परणो दमयंती ।
ते नारी नले केम छांडी कां मुकी भमयंती ॥ २५ ॥
उतपत्य कोहो नल दमयंतीनी अथ ईती कथा ए ।
दुषीआनु दुष प्रकाश करतां भागे मन व्रथा ए ॥ २६ ॥

चलण—

व्रथा ए माहारी भागशे एम कहे जुधीष्टर राए ।
कहे भट प्रेमानंद नैशदतणी कथा ए ॥ २७ ॥

(अंतिम भाग, पृ० २८६)

माता पीता गुरु वीप्र वैष्णव शेवा करे शर्व कोए जी ।
परनंदा परनारी परधंन को कद्रष्टे न जोए जी ॥ ३३ ॥
एहेवू राज नलनाथे कीधु पुन्यश्लोक धराव्यू नांम जी ।
पुत्रने राज आशन आपी गयो तप करवा राजंन जी ॥ ३४ ॥
अनशन व्रत करी देह मुको आव्यूं दीव्य वेमांन जी ।
वैकुंठ नल दमयंती पोहोतां पांम्यो श्रीभगवांन जी ॥ ३५ ॥
व्रेहेदश केहे श्रुण राए जुधीष्टर एहेवो हवो नथी नव्य होए जी ।
ए दुख आगल ताहरा दुख ने जुधीष्टर श्रु रोए जी ॥ ३६ ॥
काले अरजुन आवशे राजा करी उतम काज जी ।
कथा शांभली पागे लागो मुनीवरने माहाराज जी ॥ ३७ ॥
परीताप गयो माहारा मंननो शांभली साधु चरीत्र जी ।
अवीचल वांणी व्रेहेदशजीनी हु पत्तीत थयो पवीत्र जी ॥ ३८ ॥

थोडे दीवशे अरजुन आव्या रीझा धर्मराजंन जी ।
वैशंपायेन केहे जनमेजयेने थयू पुरण नल आक्षांन जी ॥ ३९ ॥
शांभले भणे वा लखे पुस्तक शर्व तीरथनु फल थाए जी ।
अष्ट मादांन जग्न तणु फल आपे वैकुंठ राए जी ॥ ४० ॥
करकोटकने नल दमयंती श्रुदेवने रीतुपर्ण राए जी ।
ए पांचेनां नांम ले श्रुतां उठतां तेने घेरथी कलीजुग जाए जी ॥४१॥
वीरक्षेत्र वडोदरू नांमे गुरू देश गुजरात जी ।
कृष्णश्रुत कवी भट प्रेमानंद वाडव चोवीशा न्यात्त जी ॥ ४२ ॥
गुरूप्रतापे पदबंधन कीधु कालावाला भांषी जी ।
आरणीक पर्वमां मुल कथामाहे नैशधलीला भाषी जी ॥ ४३ ॥
मुहुरत्त कीधु श्रुरतमांहे थयू पुरण नंदरबार जी ।
कथा नलदमयंतीजीनी शारमांहे शार जी ॥ ४४ ॥
शंवत शतर बाशेठा वरषे जेठवदी दशमी मंगलवारजी ।
थै कथा पुरण वीस्तारजी........ ॥ ४५ ॥

लख्या वर्ष—शंवत १७८६ ना आषाड श्रुदी ६ मंदीवारे शंपुरण लखुं छे.

(४)

कवि—उपाध्याय—यशोविजयजी—संवत् १७२९—जंबूस्वामिरास

शारद सार दया करो आपो वचन सुरंग ।
तुं तूठी मुज उपरे जाप करत उपगंग ॥ १ ॥
तर्क काव्यनो तें तदा दीधो वर अभिराम ।
भाषा पण करी कल्पतरु शाखा सम परिणाम ॥ २ ॥

मात ! नचावे कुकवि तुज उदर भरणने काज ।
हुं तो सद्गुण पद ठवी पूजुं छुं मत लाज ॥ ३ ॥
तंबू धर्म सुसाधनो कंबू दक्खिणावत्त ।
अंबू भवदव उपशमे जंबू चरित्त पवित्त ॥ ४ ॥
पवित्र करे जे सांभल्युं त्रिभुवन जंबूचरित्र ।
आंबेल पण मुज वाणीने करशे रसे पवित्र ॥ ५ ॥
अमृत पारणुं काननुं भविजनने हित हेत ।
करतां मुज मंगळ होजो ए भारती संकेत ॥ ६ ॥
श्रीनयविजय विबुधतणुं नाम परम छे मंत ।
तेहनुं पण सान्निध्य लही कीजे ए वृत्तंत ॥ ७ ॥

(पृ० २)

× × × ×

अमृत मधुर वाणी वदे तव जलधर गंभीर ।
वीर भविक हित कारणे समरथ साहस धीर ॥ १ ॥
सांभळजो श्रोता सर्व कहेशुं सरस ते वात ।
सांभलता मत उंघजो मत करजो व्याघात ॥ २ ॥
उंघे ते सुंघे मही चुंघे नहि रसघूंट ।
साकर द्राखने परिहरे कंटक रातो उंट ॥ ३ ॥
निद्रा विकथा परिहरी गुरुमुख साहमुं जोय ।
सुणे जे हियडे उल्लसी श्रोता साचो सो य ॥ ४ ॥

(पृ० ४)

× × ×

गाम सीम ए रूखडां मोहनगारां हुंत ।
वानर परे चढता जिहां आपण वेउ रमंत ॥ १ ॥

तेह ए सरवर तेह जल तेह ज तीर मनोहार ।
कंठे आरोप्यां जिहां ताल नलीनना हार ॥ २ ॥

सोहे एह ज वालुका उज्वल जेसी कपूर ।
वाललीलाए आपणे कर्यां जिहां घर भूरि ॥ ३ ॥

वात लगावी इम अनुज भवदत्त भेटे ग्राम ।
जे आचारजपदकमल पवित्र कियो अभिराम ॥ ४ ॥

(पृ० ६)

× × ×

हवे निज कर जोडी कहे नभसेना शुचि बोल ।
रहो पास्ये संतोष करी मन धरी अचल अडोल ॥ १ ॥

परिणत वये व्रत आदरो हमणां गृही व्रत लाग ।
कीम अणपहेर्यो पहेरणे सोहे अभिनव पाग ॥ २ ॥

चक्रवर्ति भोजन तणी इच्छा कर्ये शुं होय ।
घर संपत्ति सरखे सुखे वर्ते दुःखी न सोय ॥ ३ ॥

जिम थवीरा अतिलोभथी आपही आप विणट्ठ ।
तिम अति इच्छा मत करो सुणो संबंध ते इट्ठ ॥ ४ ॥

(पृ० ५७)

× × ×

मीठुं लागे तेल तस घृत नवि दीठुं जेण ।
भवसुख तेम राचे म को शिवसुख संभेर तेण ॥ ७ ॥

दुख:थी विरमे जन सकल सुखथी विरमे बुध ।
सुखदु:ख सरखा लेखवे भवना ते मुनि शुद्ध ॥ ८ ॥

हय जेम देवाणुप्पिये ! जातिवंत गुणवास ।
उत्पथगामी तेम न हुं सुण तस कथा विलास ॥ १० ॥

(पृ० ५९)

× × × ×

मद झरता कुंजर जाणे सनिर्जर शैल ।
अंबर लागी अंबाडी सुरगज शुं करे मेल ॥ ७ ॥

धवल धोरी जोतरीया रथनी कीधी तैयारी ।
शणगार्या सांबेला धवल मंगल दिए नारी ॥ ८ ॥

गाय गीत सुहासणि पहेरी नवला वेष
मद मुदित हुआ सवि गाम अने संनिवेश ।
केइ चढ्यारे सुखासन केइ चढ्या चकडोळ
अतिचतुर विचक्षण करे घणा रंगरोळ ॥ ९ ॥

अष्ट मंगळ चाले आगे वळी चाटुकार
असि–कुंत–फलक–गृह नर्मकार रतिकार ।
तिल नांख्या न तळे आवे तेम हुआ पंथ
धरणीनो कण पण न रह्यो कोइ अपंथ ॥ १० ॥

उच्छव जुए नरनारी वारी चढी चौवारी
व्याकुल थइ वादित्र–शब्द सुणी सवि नारी ।
तूर दुग्ध जामाता कलि कज्जल सिंदूर
खट होय ए वल्लभ स्त्रीने सहज सनूर ॥ ११ ॥

गाजा वाजा सुणीने अर्ध तिलक करी एक
अर्धांजित दृग एक जोवा चाली छेक ।
एक नेउर पहेरे एक ज चरण पखाले
आधि कंचुकी पहेरी जोवा कांइक चाले ॥ १२ ॥

धसमसती कांइक कज्जल गले घाले ।
कस्तुरी लोचन ठवती आघी चाले ।
बावना चंदन रस पाए लगाडे वाला ।
अळतो हृदय स्थळ लाए करे चकचाला ॥ १३ ॥

(पृ० ८०)

× × × ×

तास शिष्य श्रीजितविजयबुध श्रीनयविजय गुरु भाया जी ।
वाचक जस विजये तस शिष्ये जंबूगुण ए गाया जी ॥ ६ ॥
९ नन्द ३ तत्त्व ७ मुनि १ उडुपति संख्या वरसतणी ए धारोजी ।
खंभनयर मांही रहीय चोमासुं रास रच्यो छे सारो जी ॥ ७ ॥

(पृ० ८३)

गद्य

(उपाध्याय यशोविजयजीए खंभातथी लखेलो कागळ)

इहां धर्मकर्म सुखइ निवर्तइ छइ. तुम्हारा धर्मोद्यमना समाचार जणावीने परमसंतोष उपजाववा.

तथा तुम्हारो लिख्यो लेख १ प्रथम चैत्र शुदिनो लिख्यो आव्यो, समाचार प्रीछ्या, संतोष ऊपना. तथा प्रश्नरो उत्तर :—

साध्वी नानबाईरी अवविज्ञानरी कपटमात्र जणाई छइं. तथा खंभातमध्ये श्रावक, सूत्र वाचई छइ, × × × × × तथा गुरुशिष्य संवाद तो. बुद्धि जाणवो.

वडो लेख लिखावी मोकल्यो छइ, सा. गदाधर थानइ ठाऊको मोकल्यो छई. तिणमां नय निक्षेप प्रमाणरी मणा न रही छइ. वारंवार विचारयो.

तथा श्रीवर्धमान स्वामी क्षत्रीकुण्डग्रामे हवा. ते तो आगम–प्रमाण मध्ये अंतर्भवइ छइ. सामान्यथी आम सद्भावे तो शेषवत्–अनुमान प्रवर्तई. जे माटई अबाधित स्याद्वाद प्रवचनरूप कार्य छइ, ते आम कारण विना न संभवेई. पूर्ववदादि शब्दरो ए अर्थ छइ.

तथा न्यायाचार्य विरुद तो भट्टाचार्यइ न्यायग्रन्थ रचना करी देखी प्रसन्न हुइ दिऊं छइ. ग्रन्थ समाप्ति लिख्या छइ.— × × × न्यायग्रन्थ २ लक्ष कीधो छइ. × × × तथा धर्मलाभ जाणज्यो, धर्मोद्यम विशेषथी कर्यो, धर्मस्नेह वृद्धिवंत राप (ख) ज्यो.

उपाध्याय श्रीयशोविजय–संवत्–१७२९–द्रव्यगुणपर्याय रास–(प्रारंभ)

राग—देशाख चोपाइ

गद्य—तिहां प्रथम गुरुनइं नमस्कार करीनई प्रयोजन सहित अभि-

धेय देखाडइ छई—

[पहिलइ वि पदे मंगलाचरण देषाड्युं—नमस्कार कर्या ते १, आत्मार्थी इहां अधिकारी २, तेहनइं अवबोध थास्यइ—उपकाररूप प्रयोजन ३. द्रव्यनो अनुयोग ते इहां अधि कार

पद्य—

श्री गुरु जीतविजय मनि धरी
श्री नयविजय सुगुरु आदरी ।
आतम—अरथीनइं उपकार
करुं द्रव्यअनुयोग विचार ॥ १ ॥

गद्य—

श्रीजीतविजय पंडित अनइं श्रीनयविजय पंडित ए बेहु गुरुनइं चित्तमांहिं संभारीनइं आतमार्थी—ज्ञानरुचि जीवना उपकारनइं हेतइं, द्रव्यानुयोग विचार करुं छुं. अनुयोग कहिइं सूत्रार्थ-व्याख्यान. तेहना ४ भेद शास्त्रइं कहिया—

१ चरणकरणानुयोग—आचार वचन—आचाराङ्ग—प्रमुख

२ गणितानुयोग—संख्याशास्त्र—चन्द्रप्रज्ञप्ति—प्रमुख

३ धर्मकथानुयोग—आख्यायिकावचन—ज्ञाता—प्रमुख

४ द्रव्यानुयोग—षट्द्रव्यविचार—सूत्रमध्ये सूत्रकृतांग, प्रकरणमध्ये सन्मति, तत्त्वार्थप्रमुख महाशास्त्र.

ते माटिं ए प्रबन्ध कीजइं छइ. तिहां पण द्रव्य—गुणपर्यायविचार छइ, तेणइं ए द्रव्यानुयोग जाणवो.

× × × ×

अंतिम प्रशस्ति—गद्य—

तपगच्छरूप जे नन्दनवन ते मांहि सुरतरु सरिखो प्रगट्यो छे. श्रीहीरविजयसूरीश्वर. ते केहवा छे? सकलसूरीश्वरमां जे सोभागी छे—सौभाग्यवंत छे. जिम ताराना गणमां चंद्रमा सोमे तिम सकलसाधुसमुदायमांहे देदीप्यमान छे. (२७३ गाथा)

तास पाटे—तेहनो पट्टप्रभाकर श्रीविजयसेन सूरीश्वर, आचार्यनी छत्रीशछत्रीशीइं विराजमान, अनेकज्ञानरूप जे रत्न तेहनो अगाध समुद्र छे. साहि ते पातस्याह, तेहनी सभामांहे वादविवाद करतां जयवादरूप जे जस ते प्रत्यें पाम्यों विजयवंत छे. अनेक गुणे करी भर्यो छे. (२७४ गाथा)

तेहने पाटे श्रीविजयदेवसूरीश्वर थया, अनेक विद्यानो भाजन, वळी महिमावंत छे, निरीह—ते निःस्पृही, जे छे.

तेहने पाटे आचार्य श्रीविजयसिंहसूरीश्वर थया, पट्टप्रभावक समान, सकलसूरीश्वरना समुदाय मांहि लीहवाली छइ, अनेक सिद्धांत तर्क ज्योतिःन्यायप्रमुख ग्रन्थे महाप्रवीण छे. (२७५ गाथा)

ते—जे श्रीगुरु तेहनो उत्तम उद्यम—जे भलो उद्यम, तेणे करीनें गीतार्थगुण वाध्यो. तेहनी जे हितशिक्षा तेहने अनुसारे—तेहनी आज्ञामाफकपणुं तेणे करी ए ज्ञानयोग ते द्रव्यानुयोग—ए शास्त्राभ्यास साध्यो—संपूर्णरूपे थयो. (२७६ गाथा) × × × ×

श्रीकल्याणविजयनामा वड वाचक—महोपाध्याय विरुद पाम्या छे. श्रीहीरविजयसूरीश्वरना शिष्य जे छे, उदयो-जे उपना छे. जस गुणसंतति ते श्रेणि गाई छे—सुर किन्नर प्रमुख निसदीस—रात्रिदिवस गुणश्रेणि सदा काले गाय छे. (२७८ गाथा) × × × तेहना शिष्य गुरुश्री लाभविजय वड पंडित छे. (२७९ गाथा) × × गुरु श्रीजीतविजय

नामे तेह्ना शिष्य परंपराये थया. × श्रीनयविजय पंडित तेह्ना गुरुभ्राता-गुरुभाई संबंधे थया, (२८० गाथा) जेणे बहु उपाय करीने कासीये स्वशिष्यने भणवाने काजे मूक्या, तिहां न्यायविशारद एहवुं विरुद पाम्या (२८१ गाथा) × × × ते गुरुनी भक्ति × तेणे करीने एह वाणी द्रव्यानुयोगरूप प्रकाशी–प्ररूपी वचन द्वारे करीने. कवि जसविजय भणइं कहे छे, ए भणज्यो–हे आत्मार्थियो प्राणियो ! ए भणज्यो–दिन दिन दिवसे दिवसे बहु अभ्यास करीने, भणज्यो अति अभ्यासे. (२८३ गाथा) × × ×

संवत् १७२९ वर्षे भाद्रवा वदि २ दिने लिखि ।
साहा कपूरसुत साहा सुरचंदे लिखावितम् ॥ छ ॥

उपसंहार

२०१ व्याख्यानोना पुरोवचनमां शब्द अने भाषाना स्वरूप विशे संक्षेपमां जणावेलुं छे. पछी भाषाभेदनां निमित्तो विशे सविस्तर चर्चा करेली छे. ए प्रसंगे निरुक्तकार यास्के आपेला शब्दोने अने प्रधान वैयाकरण पाणिनिना धातुसंग्रहमांना धातुओने निदर्शन रूपे जणावेला छे. भाषाभेदनां बीजां अनेक निमित्तो जणाव्यां छे. तेमां आर्य अने अनार्य– ए बे जातिओनो गाढ संपर्क पण एक खास निमित्त छे. ते बाबत पण केटलाक पूरावा आपीने सविस्तर विवेचन करेलुं छे. वेदोमां य अनार्य शब्दोनो संपर्क छे ए हकीकत पण जैमिनिना वचन साथे टांकी बतावी छे. एटलुं ज नहीं पण जेमनो अर्थ अवगत न थतो होय एवा वैदिक अनार्य शब्दोनो अर्थ अनार्यसमाज पासेथी मेळववो एवुं कुमारिलभट्टनुं सविस्तर निवेदन जणावीने एवुं पूरवार कर्युं छे के आर्य अने अनार्योनो गाढ संपर्क अने आर्योनी भाषा ऊपर तेनी प्रबल असर ए कल्पित कथा नथी ज. अनार्यो द्वारा थतुं आर्यशब्दोनुं उच्चारण अने आर्यो द्वारा थतुं अनार्यशब्दोनुं उच्चारण ख्यालमां आवे ए माटे चीनी प्रवासी हुएनसिंगनां उच्चारणो साथे बीजां पण केटलांक उच्चारणो जणावेलां छे. प्राकृत-भाषाओना मूळ उपादानने समझवा सारु वैदिक भाषानी घटना साथे तेमनी आंतरघटनानी सरखामणी विशेष विस्तारथी सप्रमाण करी बतावी छे. अने एथी ए आशय सिद्ध कर्यो छे के वेद समयनी प्रचलित भाषानुं ज नाम प्राकृतभाषाओ छे. यास्कना अने पाणिनिना समयनां एक ज शब्दनां भिन्न भिन्न उच्चारणो ज ते शब्दोनी प्राकृतमयता सूचववाने पूरतां छे. संस्कृत ऊपरथी प्राकृत आव्यानो मत अने प्राकृत ऊपरथी

संस्कृत आख्यानो मत केवी रीते अप्रमाण छे ते पण वीगतथी दर्शाव्युं छे अने हेमचंद्रे करेला "प्रकृतिः संस्कृतम्" वचननी संगति अने असंगति बन्ने युक्तिपूर्वक दर्शाव्यां छे अने संस्कृत उपर प्राकृतनी असर तथा प्राकृत उपर संस्कृतनी असर ए बन्ने हकीकत पण विशेष उदाहरणो साथे चर्चेली छे. साथे प्राकृतभाषानी अवहेलना करवाथी आपणे जे कंई खोयुं छे ते दर्शावी हवे पछी अवहेलनानो त्याग करवा विशेष नम्रतापूर्वक साक्षरमंडलने विनंती करेली छे. पछी तो प्राकृत भाषाओ–पालि, अशोकनी धर्मलिपिनी भाषा, खारवेलनी धर्मलिपिनी भाषा, आर्षप्राकृत, अर्धमागधी, सामान्य प्राकृत, शौरसेनी, मागधी, पैशाची, अपभ्रंश वगेरे भाषाओनो संक्षेपमां परिचय आपेलो छे. जैन परंपराना दिगंबर संप्रदायना प्रवचनसार वगेरे ग्रंथोनी भाषानुं पण स्वरूप साथे साथे दर्शाव्युं छे अने 'अपभ्रंशनो समय तथा ते विशेनां प्रमाणो' ए बाबत थोडा विस्तारथी चर्चेली छे अने एम सिद्ध कर्युं छे के अपभ्रंश साहित्यने पांचमा सैकाथी आरंभी शकाय.

प्राकृतना स्वरूपने पण अहीं प्रस्तावोचितरीते वतावेलुं छे अने संस्कृतना महाकविओ य तेनी असरथी वची नथी शक्या एम वतावी देश्यभाषाना प्रभुत्वने पण सूचवेलुं छे अने ते पण उक्त कविओना शब्दोमां ज जणावेलुं छे.

गुजराती भाषानी उत्क्रांति वताववा माटे ते भाषा साथे संबंध धरावती आटली नानी मोटी अनेक चर्चाओ कर्या पछी वारमा सैकानी कविताना नमूनाओमांथी ते सैकानी भाषानो परिचय आपवा प्रयत्न कर्यो छे. ते माटे जोईए ते करतां य वधारे निदर्शनो, वाक्यो वगेरे एटला माटे मूक्यां छे के अहीं वेठां वेठां ज आपणे आजथी आठसो वरस पहेलांनी आपणी गुजराती भाषाना स्वरूपने सरळताथी समजी शकीए.

गुजराती भाषानी उत्क्रांति

२०२ वारमा सैकानी गुजराती भाषानो शब्ददेह प्राकृतनी जेवो छे एटले के तेमां विजातीय संयुक्त अक्षरो जेवा के 'क्र', 'क्ल', 'क्त' वगेरे मुद्दल नथी आवता. 'श' के 'ष' नो प्रयोग नथी. ते बन्नेने वदले एकलो 'स' ज देखाय छे. स्वरोमां ऐ, औ, अं, ऌ पण देखाता नथी. संयुक्त 'र' वाळा एटले 'अंत्रडी' जेवा प्रयोगो उपलब्ध छे. परंतु 'आचार्य' जेवा तो नहीं ज. क्रियापदोमां अंते अइ, अई, के अउ वगेरे जुदा जुदा स्वरो देखाय छे, तेमनो गुण थतो जणातो नथी अने नामोमां पण एवा स्वरवाळा विभक्तिप्रत्ययो गुणविनाना ज उपलब्ध छे.

अभयदेवनी कृति ईश्वरनी स्तुतिरूप छे. वादी देवसूरिनी कृति गुरुनी स्तुतिरूप छे अने हेमचंद्रनी कृति लौकिक वनावोने वर्णवे छे. एथी त्रणेनी भाषा एक ज छतां आगला वेनी भाषा करतां हेमचंद्रनी भाषा थोडी वधारे सुवोध छे अने तळपदी जेवी छे.

२०३ तेरमा सैकानी भाषाने समझवा पण ठीक ठीक सामग्री मूकेली छे. तेरमा सैकानी भाषामां अने बारमा सैकानी भाषामां नहींवत् अंतर छे छतां प्रमाणमां तेरमा सैकानी भाषामां प्राकृतपणुं ओछुं देखाय छे. नामना अने क्रियापदना देहनी रचना आपणी अद्यतन गुजरातीना वलणवाळी छे. सोमप्रभनी रचना करतां धर्मसूरिना जंबूचरियमां अने विजयसेनसूरिना रेवंतगिरिरासमां आपणुं आधुनिक वलण वधारे स्पष्ट छे. सोमप्रभे जणावेलां आ पांच पद्यो पण तेमना समयनी लोकभाषानो—चालु गुजरातीनो—ख्याल आपवाने पूरतां छे:—

खड्डु खणाविय सइं छगल, सइं आरोविय रुक्ख ।
पइं जि पवत्तिय जन्न सइं, किं बुब्बुयहि मुरुक्ख ॥ १ ॥

तीयह तिन्नि पियाराइं, कलि—कज्जलु—सिंदूरु ।
अन्नइ तिन्नि पियाराइं, दुद्ध जम्वाइउ तूरु ॥ २ ॥

अह कोइलकुलरवमुहुलु भुवणि वसंतु पयट्टु ।
भट्टु व मयणमहानिवह पयडिअविजयमरट्टु ॥ ३ ॥

वडरुक्खह दाहिणदिसिहिं जाइ विदब्भिहि मग्गु ।
वामदिसिहि पुण कोसलिहि जहिं रुच्चइ तहिं लग्गु ॥ ४ ॥

पिया हउं थक्किय सयलु दिणु तुह विरहग्गि किलंत ।
थोडइ जलि जिम मच्छलिय तल्लोविल्लि करंत ॥ ५ ॥

(कुमारपालप्रतिबोध पृ० २५—३२—३८—५७—८६)

सोमप्रभनी कृतिनो नमूनो अने तेमांना शब्दो वगेरे आगळ बतावी गयो छुं. तो पण तेमना समयनी प्रचलित गुजरातीनो विशेष स्पष्ट ख्याल आवे ते माटे अहीं फरीवार तेमणे अवतरणरूपे जणावेलां उक्त पांच पद्यो फक्त

नमूना रूपे जणावेलां छे. तेमनी कृतिमां बीजां तो आवां अनेक पद्यो तेमणे अवतरणो रूपे मूकेलां छे. तेरमी सदीनी गुजरातीभाषानो ख्याल आप्या पछी चौदमी सदीनी कृतिओना लीधेला नमूनामांथी शब्दो—नामो क्रियापदो वगेरे जणाव्युं छे अने तेरमा करतां चौदमी सदीनी भाषामां शी विशेषता आवी छे तथा चालु गुजरातीनी साथे ते केटला वधारे प्रमाणमां मळी जाय एवी बनेली छे ते बधुं वीगतथी बताव्युं छे. साथे साथे बारमी, तेरमी अने चौदमी सदीनी गुजरातीभाषानां नाम—विभक्तिओ, क्रियापद—विभक्तिओ, कृदंतो वगेरे विशे पण लांबुं विवेचन करेलुं छे अने वच्चे वच्चे व्युत्पत्तिसंबंधी केटलीक चर्चाने पण छेड्या सिवाय रही शक्यो नथी. बारमा अने तेरमा सैका करतां चौदमा सैकानी गुजरातीमां विशेष फेरफार थयेलो छे अने तेनुं वलण वधारे प्रमाणमां नवी गुजरातीने मळतुं थवा मांड्युं छे.

२०४ अत्यार सुधी जेमनो प्रयोग न हतो एवा विजातीय संयुक्त अक्षरो क्ष, क्त, ब्य, त्य, र्य, ष्ट, ष्ठ, द्ध, र्ग, श्य, न्य, थ्य, म्य, स्य, ल्य, त्त्व, र्त, र्ध, र्म, स्थ वगेरे व्यंजनो चौदमा सैकानी गुजरातीमां वपरावा मांड्या छे. संस्कृतभाषानो प्रभाव जोतां अने तळपदां उच्चारणो विशेष अशुद्ध भासतां तत्कालीन लेखकोए क्लिष्ट छतां शुद्धिपोषक होई ए संयुक्त व्यंजनोनो वापर स्वीकार्यो होय एवो भास थाय छे. आ समय पछी उत्तरोत्तर विजातीय संयुक्ताक्षरोवाळा शब्दो खूब वधता गया छे. पहेलां जे श, ष, स त्रणेने बदले एकलो 'स' ज वपरातो हतो ते हवे बंध थयो अने यथास्थान श, ष अने स ए त्रणे चौदमा सैकानी गुजरातीमां वपरावा लाग्या छे. अंत्य एवा, अइ, अउ, वगेरे भेगा पण थवा लाग्या छे अने गद्यनी भाषामां तळपदापणुं वधतुं चाल्युं छे. अत्यार सुधी 'ऐ' ने बदले 'अइ' के 'अय' वपराता ते बंध थई चौदमा सैकामां 'ऐ'

पण वपरावा मांड्यो छे. आ रीते आ सैकामां गुजरातीनी मोटी माशी प्राकृतनी असर ओछी थवा लागी छे. अने समृद्ध एवी नानी माशी संस्कृतनी असर ठीक प्रमाणमां जणावा लागी छे.

२०५ पन्दरमा सैकानी गुजरातीभाषामां चौदमा सैकानी जे संस्कृत-जन्य विशेषता हती ते, वधारे प्रमाणमां कळावा लागी छे. 'औ' स्वरनो प्रयोग पन्दरमा सैकानी गुजरातीमां थवो शरू थयो छे. अंतिम 'अइ' वगेरे स्वरोनो गुण करीने पन्दरमा सैकानी भाषा वोलीए तो ते अद्यतन गुजराती जेवी जणाया विना रहेती नथी. आ सैकाथी पष्ठी विभक्तिना 'रहइं' वगेरे प्रत्ययो नवा ज शरू थया छे, जो के तेमनुं मूळ, तेनी माता अपभ्रंशमां रहेलुं छे ज. पन्दरमा सैका पहेलांनी गुजरातीमां सर्वत्र 'कहइ', 'करइ' एवां 'छइ' विनानां ज क्रियापदो वपरातां हतां ते हवे आ सैकाथी 'छइं' वाळां वपरावां लाग्या छे अने ए पद्धति ठेठ आज सुधी चाली आवी छे. पन्दरमा सैकाथी जैन अने वैदिक बन्ने कविओनी कृतिओनो उपयोग करेलो छे. अने तेमां य जैन करतां वैदिक कविओनी कृतिओनो वधारे उपयोग छे.

२०६ सोळमा सैकानी गुजरातीमां आद्य 'ज' ने बदले 'य' नुं उच्चारण थयेलुं माळूम पडे छे. हवे अहीं 'अइ' वगेरे लगभग संयुक्त थयेला वपरावा लाग्या छे. 'जेहुवुं' 'ताइरूं' वगेरे प्रयोगोमां 'ह्' श्रुति संभळावा लागी छे अने सप्तमीविभक्तिवाळां नामो जेवां के 'आसनि' 'गामि' वगेरेने बदले 'आसन्य' 'गाम्य' एवा 'य'कारवाळा प्रयोगो पण वपरावा लाग्या छे, तथा जे नाम, छेडे 'इ' वाळुं छे जेमके हरि, रात्रि, प्रीति एनो अंत्य 'इ' 'य'रूपे बदलाईने वपरायेलो छे, एटले हर्य, रात्य, प्रीत्य एवा प्रयोगो थयेला छे. आवा प्रयोगो वाग्व्यापारजन्य विलक्षण-ताना पुरावारूप छे, ए स्पष्ट छे.

२०७ सत्तरमा सैकानी गुजरातीमां घणे स्थळे अंतिम दीर्घ 'ऊ' वपरायेलो छे. जेम 'नुं' ने बदले 'नूं' वगेरे. अने 'ऐ' तथा 'औ' नो प्रयोग छूटथी थवा लाग्यो छे, तथा 'ऋ' आदिवाळा शब्दोमां 'ऋ' ज कायम रह्यो छे, पण तेने बदले 'रि' नो प्रयोग वधारे प्रमाणमां नथी.

२०८ आ पछी अढारमा सैकानी भाषा तो अद्यतन गुजराती छे, एथी ए विशे विशेष विवेचन नथी कर्युं; परंतु जे रीते पन्दरमा सैकानी गुजरातीने समझाववा विभक्तिवार उदाहरणो, क्रियापदो, सर्वनामो वगेरे वीगतथी आप्युं छे ते रीते अढारमा शतकनी एटले आजनी गुजराती भाषाने समझाववा अनेक रूपो सविस्तररूपे आपेलां छे. आजे आपणे ज्यां 'स' नुं उच्चारण करिए छिए त्यां पण अढारमा शतकनी गुजरातीमां तालव्य 'श' नुं उच्चारण रहेलुं छे अने ज्यां आपणे त्यां 'ळ' नुं उच्चारण प्रवर्ते छे त्यां 'ल' नुं उच्चारण थयेलुं छे. बारमाथी ते ठेठ अढारमा शतक (एक श्रीयशोविजयजीनी कृतिमां क्यांय 'ळ' देखाय छे परंतु ते संशोधननो के मुद्रणनो दोष केम न होय?) सुधीनी गुजरातीमां क्यांय 'अवला', 'वली', 'काल' वगेरे शब्दोमां 'ळ' नुं उच्चारण जोवामां नथी आव्युं एटले कदाच 'ळ' नुं उच्चारण तद्दन आधुनिक होय अने दक्षिणना सहवासथी आव्युं होय ए बनवा जोग छे. प्राचीन समये वेदमां तेम ज प्राकृतभाषाओ पैकी पालिभाषामां अने पैशाचीभाषामां स्वतंत्र 'ळ' नुं उच्चारण चाले छे एटले ए पण संभव छे के दाक्षिणात्य वेदपाठीओना वा 'ळ' वाळी भाषाना सहवासथी वर्तमान गुजरातीमां 'ळ' नुं उच्चारण उमेरायुं होय.

२०९ चौदमा सैकानी गुजरातीथी ठेठ अढारमा सैकानी गुजराती सुधी-नी रचनाओमां कोई प्रकारना नियत बंधारणवाळी निश्चित जोडणी देखाती

नथी, त्यार पहेलां वधारे पडती अनिश्चितता नथी भासती, तथा 'मुख्य' ने बदले 'मुक्ष्य' जेवां केटलांक विचित्र उच्चारणो पण सोळमी सदीनी कृतिओमां रही गयेलां छे. सैकावार एक एक सळंग कृतिनी भाषा–परीक्षा कराय अने ए रीते अढारमा सैका सुधीनुं संपूर्ण गवेषण थाय तो गुजराती भाषानुं घडतर, बंधारण, व्युत्पत्ति, जोडणी अने एक एक शब्दोनां भिन्न भिन्न उच्चारणो ए वधी हकीकतो विशे वधारेमां वधारे प्रकाश पडे अने शब्दोना रूपान्तरो तथा तेमना अर्थना इतिहास विशे पण घणुं नवुं जाणवानुं मळे; परंतु ए कार्य अनेक वर्ष अने अनेक व्यक्ति साध्य छे एथी अहीं तो में मारी शक्ति अने मर्यादा विचारी स्थालीपुलाकन्याये सैकावार त्रण त्रण कृतिओने तपासवानुं निर्धारेलुं अने ते प्रमाणे ते तमाम कृतिओनुं गवेषण करी गुजराती भाषानो क्रमिक विकास जे रीते हुं समझ्यो छुं ते रीते वताववा प्रयत्न कर्यो छे.

२१० उक्त वधी कृतिओमां प्राकृत अने संस्कृत शब्दोनी बहुलता छे. प्राचीन अपभ्रंशनो शब्ददेह प्राकृतरूप छे अने गुजरातीनी माता ए प्राचीन अपभ्रंश छे एथी तेरमा सैका सुधीनी गुजरातीमां प्राकृतनी बहुलता दीसे ए स्वाभाविक छे. चौदमा पछी ते बन्नेनी–संस्कृत अने प्राकृतनी– बहुलता छे अने तेमां देश्य प्राकृत शब्दो पण वपरायेला छे; परंतु संस्कृत अने प्राकृत करतां देश्य शब्दोना टका ओछा छे अने आगळ जणाव्या प्रमाणे आर्योनी पवित्रतम वैदिक भाषामां पण अनार्योना शब्दो पेसी गया छे, ते रीते अनार्य शब्दोना संसर्गथी संस्कृत भाषा पण बची नथी तो लोकभाषामां एवा शब्दो आवे ए सहज जेवुं छे. चौदमा सैकानी भाषाथी ठेठ अढारमा सैका सुधीनी गुजराती भाषामां क्यांय क्यांय एवा शब्दो वपरायेला छे अने ते विशे यथास्थान निदर्शन पण करावेलुं छे. एवा फारसी वगेरेना शब्दो घणा ज ओछा आवेला छे ते ध्यान बहार न जाय. गमार, तरक,

सुन्नत, ओमराओ वगेरे शब्दो ए जातना छे. एवा परदेशी शब्दो अढारमी सदीनी कृतिमां प्रसंगवशात् थोडा वधु वपराया छे.

अहीं जणावेली कृतिओनी अभिधेयवस्तुनो परिचय विशेषपणे कराव्यो नथी, तेम तेनो सार पण चालु गुजरातीमां आप्यो नथी, अहीं मात्र एक व्याकरणसापेक्ष शब्ददृष्टिनी प्रधानता होवाने लीधे आगळना व्याख्यानोमां एवुं आपेलुं नथी. तेम छतां मने लागे छे के परिमित शब्दोमां अमुक अमुक कृतिओनो सारभूत परिचय अहीं उपसंहारमां आपुं तो अस्थाने नथी.

कृतिओनुं अभिधेय

२११ अहीं सर्व प्रथम आपेली बारमा सैकानी अभयदेवनी कृतिमां जैनपरंपराना त्रेवीशमा तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथ भगवाननी स्तुति छे. तेमां एक साचा भक्तनी जेम स्तुतिकारे पोतानी दीनता प्रगट करेली छे. अने ते दीनताने मटाडवा परमेश्वर पोतानी सहाये आवे एवी मागणी पण अनेक रीते जणावेली छे.

बीजी कृति वादी देवसूरिनी बनावेली तेमना गुरुनी स्तुतिरूप छे. तेमां गुरुनो महिमा अने जेमनी स्तुति छे ते पुरुषनो संयमविषयक, ज्ञानविषयक अने साधुतासंबंधी प्रकर्ष वर्णवेलो छे.

त्रीजी कृतिमां हेमचंद्रना आठमा अध्यायना चोथा पादमांना केटलाक दोधको छे, अने तेमना छंदोनुशासनमांनां पण केटलांक पद्यो छे. ए बधां पद्योमां केटलांक तो हेमचंद्रनां पोतानां छे अने वधारे भाग लोकप्रचलित पद्योनो छे. त्रीजी कृति, आगली बे करतां विशेष लांबी राखी छे. आगली बेनो विषय मर्यादित होवाथी तेनी भाषावटना पण मर्यादित होय त्यारे त्रीजी कृतिनो विषय तद्दन लौकिक—लोकव्यापक छे, एथी एनी भाषावटना द्वारा ते समयनी गुजरातीनो स्पष्ट ख्याल आवे तेम ज ते समयनी भाषानुं बंधारण पण समजी शकाय ए हेतुथी ज अहीं त्रीजी कृतिने विशेष स्थान आपेलुं छे.

२१२ तेरमा सैकानी त्रण कृतिओ पैकी पहेलीमां जीव, मन अने इंद्रियोनो संवाद छे. एमां इन्द्रियोना विषयो—स्पर्श, रस, रूप, गंध अने शब्दोना मोहक सामर्थ्यनुं वर्णन छे अने अंते इन्द्रियनिग्रहरूप संयमनी भलामण करेली छे. त्यार पछी स्थूलिभद्र, वररुचि, नंद अने मन्त्री शकटालनी संक्षिप्त कथा छे, तथा वेश्याने त्यां जईने परमहंसवृत्तिथी रहेनार स्थूलिभद्रना चारित्रनो प्रकर्ष गवायेलो छे.

बीजी कृतिमां जंबूस्वामिनुं चरित्र छे. जम्बूकुमार एक वैश्यपुत्र छे, संपन्न छे, यौवनवंत छे. तेणे साक्षात भगवान महावीरनी वाणी सांभळी, तेथी आत्मराज्यनो नाश करनारा काम, क्रोध, लोभ, मद, मत्सर, मान अने माया वगेरेनुं जेमां प्राबल्य छे एवी दैहिक विलासनी प्रवृत्तिने तजी देवानो निश्चय कर्यो. आम छतां मातानो भक्त ते जंबू मात्र माताना ज आग्रहथी आठ कन्याओने परण्यो. परणतां पहेलां तेणे पोतानो निश्चय ते ते कन्याओना वाली-ओने जणाव्यो. वालीओए ए वात कन्याओने जणावी अने तेमने बीजे परणवानी सूचना करी छतां कन्याओए जंबूने ज परणवानो आग्रह राख्यो, जंबू परण्यो. रात्रे घेर आव्यो. घरमां ऋद्धि अढळक छे. लग्ननी धमालनो लाग जोई प्रभव नामनो चोर पोताना साथीदार खातरियाओ साथे जंबूना घरमां चोरी माटे पेठो. कोई विद्याना बळे तेने धारण मूकी, घरनां बधांने तेणे सूवाडी दीधां अने ताळां ऊघाडवानी कळावडे पेटीओनां ताळां खोली नाख्यां. मात्र एक जंबू ऊपर तेना धारणनी असर न थई एटलुं ज नहीं पण ते चोरो ऊपर जंबूनी दृष्टि पडतां ज ते बधा थंभी गया—आम के तेम एक पगलुं पण न चाली शके एवा स्तब्ध थईने ऊभा रह्या. जंबू ते चोरोने कशुं य हनकन केतो नथी. तेम तेणे तेमने थंभाव्या पण नथी. ते तो पोते सवारना प्रथम प्रहरमां भगवान महावीरना

चरणमां साधना माटे जतो होवाथी ए वात पोतानी स्त्रीओने समझावे छे. अने स्त्रीओ तेने अहीं रहेवा समझावे छे. प्रभव साथे पण तेनो वार्तालाप थाय छे. प्रभवने ए जोईने आश्चर्य थयुं के हुं तो धन अने स्त्रीओ माटे धाडो पाडुं छुं त्यारे आ महानुभाव ते वधुं मूकीने आरण्यक जीवन जीववा इच्छे छे. छेवटे सवारे, जंबू, तेना माता-पिता, आठे स्त्रीओ अने प्रभव वगेरे बधा चोरो महावीर पासे जईने वनव्रत स्वीकारे छे अने जीवनशुद्धिनो मार्ग मेळवे छे. जतां पहेलां प्रभव, राजा कोणिक पासे जाय छे अने पोते जेनी जेनी जे चीज चोरी हती ते, अने ते वधुं क्यां राख्युं छे ते सघळुं बतावे छे अने राजा–प्रजानी क्षमा मागे छे. आ वधी हकीकत प्रचलित भाषामां कविए प्रस्तुत बीजी कृतिमां सरस रीते वर्णवी छे.

त्रीजी कृतिमां गिरनारनो रास छे. तेमां गिरनारनुं, तेनी यात्रानुं अने ते समयना केटलाक ऐतिहासिक पुरुषोनुं नाम-स्मरण छे. ए कृति देशीना रागमां छे अने अमुक कडवामां वहेंचायेली छे.

२१३ चौदमा सैकानी नेमिनाथचतुष्पदिका (चोपाई) मां नेमिनाथ अने आठ भवथी तेनी सहचरीरूपे रहेती आवेली राजुल वा राजिमती ए वेना प्रेमनुं वर्णन छे. नेमिनाथ वीतराग थवानी वृत्तिवाळा छे अने राजिमती तेमना तरफ आकर्षायेली छतां तेमनाथी त्यजायेली होई पोतानी हैया-वराळ आ चोपाईमां वरावर वतावे छे. कविए ए वस्तुने वरावर वर्णववा आ कृतिमां वार मास वर्णवेला छे अने तेमां राजिमती तथा तेनी सखीओनो संलाप चीतरेलो छे. छेवटे राजिमती पण नेमिनाथ पासे जई संयमिनी थईने रहे छे. आनी भाषा पण वोलचालनी छे अने ते द्वारा चौदमा सैकानी गुजरातीनो आपणे घणो स्पष्ट ख्याल मेळवी शकिए एम छीए.

वीजी कृति थूलिभद्रनो फाग छे. आमां त्यागी थूलिभद्र पोतानी पूर्व-

परिचित अने गाढप्रेमपात्र वेश्याने त्यां आवीने रह्या छे, छतां ध्रुवनी जेम एटला बधा निश्चळ रह्या छे के जेथी वेश्या, वेश्या मटी पतिव्रता बने छे अने गृहस्थधर्म ले छे. प्रस्तुत फागमां वेश्या अने जति थूलिभद्र वच्चे थयेलो संवाद सरस रीते ओजस्वी शब्दोमां वर्णवायेलो छे.

२१४ चौदमा सैकानुं गद्य पण नमूनारूपे मूकेलुं छे. तेनी भाषा तो बोलचालनी ज छे. गद्यनो विषय जैन संप्रदायनी धार्मिक विधिओने लगतो छे. एटले तेनी भाषा तळपदी छतां सांप्रदायिक शब्दोथी मिश्र थयेली छे. आम छतां य ए गद्यनी भाषा, पद्यनी भाषा करतां चौदमा सैकानी भाषानो विशेष स्पष्ट ख्याल आपे एवी छे. वळी संस्कृतना विद्यार्थिओ माटे संग्रामसिंह नामना पंडिते ते समयनी चालु बोलीमां 'बाल-शिक्षा' नामनुं एक व्याकरण रचेलुं छे. तेमां संस्कृतभाषानां नाम-रूपो, क्रियापद-रूपो अने बीजा अनेक शब्दो समझाववा ते पंडिते तुलनात्मकदृष्टिने प्रधान स्थान आपीने पोताना समयनी प्रचलित भाषाना प्रयोगोनो आश्रय लीधो छे. ते ग्रंथमांथी नमूनारूपे अहीं केटलोक उतारो आपेलो छे. भाषाना प्रयोगोने समझवा सारु कथावार्ताना साहित्य करतां आ उतारो विशेष उपयोगी छे.

२१५ पन्दरमा सैकाना पहेला दसकाथी ते अंतिम दसका सुधीनी भाषाना नमूना आपेला छे. ते गद्य अने पद्य बन्ने प्रकारना छे. गद्यना नमूनामां नानी नानी वार्ताओ छे. पद्यना नमूनाओमां सर्व प्रथम कवि असाईतनी हंसाउलीनो उपयोग पूरतो उतारो लीधेलो छे अने बीजो उतारो कवि भीमनी सदयवत्सनी कथाने लगतो छे; ए गद्य अने पद्य उभयना नमूना पन्दरमा सैकानी गुजरातीनो घणो स्पष्ट ख्याल आपे छे.

प्रस्तुत व्याख्यानोने लगतां वांचन—परिशीलन अने परस्पर तोलनने लीधे मने जे थोडो घणो अनुभव थयो छे ते उपरथी नम्रतापूर्वक कही

शकुं छुं के पद्य करतां गद्यसाहित्य, भाषाना बंधारण, घडतर अने नानाविध प्रयोगोनो वधारे स्पष्ट ख्याल आपी शके छे. पद्यमां तो कवि, कविताना कारणे भाषाना प्रयोगो उपर पोतानो स्वच्छंद पण चलावी शके छे अने तेने लीधे (जन) 'जन्न' (सनातन) 'सनातन्न' जेवा विलक्षण प्रयोगो पेदा थाय छे; त्यारे गद्यमां तेम करवानुं स्थान ज नथी. तेमां तो भाषानो स्वाभाविक सरल प्रवाह वह्यो जाय छे तेथी ते ते समयनुं अकृत्रिम गद्य भाषा विशे विशेष स्पष्ट समज आपे छे.

पन्दरमा सैकाना एकंदर छ नमूनाओने अहीं रजू करेला छे. चार गद्यना छे अने बे पद्यना छे. आ सैकानी भाषानां नामरूपो, क्रियापदो, सर्वनामो, कृदंतो अने बीजा अनेक शब्दोनुं निदर्शन करावीने पन्दरमा सैकानी भाषानो सविशेष परिचय आपेलो छे तथा जैन अने जैन नहीं एवा कविओनी भाषामां कशो य भेद नथी एवी स्थापित हकीकतने स्पष्टतापूर्वक वधू वीगतथी रजू करेली छे. वळी, आगळ कह्या एवा 'बाल-शिक्षा' जेवा 'मुग्धावबोध औक्तिक' (कुलमंडन)—मांथी पण वीगतवार उतारो मूकेलो छे तथा कुलमंडनना ज गुरुभाई श्रीगुणरत्नसूरिए रचेला क्रियारत्नसमुच्चय-मांथी पण उपयुक्त भाग उतारी क्रियापदो अने तेनां भूतकाल वगेरे भिन्न भिन्न काळमां थतां भिन्न भिन्न रूपो संबंधी माहिती आपेली छे. आगला सैकाओ करतां आ सैकानी भाषानी चर्चाए विशेष स्थान रोकेलुं छे.

२१६ सोळमा सैकानी पांच कृतिओनो अहीं उपयोग करेलो छे. एमां एक, जैन कवि लावण्यसमयनी छे अने बीजी चार अनुक्रमे नरसिंह, पद्मनाभ, भीम (बीजो) अने कवि मांडणनी छे. आ बधी कृतिओमांथी नाम वगेरेनां निदर्शनो आपी सोळमा सैकानी भाषानुं स्वरूप समजमां आवे ते रीते चर्चा करेली छे. लावण्यसमये संस्कृतनी जेवा मालिनी वगेरे छंदो वापरेला छे तेना पण थोडा नमूना आप्या छे. सोळमा सैकाना कवि

मांडणे 'पाखंड' 'हास्य' 'मूर्ख' वगेरे जुदा जुदा बत्रीश विषयो पसंद करीने ते दरेक ऊपर वीश वीश कडीनी एक एक वीशी बनावी छे अने तेमां कडीए कडीए अनेक ऊखाणां (उपाख्यान) आपीने पोताना अभिमत अर्थने विशेष स्फुट करेलो छे. आ वीशीओमां अर्थगांभीर्य छे अने मांडणना मनना क्रांतिकारक भाव पदेपदे भरेला छे. अहीं ए बधी वीशीओनो वीगतवार परिचय न आपी शकाय; परंतु ए वीशीओमां जेम कवि मांडणे ऊखाणां बराबर गोठववामां अजब चातुर्य दाखव्युं छे तेम प्राकृत भाषामां लखायेला एक जैनस्तोत्रमां तेना रचयिताए गाथाए गाथाए ऊखाणां गोठवीने पोतानुं पांडित्य प्रगटेलुं छे. ए स्तोत्रकार कोण छे? ते कया समयनो छे? वगेरे वीगतो जणाई नथी तेम छतां मांडण करतां तो ए प्राचीन होवानो भास थाय छे. एटले मांडणनी कृति ऊपर ए प्राचीन स्तोत्रनी असर होय तो ना न कहेवाय.

मांडण	स्तोत्रकार
"गुलि मरि तु विष कां दीउ?" —१ ली वीशी—१६	"जो मरइ गुलेणं चिय तस्स विसं दिज्जए कीस?"—जैन स्तो० सं० पृ० ७९, गा० १५
"पइठी नाचइं किशुं घुंघटु?" —१४ मी वीशी—२६२	"जइ नच्चणे पयट्टा ता किं घुंघट्ट-करणेणं"—उक्त पु० गा० २१
"पाके भांड न काना जडइ" —१५ मी वीशी—२८३	"पक्काणं भंडाणं किं पुण कण्णाइं लग्गंति?"—उक्त पु०गा० १३

उक्त स्तोत्रकार अने मांडण वच्चे आ जातनुं विशिष्ट साम्य जणाय छे अने तेथी उक्त 'ओहाणबंध' मां श्रीजिनस्तोत्रनुं कवि मांडणे अनुकरण कर्युं होय एवी उक्त कल्पनाने टेको मळे छे. कवि मांडण जैनधर्मथी

परिचित हतो तेम सर्वधर्मसमभावी हतो, ए तो एनी बीशीओ ऊपरथी स्पष्टपणे जणाय छे.

२१७ सत्तरमी सदीनी गद्य कादंबरीनो तथा अमरेलीना शिलालेखनो नमूनो आपी पछी विष्णुदासना महाभारतनो तथा नाकरकृत आरण्यकपर्वनो ऊतारो आपेलो छे. अने ए सैकानी भाषानो स्पष्ट ख्याल आवे ते माटे पूरतां निदर्शनो जणावेलां छे.

२१८ आ पछी छेवटे अढारमा शतकनी चार कृतिओना नमूना ऊतार्या छे. तेमां प्रथम लक्ष्मीरत्न (जैन) कृत खेमाहडालियानो रास छे, बीजी कृति कवि रत्नेश्वरकृत भागवतनी छे अने त्रीजी आपणा सुप्रसिद्ध कवि प्रेमानंदनी कृति नळकथा छे. छेक छेल्ले न्यायविशारद–न्यायाचार्य महोपाध्याय श्रीयशोविजयजीनी कृतिनो नमूनो पण आपी दीधो छे. ए अढारमा शतकनी गुजराती विशे कशुं लखवापणुं छे नहीं. एथी तेना नाम अने क्रियापदोना प्रयोगोनुं मात्र निदर्शन कराव्युं छे. जे गुजराती आपणे बोलिए छिए ते अने अढारमा शतकनी गुजराती बन्ने एक जेवी छे एम कहीए तो खोटुं नथी. जरा तरा उच्चारण फेर सिवाय बीजो कशो भेद नथी अने एम छे माटे ज ए गुजराती विशे कशुं लख्युं नथी, आ रीते में करेली प्रतिज्ञाप्रमाणे अने मारी समझप्रमाणे में आपनी सामे बारमा शतकथी मांडीने अढारमा शतक सुधीनी गुजराती भाषानो परिचय आप्यो छे अने तेम करी "गुजराती भाषानी उत्क्रांति" ना विषयने में बनी शके तेटलो न्याय आपवा प्रयत्न कर्यो छे. वळी, जैन, जैन नहीं तेवा ब्राह्मण, वैश्य, मुसलमान अने पारसी एवा अनेक कविओनी–पंडितोनी कृतिओना नमूना अहीं आपेला छे अने तेमनी दरेकनी कृतिना शब्दो वगेरे आपी वाचकोने ते ते कृतिओनी भाषानो पूरो परिचय मळे

तेवी रीते वीगतथी चर्चा करेली छे अने ए रीते हुं मारी पूर्वे करेली प्रतिज्ञाने, कृपाळु परमात्मानी कृपाथी अहीं पार पाडी शक्यो छुं.

२१९ प्रस्तुत प्रबंधमां में प्रधानपणे शब्ददृष्टिए ज विवेचन करेलुं छे. एथी गुजराती कृतिओना जे नमूनाओ अहीं जणाव्या छे तेमनुं काव्य-दृष्टिए के छंददृष्टिए में लेश पण निरूपण कर्युं नथी.

वळी, प्रस्तुत प्रबंधमां शुद्ध साहित्यनी दृष्टिए चर्चा करेली छे. तेमां क्यांय संप्रदायभेदे वा एवा बीजा संकोचवाळा भावे स्थान लेश पण नथी रोक्युं ए तरफ आप सौनुं ध्यान खेंचुं छुं.

हुं जाणुं छुं के, भाषानी चर्चा साथे इतिहास अने भूगोळनी चर्चाने गाढ संबंध छे. अने एम छे माटे मारे अहीं गुजरातनां इतिहास अने भूगोळ विशे जरूर थोडुं घणुं कहेवुं जोईए, छतां आगला पानाओमां में ए विशे एक अक्षर पण उच्चार्यो नथी, प्रथम तो ए विशे मारे विशेष कहेवापणुं नथी. जे कांई ते बाबत आज सुधी कहेवाई के लखाई गयुं छे, तेमां खास नवुं उमेरवानुं नथी. एथी अहीं ए बाबतनुं पिष्टपेषण न करवानुं ज उचित समजुं छुं.

२२० 'गुजरात'नी व्युत्पत्ति माटे घणा विद्वानोए चर्चा करी छे.

'गुजरात'नी व्युत्पत्ति

प्राकृत 'गुजरत्ता' अने संस्कृत 'गुर्जरत्रा' ए बन्ने शब्दो घणा जूना छे. विक्रमना नवमा दशमा सैकाना संस्कृत-प्राकृत शिलालेखोमां 'गुर्जरत्रा' अने 'गुज्जरत्ता' ए बन्ने शब्दो वपरायेला छे. बीजे केटलेक स्थळे गुर्जरधरा, गुर्जरमण्डल अने गुर्जरदेश ए रीते पण 'गुजरात' देशने सूचवेलो छे. वादी देवसूरि, देशवाची 'गूर्जर' शब्दने नोंधे छे. (स्याद्वादरत्नाकर पृ० ७०३ पं० १४). आ० हेमचंद्र "गूर्जरः सौराष्ट्रादिः" (उणादि सू० ४०४)

कहीने सौराष्ट्र वगेरे माटे 'गूर्जर' शब्दने वापरे छे. तथा "गूर्जरी स्त्री" नोंधीने 'गूर्जरी' शब्दने गुजरातनी स्त्रीजाति–'गुजरातण'–माटे वापरे छे. अने तेमणे 'गुर्जरत्रा' शब्दने पण देश माटे वापरेलो छे.

'*गूर्जर' शब्दनुं मूळ गमे ते धातुमां होय परंतु हेमचंद्र ते शब्दने 'गूर्' धातुमांथी नीपजावे छे. 'गूर्' एटले 'गति करवी'. 'आर्य' शब्दना मूळमां जेम 'गति' अर्थवाळो 'ऋ' धातु छे तेम प्रस्तुत 'गूर्जर' शब्दमां पण 'गति' अर्थवाळो 'गूर्' धातु छे एम हेमचंद्रनो अभिप्राय छे. आपणा देशनुं नाम जे प्रजाना नाम साथे संकळायेलुं छे ते प्रजा खरेखर गतिशील ज हशे, नहीं तो क्यां ते प्रजानुं निवासस्थान अने क्यां आ आपणो देश? आटलुं मोटुं अंतर गतिशील प्रजा ज छेदी शके अने नवुं राष्ट्रस्थान निर्मी शके. "चराति चरतो भगः" नी उक्तिने गूर्जरोए सार्थक करी छे. 'गुर्जरत्रा' शब्द तो प्राकृत 'गुज्जरत्ता' नो मात्र संस्कार जणाय छे. छेडाना 'त्ता' के 'अत्ता' नो विशिष्ट अर्थ समझी शकातो नथी. 'गूर्जरैः आत्ता गृहीता भूमिः गूर्जरात्ता' एम कहीने 'गुज्जरत्ता' के गूर्जरत्रा' नुं मूळ कल्पी शकाय, पण ज्यांसुधी 'गूर्जरात्ता' शब्द माटे विशिष्ट संवादी उल्लेख न मळे, त्यांसुधी ए नरी कल्पना ज कहेवाय–आ तो अंतिम 'त्ता' के 'अत्ता' नो अर्थ मेळववानी मात्र युक्ति कहेवाय. वळी, तद्धितनी प्रक्रियामां हेमचंद्र ७–२–१३३–१३४ सूत्रमां एक 'त्रा' प्रत्ययनो निर्देश करे छे अने 'देवत्रा वसेत्, मनुष्यत्रा' एवां 'त्रा' प्रत्ययवाळां उदाहरणो पण आपे छे, परंतु मारी समझ छे त्यां सुधी उक्त

---

* आप्टेना संस्कृत कोशमां 'गूर्जर' अने 'गुर्जर' एम बन्ने शब्दो नोंधेला छे, तेम ज साक्षरवर केशवलाल ध्रुवे अने चीमनलालभाई दलाले 'गुर्जर' शब्दने वापरेलो पण छे तेथी अहीं में ए बन्ने शब्दोनो उपयोग करेलो छे.

'त्रा' प्रत्यय लागीने 'गुर्जरत्रा' शब्द बन्यो होय ए हकीकत मने ठीक ठीक रीते गळे ऊतरती नथी. ए ज रीते 'गुर्जरराष्ट्र' ऊपरथी पण 'गुज्जरत्ता' शब्द आवी शकतो नथी. 'गुर्जरराष्ट्र' मांनो 'र' तो वाग्व्यापारने बळे कदाच लोप पामी जाय, परंतु अंत्य 'ष्ट' नो 'त्त' केम थाय? वाग्व्यापारने परिणामे 'ट्ठ' थवो जोईए. ए ज रीते 'गुर्जरधरा' ऊपरथी पण 'गुर्जरत्रा' नथी आवी शकतो. 'गुज्जरत्ता' ए कोई देश्य पद छे अने संस्कृतमां तेनुं अनुकरण 'गुर्जरत्रा' थयेलुं छे. 'सुलतान' नुं संस्कृत 'सुरत्राण' करवामां आव्युं छे तेम कोई संस्कृतना भक्ते 'गुज्जरत्ता' नुं 'गुर्जरत्रा' बनाव्युं लागे छे.

अथवा संभव छे के देशवाचक 'कुशावर्ता:' 'आर्यावर्ता:' 'ब्रह्मावर्ता:'नी पेठे 'गुर्जरावर्ता:' ऊपरथी 'गुज्जरावत्ता—गुज्जरायत्ता—गुज्जरत्ता' आव्युं होय अने ते ऊपरथी कोईए 'गुर्जरत्रा' कल्प्युं होय.

स० नरसिंहरावभाई कहे छे तेम 'गुज्जरत्ता' नो अंतिम 'त्ता' के 'अत्ता', 'ठाकोर' नी 'ठकरात' जेवो छे. तेमनुं आ कथन ज्यां सुधी ए माटे विशेष बाधकप्रमाण न मळे त्यां सुधी तो मने स्वीकारवा जेवुं लागे छे.

चीनी प्रवासी हुएनत्सिंगे पोतानी जबानमां 'कियुचेलो' शब्द 'गुजरात' देशने माटे वापरेलो छे; एथी एम जणाय छे के ते वखते देश माटे 'गुर्जर' शब्द ज विशेष प्रसिद्ध हशे नहीं के—'गुर्जरत्रा' के 'गुज्जरत्ता'. लगभग सातमा सैकाना 'वसुदेवहिंडि' नामना प्राकृत ग्रंथमां 'पेढिया' ना मथाळावाळा प्रकरणमां 'द्वारिका' नगरीनुं सुंदर वर्णन करेलुं छे. तेमां जणावेलुं छे के— "अत्थि पच्छिमसमुद्दसंसिया निउणजणवन्नियगुणा चत्तारि जणवया। तं जहा—आणट्टा कुसट्टा सुरट्टा सुक्करट्टा त्ति।

नेरिं च जणवयाणं अलंकारभूया × × × नयरी बारवई नाम"–पृ० ७७)–"पश्चिम समुद्र कांटानो आश्रय करीने चार देशो आवेला छे. आणट्ट–आनर्त, कुसट्ट–कुशावर्त, सुरट्ट–सौराष्ट्र अने सुक्करट्ट एटले शुष्कराष्ट्र. कदाच कच्छना रणनो प्रदेश या थरपारकरना रणनी साथे संबंध राखतो सिंधनो प्रदेश 'शुष्कराष्ट्र' शब्दथी सूचवेलो होय. 'सुक्करट्ट' शब्दनुं साम्य शुष्कराष्ट्र, शुक्राराष्ट्र के शुक्रराष्ट्र शब्दो साथे छे. परंतु अहीं पश्चिम समुद्रना अने रणना संबंधने लीधे 'सुक्करट्ट' उपरथी 'शुष्कराष्ट्र' नी कल्पना सूझी छे.

कहेवानुं ए छे के वसुदेवहिंडि ग्रंथनो प्रादुर्भाव थतां सुधीमां आखा गुजरात माटे उक्त शब्दो सिवाय कोई बीजो शब्द प्रचार नहीं पामेलो होय. 'गुज्जर' अने 'आणट्ट' ना समास 'गुज्जराणट्ट' द्वारा पण 'गुज्जरत्ता' पद नथी आवी शकतुं. आ बधुं जोतां गुज्जर, गूर्जर, गुर्जरत्रा के गुज्जरत्ता ए बधां पदोनी व्युत्पत्ति विशेष शोधनी अपेक्षा राखे छे.

२२१ हेमचंद्रे भले 'गुर्जर' माटे 'गुर्' धातुनी कल्पना करी; परंतु मूळ शब्द गूर्जर नथी. ए तो 'गुज्जर' उपरथी उपजावेलो शब्द छे अने 'गुज्जर' शब्दनो उच्चार पण आपणे जे जातनी जोडणी करिए छिए तेवो ज छे वा अन्य प्रकारे छे ए बाबतनो निर्णय आपवो पण कठण छे. ज्यां सुधी ए शब्दना मूळ धातुनी खरी कल्पना न आवे त्यां सुधी ए विशे कांई ज न कही शकाय.

फारसी गुज़र

फारसीमां गुज़र, गुज़रना, गुज़री, गुज़ारना अने गुज़ारा एवा पांच शब्दो प्रस्तुत 'गुज्जर' पदनी साथे शब्ददृष्टिए समानता धरावे एवां छे. गुज़र एटले १ निकास–गति, २ पैठ–पहुंच–प्रवेश, ३ निर्वाह. गुज़रना एटले (मूळ गुज़र) वीतवुं, पहोंचवुं अने हाजर थवुं. गुज़री (मूळ गुज़र) एटले

दिवसे त्रीजे प्होरे–सडकोनी पासे भराती बजार. 'गुज़ारना' नो अर्थ उक्त 'गुज़रना' ने मळता जेवो छे. 'गुज़ारा' एटले–१ निर्वाह, २ निर्वाह माटे देवातो पगार अने महेसूल लेवानुं थाणुं.

'गुज्जर' नो बीजो उच्चार 'गज्जर' पण प्रचलित छे; परंतु ते मूळ नथी किंतु 'गुज्जर' ऊपरथी आवेलो छे अने घणुं करीने 'ठाकोर'नो जेम अंग्रेजोए 'टागोर' ध्वनि बनाव्यो छे तेम ज ए 'गज्जर' पद पण सर्जायुं छे.

गुजरातनी भौगोलिक मर्यादा

२२२ हेमचंद्रना समये गुजरातनी भौगोलिक मर्यादा घणी विशाळ हती: विद्यावारिधि श्री आनंदशंकरभाई कहे छे (वसंत वर्ष ३७, अंक ४ पृ० २०२) तेम आपणो गुजरात आनर्त, सौराष्ट्र अने लाट ए त्रण प्रदेश मळीने थयेलो छे. आनर्तनी मर्यादा—उत्तरे आबु, पश्चिमे काठियावाड, पूर्वे माळवा, दक्षिणे मही, खंभात, अने लगभग नर्मदाकांठा सुधीनो प्रदेश छे. सौराष्ट्र एटले ज काठियावाड अने लाट ते, के जेनुं मुख्य नगर भरूच छे. लाटनो विस्तार मही अने नर्मदाथी मांडी दक्षिणे नवसारी अने दमण सुधी. लाटनुं मुख्य बंदर सोपारा. 'कच्छ' अने 'सौवीर' ए बे विशाळ गुजरातना पाडोशी प्रदेशो छे.

अहीं जे जे कृतिओना नमूना आप्या छे तेना करनारा, एक अपवाप सिवाय बधा तळ गुजरातना छे ए ध्यानमां रहे.

आपणे जे समयमां रहिए छिए ते छे तो एक रीते सुवर्णयुग; परंतु गुजरात, महाराष्ट्र, अवध, बंगाळ अने उत्कल वगेरे आपणा भारतीय प्रांतोनी भाषा वर्तमानमां एकबीजाथी एटली भिन्न भासे छे के जेने

लईने आपणा राष्ट्रीय संगठनमां मोटी नडतर आवे छे, अने ते स्थिति सोनानी थाळीमां मेख जेवी छे.

पांचसे वर्ष पूर्वे एक जेवी भाषा अने ते संबंधे उदाहरणो

२२३ आजथी पांचसें वर्ष पूर्वे के तेथी य वधारे पूर्वना समयमां आपणा देशनी स्थिति आवी न हती. ते समये जे भाषा चालती ते लगभग प्रत्येक प्रांतवासीनी समझमां आवी जाय एवी एक जेवी हती अने आने लईने आपणे ते समये भाषादृष्टिए एक प्रजा जेवा हता, आ माटे बे-चार उदाहरणो पूरतां छे.

समय मोडामां मोडो तेरमो सैको—

वज्रयानसंप्रदाय—सरहपा सिद्ध, निवास—पूर्वभारत नालंदा.

" घोरंधारे चंदमणि जिमि उज्जोअ करइ
परम महासुह एकु खणे दुरिआ अशेष हरइ ".

" जइ नग्गा विअ होइ मुत्ति ता सुनह—सियालह
लोमोप्पाटने अत्थि सिद्धि ता जुवइनितंबह ".

" पिच्छीगहणे दिट्ठ मोक्ख ता मोरह चमरह
उञ्छे भोअणें होइ जाण ता करिह तुरंगह ".

आ भाषा, पूर्वभारतमां आवेला राजगृह—नालंदामां वसनार एक सरहपा नामना सिद्ध पुरुषनी छे. तेमां मार्मिक उपदेश छे. एनी ते तळपदी भाषा छे. आनी साथे हेमचंद्रना तथा सोमप्रभना आगळ जणावेला दोहानी भाषाने सरखावशो तो लेश पण फेर नहीं जणाय. क्यां पाटण अने क्यां नालंदा ? छतां आटलुं बधुं भाषासाम्य हतुं. कण्हपा, महीपा

अने जयानंतपालां पण आवां ज पद्यो छे, परंतु विस्तारभयना कारणे तेने अहीं नथी आपतो.

२२४ ज्ञानेश्वर नामना समर्थ ग्रंथकार महाराष्ट्रमां थया छे. तेमनी गीतामां 'अवधारिजोजी' 'बोले' 'जरी' 'बोवडी' 'काष्ठें' 'पुत्रस्नेहें' 'व्याजें' (तृतीया), 'पुसत' (पूछत), 'हरिख' (हरख), 'कीजे', 'अपेक्षिजे' 'किजत' 'मज प्रती' 'नृपनाथु' 'विक्रांतु' 'देख (जो)' 'मथिजे' 'उपजे' 'जाळिजे' 'तेणें' 'सुखें' 'कारुण्यें' (तृतीया) 'कीजे' 'भोगिजे' 'अर्जुनु' 'किजसी' 'सांडिजे' (छांडिजे), 'वेढिजे' 'स्त्रीकारिजे'—जेवा अनेक प्रयोगो गुजरातीने मळता आवे छे. ज्ञानेश्वरनो समय लगभग चौदमो सैको छे. एमनी गीतानी भाषा अने चौदमा शतकनी कोई एक गुजराती कृतिनी भाषा—ए बेनी विशेष झीणवटथी तुलना करवामां आवे तो मने लागे छे के ते बे वच्चे समानपणुं वधारे जाणी शकाय.

२२५ 'ढोला मारूरा दुहा'नी भाषाने माध्यमिक राजस्थानी रूपे गणेली छे. तेनो समय तेरमा सैकाथी शरू थाय छे:—

"आडा डूँगर भुइँ घणी तियां मिळीजइ एम ।
मनिहूं खिणहि न मेल्हियइ चकवी दिणियर जेम ॥ ७२ ॥
ज्यूं ए डूंगर संमुहा त्यूं जइ सज्जण हुंति ।
चंपावाडी भमर ज्यउँ नयण लगाइ रहंति ॥ ७३ ॥
जिणि देसे सज्जण वसइ तिणि दिसि वज्जउ वाउ ।
उआं लगे मो लगसी उही लाख पसाउ ॥ ७४ ॥
कउआ ! दिऊं वधाइयां प्रीतम मेलइ मुज्झ ।
काढि कलेजउ आपणउ भोजन दिउंली तुज्झ ॥ ७५ ॥

जब सोऊं तब जागवइ जब जागूं तब जाइ ।
मारू ढोल्ड संभरइ इणि परी रयण विहाइ ॥ ७६ ॥

आ भाषा पण आपणी तेरमा—चौदमा शतकनी गुजरातीनी जेवी छे. फेर घणो ज ओछो छे.

आ संबंधे विशेष जिज्ञासावाळा अभ्यासीए दोहाकोश (कलकत्ता संस्कृतसिरिझ), डाकार्णवतंत्र (कलकत्ता संस्कृतसिरिझ), ढोलामारूरा दूहा (काशी—नागरीप्रचारिणी सभा), ज्ञानेश्वरीगीता (राजवाडेनुं संपादन) वगेरे प्राचीन लोकभाषाना ग्रंथोनी भाषानुं गंभीरपणे अवलोकन करवुं आवश्यक छे.

२२६ आ बाबत नीचेनां अवतरणो वांचवाथी विशेष स्पष्ट थाय एम छे. ए अवतरणो नागरीप्रचारिणी पत्रिका (काशी वर्ष ४६ अंक ३ नवीनसंस्करण कार्तिक १९९८ संग्रा० नाहटाजी) मांथी लीधेलां छे. अवतरणो बधां गद्य छे अने चौदमी सदीनां छे. अवतरणोमां कशो फेरफार न करतां तेमने यथामुद्रित अहीं उतारेलां छे. अवतरणोमां मुद्रणनी अशुद्धि जणाय छे खरी; परंतु मूळ आधार विना तेने वगर सुधार्ये ज चलावी लेवी पडी छे. चार अवतरणोमां बीजुं, माळवानी भाषानुं द्योतक छे. त्रीजुं पूर्व देशनी भाषानुं सूचक छे. चोथुं महाराष्ट्री वाणीनुं निदर्शक छे अने पहेला अवतरणनी भाषानुं विशेष नाम अवतरणमां कळातुं नथी तेम छतां ए पहेलुं, सरखामणीनी दृष्टिए जोतां प्राचीन गुजरातीनुं जणाय छे.

योजके आ चारे अवतरणो जुदा जुदा चार देशनी चार नायकाना मुखमां मूकेलां छे :

(१) " अहे वाई एहु तुम्हारा देसु कवण लेखा माहि गणियइ। किसउ देसु गुजरातु, सांभलि माहरी वात। एउ जु लावट माणुसओ

जमारओ, आलिमात्रि कांइ हारउ। ए जि सम्यक्त्वमूल वारह व्रत पालियहि × × × आशातना टालियहिं। पूजिय श्रीआदिनाथ देवता, पापु नासिइ शत्रुंजय सेवता।

अनी किसउ घणउं भणियइ माहरी माइ, एहु देसु गुजराति छाडी करि अनइ अनेरइ देशि किसी परि मनु जाइ। जिणि देशि मादल तणा धोंकार, तिविल तणा दोंकार, वंश तणा पौंकार, नृत्य तणा समाचार, ताल तालकार, आवजी–पखावजी–पटावजी–खंधावजी–भूगल्या–करडि–झल्लरि–पडह–समेतु पंच सवदु वाइयइ। गूजरी गीतु गाइयइ। लास्यु तांडवु नाचियइ। मृदंगु वाइयइ।"

(२) "जव मालवा देश की वावली वोलण लागी, तव अवर देश की परिभागी। दिक्खु रे मोरी वहिणी फुणि फुणि मोरा देसु काहउ वक्खाणहि। मोरा देश की वात न जाणहि। जिणि देशि मंडवगढ केरा ठाउ, जयसिंघ देव राउ। मसूर का थान, अवर देश का काहउ मान। काटा सूतु अरु तुट्टणा, कोरा साडा अरु भूणा। ठाली अरु वाजणी पेटिली अरु नाचणी, दिक्खु रे मोरी वहिणी। वलि वलि काहउ विलखइ, तोरा वोल्या सहु वाइयइ। मालव देश की परिनीकी सिरि की टीकी। सेत चीर का साडा। पूजियइ आदिनाथ युगराज"।

(३) "अथ पूर्वी नायिका का वोल्या सुणहुगे रे भइया। इथु जुगी जाणिवउ धीरे, दिखु रे मोरी वहिनी फुनि फुनि मोर देसु कितवु खर ति आहि। मोरे देस की वात न जानसि, जेहि देस ऐसे मानुस कैसे—इक्कु धीरे वीरे विवेकिए। पर मदापके मोडन मराट मल्ल, तुम्ह कतुके जान, कतुके परान, वत्रा की आन। अम्हां तुम्हां वडा अंतरु आहि। कइसु अंतरु, तुम्ह के मानुस तरि मोटे, ऊपरि मोटे विचि छोटे। अत अम्ह के मानुस

तरि नान्हे ऊपरि नान्हे विचि पूनु कर सु साटविउ आहि। अइस दीसतु हइ जइसा पूनम का चांदु। अथ कोदव के चावर खाइयहि, गीतु गाइयइ। सुठि नीके वानिए वसहिं। कइसे वानिए।"

(४) "मरहठी तरि हा या जनमु आवागमणु कवणा गति न होइ रे वप्पा। तरि भविक जनत्तं पुच्छिसि भइं अनिक देस देशांतर चातुर्दिशा मागुं मया देखुणी। अपूर्वु सर्व तीर्थाचा भेटु गीत राचु गीतह्लास कट समस्त गूमटा। तरिया इकि नहीं सागिन पुरी सत्तरि सहस्र सहस्र गुजराताचा भीतरि गिरि सेतुज्जंचा ऊपरि। श्रीऋषभनाथाचा रंगमंडपि अनिक गीत ताळ एकाग्र चित्तुं कारुणी। निजकरकमळाचा द्रव्य उपार्जनी। परमेसर वीतरागाचा भवनि वेचनी पुनरपि जनमुनिवारिणे अहं एवमेव सत्यं।"

आ बाबत देवानांप्रिय प्रियदर्शी राजा अशोकनां शासनोने प्रधानतः लक्ष्यमां राखी 'आर्यावर्तनी सर्व गम्य लोकभापा' संबंधे एक निबंध लखवा जेवो छे. ए विशे अहीं विशेप लखतां विपयांतर थवाना भयने लीधे आटलेथी ज अटकुं छुं; परंतु मारी खात्री थई छे के आपणे त्यां समग्र देश समझी शके एवी एक लोकभापा जरूर हती अने वर्तमानमां पण छे; परंतु आपणुं पारतंत्र्य, ए हकीकत कळवा देतुं नथी, एथी परिणामे आपणे बधा भारतवासी भापादृष्टिए अभिन्न—एक—छतां परस्पर विरोध-पोपक भिन्नताने अनुभवी रह्या छिए.

आ रीते उक्त उदाहरणोथी एम स्पष्टपणे मालूम पडे छे के पूर्व भारत, दक्षिण अने आपणो गुजरात ए बधा वच्चे एक एवी लोकप्रतिनिधिक लोकभापा—प्राचीन बोली—प्रवर्तती हती अने तेने ते दरेक देशनो समाज समझतो हतो त्यारे आ सुवर्णयुगमां आपणुं ए जातनुं भापा-

समतानुं तत्त्व गमाइ गयुं छे अने आपणे बधा प्रांतवासी, एक भारत-वासी छतां भाषादृष्टिए खंड खंड थइ गया छीए.

२२७ जे वखते प्रांते प्रांतना लोको यात्रानिमित्ते, प्रवासनिमित्ते, व्यापारनिमित्ते निरंतर भेगा थता हता, गुजरातना वणजारानी पोठो नीचे ठेठ रामेश्वर सुधी अने ऊपर ठेठ काबुल सुधी जती हती; तथा पूर्वमां मणिनगर सुधी पहोंचती हती, तेम दक्षिणना, पूर्वना अने उत्तरना वणजारानी पोठो आखा देशने खूंदी वळती हती अने गामेगाम महिनाना महिना सुधी पडावो पडता हता. जे वखते भारतीय नौकाओ भारतना प्रत्येक जळमार्गो द्वारा भारतमां बधां बंदरोमां पहोंची शकता हता, काशी-विश्वनाथनो यात्री गंगाजळनी कावड खांधे उपाडी ठेठ रामेश्वरसुधीनो मार्ग पगे कापतो हतो, मोटा मोटा जैनसंघो पगपाळा पार्श्वनाथपहाड सुधीनी यात्रा करता हता अने सर्व संप्रदायना त्यागीओ पगे चाली चालीने गामेगाम भारतीय संस्कृतिनो घोष गजवता हता ते वखते आपणा आखा देशमां लगभग एक जेवी बोली प्रवर्तती हती.

वळी, आपणा मोटा पुरुषो पण लोकव्यापक भाषामां ज पोतानो व्यवहार चलावता हता, तेओ संस्कृतादिभाषाना प्रखर पंडितो हता छतां लोकव्यापक भाषा ऊपर तेमनो असाधारण अधिकार हतो, अने तेने लीधे ज भारतीय ग्रामजनता साथेनो तेमनो संसर्ग अखंड रह्यो हतो.

२२८ ज्यारथी आ बधुं छिन्न-भिन्न थयुं, प्रांतप्रांतनो व्यवहार तूटी गयो अने पंडित लोको संस्कृतप्रिय ज बनी बेठा, त्यारथी भाषानी एकता तूटी अने नगर तथा ग्राम वच्चेनुं एकतानुं सूत्र पण तूट्युं. मोटी मोटी राज्यक्रांतिओ, राजा अने प्रजामां धननुं सर्वोपरि प्राधान्य, राजाओनी धर्मांधता, प्रजामां स्वरक्षणना सामर्थ्यनो अभाव, पध्यवाणीनुं पाणी सिंचनारा

धर्मगुरुओनो अभाव, ग्रामजनो तरफ नागरिकोनी उपेक्षा तथा सर्वधर्मसमभावनी भावनानी खामी अने जन्मजातिवादनी धर्मरूपता वगेरे अनेक कारणो आपणी भाषानी तथा आपणां नगर अने ग्रामनी एकतानां खंडक छे. अने आपणा भागलाना निमित्तरूप छे. आज सुधी पण ते परिस्थिति मटी नथी. तेम थवानां सर्व कारणो हवे तो तद्दन खुल्लां पडी गयां छे, वळी, अत्यारनो गमे ते प्रांतनो साक्षर, अध्यापक वा विद्यार्थी पोतानी बोलचालनी भाषामां पण कां तो संस्कृत शब्दो वधारे आणे छे अथवा अंग्रेजी शब्दो अधिक लावे छे, परंतु मातृभाषा अने एना तळपदा शब्दो तरफ लक्ष्य नथी करतो, आने ज परिणामे भाषामां भ्रष्टता वधे छे अने तेओनुं बोलेलुं वा लखेलुं साहित्य, गामडामां रही खेती करनारा, कोश हांकनारा के बीजा ग्रामवासी सुधी पहोंचतुं नथी. ते साक्षरो, अध्यापको अने विद्यार्थिओ तथा पेलो ग्रामवासी एक प्रांतना, एक ग्रामना होवा छतां एक बीजाने परदेशी जेवा लागे छे. आम थवाथी ग्राम अने नगर, साक्षर तथा निरक्षर ए बधा वच्चे भेदनी भींत, तिरस्कारनी रीत वगेरे अंतरायो ऊभा थया छे अने तेनुं परिणाम पण आपणे आकरामां आकरुं भोगवी रह्या छीए.

मातृभाषानो विशिष्ट अभ्यास

२२९ अत्यारना गमे ते प्रांतना नागरिक अध्यापक वर्ग अने नागरिक छात्रवर्गने जोईशुं अने तेमनी साथे एक बे घडी वार्तालापनो प्रसंग योजीशुं तो तेमनी पासे कोई एक मातृभाषा जेवुं विचार दर्शाववानुं वाहन छे के केम? एवो प्रश्न थया विना नहीं रहे.

आ परिस्थिति मूळथी ज उच्छेदनीय छे. आपणा अध्यापको अने छात्रो पोतपोतानी *मातृभाषाना अध्ययन* तरफ अने तेना *तळपदापणा* तरफ गंभीरताथी जोशे, तळपदी भाषानुं सारुं अध्ययन करशे अने मातृभाषाने

समझनारनी साथे मातृभाषाने ज बोलवानुं व्रत लेशे तो उक्त स्थिति आपोआप टळी जशे. गामडां अने नगरो संधाई जशे तथा सर्वसाधारण जनता अने शिक्षित जनता वच्चे जे कृत्रिम भेद ऊभो थयो छे ते आपो-आप तूटी जशे. जे स्थान अत्यारे अंग्रेजीने आपेलुं छे ते स्थाने मातृभाषाने बेसाडीए अने अत्यारनुं मातृभाषानुं स्थान अंग्रेजीने आपीए तो वधुं सरळ रीते साधी शकाय एम छे. आ माटे आपणे पोते ज धारीए तो घणुं करी शकीए एम छीए. अत्यारनी आपणी भाषाविषयक दुःखद स्थिति थयाना कारणनो आरोप वधारेमां वधारे आपणा ऊपर ज छे. शुद्ध स्वदेशीनी प्रतिज्ञाने पाळनारो, कोईनो पण अनादर नहीं करीने शुद्ध अने अमिश्र एवी रूढ तळपदी स्वभाषामां ज बोलवानी अने लख-वानी प्रतिज्ञा ल्ये तो आपोआप भाषानो उत्कर्ष थवानो ज. आ प्रयत्न आपणे नहीं करीए तो बीजुं कोण करशे ? भाषानी समृद्धि वधारवा माटे जे अत्यारे अनेक संस्थाओ विद्यमान छे तेमणे मातृभाषाना प्रकर्ष माटे प्रबळतम प्रयत्न सेववो जोईए. भाषाना प्राचीन साहित्यनां सुंदरमां सुंदर संपादन–संशोधन अद्यतनरीते करवां–कराववां जोईए. भाषाना प्राचीन साहित्यना उपासकोने उत्साहित करवा जोईए अने प्राकृत तथा प्राचीन गुजरातीना खंतीला अभ्यासीओ वधे ते माटे उदारता पण दाखववी जोईए. भाषामां व्युत्पत्तिशास्त्र, ध्वनिशास्त्र, जोडणीना सिद्धांतो विशे अने-कानेक पुस्तको तैयार कराववां जोईए. गुजराती भाषानुं सर्वांगीण व्याकरण, प्रामाणिक शब्दकोश, प्रामाणिक व्युपत्तिकोश, प्रामाणिक पिंगळ वगेरे भाषानां पोषक अंगोनी खामी हवे क्यां सुधी रहेशे ? अत्यारे तो आपणी मातृभाषा गुजरातीना व्याकरणमां पण अंग्रेजीनी छाया पथरायेली छे ए शुं आपणे माटे लज्जास्पद नथी ? संस्कृत के अंग्रेजी भाषाने आपणा बुद्धिपोषण माटे भले उपयोगमां लईए परंतु ते द्वारा आपणी

तळपदी मातृभाषानुं शोषण न थाय ए ध्यानमां रहेवुं जोईए. ज्यां सुधी मातृभाषानुं तळपदुं दूध आपणे न पीईए त्यां सुधी मातृभाषाना उदयनो सूर्य ऊगवो कठण छे.

जेवो पूर्वे हतो एवो समय फरी आवे एटले आपणा बधानी एक भाषा बने अने ग्राम तथा नगर वच्चे तथा साक्षर अने निरक्षर वच्चेनो भाषानो अंतराय तूटी जाय—एवी परमात्मा प्रति मारी नम्र प्रार्थना छे अने 'गुजराती भाषानी उत्क्रांति' नां भाषणोनी समाप्ति करतां मने लागे छे के ए प्रार्थना विशेष उचित ज छे.

परिशिष्ट :—

'छे' क्रियापदनो वृत्तांत आपतां आगळ जणावी गयो छुं के 'अस्' ना अंत्य 'स' नो 'छ' थवाथी 'अच्छइ' रूप थाय अने तेमांथी 'छे' पद नीपजे. हेमचंद्र 'अस्' नुं 'अत्थि' रूप ज आपे छे एटले 'अस्' ना 'स्' नो 'छ' कल्पवो के केम ए एक प्रश्न छे. 'अत्थि' ने बदले एक स्थळे 'अत्थइ' रूप वपरायेलुं छे.

'छे' नी विशेष चर्चा

मळधारी राजशेखरसूरिए रचेला 'नेमिनाथफागु' मां—

"राइमए–सम तिहु भुवणि अवर न अत्थइ नारे ।
मोहणविल्लि नवल्लडीय उप्पनीय संसारे ॥ ७ ॥"

(अर्थात्—त्रण भुवनमां राजिमती जेवी बीजी कोई नारी नथी. ए, संसारमां नवल एवी मोहन वेल ऊपजेली छे.)

ए गाथामां 'छे' ना अर्थमां 'अत्थइ' क्रियापद वपरायेलुं छे. मारी समझ प्रमाणे ए मुद्रणदोष पण नथी. ज्ञानेश्वरीगीतामां अनेक स्थळे 'छे' ना अर्थमां ज 'आथी' के 'आथि' रूप वपरायेलुं छे. चालु मराठीनुं 'आहे' रूप 'अस्' ना 'स्' नो 'ह' थईने नथी आव्युं परंतु 'आथी' ना 'थ' नो 'ह' थईने आव्युं छे अने 'आहे' लाववानो ए क्रम मने विशेष उचित जणाय छे. ते ज प्रमाणे 'अस्' ना 'स्' नो 'छ' न करतां 'अस्' ना उक्त 'अत्थइ' ऊपरथी 'त्थ' नो 'च्छ' थई 'अच्छइ' अने तेमांथी अच्छइ–छइ–छे एम 'छे' नी व्युत्पत्ति करीए तो सरळ क्रम लागे छे. तवर्गनो चवर्ग थवानुं सुप्रतीत छे अने प्राकृतमां 'थ' नो 'छ' परिणाम सूत्रसिद्ध छे. मिथ्या–मिच्छा, तथ्य–तच्छ, पथ्य–पच्छ, सामर्थ्य–सामच्छ. (८–२–२१–२२ हैम०)